भारत सरकार

पिछड़ा वर्ग आयोग की रिपोर्ट

भाग दो

(खण्ड III से VII)

1980

खण्ड 3

भारतीय विधि संस्थान द्वारा तैयार किया गया विश्लेषण

विषय-सूची

		पृष्ठ संख्या
भाग I	न्यायालय द्वारा निर्णीत मुकदमों तथा संसदीय बहसों का विश्लेषण, जिनके कारण संविधियन में पहला संशोधन किया गया	1—3
भाग II	अनुच्छेद 15(4) के अधीन मुकदमों का सारांश	7—58
भाग III	संविधान सभा में हुई बहसों तथा अनुच्छेद 16(4) के अधीन मुकदमों का सारांश	63—109
भाग IV	अनुच्छेद 16(4) के अधीन मुकदमों का विश्लेषण	113—134

खण्ड 4

सामाजिक विज्ञानों का टाटा संस्थान, बम्बई द्वारा तैयार किया गया विश्लेषण

	भूमिका	133
अध्याय 1	प्रस्तावना : समस्या और परिकल्पनाएं	141—145
अध्याय 2	तमिलनाडु : गैर-ब्राह्मण आंदोलन से पुनर्जागरणवाद तक	146—149
अध्याय 3	कर्नाटक : पिछड़े वर्गों का द्विचरणीय आंदोलन	150—152
अध्याय 4	बिहार : पिछड़े वर्गों का विवरण और क्षीण आंदोलन	153—155
अध्याय 5	उत्तर प्रदेश : पिछड़े वर्गों का विलंबित और अपूर्ण संघटन	156—158
अध्याय 6	सार और निष्कर्ष	159-160
	संदर्भ	161-162

खण्ड 5

सामाजिक-शैक्षिक सर्वेक्षण सारणियां

सामाजिक-शैक्षिक सर्वेक्षण सारणियों पर टिप्पणी 165

खण्ड 6 — अन्य पिछड़े वर्ग की राज्यवार सूचियां

क्रम संख्या	राज्य/संघ शासित क्षेत्र	पृष्ठ सं०
1.	आन्ध्र प्रदेश	171—173
2.	असम	174—175
3.	बिहार	176—177
4.	गुजरात	178—179
5.	हरियाणा	180
6.	हिमाचल प्रदेश	181
7.	जम्मू और काश्मीर	182
8.	कर्नाटक	183—186
9.	केरल	187—189
10.	मध्य प्रदेश	190—192
11.	महाराष्ट्र	193—195
12.	मणिपुर	196
13.	मेघालय	197
14.	नागालैण्ड	198
15.	उड़ीसा	199—201
16.	पंजाब	202
17.	राजस्थान	203—204
18.	सिक्किम	205
19.	तमिलनाडु	206—209
20.	त्रिपुरा	210—211
21.	उत्तर प्रदेश	212—213
22.	पश्चिम बंगाल	214—215
23.	अण्डमान निकोबार द्वीप समूह	216
24.	अरुणाचल प्रदेश	217
25.	चण्डीगढ़	218
26.	दादरा और नागर हवेली	219
27.	दिल्ली	220
28.	गोवा दमन और दीव	221
29.	लक्षद्वीप	222
30.	मिजोरम	223
31.	पांडिचेरी	224—226

खण्ड 7 — असहमति का विवरण

श्री एल० आर० नायक, (भूतपूर्व संसद सदस्य) द्वारा प्रस्तुत असहमति का विवरण 227—230

अनुबन्ध 233—275

खण्ड 3

भाग I

न्यायालय द्वारा निर्णीत मुकदमों तथा संसदीय बहसों का विश्लेषण
जिनके कारण संविधान में पहला संशोधन किया गया।

उच्चतम न्यायालय और उच्च न्यायालयों के उन निर्णयों का विश्लेषण जिनके कारण भारत के संविधान में पहला संशोधन किया गया

भारत के संविधान का अनुच्छेद 15(1) सरकार को भारत के किसी नागरिक के प्रति केवल धर्म, मूलवंश, जाति, लिंग, जन्म स्थान अथवा इनमें से किसी एक के आधार पर भेदभाव बरतने से विनिर्दिष्टतः वर्जित करता है। यह उपबंध अनुच्छेद 14 में दिए गए समानता के सिद्धांत के एक अन्य आयाम को निरूपित करता है। यदि कोई कानून अनुच्छेद 15(1) की प्रतिषिद्ध सीमाओं के अंतर्गत आता है तो उसे अनुच्छेद 14 का सहारा लेकर और उचित वर्गीकरण का कोई सिद्धांत लागू करके विधिमान्य नहीं बनाया जा सकता। अनुच्छेद 14 और 15 का संचयी प्रभाव यह नहीं है कि सरकार असमान कानूनों को पारित ही नहीं कर सकती, परन्तु यदि वह असमान कानूनों को पारित कर देती है तो वे उचित वर्गीकरण के आधार पर न्यायोचित ठहराए जाने होंगे, क्योंकि अनुच्छेद 15(1) के अनुसार धर्म, मूल वंश, जाति, लिंग अथवा जन्म-स्थान मात्र भेदभाव का कोई उचित आधार नहीं बन सकता। इसके अतिरिक्त अनुच्छेद 29(2) भी नागरिकों को सरकार की किसी ऐसी कार्रवाई के विरुद्ध संरक्षण की गारंटी प्रदान करता है जिसके अनुसार शैक्षिक संस्थानों में प्रवेश के संबंध में धर्म, मूलवंश, जाति, भाषा अथवा इनमें से किसी एक के आधार पर भेदभाव बरता जाता हो।

संविधान के लागू होने के पश्चात शीघ्र ही, इस स्थिति के होते हुए, सरकार के उन कार्यक्रमों को चुनौतियां दी गई जिनका लक्ष्य शिक्षा और आवास के क्षेत्र में समाज के अपेक्षाकृत कमजोर वर्गों के लिए विशेष व्यवस्थाएं करना था।

दो न्यायिक निर्णयों, जिनमें से एक उच्चतम न्यायालय का तथा दूसरा बम्बई उच्च न्यायालय का था के कारण सन 1951 में संविधान में पहला संशोधन किया गया।

उच्चतम न्यायालय का निर्णय है—मद्रास राज्य बनाम चंपकम दोरायराजन[1] संविधान के लागू होने से पूर्व अनेक वर्षों तक मैडिकल और इंजीनियरिंग कालेजों जैसे व्यावसायिक कालेजों में प्रवेश का नियमन साम्प्रदायिक शासनादेश (कम्युनल जी०ओ०) में निर्धारित धर्म, जाति और मूलवंश के आधार पर किया जाता था। चयन समिति द्वारा भरी जाने वाली प्रत्येक 14 सीटों के लिए उम्मीदवारों का चयन निम्नलिखित आधार पर किया जाता था—

गैर ब्राह्मण (हिन्दू)	6
पिछड़े हिन्दू	2
ब्राह्मण	2
हरिजन	2
ऐंग्लो इंडियन और भारतीय क्रिश्चियन	1
मुस्लिम	1

दो ब्राह्मण उम्मीदवारों ने, जिनमें से एक को मैडिकल कालेज में और दूसरे को इंजीनियरी कालेज में प्रवेश नहीं मिल सका था, उक्त साम्प्रदायिक शासनादेश को यह कहते हुए चुनौती दी थी कि वह अनुच्छेद 29(2) में प्रदत्त मूल अधिकार का अतिक्रमण करता है। यद्यपि उनके पास शैक्षिणिक अर्हताएं थीं, तो भी उन्हें ब्राह्मण होने के कारण प्रवेश देने से इन्कार कर दिया गया था। प्रवेश देने से इन्कार प्रकटतः धर्म, मूलवंश और जाति के आधार पर किया गया था। न्यायमूर्ति एस० आर० दास के अनुसार उच्चतम न्यायालय ने यह निर्णय दिया कि उक्त साम्प्रदायिक शासनादेश में दिया गया वर्गीकरण धर्म, मूल वंश और जाति पर आधारित है जो अनुच्छेद 29(2) के अधीन निषिद्ध है। उक्त न्यायालय ने सरकार का यह तर्क कि उसे अनुच्छेद 46 में यह आदेश दिया गया है कि वह समाज के अपेक्षाकृत कमजोर वर्गों के शैक्षिक और आर्थिक हितों की रक्षा के लिए विशेष व्यवस्था करे, इस आधार पर अस्वीकार कर दिया कि मूल अधिकार अलंघ्य है और उनका संविधान के भाग III के उचित अनुच्छेद में उपबंधित सीमा को छोड़कर किसी विधायी अथवा कार्यपालिक कृत्य या आदेश से न्यून नहीं किया जा सकता। हमारी राय में संविधान के भाग III और IV में दिए गए उपबंधों को समझने का सही ढंग यही है।

उक्त न्यायालय ने साम्प्रदायिक शासनादेश को इस आधार पर अविधिमान्य ठहराया कि उसने उक्त कालेजों में प्रवेश का वर्गीकरण धर्म, मूलवंश और जाति के आधार पर किया था।

दूसरा निर्णय बम्बई उच्च न्यायालय का है जो उसने जसवन्त कौर बनाम बम्बई राज्य[3] में दिया था। इस मुकदमे में एक हरिजन कालोनी की स्थापना के लिए कुछ भूमि का अधिग्रहण करने के लिए बम्बई भूमि अधिग्रहण अधिनियम की धारा 5 के अधीन दिए गए पुणे के समाहर्ता के आदेश को चुनौती दी गई थी कि वह अनुच्छेद 15(1) का अतिक्रमण करता है। इस चुनौती का आधार यह था कि केवल हरिजनों की सुविधा के आशय से किसी कालोनी का स्थापित किया जाना उपर्युक्त सांविधानिक उपबंध के अधीन भेदमूलक है। उक्त न्यायालय ने यह भी अभिनिर्धारित किया कि अनुच्छेद 46 किसी मूल अधिकार का अधिरोहण नहीं कर सकता। परिणामतः उक्त आदेश शून्य घोषित कर दिया गया।

सम्भाव्यतः इस मुकदमे के निर्णय के समय तक (18 फरवरी, 1952) संविधान का पहला संशोधन लागू नहीं हुआ था। मुख्य न्यायमूर्ति चागला ने निम्नलिखित मत व्यक्त किया—

> "हम बलपूर्वक कह सकते हैं कि संशोधन हो जाने के बाद उक्त राज्य के लिए यह संभव होगा कि वह पिछड़े वर्ग के हित संवर्द्धन के लिए किसी हरिजन कालोनी की स्थापना कर सके किन्तु उक्त संशोधन की अधिनियमिति किए जाने तक अनुच्छेद 15 की व्यवस्था के अनुसार, राज्य किसी जाति अथवा समुदाय के पक्ष में भेदभाव बरतने के लिए सक्षम नहीं है।"[4]

अतः यह कहा जा सकता है कि इन्हीं दो निर्णयों के कारण अनुच्छेद 15 में संशोधन किया गया था। पहले संशोधन ने अनुच्छेद 15 में खण्ड 4 शामिल करके सरकार को वह शक्ति प्रदान कर दी है जिससे कि वह अनुच्छेद 15(1) अथवा अनुच्छेद 29 के खण्ड(2) के रहते हुए नागरिकों के किन्हीं सामाजिक अथवा शैक्षिक रूप से पिछड़े वर्गों या अनुसूचित जातियों अथवा अनुसूचित जनजातियों की समुन्नति के लिए विशेष व्यवस्था कर सकती है। संविधान के इस संशोधन का उद्देश्य 15 और 19 को अनुच्छेद 16(4) के समनुरूप बनाना है, जो सरकार को लोक नियोजन के मामलों में पिछड़े वर्गों के लिए विशेष व्यवस्था करने की शक्ति प्रदान करता है।

1 ए०आई०आर० 1951, एस०सं० 226

3. ए०आई०आर० 1952, बम्बई, 461

4. ए०आई०आर० 1952, बम्बई, 462

जहां तक अनुच्छेद 15(4) जोड़ा जाने का संबंध है, संविधान (पहला संशोधन) अधिनियम, 1951 के संबंध में हुई बहसों का विश्लेषण

जैसा कि पहले उल्लेख किया जा चुका है कि **चम्पकम दोरायराजन** के मुकदमे में दिए गए निर्णय ने मद्रास राज्य सरकार द्वारा शैक्षिक संस्थानों में किए गए आरक्षणों को अविधिमान्य ठहरा दिया था और सरकारी नियोजन की परिधि से बाहर हर प्रकार के अधिमानी व्यवहार को विवक्षा से वर्जित कर दिया था। इस निर्णय के कारण दक्षिण भारत में आन्दोलन छिड़ गया और परिणामतः खण्ड (4) जोड़कर अनुच्छेद 15 में संशोधन किया गया। इस संशोधन के बारे में हुई बहस में भाग लेते हुए तत्कालीन प्रधान मंत्री नेहरू ने निम्नलिखित टिप्पणी की—

> इस सदन को भली-भांति मालूम है कि यह खास मामला इस खास शक्ल में मद्रास में हुई कुछ घटनाओं के कारण पैदा हुआ है और इसे दबाने की कोशिश करने की कोई जरूरत नहीं है।[1]

जबकि अन्य व्यक्तियों की आम राय यह थी कि उक्त संशोधन की मांग को मद्रास आन्दोलन से बल मिला है। शंकरय्या ने निम्नलिखित टिप्पणी की—

> इससे न केवल मद्रास सरकार का संबंध है बल्कि पूरे दक्षिण भारत— मैसूर राज्य, त्रावणकोर-कोचीन और बम्बई का भी है।[2]

देशमुख के विचार से यह समस्या मद्रास तक ही सीमित नहीं थी किन्तु पिछड़े वर्गों में अपेक्षाकृत अधिक जागृति आने तथा उनके आग्रही बनने के साथ-साथ यह अन्यत्र भी उत्पन्न होनी अपरिहार्य थी।[3]

पिछड़े वर्गों को शैक्षिक अधिमानता प्रदान करने की वांछनीयता इस संशोधन से संबंधित बहसों का प्रमुख विषय था तथा आंशिक रूप से उनका संबंध पिछड़े वर्गों की पहचान के प्रश्न (पिछड़े वर्ग कौन से हैं?) से भी था।

थोड़े से विचार-विमर्ष के बाद उक्त संशोधन से संबंधित विधेयक 16 मई, 1951 को एक प्रवर समिति को सौंपा गया था। अनुच्छेद 15(4) के संशोधन के बारे में और बहस 18, 29, 30, 31 मई तथा 1 और 2 जून को हुई थी। अनुच्छेद 15(4) को सन्निविष्ट करने वाला खण्ड 1 जून को तथा सम्पूर्ण विधेयक 2 जून को पारित किया गया। यह संशोधन संविधान द्वारा किए गए तीन प्रमुख परिवर्तनों में से एक था। अन्य दो से हमारा संबंध नहीं है।

अनुच्छेद 15(4) के मूल प्रारूप को अनुच्छेद 15(3) में, जो स्त्रियों और बच्चों के लिए विशेष व्यवस्था किए जाने को प्राधिकृत करता है, में निम्नलिखित शब्दों में जोड़ा जाना चाहिए था—

> अथवा नागरिकों के किसी पिछड़े वर्ग की शैक्षिक, आर्थिक अथवा सामाजिक उन्नति के लिए (4)

नेहरू ने इसका स्पष्टीकरण यह दिया कि प्रवर समिति ने उन शब्दों को जो अब अनुच्छेद 15(4) में है, इस कारण से चुना था कि वे (सामाजिक और शैक्षिक रूप से पिछड़े वर्ग) अनुच्छेद 340 में विद्यमान हैं और समिति उन्हें वहां से ज्यों का त्यों लेना चाहती थी।(5)

अतएव अनुच्छेद 15(4) की भाषा अनुच्छेद 340 के समरूप है जो यह उपबंधित करता है कि पिछड़े वर्गों का आयोग, जिसका गठन उक्त अनुच्छेद के अधीन किया जाएगा, नागरिकों के लिए सामाजिक और शैक्षिक रूप से पिछड़े वर्गों की सूची तैयार करेगा। इस मुद्दे पर कि क्या पहले उक्त आयोग और बाद में राष्ट्रपति द्वारा किया गया अवधारण अन्तिम होगा, सदस्य उत्तेजित हो गए। ठाकुर दास भार्गव[6] तथा एम०ए० आयंगर[7] जैसे कुछ सदस्यों ने उक्त अवधारण के अन्तिम होने की बात को यह सोचकर पसन्द किया कि उससे पिछड़े वर्ग उन वर्गों तक सीमित हो जाएंगे जिन्हें अनुच्छेद 340 के अधीन उक्त आयोग की सिफारिशों के बाद राष्ट्रपति विनिर्दिष्ट करेंगे जबकि हुकुम सिंह[8] और एस०पी० मुखर्जी[9] जैसे अन्य सदस्यों ने उस पर आपत्ति उठाते हुए कहा कि वे इस प्रकार सीमित नहीं होते। वस्तु अनुच्छेद 340 के अधीन विनिर्दिष्ट वर्गों की इस परिसीमा को स्पष्ट करने के उद्देश्य से प्रस्तुत किए गए एक संशोधन को सरकार ने स्वीकार नहीं किया और वह सदन में विफल हो गया[10]। सेठ गोविन्द दास और वेंकटरमण जैसे कुछ अन्य सदस्यों का विचार था कि पिछड़े वर्गों की पहचान का काम राज्य सरकारों के क्षेत्राधिकार में रहे और उन पर अपना काम ठीक प्रकार से करने का विश्वास किया जाए।

बहसों के परिशीलन से पता चलता है कि पिछड़े वर्गों के वर्गीकरण की कसौटी चाहे कुछ भी हो और उन्हें इस प्रकार चाहे कोई भी नामोद्दिष्ट करें, उन्हें जातियों अथवा समुदायों की सूची में रखा जाना अवश्यंभावी है। तत्कालीन कानून मंत्री अम्बेडकर ने निर्भीकता पूर्वक यह टिप्पणी की कि उक्त संशोधन आवश्यक है क्योंकि "जिन्हें हम पिछड़ा वर्ग कहते हैं वे— कतिपय जातियों के एकत्रीकरण के अतिरिक्त कुछ भी नहीं है।"[11] सदस्यों का विचार था कि इस उपबंध से साम्प्रदायिक कोटे का लाभ अपेक्षाकृत अधिक समुन्नत वर्गों को न उठाने दिया जाए। यद्यपि अधिमानता प्राप्त करने के पात्र वर्गों के आर्थिक पिछड़ेपन पर बल दिया गया था तथापि सरकार और वक्ताओं के ध्यान में मात्र गरीब ही नहीं थे। नेहरू ने तथ्यतः निम्नलिखित टिप्पणी की—

> "हमें एक ऐसी स्थिति से निपटना है जिसमें अनेक कारणों से पिछड़े समूह, वर्ग, व्यक्ति, समुदाय उत्पन्न हो गए हैं, जिनके लिए वर्तमान पीढ़ी को दोष नहीं दिया जा सकता, बल्कि इसके लिए पिछली पीढ़ी जिम्मेदार है। वे आर्थिक, सामाजिक, शैक्षिक कई तरह

---

1. संसदीय बहस, खण्ड XII-13(भाग II) कालम 9615
2. वही, 9000
3. वही 9775
4. वही, 8929
5. वही 9830
6. वही, 9719
7. वही, 9817
8. वही, 9823
9. वही, 9824
10. वही, 9832-33
11. वही, 9006

से पिछड़े हुए हैं—कभी-कभी वे उपर्युक्त रूपों में से किसी एक में पिछड़े नहीं होते किन्तु अन्य रूपों में पिछड़े होते हैं। यदि हम इन मामलों में वास्तव में उनका उत्थान चाहते हैं तो हमें उनके लिए कुछ न कुछ विशेष व्यवस्था करनी होगी।" [12]

यद्यपि उन्होंने किसी जाति विशेष का तो उल्लेख नहीं किया किन्तु यह स्पष्ट है कि उनकी दृष्टि में सभी असमानताओं को नहीं बल्कि सामाजिक ढांचे के साथ विशेष रूप से जुड़ी असमानताओं को समाप्त करने के लिए उपाय अवश्य थे।

हम उन सभी असंख्य विभाजनों को समाप्त करना चाहते हैं—जो हमारे सामाजिक जीवन में उत्पन्न हो गए हैं। हम उन्हें आपके किसी भी मनचाहे नाम से, जाति व्यवस्था अथवा धार्मिक विभाजन आदि, पुकार सकते हैं। हमारे समाज में आर्थिक विभाजन हैं किन्तु हम उन्हें मानते हैं और उनसे निपटने की कोशिश करते हैं—किन्तु एक ऐसे सामाजिक ढांचे में रहकर जिसका विकास अपने भीतर असंख्य दरारें या विभाजन लेकर हुआ है ····13

के०टी० शाह ने आर्थिक पिछड़ेपन का उपचार करने की आवश्यकता महसूस की थी। उन्होंने वर्गों शब्द को समाप्त करने और गुणवाचक बनाने के लिए "पिछड़े वर्गों" पद में "आर्थिक रूप से" शब्दों को जोड़ने का सुझाव दिया था।" [14] यद्यपि नेहरू को "आर्थिक रूप से" शब्दों के जोड़े जाने के प्रति कोई आपत्ति नहीं था, किन्तु वह किसी भी संशोधन को स्वीकार करने के इच्छुक नहीं थे, क्योंकि ऐसा करने से उक्त पद अनुच्छेद 340 में प्रयुक्त भाषा से भिन्न हो जाता। उन्होंने युक्तियुक्त रूप से कहा—

लेकिन यदि मैं "आर्थिक रूप से" शब्दों को जोड़ता भी हूं तो साथ ही मैं उसे संचयी नहीं बनाऊंगा, परन्तु हां यदि किसी व्यक्ति के पास इनमें से किसी चीज की कमी हो तो उसकी सहायता की जानी चाहिए।" "सामाजिक रूप से" शब्द कहीं अधिक व्यापक है जिनमें अनेक बातें शामिल हैं और "आर्थिक रूप से" शब्द तो निश्चित रूप से उनके अन्तर्गत आते हैं।[15]

सदन की प्रबल भावना यह थी कि जातियों और समुदायों की ऐसी सामाजिक असमानताओं के उपचार के लिए विशेष उपाय किए जाने आवश्यक हैं जिनके कारण समूहों के मध्य आर्थिक विषमता को बल मिलता है।

निष्कर्ष

बहसों से पता चलता है कि अनुच्छेद 15 के खण्ड 4 में पिछड़े वर्गों का विवेचन अनुच्छेद 340 के खण्ड 1 में उनके विवेचन के सदृश होना चाहिए। यही कारण था कि अनेक सदस्यों द्वारा यह कहे जाने के बावजूद, कि सामाजिक और शैक्षिक रूप से पिछड़े वर्गों की पहचान करने में आर्थिक पिछड़ेपन की अवहेलना न की जाए, अनुच्छेद 15 के खण्ड 4 में "आर्थिक रूप से" शब्दों को स्थान नहीं मिला।

समग्रतः यह स्पष्ट नहीं हुआ कि क्या पिछड़ेपन का अवधारण करने के लिए "जाति" एकमात्र कसौटी है। इस संबंध में नेहरू और अम्बेडकर के विचारों पर ध्यान देना समीचीन है। नेहरू ने यह मत व्यक्त किया था कि हमें सामाजिक ढांचे से जुड़ी सभी असमानताएं समाप्त करनी होंगी। इससे यह प्रतीत होता है कि सामाजिक ढांचे से उनका तात्पर्य आर्थिक विभाजनों से इतना नहीं था जितना कि जातिगत विभाजनों अथवा धार्मिक विभाजनों से था। अम्बेडकर ने उक्त मुद्दे के संबंध में अपनी बात अपेक्षाकृत अधिक विशिष्ट ढंग से कही—"जिन्हें हम पिछड़े वर्ग कहते हैं, वे कतिपय जातियों के एकत्रीकरण के अतिरिक्त कुछ भी नहीं है।"

पिछड़े वर्गों के आयोग की सिफारिशों के बाद राष्ट्रपति द्वारा पिछड़े वर्गों का सूचीकरण अन्तिम होने के लिए आवश्यक नहीं था। राज्य सरकारों से भी पिछड़े वर्गों की पहचान करने की अपेक्षा की गई थी।

---

12. वही 9616
13. वही
14. वही, 8121
15. वही, 9830

भाग II

अनुच्छेद 15(4) के अधीन मुकदमों का सारांश

आन्ध्र प्रदेश राज्य बनाम पी० सागर

ए०आई०आर० 1968 एस०सी० 1379

तथ्य

यह मुकदमा आंध्र प्रदेश उच्च न्यायालय द्वारा सागर बनाम **आंध्र प्रदेश राज्य** (ए०आई०आर० 1968 ए०पी० 165) में दिए गए निर्णय के विरुद्ध अपील में उच्चतम न्यायालय के समक्ष पेश किया गया था जिसमें आंध्र प्रदेश सरकार की चिकित्सा संस्थाओं में पिछड़े वर्गों के लिए सीटों का आरक्षण करने वाली जून 1966 की एक अधिसूचना को, जो तेलंगाना क्षेत्र के संबंध में जुलाई 1966 के और आंध्र क्षेत्र के संबंध में अगस्त 1966 के आदेश से उपांतरित की गई थी, इस कारण अविधिमान्य ठहरा दिया था कि सूची पूर्णतः जाति के आधार पर तैयार की गयी है।

विवादक

1. क्या पिछड़े वर्गों की पूर्णतः जाति पर आधारित सूची वैध है?

उद्धरण

न्यायमूर्ति शाह

6. जिस सन्दर्भ में 'वर्ग' शब्द का प्रयोग हुआ है उसमें उसका अर्थ ऐसे व्यक्तियों के सजातीय प्रवर्ग से है जो कतिपय समानताओं या एक-सी विशेषताओं के कारण समूह-बद्ध हो गए हों अथवा प्रास्थिति, रैंक, उपजीविका, निवास-स्थान, मूलवंश, धर्म तथा ऐसे ही अन्य गुणों जैसी सामान्य विशेषताओं के आधार पर पहचाने जा सकते हों। इस बात का अवधारण करने में, कि क्या कोई विशेष प्रवर्ग है, जाति को एकदम नहीं छोड़ा जा सकता। किन्तु किसी वर्ग का अवधारण करने की कोई ऐसी कसौटी भी स्वीकार नहीं की जा सकती जो पूर्णतः जाति अथवा समुदाय पर आधारित हो। अनुच्छेद 15 अपने खण्ड (1) द्वारा सरकार को किसी नागरिक के विरुद्ध केवल धर्म, मूलवंश, जाति, लिंग, निवास-स्थान अथवा इनमें से किसी एक के आधार पर भेदभाव बरतने से प्रतिषिद्ध करता है। अनुच्छेद 15 के खण्ड (3) के द्वारा सरकार को खण्ड (1) में अन्तर्विष्ट उपबन्ध के होते हुए भी स्त्रियों और बच्चों के लिए विशेष व्यवस्था करने की अनुमति प्रदान की गई है। खण्ड (4) द्वारा नागरिकों के सामाजिक और शैक्षिक रूप से पिछड़े वर्गों की समुन्नति के लिए अथवा अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों के लिए की गई कोई विशेष व्यवस्था खण्ड (1) के क्षेत्राधिकार से बाहर होगी। किन्तु खण्ड (4) खण्ड (1) का अपवाद है। अपवाद होने के कारण उसे इतना नहीं बढ़ाया जा सकता कि वह खण्ड (1) में प्रदत्त गारंटी को ही समाप्त कर दे। संसद ने व्यक्तियों के अपेक्षाकृत कमजोर प्रवर्गों की समुन्नति के लिए व्यवस्था किए जाने की अनुज्ञा प्रदान करके तथा खण्ड (4) को अधिनियमित करके, नागरिकों के समानता के अधिकार और कमजोर प्रवर्गों की विशेष आवश्यकताओं के मध्य संतुलन कायम करने का प्रयत्न किया है। इस उद्देश्य से कि खण्ड (4) लागू किया जा सके, यह स्पष्ट है कि विशेष व्यवस्था के हिताधिकारी सामाजिक और शैक्षिक रूप से पिछड़े वर्ग हैं और वे अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों से भिन्न है तथा की गई व्यवस्था उनकी समुन्नति के लिए है। समाज के अपेक्षाकृत कमजोर प्रवर्गों के हितों को अग्रसर करने के लिए आरक्षण को अंगीकार किया जा सकता है किन्तु ऐसा करके समय यह सुनिश्चित किया जाना चाहिए कि पात्र और योग्य उम्मीदवार शिक्षा संस्थानों में प्रवेश पाने से अपवर्जित न हों। पिछड़ेपन का अवधारण करने का मानदण्ड पूर्णतः धर्म, मूलवंश, जाति, लिंग अथवा जन्म स्थान पर आधारित न हो तथा उनका सामाजिक और शैक्षिक पिछड़ापन वैसा ही हो जिससे अनुसूचित जातियां और अनुसूचित जनजातियां पीड़ित रहती है। ये सिद्धान्त वे हैं जो **एम०आर० बालाजी** के मुकदमे में इस न्यायालय के निर्णय में प्रतिपादित किए गए थे।

7. अनुच्छेद 15(4) के प्रयोजनार्थ पिछड़े वर्गों को अवधारण करने के लिए आंध्र प्रदेश सरकार ने जातियों की 21 जून, 1963 की जो सूची तैयार की थी उसे आंध्र प्रदेश उच्च न्यायालय में **पी० वासुदेव** के मुकदमे (1966-1 आंध्र डब्ल्यू०आर० 294) में अविधिमान्य घोषित कर दिया। संशोधित नियमों के अधीन कुछ उपान्तरणों सहित एक प्रथम सूची प्रकाशित की गई थी किन्तु देखने में उसकी मूल योजना में कोई परिवर्तन नहीं किया गया था। यह सच है कि मुख्य सचिव तथा समाज कल्याण निदेशक ने उच्च न्यायालय में इस आशय के हलफनामे दाखिल किए थे कि उसने उसे प्रस्तुत किए गए अभ्यावेदनों पर विचार किया था, विधि सचिव से परामर्श लिया था, पिछड़े वर्गों के विश्लेषण से संबंधित कतिपय पुस्तकों, यथा-थर्स्टन की पुस्तक "कास्ट एण्ड ट्राइब्स" तथा मिराजुल हसन की पुस्तक "कास्ट्स एण्ड ट्राइब्स" से सहायता ली थी और अपनी सिफारिशें प्रस्तुत की थीं जिन्हें मंत्रिपरिषद द्वारा नियुक्त एक उप समिति ने उपान्तरित कर दिया था और अन्त में मंत्रिपरिषद ने पिछड़े वर्गों की एक अन्तिम सूची तैयार की थी। किन्तु उच्च न्यायालय के समक्ष वह सामग्री पेश नहीं की गई जिस पर मंत्रिमंडलीय उप समिति या मंत्रिपरिषद् ने विचार किया था और पिछड़े वर्गों के अवधारण के प्रयोजनार्थ अंगीकृत मानदण्डों के बारे में भी कोई साक्ष्य नहीं दिया गया था। इस संबंध में उच्च न्यायालय ने निम्नलिखित टिप्पणी की--

> "सरकार की ओर से दाखिल किए गए इस हलफनामें (मुख्य सचिव के) तथा समाज कल्याण निदेशक के हलफनामे के भी परिशीलन से यह पता चलता है कि इनमें इस बारे में कुछ भी नहीं कहा गया है कि मंत्रिमंडलीय उपसमिति अथवा मंत्रिपरिषद् के समक्ष पेश की गई सामग्री क्या थी, जिससे हम निष्कर्ष निकाल सकें कि पिछड़े वर्गों की सूची तैयार करने में उच्चतम न्यायालय के न्यायमूर्तियों द्वारा निर्धारित मानदण्ड लागू किए गए हैं।" विधि सचिव की राय और समाज कल्याण निदेशक के विचारों पर ध्यान देने के बाद उन्होंने टिप्पणी की--
>
> "——हम यह अभिनिश्चय करने में असमर्थ हैं कि क्या कोई सामग्री जिसके आधार पर पिछड़े वर्गों की सूची तैयार की गई थी, मंत्रिमंडलीय उप समिति के समक्ष पेश की गई थी, यदि हां तो वह सामग्री कौन-सी थी। दूसरी ओर यह भी कहा गया कि विधि सचिव ने विधिक अपेक्षाओं को विनिर्दिष्ट करते हुए तथा समाज कल्याण निदेशक ने वर्ग अथवा वर्गों के सामाजिक और शैक्षिक पिछड़ेपन के संबंध में एक विशेषज्ञ के रूप में सलाह देते हुए एक सूची साथ बैठकर तैयार की थी।"

उच्च न्यायालय के समक्ष एक जोरदार दलील यह पेश की गई कि समाज कल्याण निदेशक और विधि सचिव की विशेषज्ञता का भाव उठाया

जाना यह साबित करता है कि उस सूची को तैयार करने में सुसंगत सामग्री पर विचार किया गया था और वे इस बात से संतुष्ट थे कि पिछड़े वर्गों का अवधारण करते समय सही कसौटियां प्रयोग में लाई गई थीं और इस कारण से उच्च न्यायालय उक्त सूची को स्वीकार कर ले। उच्च न्यायालय ने इस दलील के संबंध में टिप्पणी की —

> "——पिछड़े वर्गों की जिस सूची को चुनौती दी गई है उसके बारे में इस न्यायालय के समक्ष प्रस्तुत की गई किसी सामग्री के आधार पर सरकार न तो यह कह सकती है और न ही उसने कहा है कि यह अनुच्छेद 15(4) में उपबंधित अपवाद के अन्तर्गत आती है। वास्तव में ऐसी कोई सामग्री है ही नहीं जिसके आधार पर हम यह कह सकें कि सरकार ने पिछड़े वर्गों की सूची तैयार करते समय उपरिनिर्दिष्ट मुकदमों में उच्चतम न्यायालय के न्याय-मूर्तियों द्वारा प्रतिपादित मानदण्ड लागू किए थे। हम विद्वान् महाधिवक्ता के इस तर्क को स्वीकार नहीं कर सकते कि 'एक बार सबूत मिल जाना पर्याप्त होता है कि सरकार ने मामले पर सद्भावपूर्वक विचार किया था।' इस तर्क को स्वीकार कर लेने का अर्थ मनमानी करना और जिस पक्षकार पर उक्त सूची के उक्त अपवाद के अन्तर्गत होने का सबूत देने का भार है उसे सबूत देने से मुक्त करना होगा। यहां यह तथ्य सुसंगत नहीं है कि कार्य सद्भावपूर्वक किया गया था और उसमें कहीं भी असद्भाव नहीं था।"

8. अनुच्छेद 15 का खण्ड (1) एक ऐसे मूल अधिकार की गारंटी प्रदान करता है जिसका जनता के लिए आमतौर पर अत्यधिक महत्व है। कतिपय निर्धारित सीमाओं के भीतर रहते हुए खण्ड (1) में प्रदत्त स्वतंत्रता की गारंटी पर एक अपवाद का रोपण किया गया है, किन्तु किसी अपवाद के अन्तर्गत कार्य करने की स्थिति में उन परिस्थितियों की विद्यमानता सिद्ध किया जाना बहुत आवश्यक है जो मूल अनुच्छेद के उपबंधों से विपथन को न्यायोचित ठहराती है। जब किसी न्यायालय के समक्ष इस संबंध में विवाद उत्पन्न हो गया हो कि भेदभाव के विरुद्ध गारंटी से असंगत कोई विशेष विधि, इस दलील के आधार पर कि उसे अनुच्छेद 15 के खण्ड (4) के अधीन अनुमति प्राप्त है, विधिमान्य है तो सरकार का यह प्राख्यान कि उसके अधिकारियों ने न्यायालयों द्वारा यह अवधारण करने के लिए कि नागरिकों के सामाजिक और शैक्षिक रूप से पिछड़े वर्ग कौन से हैं, अपनाए जाते रहे मानदण्डों पर ध्यान दिया था अथवा यह कि प्राधिकारियों ने नागरिकों के सामाजिक और शैक्षिक रूप से पिछड़े वर्गों का अवधारण करने के लिए सद्भावपूर्वक कार्य किया था, उसके दावे को विधिमान्य ठहराने के लिए पर्याप्त नहीं होगा। इस देश के न्यायालयों में इस देश के नागरिकों तथा अन्य व्यक्तियों के मूल अधिकारों का अतिलंघन करने वाले कानून की विधिमान्यता का अवधारण करने की शक्ति निहित है और जब कोई ऐसा प्रश्न उठ खड़ा होता है कि क्या किसी गारंटीकृत मूलाधिकार का प्रथम दृष्टया अतिलंघन करने वाला कोई कानून अपवाद के अन्तर्गत आता है तो उसकी विधिमान्यता का अवधारण भी उन्हें अपने सामने प्रस्तुत की गई सामग्री के आधार पर करना होता है। यह कह देने मात्र से कि कानून उससे संबंधित सुसंगत साक्ष्य और मानदण्डों का पूरा ध्यान रखकर बनाया गया है और यह अपवाद के अन्तर्गत आता है, न्यायालय का यह अवधारित करने का क्षेत्राधिकार अपवर्जित नहीं हो जाता कि उक्त कानून बनाने में किसी मूलाधिकार का अतिलंघन हुआ है, या नहीं।

9. उच्च न्यायालय ने अपने निर्णय में बार-बार यह टिप्पणी की है कि उनके समक्ष रिकार्ड में कोई ऐसी सामग्री बिल्कुल भी पेश नहीं की गई है जिसके आधार पर वह निर्णय दे सके कि यह अवधारण करने के लिए कि क्या सरकार द्वारा तैयार की गई सूची अनुच्छेद 15 के खण्ड (4) के अपेक्षाओं के अनुसार थी, इस न्यायालय द्वारा निर्धारित मानदण्डों का पालन किया गया था। सरकार की ओर से केवल यह प्राख्यान किया गया है कि विशेषज्ञ अधिकारियों और विधि सचिव की सहायता से वस्तुतः पूछताछ की गई थी और संबंधित राज्य सरकार अधिकारियों, मंत्रिमंडलीय उपसमिति और मंत्रीमंडल ने हर दृष्टि से संबंधित प्रश्न की जांच कर ली थी। परन्तु क्या जांच करते समय सही मानदण्ड लागू किए गए थे कोई ऐसी बात नहीं है जिसके बारे में कोई भी धारणा बनाई जा सके और वह भी तब जब कि तैयार की गई सूची स्पष्टतः जातियों और समुदायों पर आधारित हो और सारभूत रूप से वही सूची हो जिसका विखण्डन उक्त उच्च न्यायालय ने **पी० वासूदेव** के मुकदमे (1966–I आंध्र डब्ल्यू०आर० 294) में कर दिया था। जिन व्यक्तियों ने उक्त सूची तैयार और प्रकाशित की थी उनकी प्रयोजन के प्रति ईमानदारी को न तो चुनौती दी जा रही है और न ही दी गई थी, परन्तु नागरिकों के मूलाधिकारों का प्रकटतः अतिलंघन करने वाले किसी ऐसे कानून की विधिमान्यता केवल इस कारण से निर्णीत नहीं की जा सकती कि विधि निर्माता इस बारे में संतुष्ट था कि उसने जो कुछ भी किया वह ठीक था अथवा वह यह विश्वास करता है कि उसने नागरिकों को संविधान द्वारा प्रदत्त गारंटियों के संगत ढंग से कार्य किया है। किसी नागरिक के मूलाधिकारों का अतिलंघन करने के लिए अभिकथित किसी कानून, अथवा ऐसे कानून के निष्पादन के संबंध में किए गए किसी कार्य की विधिमान्यता की कसौटी विधि निर्माता अथवा विधि का निष्पादन करने वाले किसी व्यक्ति का विश्वास न होकर न्यायालय के समक्ष साक्ष्य और तर्क द्वारा इस बात का प्रदर्शन है कि गारंटीकृत अधिकार का अतिलंघन नहीं किया गया है।

निर्णय

चूंकि उक्त राज्य सरकार ने यह साबित करने के लिए पर्याप्त सामग्री न्यायालय के समक्ष पेश नहीं की थी कि पिछड़े वर्गों की उक्त सूची पूर्णतः जाति के आधार पर तैयार नहीं की गई थी बल्कि सुसंगत कारणों पर पूरा ध्यान दिया गया था, अतः न्यायालय ने आंध्र प्रदेश सरकार की अधिसूचना को अविधिमान्य घोषित कर दिया था।

जनार्दन मुच्चरप्पा बनाम मैसूर राज्य

ए०आई०आर०, 1963 एस०सी० 702

इस मुकदमे ने यह स्पष्ट कर दिया कि बालाजी के मुकदमे में उच्चतम न्यायालय के निर्णय ने अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों के पक्ष में किए गए आरक्षण की विधिमान्यता को प्रभावित नहीं किया। उक्त आरक्षण (अनुसूचित जातियों के लिए 15 प्रतिशत और अनुसूचित जनजातियों के लिए 3 प्रतिशत) लागू रहा। मैसूर राज्य सरकार का सन् 1962 का आदेश केवल सामाजिक और शैक्षिक रूप से पिछड़े वर्गों के लिए किए गए आरक्षण के संबंध में संयुक्त किया गया था।

एम०आर० बालाजी बनाम मैसूर राज्य

ए०आई०आर० 1963 एस०सी० 649

तथ्य

कर्नाटक राज्य सरकार (तत्कालीन मैसूर राज्य सरकार) सन् 1958 से ही अपने नागरिकों के सामाजिक और शैक्षिक रूप से पिछड़े वर्गों की समुन्नति के लिए अनुच्छेद 15(4) के अधीन विशेष व्यवस्था का प्रयत्न कर रही थी और इस संबंध में जब भी उसने कोई आदेश पारित किया उसकी विधिमान्यता को उच्च न्यायालय में रिट दायर करके चुनौती दे दी गई थी और उच्च न्यायालय ने उसे मंसूख कर दिया था। इस मुकदमें में उक्त सरकार द्वारा सन् 1962 में पारित किए गए अन्तिम आदेश को चुनौती देते हुए अनुच्छेद 32 के अधीन याचिकाएं दाखिल की गई थीं। इस अन्तिम आदेश से पहले सन् 1961 में एक आदेश और पारित किया जा चुका था। सन् 1961 का आदेश उक्त राज्य सरकार द्वारा गठित नगन गौड़ समिति के नाम से अभिहित एक विशेषज्ञ समिति की सिफारिशों को ध्यान में रखते हुए पारित किया गया था जिसने उक्त राज्य के पिछड़े वर्गों के वर्गीकरण के लिए उनकी पहचान के मानदण्ड की समस्या की छानबीन की थी। उक्त समिति ने यह निर्णय लिया था कि वर्तमान परिस्थितियों में राज्य के पिछड़े वर्गों का वर्गीकरण जातियों और समुदायों के आधार पर करना ही व्यावहारिक है और उन्हें दो श्रेणियों—पिछड़े और अपेक्षाकृत अधिक पिछड़े—में उपविभाजित किया जाना चाहिए। सन् 1962 का आदेश सारभूत रूप से इस समिति द्वारा निर्धारित शर्तों पर आधारित था। उक्त आदेश का सार यह था कि उसने (अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों के कोटे को निकालकर) अन्य पिछड़े वर्गों के लिए 50 प्रतिशत कोटा निर्धारित किया था। इस 50 प्रतिशत कोटे में से 28 प्रतिशत कोटा तथाकथित पिछड़े वर्गों और शेष 22 प्रतिशत कोटा अपेक्षाकृत अधिक पिछड़े वर्गों के लिए आरक्षित किया गया था। अनुसूचित जातियों का 15 प्रतिशत तथा अनुसूचित जनजातियों का 3 प्रतिशत कोटा स्थिर रखा गया था। फलतः इंजीनियरी, मेडिकल तथा अन्य प्राविधिक कालेजों में प्रवेश के लिए उपलब्ध सीटों में से 68 प्रतिशत सीटें वर्गों के लिए आरक्षित कर दी गई तथा मैरिट पूल के लिए केवल 32 प्रतिशत सीटें उपलब्ध रह गई। अतः उक्त आदेश को इस आधार पर चुनौती दी गई थी कि जिन समुदायों पर उक्त आदेश लागू होता है उनके सामाजिक पिछड़ेपन का अवधारण ऐसे ढंग से किया गया है जो अनुच्छेद 15(4) के अधीन अनुमेय नहीं है।

विवाद्यक

(i) सामाजिक और शैक्षिक पिछड़ेपन की पहचान करने के मानदण्ड क्या हैं?

(ii) सामाजिक पिछड़ेपन का अवधारण करने में 'जाति' की क्या भूमिका है?

(iii) क्या पिछड़े वर्गों का उक्त श्रेणियों में उपवर्गीकरण विधि मान्य है?

(iv) क्या आरक्षण की प्रमात्रा अत्यधिक है?

उद्धरण

न्यायमूर्ति गजेन्द्रगड़कर:—अनुच्छेद 15(4) में प्रयुक्त पदावली 'पिछड़े वर्ग' की व्याप्ति और सीमा पर विचार करते समय इस बात का ध्यान रखने की आवश्यकता है कि उक्त अनुच्छेद में पिछड़ेपन की जो संकल्पना की गई है वह इस दृष्टि से सापेक्षिक नहीं है कि पिछड़े वर्गों में वे वर्ग भी शामिल कर लिए जाएं जो समाज के सर्वाधिक समुन्नत वर्गों की तुलना में पिछड़े हुए हैं। यदि सर्वाधिक समुन्नत वर्गों के होने के कारण ऐसी सापेक्षित कसौटियां प्रयोग में लाई जाती है तो पिछड़े वर्गों के अनेक स्तर बन जाएंगे और उनमें से प्रत्येक अपने आपको अनुच्छेद 15(4) के अधीन पिछड़े वर्गों की सूची में शामिल किए जाने का दावा करेगा। उक्त सरकार के महाधिवक्ता ने हमारे सामने इस स्थिति को विवाद का मुद्दा नहीं बनाया है। अनुच्छेद 15(4) के अधीन पिछड़ापन सामाजिक और शैक्षिक पिछड़ापन होना चाहिए। पिछड़ेपन का सामाजिक पिछड़ापन या शैक्षिक पिछड़ापन होना पर्याप्त नहीं है, बल्कि वह सामाजिक और शैक्षिक दोनों प्रकार का पिछड़ापन होना चाहिए और यही बात हमें इस प्रश्न की ओर ले जाती है कि सामाजिक और शैक्षिक पिछड़ेपन का अवधारण किस प्रकार किया जाए।

हम पहले सामाजिक पिछड़ेपन के प्रश्न को लेते हैं। हम किस कसौटी से यह तय करें कि कोई वर्ग विशेष सामाजिक रूप से पिछड़ा हुआ है या नहीं? नागरिकों के जिन समूहों पर अनुच्छेद 15(4) लागू होता है उन्हें 'नागरिकों के वर्ग' बताया गया है न कि नागरिकों की जातियां। शब्दकोश में वर्ग शब्द का जो अर्थ दिया गया है उसके अनुसार वह प्रास्थिति, रैंक अथवा जाति के अनुसार समाज के विभाजन को प्रदर्शित करता है। दुर्भाग्यवश हिन्दू समाज के ढांचे में तो जाति नागरिकों की प्रास्थिति के अवधारण में महत्वपूर्ण भूमिका अदा करती है। चाहे समाज-शास्त्रियों और वेदों के विद्वानों के अनुसार जाति व्यवस्था मूल रूप से उपजीविका अथवा काम के आधार पर प्रारम्भ हुई हो किन्तु कालान्तर में वह कठोर हो गई और उसकी नम्यता समाप्त हो चुकी है। जाति व्यवस्था के इतिहास को देखने से पता चलता है कि कार्य और जीविका पर टिके उसके मूलाधार पर बाद में धार्मिक संकल्पनाओं पर आधारित पवित्रता के बन्धन कसते चले गए और वह ऐसी शाखाओं—प्रशाखाओं में बंटती चली गई जिनसे उसमें अनम्यता और कठोरता आ गई। इस कृत्रिम विकास ने अनिवार्यतः श्रेष्ठता और हीनता की भावना पैदा करने तथा संकीर्ण जातिगत निष्ठाओं का पोषण करने की प्रवृत्ति को जन्म दिया। अतः इस समस्या को सुलझाते समय कि क्या नागरिकों का कोई वर्ग सामाजिक रूप से पिछड़ा हुआ है या नहीं, नागरिकों के उक्त वर्ग की जाति पर विचार करना असंगत नहीं होगा। तथापि, इस संबंध में इस बात का ध्यान रखना आवश्यक है कि उक्त विशेष व्यवस्था नागरिकों के वर्गों के लिए अभिप्रेत है न कि उसी स्थिति वाले पृथक-पृथक नागरिकों के लिए। इस प्रकार यद्यपि नागरिकों के समूह की जाति सुसंगत हो सकती है किन्तु उसको अत्यधिक महत्व न दिया जाए। यदि नागरिकों के पिछड़े वर्गों के वर्गीकरण का एकमात्र आधार उनकी जाति को बना दिया गया तो वह सदैव तर्कसंगत नहीं रहेगा और सम्भवतः उसमें स्वयं जातियों को ही शाश्वत बनाने का दुर्गुण आ जाएगा।

इसके अतिरिक्त यदि नागरिकों के समूह के सामाजिक पिछड़ेपन का अवधारण करने के लिए उसकी जाति को एकमात्र आधार बना लिया गया तो वह कसौटी भारतीय समाज के ऐसे अनेक प्रवर्गों के संबंध में

अनिवार्य रूप से असफल सिद्ध होगी जो जातियों को उस पारम्परिक दृष्टिकोण से मान्यता प्रदान नहीं करते जिस रूप में हिन्दू समाज करता है। कोई व्यक्ति किस आधार पर यह तय करेगा कि मुसलमान, ईसाई अथवा जैन, या लिंगायत भी सामाजिक रूप से पिछड़े हुए है या नहीं? जाति पर आधारित उक्त कसौटी इन समूहों पर लागू तो होगी ही नहीं साथ ही वह अनुच्छेद 15(4) के प्रवर्तन से इनके अपवर्जित किए जाने को मुश्किल से ही न्यायोचित ठहरा पाएगी। यह असम्भव नहीं है कि कुछ राज्यों में समूहों में रहने वाले कुछ ऐसे मुसलमान अथवा ईसाई अथवा जैन हों जो सामाजिक रूप से पिछड़े हुए हों। इसी कारण से हमारी राय में यद्यपि हिन्दुओं के संबंध में जातियां, नागरिकों के वर्गों अथवा समूहों के सामाजिक पिछड़ेपन का अवधारण करने के लिए सुसंगत कारक हो सकती है, जिन पर विचार किया जा सकता है किन्तु इस संबंध में उन्हें एकमात्र अथवा प्रमुख कसौटी नहीं बनाया जा सकता। अन्तिम रूप से विश्लेषण करने पर हम यही पाते हैं कि एक बहुत बड़ी सीमा तक सामाजिक पिछड़ापन गरीबी का ही परिणाम है। नागरिकों के दयनीय रूप से गरीब वर्ग स्वतः ही सामाजिक रूप से पिछड़ जाते हैं। उनकी समाज में कोई प्रास्थिति नहीं होती और इसलिए उन्हें पिछड़ा स्थान लेकर संतुष्ट होना पड़ता है। यह सच है कि गरीबी से उत्पन्न होने वाले सामाजिक पिछड़ेपन की गम्भीरता उस समय और भी बढ़ जाती है जब गरीब नागरिकों की जाति पर भी विचार किया जाता है किन्तु इससे यही सिद्ध होता है कि नागरिकों के पिछड़ेपन का अवधारण करने में जाति और गरीबी दोनों ही सुसंगत है।

नागरिकों को सामाजिक रूप से पिछड़ा बनाने में उनकी उपजीविका का भी योगदान रहता है। हमारे समाज में कुछ उपजीविकाएं ऐसी हैं जो पारम्परिक मान्यताओं के अनुसार हीन मानी जाती हैं और उन्हें अपनाने वाले नागरिकों के वर्ग सामाजिक रूप से पिछड़ जाते हैं। व्यक्तियों के समुदायों के पिछड़ेपन के अवधारण में निवास स्थान की भूमिका भी छोटी नहीं होती। इस संबंध में, एक प्रकार से सामाजिक पिछड़ापन ग्रामवासी भारत की समस्या है। अतः ग्रामीण क्षेत्रों में सामाजिक रूप से पिछड़ी स्थिति में रहने वाले नागरिकों के वर्ग अनुच्छेद 15(4) के क्षेत्राधिकार में आते हैं। निस्सन्देह यह अवधारित करना एक बहुत जटिल समस्या है कि सामाजिक रूप से पिछड़े वर्ग कौन-कौन से हैं। समाज-शास्त्र की दृष्टि से इस समस्या को हल करने में सामाजिक और आर्थिक पहलू महत्वपूर्ण भूमिका अदा करते हैं तथा यह अवधारित करने के लिए कि कौन-कौन से वर्ग सामाजिक रूप से पिछड़े हुए हैं, उचित मानदण्ड तैयार करना स्पष्टतः एक बहुत ही जटिल कार्य है। इसके लिए व्यापक छानबीन और आंकड़ों का संग्रहण करने तथा उक्त आंकड़ों की युक्तियुक्त और वैज्ञानिक ढंग से जांच करने की आवश्यकता होगी। यह कार्य उस सरकार का है जिस की मंशा अनुच्छेद 15(4) के अधीन कार्रवाई करने की होती है। प्रस्तुत याचिकाओं के निपटारे के लिए इस न्यायालय को केवल यह तय करना है कि क्या आक्षिप्त आदेश को पारित करने के बारे में सरकार द्वारा प्रयोग में लाई गई कसौटियां अनुच्छेद 15(4) के अधीन विधिमान्य हैं? यदि यह प्रतीत होता है कि सरकार द्वारा उस संबंध में आदेश में प्रयोग में लाई गई कसौटी अनुचित और अविधिमान्य है तो उस कसौटी के आधार पर किए गए सामाजिक रूप से पिछड़े वर्गों के वर्गीकरण के संबंध में यह अभिनिर्धारित करना ही होगा कि वह अनुच्छेद 15(4) की अपेक्षाओं से असंगत है।

तो फिर उक्त राज्य सरकार ने आक्षिप्त आदेश को पारित करने के बारे में कौन सी कसौटी का प्रयोग किया है? हम पहले देख ही चुके हैं कि उक्त राज्य सरकार द्वारा नियुक्त नगन गौड़ समिति का झुकाव किसी समुदाय के सामाजिक पिछड़ेपन के प्रश्न के अवधारण का लगभग एक मात्र आधार जाति को मानने की ओर था। यद्यपि उक्त समिति ने निस्सन्देह प्रासंगिक रूप से समुदाय की ग्राम आर्थिक स्थिति को एक सहायक कारक बताया है किन्तु जिस ढंग से उसने पिछड़े और अपेक्षाकृत अधिक पिछड़े वर्गों के नामों की सूची तैयार की है उससे इस बात में सन्देह करने की कोई गुंजाइश नहीं रह जाती कि उनके मस्तिष्क पर हावी कसौटी जाति ही थी, जो यदि एकमात्र नहीं तो प्रधान अवश्य थी। जब हम आक्षिप्त आदेश पर ध्यान देते हैं तो स्थिति बिल्कुल स्पष्ट हो जाती है। उक्त आदेश ने 10 जुलाई 1961 के पूर्ववर्ती आदेश को ही आरक्षण की प्रमात्रा के बारे में कुछ परिवर्तन करके अंगीकार कर लिया है। अतः यह देखने के लिए उक्त पूर्ववर्ती आदेश की जांच करना आवश्यक है कि पिछड़े वर्गों का वर्गीकरण करते समय सरकार ने किस कसौटी का प्रयोग किया था। 10 जुलाई, 1961 के आदेश की उद्देशिका में स्पष्ट और असंदिग्ध रूप से यह कहा गया है कि समिति इस निष्कर्ष पर पहुंची है कि वर्तमान परिस्थितियों में राज्य के पिछड़े वर्गों का वर्गीकरण करने की एकमात्र व्यावहारिक विधि यही है कि जातियों और समुदायों को उसका आधार बनाया जाए और राज्य सरकार इसे स्वीकार करती है। दूसरे शब्दों में, उक्त आदेश के बारे में उस स्थिति में जिसमें यह है, इस संबंध में सन्देह की कोई गुंजाइश नहीं है कि राज्य सरकार ने पिछड़े और अपेक्षाकृत अधिक पिछड़े वर्गों का वर्गीकरण केवल उनकी जातियों को व्यावहारिक आधार मानकर किया था। यह सच है कि पिछड़े वर्गों में लिंगायतों को शामिल किए जाने के समर्थन में कुछ अन्य कारकों का उल्लेख उक्त आदेश में किया गया है, किन्तु नगन गौड़ समिति की रिपोर्ट और राज्य सरकार द्वारा 10 जुलाई, 1961 तथा 31 जुलाई, 1962 को पारित किए गए आदेशों से इस बारे में कोई संकेत नहीं मिलता कि वर्गीकरण के प्रश्न को हल करने के लिए जाति से भिन्न कोई अन्य कसौटी प्रयोग में लाई गई थी। विद्वान महाधिवक्ता ने यह तर्क देकर कि 10 जुलाई, 1961 के आदेश की उद्देशिका में किए गए कथन का शाब्दिक अर्थ न लगाया जाए और उसके सुसंगत अंश में प्रयुक्त शब्द बनावटी नहीं है, यह सुझाया है कि उक्त आदेश का आधार एकमात्र जातियां नहीं है। हम इस दलील को नहीं मानते। हमने नगन गौड़ समिति की रिपोर्ट और उसके द्वारा की गई सिफारिशों को ध्यान में रखते हुए उक्त दोनों आदेशों पर विचार किया है और हम इस बारे में संतुष्ट हैं कि सरकार ने नागरिकों के सामाजिक रूप से पिछड़े वर्गों का जो वर्गीकरण किया है वह केवल जातियों के आधार पर हुआ है और उसमें अन्य सुसंगत कारकों का ध्यान नहीं रखा गया है। ऐसी स्थिति में जिन समुदायों पर उक्त आक्षिप्त आदेश लागू होता है, उनके सामाजिक पिछड़ेपन का अवधारण एक ऐसे ढंग से किया गया है जो अनुच्छेद 15(4) के अधीन अनुमेय नहीं है और जिससे वर्गीकरण में एक ऐसी अशक्तता आ जाएगी जो उसकी विधिमान्यता के लिए घातक होगी।

हमारे विचार के लिए दूसरा प्रश्न नागरिकों के वर्गों के शैक्षिक पिछड़ेपन से संबंधित है। नगन गौड़ समिति की रिपोर्ट और आक्षिप्त आदेश ने उक्त राज्य के सभी हाई स्कूलों की अंतिम तीन कक्षाओं में उक्त समुदाय के प्रति हजार नागरिकों में, छात्रों की औसत संख्या को यह प्रश्न हल करने का आधार बनाया है। समिति उसे उपलब्ध कराए गए आंकड़ों, जो निश्चित रूप से निकटतम है किन्तु पूर्णतः यथार्थ नहीं है, के आधार पर इस निष्कर्ष पर पहुंची थी कि उक्त राज्य के सभी हाई स्कूलों की अंतिम तीन कक्षाओं में छात्राओं की संख्या का राजकीय औसत प्रति हजार 6.9 था। समिति ने यह तय किया था कि वे सभी जातियां जिन के छात्रों का औसत राज्य के प्रति हजार 6.9 के औसत से कम है पिछड़े समुदाय मान ली जाएं और उसने यह भी अभिनिर्धारित किया कि यदि किसी समुदाय के छात्रों का औसत राजकीय औसत के 50 प्रतिशत से कम हो तो उसे अपेक्षाकृत अधिक पिछड़ा वर्ग मान लिया जाए। यह स्वीकार किया जा सकता है कि नागरिकों के किसी वर्ग के पिछड़ेपन का अवधारण करने में जनगणना रिपोर्टों के साक्षरता संबंधी आंकड़ों की कसौटी पर्याप्त नहीं होगी किन्तु इसमें संदेह है कि हाई स्कूल की अंतिम तीन कक्षाओं में छात्रों की औसत संख्या की कसौटी

शैक्षिक पिछड़ेपन का अवधारण करने के लिए पर्याप्त है। इस तथ्य को ध्यान में रखते हुए कि उक्त कसौटी का आशय यह अवधारित करना है कि शैक्षिक रूप से पिछड़े वर्ग कौन-कौन से है तथापि उसके स्तर को उतना ऊंचा रखना आवश्यक अथवा उचित नहीं है जितना उक्त समिति ने रखा है। यदि हम यह मान भी ले कि प्रयोग में लाई गई उक्त कसौटी युक्तियुक्त तथा अनुच्छेद 15(4) के अधीन अनुमेय है तो इस प्रश्न का उत्तर नहीं मिलता कि क्या उन जातियों अथवा समुदायों को शैक्षिक रूप से पिछड़े वर्ग मानना वैध होगा जिनकी शिक्षा का स्तर राजकीय औसत से थोड़ा-सा नीचे है। यदि प्रति हजार 6.9 के राजकीय औसत से नीचे होने की कसौटी पर खरे उतरने वाले किसी समुदाय का शैक्षिक स्तर उक्त औसत से थोड़ा-सा नीचे है तो उसे पिछड़ा हुआ नहीं माना जा सकता। नागरिकों के ऐसे वर्ग स्पष्ट रूप से पिछड़े हुए वर्ग है जिनमें छात्रों की संख्या का औसत राजकीय औसत के 50 प्रतिशत से नीचे है। अतः हमारी राय में सरकार का पिछड़े वर्गों की सूची में उन जातियों अथवा समुदायों को शामिल करना न्यायोचित नहीं है जिनमें प्रति हजार छात्रों की संख्या का औसत राजकीय औसत से किंचित ऊपर या बहुत निकट या थोड़ा-सा नीचे है।

आपको याद होगा कि नगर गौड़ समिति ने लिंगायतों को पिछड़ा वर्ग न मानने की सिफारिश की थी परन्तु सरकार का निर्णय उससे भिन्न है। जुलाई 1961 के आदेश के अनुसार यह निर्णय लेते समय सरकार का मत यह रहा है कि निकटतम पूर्णांक की सहायता से वस्तुओं की संख्या की तरह निकाले गए इन आंकड़ों से ऐसे निर्धारण संभव नहीं हैं जो गणित की दृष्टि से पूर्णतः शुद्ध हों। इस प्रकार राजकीय औसत प्रति हजार 6.9 से बढ़ाकर 7 कर दिया गया। राजकीय औसत को बढ़ाकर 7 कर दिए जाने के बाद भी लिंगायत समुदाय की स्थिति यह थी कि उसके प्रति हजार छात्रों की संख्या का औसत उक्त समिति के निष्कर्ष के अनुसार 7.1 और सरकार के निर्णय के अनुसार 7 था और तो भी उसे उक्त आदेश के अधीन नागरिकों का शैक्षिक रूप से पिछड़ा हुआ एक वर्ग अभिनिर्धारित किया गया है। यह परिणाम राजकीय औसत में 0.1 जोड़कर और लिंगायतों के औसत में से 0.1 घटाकर प्राप्त किया गया है। इसी प्रकार गनिगों को पिछड़े वर्गों की सूची में शामिल कर लिया गया है जिनमें प्रति हजार छात्रों की संख्या का औसत 7 है। यदि राजकीय औसत 6.9 या 7 है तो हमारी राय में उन समुदायों को शैक्षिक रूप से पिछड़ा हुआ मानना स्पष्टतः त्रुटिपूर्ण होगा जिनमें छात्रों की संख्या का औसत राजकीय औसत के बराबर है।

मुसलमानों के संबंध में उक्त समिति में बहुमत इस पक्ष में था कि उनका पूरा समुदाय सामाजिक रूप से पिछड़ा हुआ मान लिया जाए। इस निष्कर्ष का उल्लेख निष्कर्ष मात्र के रूप में किया गया है और उसके समर्थन में किन्हीं आंकड़ों अथवा कारणों का हवाला नहीं दिया गया है। इस समुदाय के छात्रों की संख्या का औसत प्रति हजार 5 है जो हमारी राय में, राजकीय औसत से इतना कम नहीं है कि उसके आधार पर इसे मैसूर राज्य में शैक्षिक रूप से पिछड़ा हुआ वर्ग मान लिया जाए। अतः हम इस तर्क से संतुष्ट नहीं है कि सरकार का यह सोचना न्याय-संगत है कि वे समुदाय अथवा जातियां पिछड़े वर्ग मान लिए जाएं जिनमें छात्रों की संख्या का औसत राजकीय औसत के बराबर या उससे थोड़ा-सा नीचे है। यदि छात्र संख्या का राजकीय औसत शैक्षिक रूप से पिछड़ेपन की कसौटी बनाया जाता है तो उससे न्यायसंगत राय यही बनेगी कि नागरिकों के वर्ग शैक्षिक रूप से पिछड़े वर्ग माने जा सकते हैं जिनमें छात्र संख्या का औसत राजकीय औसत से काफी अथवा तात्विक रूप से कम है। इस मुद्दे के संबंध में हम कोई निश्चित नियम निर्धारित करने का सुझाव नहीं दे रहे हैं क्योंकि इस मामले पर विचार करने तथा इसे अनुच्छेद 15(4) की अपेक्षाओं के अनुरूप तय करने का काम उक्त सरकार का ही है।

इस संबंध में हम यह कहना आवश्यक समझते हैं कि उक्त आदेश द्वारा पिछड़े वर्गों और अपेक्षाकृत अधिक पिछड़े वर्गों के रूप में किया गया उपवर्गीकरण अनुच्छेद 15(4) के अधीन न्यायसंगत प्रतीत नहीं होता। अनुच्छेद 15(4) ऐसे पिछड़े वर्गों के लिए विशेष व्यवस्थाएं किए जाने को प्राधिकृत करता है जो वास्तव में पिछड़े हुए है। पिछड़े वर्गों की दो श्रेणियां बनाने में आक्षिप्त आदेश का अभिप्राय नागरिकों के उन सभी वर्गों के फायदे के लिए उपाय खोज निकालना है जो उक्त राज्य के सर्वाधिक समुन्नत वर्गों की तुलना में कम समुन्नत है और हमारी राय में ऐसा करना अनुच्छेद 15(4) की परिधि में नहीं आता। आक्षिप्त आदेश में प्रयुक्त तरीके के फलस्वरूप उक्त राज्य की लगभग 60 प्रतिशत जन संख्या पिछड़ी हुई मान ली गई है जिससे यह स्पष्ट हो जाता है कि उक्त आदेश वस्तुतः किस प्रकार राज्य की जनसंख्या को सर्वाधिक समुन्नत जनसंख्या और शेष जनसंख्या में विभाजित करता है और शेष जन संख्या की दो श्रेणियां—पिछड़ी और अपेक्षाकृत अधिक पिछड़ी बनाता है। अतः उक्त दो श्रेणियों में किया गया वर्गीकरण अनुच्छेद 15(4) से समर्थित नहीं है।

निर्णय

(i) सामाजिक पिछड़ेपन के अवधारण के लिए जातियां, गरीबी, उपजीविकाएं, निवास-स्थान आदि कुछ सुसंगत कारक है। शैक्षिक रूप से पिछड़ेपन के संबंध में न्यायालय ने कहा कि हाई स्कूल की अन्तिम तीन कक्षाओं में छात्रों की संख्या के औसत की कसौटी को उचित माना जाना सन्देहास्पद है। न्यायालय ने आगे कहा कि यदि यह मान भी लिया जाए कि उक्त कसौटियां विधिमान्य थीं और राजकीय औसत प्रति हजार 6.9 था तो भी उक्त कसौटी पर खरा उतरने वाला कोई समुदाय पिछड़ा हुआ नहीं माना जा सकता। उसका स्तर राजकीय औसत की तुलना में काफी नीचा होना चाहिए।

(ii) यद्यपि भारतीय समाज के परिप्रेक्ष्य में 'जाति' सुसंगत है तो भी वह सामाजिक पिछड़ेपन की एक मात्र अथवा प्रधान कसौटी नहीं बनाई जा सकती। इससे समाज में जातिप्रथा का दुर्गुण शाश्वत बन जाएगा।

(iii) पिछड़ी और अपेक्षाकृत अधिक पिछड़ी श्रेणियों में पिछड़ेपन का उपवर्गीकरण सांविधानिक रूप से अनुमेय नहीं है।

(iv) अनुसूचित जातियों, अनुसूचित जनजातियों और पिछड़े वर्गों के लिए किए गए कुल 68 प्रतिशत आरक्षण के बारे में न्यायालय ने यह अभिनिर्धारित किया कि वह अत्यधिक है।

उत्तर प्रदेश राज्य बनाम प्रदीप टंडन

ए०आई०आर० 1975 एस०सी० 563

तथ्य

इस मुकदमे के तथ्य भी वही थे जो **सुभाष चन्द** के मकदमे के थे। उच्चतम न्यायालय में यह मुकदमा उस निर्णय के विरुद्ध अपील में आया था।

विवाद्यक

क्या उत्तर प्रदेश सरकार का वह आदेश सांविधानिक रूप से विधिमान्य था जिसमें ग्रामीण क्षेत्रों, पर्वतीय क्षेत्रों और उत्तराखण्ड के अभ्यर्थियों के लिए आरक्षण से संबंधित अनुदेश दिए गए थे?

उद्धरण

मुख्य न्यायमूर्ति ए० एन० राय:—बालाजी के मुकदमे (1963 अनुपूरक 1 एस०सी०आर० 439 = 1963 एस०सी० 649) (सुपरा) में यह स्पष्ट किया गया था कि अनुच्छेद 15(4) में प्रयुक्त पदावली "सामाजिक और शैक्षिक रूप से पिछड़े वर्ग" में वर्णित सामाजिक और शैक्षिक पिछड़ापन अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों के पिछड़ेपन के सदृश होना चाहिए। पदावली "नागरिकों के सामाजिक और शैक्षिक रूप से पिछड़े वर्ग" को परिभाषित करना कठिन है। नागरिकों की पारम्परिक अपरिवर्तनशील उपजीविकाओं का उनके सामाजिक और शैक्षिक पिछड़ेपन में काफी योगदान रहता है। निवास स्थान और उनके पर्यावरण से भी सामाजिक और शैक्षिक पिछड़ेपन का अवधारण किया जा सकता है।

पदावली "नागरिकों के वर्ग" किन्हीं ऐसे व्यक्तियों के सजातीय प्रवर्ग को निर्दिशित करती है जो कतिपय समानताओं और सामान्य विशेषताओं के कारण समूहबद्ध हो गए हों और जिनकी पहचान उनके कुछ सामान्य गुणों से की जा सकती हो। नागरिकों के वर्ग की ऐसी सजातीयता ही उनका सामाजिक और शैक्षिक पिछड़ापन है। नागरिकों की जाति अथवा धर्म अथवा जन्म स्थान की समानता उन्हें "नागरिकों का वर्ग" बनाने वाले सामान्य गुणों का समान तत्व नहीं होगी।

सामाजिक पिछड़ेपन की विशेषताएं हैं—उसमें कोई सामाजिक ढांचा नहीं होता, कोई सामाजिक अधिक्रम नहीं होता। उसमें प्रौद्योगिकी के माध्यम से पर्यावरण को नियंत्रित करने के साधन नहीं होते। उसमें समाज का कोई ऐसा संगठन नहीं होता जो व्यक्तियों के उत्थान तथा अर्थ-व्यवस्था के सुधार की प्रेरणा दे सके। कस्बों और उद्योगों का निर्माण, नकदी अर्थ-व्यवस्था का संवर्द्धन आदि जैसे अनेक कारक ऐसे समाज के विकास की प्रक्रिया में विद्यमान नहीं होते जिनसे अधिक से अधिक धन प्राप्त होता है तथा उसे साधनों की स्थिति में भारी परिवर्तन करके ही सम्पन्न बनाया जा सकता है। उच्च भूमि और पहाड़ियों का वित्तीय मूल्यों और प्राकृतिक साधनों की दृष्टि से विकास किया जाना अपेक्षित है। प्रकृति एक खजाना है। शिक्षा और प्रौद्योगिकी की सहायता से वन, पर्वत, नदियां उत्पादन कर सकती हैं और समाज को समुन्नति के पथ पर ले जा सकती हैं।

उत्तर प्रदेश के पर्वतीय और उत्तराखण्ड क्षेत्र इन कारणों से नागरिकों के सामाजिक और शैक्षिक रूप से पिछड़े वर्गों के दृष्टान्त प्रस्तुत करते हैं। किसी क्षेत्र के पिछड़ेपन का निर्णय इस आधार पर किया जाता है कि क्या उसके पास अपनी खुद की इतनी आर्थिक क्षमता है जिससे वह उसमें रहने वाले व्यक्तियों का भरण-पोषण कर सके और उन्हें रहन-सहन का स्तर और स्थायी सम्पत्ति प्रदान कर सके। आर्थिक दृष्टि से नागरिकों के वर्ग तब पिछड़े हुए होते हैं जब वे अपने साधनों का फलोत्पादक प्रयोग नहीं कर पाते। यदि भूमि के बड़े-बड़े क्षेत्रों में ऐसे विरल, अव्यवस्थित और अशिक्षित लोग रह रहे हों, जिनकी सम्पत्ति थोड़ी और नगण्य हो तो वहां सामाजिक पिछड़ेपन का तत्व पाया जाता है। जब पर्वतीय और उत्तराखण्ड क्षेत्रों की भांति संचार के साधनों और तकनीकी सुविधाओं के अभाव में किसी प्रदेश को कारगर ढंग से अनुकूल बनाना सम्भव न हो तो वहां के व्यक्ति नागरिकों के सामाजिक रूप से पिछड़े वर्ग होंगे। दूरस्थ स्थानों पर व्यक्तियों के लिए नगण्य अवसर व्यक्तियों के सामाजिक पिछड़ेपन की दीवार खड़ी कर देते हैं।

शैक्षिक पिछड़ेपन का अभिनिश्चय इन कारकों को ध्यान में रख कर किया जाता है—यदि किसी क्षेत्र के व्यक्तियों की सामाजिक और पर्यावरणीय परिस्थितियों अथवा व्यावसायिक बाधाओं के कारण शिक्षा के संबंध में परम्परागत उदासीनता हो तो वह क्षेत्र शैक्षिक रूप से पिछड़ा हुआ होगा। पर्वतीय और उत्तराखण्ड क्षेत्र अगम्य है। वहां पर शैक्षिक संस्थानों और शिक्षा के लिए सहायक सामग्री की कमी है। पर्वतीय और उत्तराखण्ड क्षेत्रों के व्यक्ति नागरिकों के शैक्षिक रूप से पिछड़े वर्गों का दृष्टांत प्रस्तुत करते हैं क्योंकि शिक्षा की सुविधाओं की कमी उन्हें निष्क्रिय बनाए रखती है और उन्हें न तो शिक्षा के अर्थ और महत्व का पता होता है और न ही उनमें शिक्षा के प्रति जागृति होती है।

सन् 1971 की जनगणना के अनुसार भारत की जनसंख्या 54.79 करोड़ थी। इसमें से 43.89 करोड़ या 80.1 प्रतिशत व्यक्ति ग्रामीण क्षेत्रों में रहते हैं। 10.90 करोड़ या 19.9 प्रतिशत व्यक्ति शहरों और कस्बों में रहते हैं। सन् 1921 में भारत की ग्रामीण जनसंख्या 88.8 प्रतिशत थी। सन् 1971 में यह घटकर 80.1 प्रतिशत रह गई थी। सन् 1971 में उत्तर प्रदेश की जनसंख्या मोटे-तौर पर साढ़े सात करोड़ और उत्तराखण्ड की भाढ़ साढ़े लाख थी। उत्तर प्रदेश में पर्वतीय क्षेत्रों की जनसंख्या लगभग 25 लाख थी। यह बात समझ में नहीं आती कि ग्रामीण क्षेत्रों के 80.1 प्रतिशत व्यक्ति या उत्तर प्रदेश के ग्रामीण क्षेत्रों के 7 करोड़ व्यक्ति किस प्रकार गरीबी के कारण सामाजिक रूप से पिछड़े हुए बताए जा सकते हैं। इसके अतिरिक्त निश्चित रूप से यह भी कहना सम्भव नहीं है कि गरीबी ग्रामीण व्यक्तियों की एक सामान्य विशेषता है। इस न्यायालय ने **जे०पी० परिमू बनाम जम्मू और कश्मीर राज्य** (1973) 3 एस०सी०आर० 236 = (ए०आई०आर० 1973, एस०सी० 930 = 1973 लेब०आई०सी० 565) में यह कहा था कि यदि गरीबी पिछड़ेपन का अवधारण करने की अनन्य कसौटी हो तो हमारे देश की जनसंख्या का एक बड़ा भाग नागरिकों का सामाजिक और शैक्षिक रूप से पिछड़ा वर्ग बन जाएगा। गरीबी सर्वत्र स्पष्ट रूप से परिलक्षित होती है और वह सम्भवतः शैक्षिक रूप से समुन्नत और सामाजिक रूप से सम्पन्न वर्गों में तो और भी अधिक है। गरीबी के इस आधार पर कि शहरी क्षेत्रों के व्यक्ति गरीब नहीं हैं और ग्रामीण क्षेत्रों के व्यक्ति गरीब हैं, हमारे देश की जनसंख्या के विभाजन का समर्थन न तो तथ्यों से होता

है और न ही किसी ऐसे विभाजन पर जिसमें एक ओर तो शहरी व्यक्ति हों और दूसरी ओर सामाजिक और शैक्षिक रूप से पिछड़े वर्ग के ग्रामीण व्यक्ति।

ग्रामीण क्षेत्रों में रहने वाले व्यक्तियों में से कुछ शैक्षिक रूप से, कुछ सामाजिक रूप से और कुछ सामाजिक और शैक्षिक दोनों रूप से पिछड़े हुए हो सकते हैं।

उत्तर प्रदेश की जनसंख्या का 80 प्रतिशत भाग, जो ग्रामीण क्षेत्रों में निवास करता है, के बारे में यह नहीं कहा जा सकता कि वह स्वतः ही एक सजातीय वर्ग बन गया है। वे व्यक्ति एक ही प्रकार के व्यक्ति नहीं हैं। उनकी उपजीविकाएं भिन्न हैं। उनका रहन-सहन अलग-अलग प्रकार का है। जनसंख्या स्वतः ही एक वर्ग नहीं बन सकती। उसमें ग्रामीणता के तत्व विद्यमानता उसे वर्ग नहीं बना देती। यह कहना कि ग्रामीण क्षेत्रों के व्यक्ति सामाजिक और शैक्षिक रूप से पिछड़े हुए हैं, उक्त राज्य के अधिकांश व्यक्तियों के लिए आरक्षण करना है।

ग्रामीण क्षेत्रों के लिए आरक्षण की बात इस आधार पर नहीं मानी जा सकती कि वे नागरिकों के सामाजिक और शैक्षिक रूप से पिछड़े वर्गों का प्रतिनिधित्व करते हैं। यह आरक्षण उक्त राज्य के अधिकांश व्यक्तियों के लिए किया गया प्रतीत होता है। उक्त राज्य की 80 प्रतिशत जनसंख्या एक सजातीय वर्ग नहीं हो सकती। ग्रामीण क्षेत्रों में व्याप्त गरीबी किसी ऐसे वर्गीकरण का आधार नहीं हो सकती जो ग्रामीण क्षेत्रों के लिए आरक्षण का समर्थन कर सके। भारत के प्रत्येक भाग में गरीबी देखने को मिलती है। सीटों के आरक्षण संबंधी अनुदेशों में यह व्यवस्था की गई है कि आरक्षित सीटों के लिए आवेदन करने वाले ग्रामीण क्षेत्रों के अभ्यर्थी को चाहिए कि वह अपने आवेदन-पत्र में अपने जिले के जिला मजिस्ट्रेट से लिया गया इस आशय का प्रमाण-पत्र प्रस्तुत करे कि उसका जन्म ग्रामीण क्षेत्र में हुआ है और उसका वहां स्थायी निवास स्थान है और वह वहां रह रहा है अथवा उसका जन्म भारत में हुआ और उसके माता-पिता अब भी ग्रामीण क्षेत्र में रहकर जीविकोपार्जन कर रहे हैं। इस प्रकार हम देखते हैं कि ग्रामीण क्षेत्रों में पैदा होना ही मूल योग्यता बना दिया गया है। अतः जन्म स्थान के आधार पर कोई आरक्षण नहीं किया जा सकता क्योंकि इससे अनुच्छेद 15 का उल्लंघन होगा।

यह सिद्ध करने का भार उक्त सरकार पर है कि आरक्षण नागरिकों के सामाजिक और शैक्षिक रूप से पिछड़े वर्गों के लिए किया गया है उक्त सरकार ने यह सिद्ध कर दिया है कि पर्वतीय और उत्तराखंड क्षेत्रों के व्यक्ति नागरिकों के सामाजिक और शैक्षिक रूप से पिछड़े हुए वर्ग हैं।

निर्णय

(i) पर्वतीय और उत्तराखण्ड क्षेत्रों के अभ्यर्थियों के लिए किया गया आरक्षण विधिमान्य अभिनिर्धारित किया गया।

(ii) ग्रामीण क्षेत्रों के अभ्यर्थियों के लिए किया गया आरक्षण अविधिमान्य अभिनिर्धारित किया गया।

आन्ध्र प्रदेश राज्य बनाम एम०वी० बलराम

ए०आई०आर० 1972 एस०सी० 1375

तथ्य

आन्ध्र प्रदेश सरकार द्वारा कुछ वर्ष पहले नियुक्त किए गए पिछड़े वर्गों के आयोग ने 30 जून 1970 को ऐसे व्यक्तियों की विभिन्न श्रेणियों के सम्बन्ध में अपनी रिपोर्ट पेश कर दी थी जो पिछड़े वर्ग या पिछड़े वर्ग से सम्बन्धित माने जाएंगे तथा उसने पिछड़े वर्गों से सम्बन्धित व्यक्तियों के लिए 30 प्रतिशत सीटों के आरक्षण की सिफारिश की थी। उक्त आयोग ने सामाजिक और शैक्षिक पिछड़ेपन की पहचान करने के लिए निम्नलिखित मानदण्ड अपनाए थे :—

(i) पूरे वर्ग अथवा समुदाय में आमतौर पर व्याप्त गरीबी।

(ii) निकृष्ट, अस्वच्छ, अशोभनीय और अलाभकर प्रकृति की उपजीविकाएं अथवा कोई ऐसी उपजीविका जिसका कोई असर या शक्ति न हो।

(iii) हिन्दुओं के सम्बन्ध में जाति।

(iv) शैक्षिक पिछड़ापन।

उक्त राज्य सरकार ने पिछड़े वर्गों के आयोग की रिपोर्ट के आधार पर तारीख 23 सितम्बर, 1970 के शासनादेश सं० 1793 नोटिफिकेशन द्वारा उन विभिन्न पिछड़े वर्गों के अभ्यर्थियों के लिए एम०बी०बी०एस० पाठ्यक्रम में 25 प्रतिशत सीटों का आरक्षण कर दिया था जिनके नामों का उल्लेख उक्त आदेश में किया गया था। अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों के लिए आरक्षण का प्रतिशत क्रमशः 14 और 4 था।

उक्त राज्य के आयोग द्वारा किए गए पिछड़े वर्गों के निरूपण और 25 प्रतिशत सीटों का आरक्षण करने वाले सरकार के पश्चात्वर्ती आदेश को उच्च न्यायालय में चुनौती दी गई, जिसने यह अभिनिर्धारित किया कि वे अनुच्छेद 15(1) और 129(2) का अतिक्रमण करते हैं तथा अनुच्छेद 15(4) से उनकी बचत नहीं होती। इस तर्क का आधार यह था कि उक्त आयोग ने पिछड़े वर्गों की सूची तैयार करने में "जाति" को आधार बनाया था।

अपील पर मामला उच्चतम न्यायालय में आया था।

विवाद्यक

(i) क्या "जाति" पिछड़े वर्गों की गणना का आधार बनाई जा सकती है ?

(ii) क्या आरक्षण की प्रमात्रा अत्यधिक थी ?

उद्धरण

न्यायमूर्ति वेंकटलिंगम

68. उक्त आयोग द्वारा तैयार की गई सूची सरकार द्वारा भी पूर्णतः मान ली गई थी और उसने यह घोषित किया था कि उक्त शासनादेश में विनिर्दिष्ट जातियां और समुदाय संविधान के अनुच्छेद 15(4) के प्रयोजनार्थ सामाजिक और शैक्षिक रूप से पिछड़े हुए वर्ग हैं। हालांकि आयोग ने पिछड़े वर्गों के लिए व्यावसायिक कालेजों में 30 प्रतिशत सीटों के आरक्षण की सिफारिश की थी तो भी सरकार के उक्त आदेश के अनुसार यह निर्णय था कि पिछड़े वर्गों के लिए व्यावसायिक कालेजों में केवल 25 प्रतिशत सीटें आरक्षित की जाएं। सरकार ने उक्त आयोग की यह सिफारिश भी मान ली थी कि पिछड़े वर्गों का वर्गीकरण चार समूहों में किया जाए और यह निदेश दिया था कि व्यावसायिक कालेजों में आरक्षित 25 प्रतिशत सीटों का विभाजन उक्त चार समूहों में उनकी जनसंख्या के आधार पर उस अनुपात में किया जाए जिसका उल्लेख उक्त शासनादेश में किया गया है। सरकार ने यह भी स्पष्ट कर दिया था कि उक्त आयोग की आरक्षण सम्बन्धी सिफारिशों के प्रति उसकी स्वीकृति प्रथमतः 10 वर्ष की अवधि तक लागू रहेगी, उसके बाद स्थिति पर पुनर्विचार किया जाएगा।

69. हमने उन परिस्थितियों पर ध्यान दिया है जिनके कारण 1970 का आक्षिप्त शासनादेश सं० 1793 पारित किया गया है : उक्त आयोग के प्रस्तावों के सम्बन्ध में उच्च न्यायालय द्वारा की गई आलोचना का मूल्यांकन करने के लिए उसकी रिपोर्ट की प्रमुख विशेषताओं पर ध्यान देना आवश्यक है। पिछड़े वर्गों के आयोग की रिपोर्ट अनुबन्ध "ख" के रूप में हमारे सामने है। आयोग ने अपनी नियुक्ति होते ही एक प्रश्नावली जारी की थी जो उनकी रिपोर्ट में उल्लिखित विभिन्न प्राधिकरणों और संगठनों में व्यापक रूप से परिचालित की गई थी। उक्त प्रश्नावली में अनेक ऐसी बातें हैं जो व्यक्तियों के पिछड़ेपन का अभिनिश्चय करने के लिए अपनाए जाने वाले मानदण्डों तथा व्यक्तियों के सामाजिक और शैक्षिक रूप से पिछड़ेपन से सम्बद्ध मामलों के बारे में सूचना से सम्बन्ध रखती हैं। आयोग ने उक्त प्रश्नावली का वितरण करने के अतिरिक्त सभी सरकारी विभागों के अध्यक्षों से भी इस सम्बन्ध में सूचना मांगी थी कि प्रत्येक वर्ग अथवा समुदाय से सम्बन्धित कितने व्यक्ति उनके विभिन्न विभागों में नियुक्त हैं। उसने कालेजों के, जिनमें व्यावसायिक प्राविधिक कालेज भी शामिल थे, प्रधानाचार्यों से भी इस सम्बन्ध में सूचना मांगी थी कि 1967-68 के शैक्षिक वर्ष में उनके कालेजों में प्रत्येक वर्ग अथवा समुदाय के छात्रों की कितनी-कितनी संख्या थी। इस प्रकार उक्त राज्य के सभी हाई स्कूलों तथा बहुद्देश्यीय हाई स्कूलों के प्रधानाध्यापकों से भी आयोग ने इस सम्बन्ध में सूचना देने का अनुरोध किया था कि उनके स्कूलों में पिछले 10 वर्षों में प्रत्येक समुदाय के कुल कितने-कितने छात्र पढ़े थे और 1968-69 के शैक्षिक वर्ष में उन छात्रों की वर्गवार और समुदायवार संख्या कितनी-कितनी थी जो छठी से ग्यारहवीं तक की कक्षाओं में पढ़ते थे।

70. आयोग ने उक्त राज्य के सभी जिलों का दौरा किया था और अनेक समुदायों के प्रतिनिधियों से शपथ पर लिए गए साक्ष्य रिकार्ड किए थे। जिलों के दौरे के दौरान उक्त आयोग विभिन्न समुदायों के घरों और झोपड़ियों में भी गए थे और उन्होंने उनमें रहने वाले व्यक्तियों से उनके रहन-सहन की स्थिति, रिवाजों, अन्य समुदायों के साथ सम्बन्धों और उनकी समस्याओं के बारे में मौखिक पूछताछ भी की थी। आयोग ने जिन-जिन स्थानों का दौरा जिन-जिन तारीखों को किया था उनका ब्यौरा उसकी रिपोर्ट के परिशिष्ट IV में दिया गया है। आयोग ने पड़ोसी राज्यों मद्रास, मैसूर और केरल का भी दौरा किया ताकि वे उन सरकारों

के उन अधिकारियों के साथ विचार-विमर्श कर सकें जो पिछड़े वर्गों के कल्याण कार्यों से सम्बद्ध थे। रिपोर्ट के अनुसार विभिन्न स्थानों के लगभग 820 व्यक्तियों से पूछताछ की गई और लगभग 180 व्यक्तियों ने लिखित ज्ञापन प्रस्तुत किए। आयोग द्वारा जारी की गई प्रश्नावली के जनता से एक बड़ी संख्या में उत्तर प्राप्त हुए थे। उक्त आयोग का कथन है कि ग्रामों के दौरे और दर्शन के दौरान उन्हें विभिन्न समुदायों के रहन-सहन की स्थिति और स्तर का अध्ययन करने का अवसर मिला था। आयोग ने निस्सन्देह इस तथ्य का निर्देश किया है कि उन्हें विभिन्न समुदायों की जनसंख्या तथा उनमें साक्षर व्यक्तियों के प्रतिशतता से सम्बन्धित अद्यतन सांख्यिकीय सूचना उपलब्ध नहीं थी। 1931 की जनगणना के बाद जातिवार आंकड़े इकट्ठे न किए जाने के कारण कठिनाई और बढ़ गई। जहां तक आन्ध्र क्षेत्र का सम्बन्ध है 1921 की जनगणना के आंकड़े उपलब्ध थे। तेलंगाना क्षेत्र के सम्बन्ध में 1931 की जनगणना के जातिवार आंकड़े उपलब्ध थे। आयोग को उक्त दोनों क्षेत्रों की 1968 में जनसंख्या का प्राक्कलन उपलब्ध आंकड़ों के आधार पर करना पड़ा था। आयोग ने 1968 में प्रत्येक जाति की जनसंख्या का निर्धारण कुल जनसंख्या में होने वाली वृद्धि की प्रतिशतता की सहायता से किया था। आयोग द्वारा किया गया यह प्राक्कलन उक्त रिपोर्ट के परिशिष्ट V में दिया गया है।

71. साक्षरता के सम्बन्ध में आयोग ने पूरे राज्य की औसत छात्र संख्या के सापेक्ष वर्ग अथवा समुदाय विशेष में प्रति हजार दसवीं और ग्यारहवीं कक्षाओं के छात्रों की प्रतिशतता अपनाई थी। जिन कारणों से यह कार्य विधि अपनाई गई थी वे अध्याय VI में दिए गए हैं। हालांकि दसवीं और ग्यारहवीं कक्षाओं में प्रत्येक समुदाय के छात्रों की संख्या के सम्बन्ध में उक्त राज्य के लगभग 2224 हाई स्कूलों और उच्चतर माध्यमिक विद्यालयों से सूचना मांगी गई थी परन्तु केवल 50 प्रतिशत संस्थानों ने अपेक्षित सूचना भेजी थी। आयोग ने उक्त संस्थानों के 50 प्रतिशत से, जो 1100 स्कूलों की अपेक्षा कुछ ज्यादा है, प्राप्त उत्तरों के आधार पर एक औसत निकाला था। रोजगार के सम्बन्ध में हम आयोग द्वारा संगृहीत आंकड़ों का हवाला देना आवश्यक नहीं समझते। आयोग ने स्वयं उन कठिन समस्याओं का उल्लेख किया है जो उसे मुलझानी पड़ी थीं।

72. अध्याय IV और V पिछड़े वर्गों से सम्बन्धित सांविधानिक उपबन्धों तथा उनके सामाजिक और शैक्षिक पिछड़ेपन के अभिनिश्चय के लिए उच्च न्यायालय और इस न्यायालय द्वारा निर्धारित सामान्य सिद्धान्तों के बारे में हैं।

73. अध्याय IV आयोग द्वारा व्यक्तियों के सामाजिक और शैक्षिक पिछड़ेपन के अभिनिश्चय के लिए अपनाए गए मानदण्डों अथवा कसौटियों के बारे में है। संबंधित व्यक्तियों के व्यापार अथवा उपजीविकाओं तथा अन्य सहयोगी बातों का अतिव्यापक सर्वेक्षण करने के बाद सामाजिक पिछड़ेपन के बारे में उक्त आयोग ने यह उल्लेख किया है कि जाति अथवा समाज के केवल ऐसे व्यक्ति पिछड़े वर्गों के वर्गीकरण में समूहबद्ध किए जा सकते हैं जो परम्परागत रूप से अस्वच्छ और अशोभनीय उपजीविकाओं को अपनाते चले आए हैं। इस सम्बन्ध में आयोग ने पूरे वर्ग अथवा समुदाय में आमतौर पर व्याप्त गरीबी नागरिकों के वर्ग द्वारा अपनाई गई उपजीविका, जो निकृष्ट और अस्वच्छ, अशोभनीय अथवा अलाभकर मानी जाती अथवा जिसका कोई असर या शक्ति नहीं होती, और हिन्दुओं के संबंध में जाति, पर ध्यान दिया है।

74. शैक्षिक पिछड़ेपन के संबंध में आयोग ने इस तथ्य पर ध्यान दिया है कि विगत 10 वर्षों में उक्त राज्य सरकार ने शिक्षा को बच्चों के लिए प्राथमिक स्तर पर अनिवार्य, तथा आठवीं कक्षा तक लड़कों और ग्यारहवीं कक्षा तक लड़कियों के लिए निःशुल्क बनाकर अपनी जनता की व्यापक शैक्षिक समुन्नति के अनेक उपाय किए हैं। उसने इस तथ्य का ध्यान रखा है कि वर्ष 1968-69 में लड़कों की शिक्षा की हाई स्कूल तक निःशुल्क कर दी गई थी। इस तथ्य को ध्यान में रखते हुए कि साक्षरता और शिक्षा के क्षेत्र में समुन्नति होने के कारण अब हाई स्कूल की अन्तिम कक्षा (ग्यारहवीं) में सफलता, लोक सेवा में नियुक्ति तथा विश्व-विद्यालय और प्राविधिक शिक्षा संस्थानों में प्रवेश के लिए न्यूनतम योग्यता मानी जाती है, आयोग की राय यह है कि शैक्षिक पिछड़ेपन का अभिनिश्चय करने के लिए अन्तिम दोनों कक्षाओं, यथा दसवीं और ग्यारहवीं, को मानक बनाना उचित है। इस संबंध में उसने जम्मू और कश्मीर सरकार द्वारा नियुक्त की गई, पिछड़े वर्गों की समिति, जिसकी अध्यक्षता भारत के भूतपूर्व मुख्य न्यायमूर्ति डा० पी० बी० गजेन्द्रगडकर ने की थी, की रिपोर्ट का हवाला दिया है। इस समिति ने यह राय व्यक्त की है कि शैक्षिक पिछड़ेपन के अवधारण के लिए नवीं और दसवीं कक्षाओं में पढ़ने वाले छात्रों की संख्या अभिनिश्चित की जानी चाहिए। उक्त समिति ने इस प्रकार की राय व्यक्त करने के जो कारण बताए थ उनका हवाला उक्त आयोग ने अपनी रिपोर्ट में दिया है। उसके बाद आयोग ने इस तथ्य पर ध्यान दिया है कि उक्त राज्य में दसवीं और ग्याहरवीं कक्षाओं में औसत छात्र संख्या लगभग प्रति हजार 4.55 है। इस आधार पर वे इस सिद्धांत को लागू करने की ओर अग्रसर हुए हैं कि वे समुदाय जिन के छात्रों की संख्या इन कक्षाओं में राजकीय औसत से काफी कम है शैक्षिक रूप से पिछड़े हुए मान लिए जाएं। यहां आयोग ने पुनः इस तथ्य का हवाला दिया है कि छात्र संख्या के संबंध में केवल 50 प्रतिशत स्कूलों से आंकड़े उपलब्ध होने के कारण उन्हें उन्हीं आंकड़ों के आधार पर पूरे राज्य पर लागू होने वाला औसत निकालना पड़ा है। यद्यपि स्कूलों से प्राप्त आंकड़े यह प्रदर्शित करते हैं कि कतिमय समूहों में शिक्षा का स्तर किंचित ऊंचा है तथापि आयोग का विश्वास है कि स्कूलों द्वारा प्रदत्त उक्त प्रतिशतता के आंकड़े बिल्कुल सही नहीं हो सकते क्योंकि उन्होंने उनके रहन-सहन की परिस्थितियों को स्वयं देखा है। इस बात को ध्यान में रखकर आयोग ने यह अभिनिर्धारित किया है कि वे शिक्षा की दृष्टि से वास्तव में पिछड़े हुए हैं।

75. अध्याय VII में सामाजिक और शैक्षिक दृष्टि से पिछड़े वर्गों की सूची दी गई है और इन में से प्रत्येक ग्रुप के संबंध में विस्तार से टिप्पणी दी गई है कि आयोग इन्हें सामाजिक और शैक्षिक दृष्टि से पिछड़े हुए क्यों समझता है। उस अध्याय में आयोग ने ग्रुपों के नामों, उन ग्रुपों के उप-विभाजनों, उनके परम्परागत व्यवसायों और उनकी सामाजिक, आर्थिक और शैक्षिक स्थिति से संबंधित अन्य विभिन्न मामलों की भी विस्तार से चर्चा की है। परिशिष्ट VI में, जिसमें कि सामाजिक और शैक्षिक दृष्टि से पिछड़े वर्गों की मदवार सूची दी गई है, एक सारणीबद्ध विवरण दिया गया है जिसमें समुदाय के नाम, उसके परम्परागत व्यवसाय और 1968 में उसकी जनसंख्या संबंधी सूचना दी गई है, । ऐसे प्रत्येक वर्ग के बारे में जिसे आयोग ने पिछड़े वर्ग के रूप में माना है, परिशिष्ट VII में टिप्पणी दी गई है। परिशिष्ट VII में, मुख्य व्यवसाय, परिवार की अनुमानित आय, विशेष ग्रुपों में स्कूल जाने वाले छात्रों की प्रतिशतता और सूची में उल्लिखित व्यक्तियों के बारे में अन्य विभिन्न प्रकार की जानकारी दी गई है। परिशिष्ट VI और VII को देखने से यह पता चलता है कि जिन व्यक्तियों को पिछड़ा हुआ माना गया है उनके परम्परागत व्यवसाय काफी निम्न कोटि के थे जैसे—भिखारी, धोबी, मछुआरे, शमशानों में चौकीदार, आदि। आयोग ने इनके लिए सरकारी सेवा में आरक्षण के संबंध में सिफारिशें की थीं और उसने पिछड़े वर्गों को दी जाने वाली अन्य सहायता के बारे में भी सिफारिश की थीं। इन अपीलों में उन सिफारिशों का उल्लेख करना आवश्यक नहीं है। इन अपीलों के प्रयोजनों के लिए केवल यही पता देना आवश्यक है कि त्रिलोकीनाथ टिकू बनाम जम्मू और कश्मीर राज्य के मामले में इस न्यायालय द्वारा टिप्पणी की गई थी (1967) 2 एस० सी० आर० 265 (ए० आई० आर० 1967 एस० सी० 1283)।

85. हमें विभिन्न प्रकार के निर्णय, विशेषकर इस न्यायालय के निर्णय भेजे गए हैं जिनमें संबंधित राज्य द्वारा पिछड़े वर्गों के लिए किए गए आरक्षण या तो वैध रूप में स्वीकार कर लिए गए हैं या अभिखंडित कर दिए गए हैं । किन्तु हमारे लिए यह आवश्यक नहीं है कि उन निर्णयों का उल्लेख किया जाए क्योंकि प्रत्येक मामले में उसके गुणदोष के आधार पर विचार किया जाएगा और जब यह निश्चित हो जाएगा कि कुछ व्यक्ति हैं जिनसे पिछड़े वर्ग बन सकते हैं तो आयोग या राज्य द्वारा एकत्रित की गई सामग्री के प्रकार का पता लग जाने के बाद उस पर विचार किया जाएगा । किन्तु एक बात स्पष्ट है कि यदि समूची जाति ही सामाजिक और शैक्षिक दृष्टि से वास्तव में पिछड़ी हुई पाई जाए, तो उस जाति के नाम को पिछड़े वर्गों की सूची में शामिल किया जाना अनुच्छेद 15(4) का उल्लंघन नहीं है ।

87. (1968) 3 एस सी आर 595—(ए० आई० आर० 1968 एस सी 1397) में मात्र जाति के आधार पर आंध्र प्रदेश राज्य द्वारा तैयार की गई इसी प्रकार की सूची को अभिखंडित कर दिया गया । त्रिलोकीनाथ बनाम जम्मू और कश्मीर राज्य, (1969) एस सी आर 103—(ए आई आर 1969 एस सी आई) के मामले में इस न्यायालय के सांविधानिक न्यायपीठ ने यह निर्णय किया कि किसी समूची जाति और समुदाय के सदस्य दिए गए समय में सामाजिक, आर्थिक और शैक्षिक दृष्टि से पिछड़े हो सकते हैं और इसी कारण से उन्हें पिछड़े वर्ग का माना जा सकता है किन्तु ऐसा इसलिये नहीं कि वे अमुक जाति या समुदाय के सदस्य हैं बल्कि इसलिये कि उनका एक वर्ग है । अतः, यह स्पष्ट है कि किसी समूची जाति या समुदाय के सामाजिक और शैक्षिक दृष्टि से पिछड़े होने के उदाहरण हो सकते हैं जिसे अनुच्छेद 15(4) के अधीन संरक्षण दिये जाने के बारे में विचार किया जाना चाहिये ।

89. उच्च न्यायालय ने एक गलती और की है जिसमें उसने इस आधार पर कार्यवाही की है कि जिन ग्रुपों को राज्य द्वारा तैयार की गई 1963 और 1966 की सूचियों में जिन्हें उच्च न्यायालय द्वारा अभिखंडित कर दिया गया था पिछड़े वर्गों के रूप में शामिल किया गया था उन्हीं ग्रुपों को आयोग ने तैयार की गई वर्तमान सूची में फिर से शामिल कर लिया है । उच्च न्यायालय का ध्यान इस मूल तथ्य की ओर नहीं गया है कि उच्च न्यायालय ने इन दोनों सूचियों को इस आधार पर अभिखंडित किया था कि राज्य ने न तो उचित जांच-पड़ताल की है और न इन ग्रुपों को पिछड़े वर्गों में वर्गीकृत करने से पहले राज्य ने उचित सामग्री एकत्रित की है । वस्तुतः इस न्यायालय ने भी आंध्र प्रदेश उच्च न्यायालय के बाद के निर्णय की पुष्टि की है जिसमें उसने (1968) 3 एस सी आर 595—(ए आई आर 1968 एस सी 1379) में किये गए अपने निर्णय में 1966 की सूची को अभिखंडित किया था । हालांकि हम उच्च न्यायालय के इस निर्णय से सहमत नहीं हैं कि आयोग का इन ग्रुपों को पिछड़े वर्गों में मानना मात्र जाति के आधार पर है, फिर भी हम यह मानते हैं कि उच्च न्यायालय उस दृष्टि से सही है । इस न्यायालय के दो निर्णय ऐसे हैं जिनमें जाति के आधार पर पिछड़े वर्गों की तैयार की गई सूची को वैध माना गया है । यह न्यायालय, निस्सन्देह, प्रस्तुत की गई सामग्री के आधार पर इस बात से सन्तुष्ट था कि पिछड़े वर्गों के रूप में जाति का वर्गीकरण न्यायोचित है ।

93. इस न्यायालय का अगला निर्णय, जिसमें जाति के आधार पर तैयार की गई सूची को इस आधार पर कि समूची जाति सामाजिक और शैक्षिक दृष्टि से पिछड़ी हुई है, अनुच्छेद 15(4) के अनुसार वैध स्वीकार किया गया था, ए आई आर 1971 एस सी 2303 है । इस निर्णय में मेडिकल कालेजों के लिए सीटों के यूनिटवार वितरण को इस न्यायालय द्वारा अनुच्छेद 14 और 15 का उल्लंघन बताते हुए अभिखंडित कर दिया गया किन्तु पिछड़े वर्गों की सूची को, जिस पर यह आपत्ति की गई थी कि यह केवल जाति के आधार पर तैयार की गई है, वैध मान लिया गया । इस न्यायालय ने (1963) पूरक (1) एस सी आर 439—(ए आई आर 1963 एस सी 649) और (1964) 6 एस सी आर 368—(ए आई आर 1964 एस सी 1823) में किए गए निर्णयों को देखने के बाद यह निर्णय किया कि अनुच्छेद 15(4) के प्रयोजन के लिए किसी वर्ग के बारे में सुनिश्चित करने का जाति ही सगत आधार है । इसके अनुमोदन के साथ (1968) 2 एस सी आर 786—(ए आई आर 1968 एस सी 1012) में किए गए निर्णय का भी हवाला दिया गया और उक्त निर्णय को इस निर्देश का प्राधिकार मानकर उस पर विश्वास कर लिया गया कि जाति के आधार पर पिछड़े वर्गों का वर्गीकरण अनुच्छेद 15(4) के अन्तर्गत है, यदि उन जातियों को सामाजिक और शैक्षिक दृष्टि से पिछड़ा हुआ दिखाया गया हो । पिछड़े वर्गों की सूची को देखने के बाद, जिस पर आपत्ति की गई थी, इस न्यायालय ने यह निर्णय किया कि हालांकि यह सूची जाति के आधार पर तैयार की गई है, फिर भी यह किसी कमी से ग्रस्त नहीं है क्योंकि समूची जाति सामाजिक और शैक्षिक दृष्टि से काफी पिछड़ी हुई थी । इस आधार पर पिछड़े वर्गों की सूची वैध मानी गई । यह उल्लेखनीय है कि जिस सूची पर आपत्ति की गई थी न्यूनाधिक रूप से काफी हद तक उसी प्रकार की थी जिसे इस न्यायालय ने (1968) 2 एस सी आर 786—(ए आई आर 1968 एस सी 1012) में वैध माना था।

94. इस अवस्था में यह उल्लेखनीय है कि शुरू में आंध्र प्रदेश राज्य मिले-जुले मद्रास राज्य का भाग था । हमने 1970 की रिट याचिका संख्या 285 में अभिलेख पुस्तिका भेजी थी, जिसका निर्णय (1968) 2 एस सी आर 786—(ए आई आर 1968 एस सी 1012) में सूचित किया गया है । उक्त निर्णय में जिस सूची पर आपत्ति की गई थी, किन्तु जिसे इस न्यायालय ने सही माना था, उसकी तुलना उस सूची से करने पर जिसके संबंध में हमारे समक्ष आक्षेप किया गया है, हमें यह पता चला है कि जिन ग्रुपों को मद्रास राज्य द्वारा सूची में शामिल किया जाना वैध माना गया था, उनमें से अधिकांश ग्रुप आंध्र प्रदेश राज्य द्वारा नियुक्त किए गए पिछड़ा वर्ग आयोग द्वारा तैयार की गई सूची में भी मौजूद हैं ।

95. अंत में, हालांकि पिछड़े वर्गों की सूची का, जिसके संबंध में हमारे समक्ष आक्षेप किया गया है, प्रत्यक्षतः जाति के आधार पर होना माना जा सकता है, किन्तु उसकी सम्यक जांच करने से यह स्पष्ट हो जाता है कि वह सूची ऐसे विशेष व्यवसाय या पेशा करने वाले समुदाय का वर्णन मात्र है, जिनका आयोग ने विस्तार से उल्लेख किया है । इस धारणा के बावजूद कि सूची केवल जाति के आधार पर है, आयोग को जो तथ्य प्रस्तुत किये गए हैं और उसने अपनी रिपोर्ट में जो कारण दिए हैं उनसे यह स्पष्ट है कि समूची जाति सामाजिक और शैक्षिक दृष्टि से पिछड़ी हुई है और इसलिये उन्हें पिछड़े वर्गों की सूची में शामिल किया जाना अनुच्छेद 15(4) के अनुसार न्यायोचित है । उसमें उल्लिखित ग्रुपों को पिछड़े वर्गों की सूची में शामिल किया गया है क्योंकि वे उन कसौटियों पर पूरे उतरे हैं जो कि किसी वर्ग के सामाजिक और शैक्षिक दृष्टि से पिछड़ा होने के बारे में अभिनिश्चय करने के संबंध में इस न्यायालय द्वारा निर्धारित की गई हैं ।

96. आयोग ने 1921 और 1931 की जनगणना पर आधारित जनसंख्या के आंकड़ों को ध्यान में रखे जाने के संबंध में बहुत अच्छे कारण दिए हैं । कक्षा X और XI के छात्रों की औसत संख्या लेने के लिये यह उचित भी था, विशेषकर इसलिये कि जम्मू और कश्मीर सरकार द्वारा नियुक्त की गई समिति ने, जिसकी अध्यक्षता भारत के भूतपूर्व मुख्य न्यायमूर्ति डा० पी० बी० गजेन्द्रगडकर ने की थी, उक्त प्रक्रिया को स्वीकार किया है । उस समिति ने कक्षा IX और X के छात्रों के औसत को ध्यान में रखा था । निर्णय किए गए मामलों में किसी वर्ग के सामाजिक

और शैक्षिक दृष्टि से पिछड़ा होने के बारे में अभिनिश्चय करने के सिद्धांत निर्धारित किए गए हैं । इस मामले में पिछड़ा वर्ग आयोग ने सूची में किसी विशेष ग्रुप को पिछड़े वर्ग के रूप में शामिल करने से पहले विभिन्न पहलुओं के संबंध में आंकड़े एकत्र करने में काफी परिश्रम किया है ।

97. इस संबंध में यह आलोचना की गई है कि आयोग ने किसी विशेष ग्रुप को पिछड़ा बताने के प्रयोजन के लिए निजी जानकारी का उपयोग किया है । मामले की परिस्थितियों के अनुसार ऐसा करना अनिवार्य है और इसमें कुछ भी अनुचित या गैर-कानूनी नहीं है । विभिन्न क्षेत्रों का दौरा करने और लोगों की झोपड़ियों और निवास-स्थानों को देखने के पीछे आयोग का मुख्य उद्देश्य यह पता लगाना है कि वे वास्तव में किस स्थिति में जीवन निर्वाह करते हैं । आयोग ने किसी तरह जो भी जानकारी एकत्र की है वह गुप्त रूप से नहीं बल्कि खुलेआम एकत्र की गई है । वास्तव में वे किस स्थिति में जीवन निर्वाह करते हैं और उनके निवास स्थान कैसे हैं इस संबंध में उन क्षेत्रों को व्यक्तिगत रूप से देखने पर ही सन्तोषजनक रूप से निर्णय किया जा सकता है । उनको देखने से सही स्थिति का पता लग जाएगा कि वे किस स्थिति में और किस वातावरण में रहते हैं । ब्यौरेवार जांच-पड़ताल के परिणामस्वरूप एकत्र की गई अन्य विभिन्न प्रकार की सामग्री में वृद्धि करने के लिए यदि आयोग के सदस्यों द्वारा प्राप्त की गई निजी जानकारी का उपयोग भी किया गया है, तो केवल इसी आधार पर कि उन्होंने निजी जानकारी का उपयोग किया है यह नहीं कहा जा सकता कि आयोग की रिपोर्ट में कोई त्रुटि है । हमारे विचार से उच्च न्यायालय आयोग के प्रति निष्पक्ष नहीं हैं, जब वह यह कहता है कि जब-जब आयोग को कुछ ग्रुपों के संबंध में उनके शैक्षिक स्तर के संबंध में राज्य के औसत से अधिक आंकड़े प्राप्त हुए हैं, तभी उसने निजी जानकारी का उपयोग करके उस अड़चन को समाप्त करने का उत्तम तरीका अपनाया है । वस्तुतः आयोग ने यह स्पष्ट रूप से बताया है कि विभिन्न स्कूलों से प्राप्त सूचना से यह पता चलता है कि कुछ छोटे ग्रुपों के संबंध में शिक्षा की प्रतिशतता राज्य के औसत से कुछ अधिक है किन्तु इस तथ्य को देखते हुए कि उनके जीवन-निर्वाह की स्थिति काफी शोचनीय है, उनकी असुविधा की तुलना में साक्षरता की कुछ अधिक प्रतिशतता का कोई महत्व नहीं है ।

98. इस आलोचना के संबंध में कि आयोग ने वर्गों को अधिक पिछड़े हुए और कम पिछड़े हुए वर्गों में विभाजित कर दिया है, हमारी यह राय है कि इस बात का भी कोई उचित आधार नहीं है । दूसरी ओर आयोग ने आरक्षित वर्गों में उनकी जनसंख्या के अनुपात में सीटों के वितरण की सिफारिश की है । यह पिछड़े वर्गों का अधिक पिछड़े हुए और कम पिछड़े हुए रूप में विभाजन नहीं है । यह ऐसा मामला है जिस पर इस न्यायालय ने (1963) पूरक (1) एस सी आर 439—(ए आई आर 1963 एस सी 649) में कार्रवाई की थी।

100. निस्संदेह, हमारा ध्यान केरल उच्च न्यायालय के उस निर्णय की ओर दिलाया गया जिसमें यह निर्णय किया गया है कि अपनी योग्यता के आधार पर प्रवेश पाने वाले पिछड़े वर्गों के कुछ उम्मीदवारों पर ध्यान न देते हुए आरक्षण की व्यवस्था की गई है । आंध्र प्रदेश उच्च न्यायालय का इस संबंध में कुछ अलग दृष्टिकोण है । यदि यह स्थिति उत्पन्न होती है जिसमें पिछड़े वर्गों की सूची में शामिल किये गए ग्रुपों के उम्मीदवार अपनी योग्यता के आधार पर अधिक सीटें प्राप्त करने में सक्षम हैं, तो इस संबंध में हम यह कह सकते हैं कि यह सरकार का कर्त्तव्य है कि वह ऐसे ग्रुपों के लिये और सीटें आरक्षित करने के प्रश्न की समीक्षा करे। इस पर जोर दिया जाना चाहिए क्योंकि सरकार को केवल इस आधार पर कार्रवाई नहीं करनी चाहिये कि जिस वर्ग को एक बार पिछड़ा वर्ग मान लिया गया है वह हमेशा पिछड़ा ही बने रहे। यदि किसी समय किसी वर्ग के बारे में ऐसा प्रतीत हो कि वह प्रगति के उस स्तर पर पहुंच गया है जिससे निश्चित रूप से यह कहा जा सके कि उसे और संरक्षण आवश्यक नहीं है, तो राज्य ऐसे उदाहरणों की उचित समीक्षा करेगा और पिछड़े वर्गों की सूची में उचित रूप से संशोधन करेगा । वस्तुतः इस न्यायालय द्वारा ए आई आर 1971 एस सी 2303 में यह सूचित किया गया कि पिछड़े वर्गों के उम्मीदवारों ने सामान्य पूल में लगभग 50% सीटें प्राप्त की हैं । इस आधार पर इस न्यायालय ने यह निर्णय नहीं किया था कि पिछड़े वर्गों के लिए किया गया और आरक्षण अवैध है। दूसरी ओर यह निर्णय किया गया :—

> "यह तथ्य कि सामान्य पूल में पिछड़े वर्गों के उम्मीदवारों ने लगभग 50% सीटें प्राप्त की हैं, इस बात का द्योतक नहीं है कि इस प्रश्न पर नए सिरे से व्यापक रूप से विचार करने का समय आ गया है । यह स्मरण रहे कि इस संबंध में सरकारी निर्णय न्यायिक समीक्षा के लिए विचाराधीन है ।"

ऊपर दिए गए कारणों के आधार पर हमारा यह मत है कि पिछड़े वर्गों की सूची और उक्त सूची में उल्लिखित व्यक्तियों के लिए व्यावसायिक कालेजों में 25% सीटों का आरक्षण वैध है और संविधान के अनुच्छेद 15(4) के अनुसार है । हम उच्च न्यायालय द्वारा दिये गए कारणों से सहमत नहीं हैं कि उक्त सरकारी आदेश से संविधान के अनुच्छेद 15(4) का उल्लंघन हुआ है ।

निर्णय

(i) हालांकि इस संबंध में पिछड़े वर्गों की जिस सूची का विरोध किया गया है उसे प्रत्यक्षतः "जाति" पर आधारित माना जा सकता है, फिर भी उसे सूक्ष्मता से देखने पर यह पता चलेगा कि उसमें केवल आयोग द्वारा उल्लेख किये गए व्यवसायों और पेशों के करने वाले ग्रुपों का ही वर्णन है । इस धारणा के बावजूद कि सूची केवल जाति पर आधारित है, आयोग को प्रस्तुत तथ्यों से यह स्पष्ट है कि समूची जाति सामाजिक और शैक्षिक दृष्टि से पिछड़ी हुई है । आयोग द्वारा सूचीबद्ध किये गए समुदाय उन विभिन्न कसौटियों पर खरे उतरे हैं जो किसी वर्ग के सामाजिक और शैक्षिक दृष्टि से पिछड़ा होने के संबंध में अभिनिश्चय करने के लिये न्यायालय द्वारा निर्धारित की गई हैं।

(ii) कुल 43% आरक्षण को अधिक नहीं समझा गया । यह बालाजी के मामले द्वारा निर्धारित की गई 50% सीमा के अन्दर था।

आर० चित्रलेखा बनाम मैसूर राज्य

ए०आई०आर० 1964 एस०सी० 1823

तथ्य

मैसूर सरकार ने तारीख 26 जुलाई, 1963 के अपने आदेश में पिछड़े वर्गों की परिभाषा दी थी और निदेश दिया था कि उनके लिए व्यावसायिक और तकनीकी संस्थाओं में 30% सीटें आरक्षित की जाएंगी। इसमें यह निर्धारित किया गया कि वर्गीकरण (क) आर्थिक स्थिति और (ख) व्यवसाय और पेशे के आधार पर होना चाहिय। तदनुसार, ऐसे परिवार को जिसकी वार्षिक आय 1,200 रुपए या उससे कम थी और ऐसे व्यक्तियों और वर्गों को जो खेती बाड़ी, छोटा-मोटा व्यवसाय, निकृष्ट सेवाएं, दस्तकारी या शारीरिक श्रम से संबंधित अन्य काम करते थे, सामाजिक और शैक्षिक दृष्टि से पिछड़ा हुआ माना गया। इस आदेश में जाति को ध्यान में नहीं रखा गया, इसलिए इस पर इस आधार पर आपत्ति की गई। मैसूर उच्च न्यायालय में डी० जी० विश्वनाथ बनाम मैसूर सरकार के मामले में (ए० आई० आर० 1964 मैसूर 132) उसी आदेश की वैधता के संबंध में, न्यायमूर्ति हेगड़े ने यह निर्णय दिया कि चूंकि इस आदेश में 'जाति' और 'निवास' के आधार को बिल्कुल ध्यान में नहीं रखा गया है, इसलिये यह हिन्दुओं के वस्तुतः पिछड़े वर्गों के लिए हितकर नहीं है। उच्चतम न्यायालय ने बालाजी के मामले में यह कहा था कि नागरिकों के समुदायों या वर्गों के सामाजिक दृष्टि से पिछड़े होने के बारे में निर्धारण करने के लिए हिन्दुओं के संबंध में जाति संगत आधार है।

चित्रलेखा के मामले में इस संबंध में उच्चतम न्यायालय को अपील की गई।

विधायक

(i) सामाजिक और शैक्षिक दृष्टि से पिछड़ा होने के संबंध में निर्धारित करने के लिए जाति की सम्बद्धता क्या है?

(ii) क्या 'जाति' और 'वर्ग' समानार्थक है?

उद्धरण

न्यायमूर्ति सुब्बाराव, (अधिकांश के लिये)

15. उक्त प्रेक्षणों से दो सिद्धांत स्पष्ट रूप से सामने आते हैं; यथा (i) नागरिकों के किसी ग्रुप की जाति, उनके सामाजिक दृष्टि से पिछड़े होने के बारे में अभिनिश्चय करने के लिए एक संगत तथ्य हो सकता है; और (ii) नागरिकों के किसी वर्ग के सामाजिक दृष्टि से पिछड़ा होने के बारे में निर्धारित करने का संगत तथ्य जाति होने पर भी इस संबंध में जाति एकमात्र या प्रमुख कसौटी नहीं हो सकती। उच्च न्यायालय के निर्णय में उद्धृत प्रेक्षण इस न्यायालय के प्रेक्षणों के प्रतिकूल प्रतीत होते हैं। जब इस न्यायालय ने यह कहा कि जाति केवल संगत तथ्य है और नागरिकों के किसी वर्ग के पिछड़ा होने के संबंध में अभिनिश्चय करने के लिए जाति प्रमुख कसौटी नहीं हो सकती, तो उच्च न्यायालय ने यह कहा कि पिछड़े हुए हिन्दुओं के वर्ग का निर्धारण करने के लिये जाति एक मुख्य आधार है और सरकार को चाहिए कि वह जाति को भी एक कसौटी के रूप में स्वीकार करे। चूंकि उच्च न्यायालय द्वारा किए गए उक्त प्रेक्षणों से उस संबंधित प्राधिकारी के मस्तिष्क में कुछ भ्रांति पैदा हो सकती है, जिसे संविधान के अनुच्छेद 15(4) के आशय के अन्तर्गत नागरिकों के वर्गों के पिछड़े होने के संबंध में अभिनिश्चय करने के लिए नियम निर्धारित करने का काम सौंपा जाए, अतः हम शीघ्र ही यह स्पष्ट कर देना चाहते हैं कि जाति किसी वर्ग के पिछड़ा होने के बारे में अभिनिश्चय करने का केवल संगत तथ्य है और इस न्यायालय के निर्णय में ऐसी कोई बात नहीं है जो संबंधित प्राधिकारी को नागरिकों के किसी समुदाय के सामाजिक दृष्टि से पिछड़ा होने के बारे में निर्धारित करने से रोकती हो, यदि वह जाति के आधार के बिना ऐसा कर सकता हो। हालांकि इस न्यायालय ने नागरिकों के किसी वर्ग के पिछड़ा होने के संबंध में अभिनिश्चय करने की कसौटी से जाति को अपवर्जित नहीं किया गया है, फिर भी उसने किसी वर्ग के पिछड़ा होने के बारे में अभिनिश्चय करने के आधार के लिये जाति को एक अप्रतिरोध्य तथ्य नहीं माना है। व्यक्तियों के किसी ग्रुप के पिछड़ा होने के बारे में अभिनिश्चय करते समय संबंधित प्राधिकारी जाति को ध्यान में रख सकता है, किन्तु यदि वह ऐसा न करे और यदि वह व्यक्तियों के किसी ग्रुप के पिछड़ा होने के बारे में किसी संगत मानदंड के आधार पर अभिनिश्चय करता है तो इस कारण से उसकी पद्धति अमान्य नहीं होगी।

16. भारत के संविधान में यह वचन दिया गया है कि सभी को सामाजिक, आर्थिक और राजनीतिक न्याय प्रदान किया जाएगा और समान प्रतिष्ठा और समान अवसर दिया जाएगा। अनुच्छेद 46 के अनुसार, जोकि भाग IV के अनुच्छेदों में से एक है और जिसका शीर्षक है "राज्य के नीति निदेशक सिद्धांत", राज्य समाज के कमजोर वर्गों, विशेषकर अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों के शैक्षिक और आर्थिक हितों को बढ़ावा देने के लिए विशेष ध्यान देगा और सामाजिक अन्याय और सभी प्रकार के शोषणों से उनकी रक्षा करेगा। अनुच्छेद 341 के अनुसार "किसी राज्य या संघ शासित क्षेत्र के संबंध में राष्ट्रपति और जहां यह कोई राज्य हो, वहां उसके राज्यपाल के परामर्श से सरकारी अधिसूचना द्वारा जातियों, प्रजातियों या जनजातियों या जातियों प्रजातियो या जनजातियों के अन्दर उनके भागों या उनके समुदायों का उल्लेख करे जिन्हें संविधान के प्रयोजन के लिए यथास्थिति उस राज्य या संघ शासित क्षेत्र के संदर्भ में अनुसूचित जातियां माना जाएगा।"

19. इन उपबन्धों के अनुसार हमारे देश में पिछड़े वर्गों का वास्तविक अस्तित्व स्वीकार किया गया है जिसके ऐतिहासिक कारण हैं और समाज के कमजोर वर्गों के कल्याण को प्रोत्साहन देने के लिए वास्तविक प्रयास किया गया है। उनकी इस प्रकार व्याख्या की जाएगी ताकि उक्त नीति को कार्यान्वित किया जा सके किन्तु हमारे समाज के प्रगतिशील वर्गों को जिस जाति के वे हैं उस जाति के मिथ्या भेद के अनुसार लाभ देने के लिए नहीं। अनुच्छेद 15(4) में ध्यान दिए जाने वाली मुख्य बात यह है कि उसमें जातियों की चर्चा नहीं की गई है बल्कि केवल वर्गों की चर्चा की गई है। यदि संविधान निर्माताओं का जातियों को भी सामाजिक और शैक्षिक दृष्टि से पिछड़ी इकाइयों के रूप में रखने का इरादा था तो उन्होंने ऐसा कहा होता जैसा कि उन्होंने अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों के मामले में कहा है। हालांकि यह सुझाव दिया जा सकता है कि अनुच्छेद 15 के खंड (4) में 'वर्ग' को व्यापक अर्थ में अभिव्यक्त किया गया है क्योंकि उसके अन्तर्गत बिना जातियों के समुदाय आते हैं, यदि वर्गों को जातियों के बराबर मानने का इरादा था, तो

संविधान के निर्माताओं के सामने "पिछड़े वर्ग या जातियां" अभिव्यक्ति का प्रयोग करने में कोई रुकावट नहीं थी । अनुच्छेद 15(4) में "पिछड़ वर्ग" और "अनुसुचित जातियां" अभिव्यक्ति के सन्निधान से भी यह निष्कर्ष उचित रूप से निकलता है कि "वर्ग" अभिव्यक्ति जाति के समानार्थक नहीं है । यह अभिनिश्चय करने के लिये कि अमुक नागरिक या नागरिकों का कोई ग्रुप पिछड़े वर्ग का है या नहीं, उसकी या उनकी जाति की किसी हद तक संबद्धता हो सकती है किन्तु यह अभिनिश्चय करने के लिए कि वह या वे किस वर्ग से सम्बद्ध हैं, जाति एकमात्र या प्रमुख मानदण्ड नहीं हो सकती ।

20. इस व्याख्या से संविधान का वह आशय पूरा होगा जो उक्त अनुच्छेदों में व्यक्त किया गया है । इससे उन व्यक्तियों या ग्रुपों के हितों को प्रोत्साहन देने के बजाए, जो वस्तुतः किसी ऐसी जाति के तो हैं जिसके अधिकांश व्यक्ति सामाजिक और शैक्षिक दृष्टि से पिछड़े हुए हैं, किन्तु वास्तव में उन वर्गों से संबद्ध हैं जो सामाजिक और शैक्षिक दृष्टि से प्रगतिसील हैं, वास्तव में पिछड़े हुए लोगों के हितों को प्रोत्साहन देने में सहायता मिलेगी । उदहारण के लिए किसी राज्य की ऐसी जाति लें जिसके सदस्यों की संख्या उस राज्य में सर्वाधिक हो । उस जाति के अधिकांश व्यक्ति सामाजिक और शैक्षिक दृष्टि से पिछड़े होने पर भी उस जाति के प्रभावी अल्पसंख्यक व्यक्ति अन्य ऐसी छोटी उप-जाति की अपेक्षा सामाजिक और शैक्षिक दृष्टि से अधिक प्रगतिशील हो सकते हैं जिसके व्यक्तियों की संख्या उक्त अल्पसंख्यक व्यक्तियों से काफी कम है। यदि हम "वर्ग" और "जाति" अभिव्यक्ति की व्याख्या करें तो उससे संविधान का उद्देश्य विफल हो जायेगा और जो लोग आनुषंगिक सहायता के पात्र नहीं हैं वे लोग उन लोगों को अलग करके, जो वस्तुतः उसके पात्र हैं, वह सहायता प्राप्त कर लेंगे । यह अभिनिश्चय करने के लिये कि अमुक व्यक्ति पिछड़े वर्ग का है या नहीं, जाति को वर्ग के बराबर न मानकर, यदि जाति को मात्र एक आधार माना जाए तो यह असंगति उत्पन्न नहीं होगी । दूसरी ओर, यदि समूची उप-जाति कुल मिलाकर पिछड़ी हुई है, तो उसे संविधान में निर्धारित की गई उचित प्रक्रिया के अनुसार अनुसूचित जातियों में शामिल किया जा सकता है ।

21. हमारा इरादा कोई ऐसा कठोर नियम निर्धारित करने का नहीं है जिसका कि सरकार पालन करे । किसी वर्ग के सामाजिक और शैक्षिक दृष्टि से पिछड़ा होने के बारे में अभिनिश्चय करने के लिए मानदण्ड निर्धारित करना एक जटिल समस्या है जो कई परिस्थितियों पर निर्भर करती है और ये परिस्थितियां राज्य-दर-राज्य और यहां तक कि एक ही राज्य में स्थान-दर-स्थान अलग-अलग होती हैं । किन्तु जिस बात पर हम जोर देना चाहते हैं वह यह है कि वर्ग" को किसी भी स्थिति में "जाति" के बराबर नहीं माना जा सकता, हालांकि किसी व्यक्ति या व्यक्तियों के किसी ग्रुप की जाति को, उसे विशेष वर्ग के अन्तर्गत रखते समय अन्य संगत कारणों के साथ-साथ ध्यान में रखा जा सकता है । हम यह भी स्पष्ट कर देना चाहते हैं कि यदि किसी दी गई स्थिति में, संविधान के अनुच्छेद 15(4) के आशय के अन्तर्गत किसी वर्ग के बारे में अभिनिश्चय करते समय जाति पर ध्यान न दिया जाए, तो इससे वर्गीकरण अमान्य नहीं होगा, यदि वह वर्गीकरण अन्य कसौटियों पर पूरा उतरता हो

न्यायमूर्ति मुधोलकर (अन्य मामलों के संबंध में अल्पसंख्यक के बारे में राय) ।

43. मैं इस मामले में उस प्रश्न पर अपनी कोई राय देना आवश्यक नहीं समझता और इसे आगे के लिए छोड़ता हूं । इसी प्रकार मैं ऐसे अन्य मुद्दों पर भी अपनी राय अभी नहीं देना चाहता जिन पर उसने स्वयं सोचा समझा है । किन्तु जो वर्ग सामाजिक और शैक्षिक दृष्टि से पिछड़े हुए हैं उनके बारे में निश्चय करते समय जाति को ध्यान में रखे जाने की संगति का जो प्रश्न है उसके संबंध में मैं केवल यही कहूंगा कि सामाजिक और शैक्षिक दृष्टि से पिछड़े वर्गों के बारे में अभिनिश्चय करने के लिए व्यक्तियों की जातियों को ध्यान में रखना अनुच्छेद 15 के खंड (1) या अनुच्छेद 29 के खंड (2) के अनुसार आवश्यक नहीं है। यह सही है कि अनुच्छेद 15 के खंड (4) में एक सर्वोपरि खंड है जिसके कारण अनुच्छेद 15 के खंड (1) और अनुच्छेद 29 के खण्ड (2) के उपबन्धों के बावजूद उस खंड के आधार पर प्रदत्त शक्ति का प्रयोग किया जा सकता है । किन्तु उससे यह निष्कर्ष निकालना न्यायसंगत नहीं है कि सामाजिक और शैक्षिक दृष्टि से पिछड़े समुदायों के बारे में निश्चय करते समय जातियों की कोई संगति है । मेरे विद्वान् बंधु ने ठीक ही कहा है कि संविधान के खंड (4) में अभिव्यक्त "वर्गों" का प्रयोग किया गया है, "जातियों" का नहीं ।

(i) सामाजिक और शैक्षिक दृष्टि से पिछड़ा होने के बारे में निश्चय करने के लिए "जाति" एक संगत आधार है ;

(ii) "जाति" और "वर्ग" समानार्थक नहीं हैं ।

पी० राजेन्द्रन बनाम मद्रास राज्य

ए० आई० आर० 1968 एस० सी 1012

तथ्य

प्रथम वर्ष के एकीकृत एम० बी० बी० एस० पाठ्यक्रम में प्रवेश के नियमन के संबंध में मद्रास सरकार द्वारा बनाए गए नियमों पर आपत्ति की गई कि इनसे अनुच्छेद 14 और 15 का उल्लंघन होता है। नियम 15 में, परिशिष्ट में उल्लिखित सामाजिक और शैक्षिक दृष्टि से पिछड़े वर्गों के लिए सीटों के आरक्षण की व्यवस्था की गई थी और परिशिष्ट में केवल जातियों का उल्लेख था।

विवाद्यक

(1) क्या सामाजिक और शैक्षिक दृष्टि से पिछड़े वर्गों के बारे में निश्चय करने के लिए "जाति" को एकमात्र कसौटी माना जा सकता है?

(2) यह सिद्ध करने का दायित्व किसका है कि सूची में उल्लिखित जातियां सामाजिक और शैक्षिक दृष्टि से पिछड़ी हुई नहीं हैं ?

उद्धरण

मुख्य न्यायमूर्ति बांच

नियम 5 के संबंध में पहली आपत्ति इस आधार पर की गई है कि इससे संविधान के अनुच्छेद 15 का उल्लंघन होता है। अनुच्छेद 15 के अनुसार, केवल धर्म, वंश, जाति, लिंग, जन्म-स्थान या इनमें से किसी आधार पर किसी नागरिक से भेदभाव करना वर्जित है। इसके साथ ही अनुच्छेद 15(4) में अन्य बातों के साथ-साथ राज्य को नागरिकों के सामाजिक और शैक्षिक दृष्टि से पिछड़े वर्गों की उन्नति के लिए कोई विशेष व्यवस्था करने की अनुमति दी गई है। विवाद यह है कि सामाजिक और शैक्षिक दृष्टि से पिछड़े हुए उन वर्गों की सूची, जिनके लिए नियम 5 के अनुसार आरक्षण किया गया है, कुछ जातियों की सूची के अलावा कुछ नहीं है। अतः केवल जाति के आधार पर कुछ जातियों के लिए आरक्षण की व्यवस्था अनुच्छेद 15(1) का उल्लंघन है जिसके अनुसार जिसमें केवल जाति के आधार पर भेदभाव करना वर्जित है। अब यदि विवादास्पद आरक्षण केवल जाति के आधार पर ही किया जाए और जाति के सामाजिक और शैक्षिक दृष्टि से पिछड़ेपन को ध्यान में न रखा जाए, तो इस से अनुच्छेद 15(1) का उल्लंघन होगा। किन्तु इस बात को नहीं भूलना चाहिए कि जाति भी नागरिकों का ही वर्ग है और यदि समूची जाति सामाजिक और शैक्षिक दृष्टि से पिछड़ी हुई है तो ऐसी जाति के लिए इस आधार पर आरक्षण किया जा सकता है कि वह अनुच्छेद 15(4) के आशय के अन्तर्गत नागरिकों का सामाजिक और शैक्षिक दृष्टि से पिछड़ा वर्ग है। इस संबंध में एम० आर० बालाजी बनाम मैसूर राज्य, (1968) पूरक 1 एस० सी० आर० 439, मु० पृ० 459—460 (ए० आई० आर० 1963 एस० सी०, 649 पृ० 659) के मामले में इस न्यायालय के इस आशय की टिप्पणियों को देखा जा सकता है कि नागरिकों के किसी वर्ग के सामाजिक और शैक्षिक दृष्टि से पिछड़ा होने के बारे में निश्चय करते समय उस वर्ग की जाति पर विचार करना असंगत नहीं है। आगे यह कहा गया कि हालांकि नागरिकों के किसी वर्ग की जाति को संबंद्ध किया जा सकता है, किन्तु उसके महत्व को बढ़ा-चढ़ा कर व्यक्त नहीं किया जाना चाहिये और यदि नागरिकों के पिछड़े वर्ग का वर्गीकरण नागरिकों की केवल जाति के आधार पर किया गया हो तो उस पर आपत्ति की जानी चाहिए। यह सही है कि वर्तमान मामलों में, सामाजिक और शैक्षिक दृष्टि से पिछड़े वर्गों की सूची में जाति के अनुसार उल्लेख किया गया है। किन्तु इसका अनिवार्यतः यह अर्थ नहीं है कि जाति ही एकमात्र आधार था और इन जातियों के व्यक्ति नागरिकों के सामाजिक और शैक्षिक दृष्टि से पिछड़े वर्ग के भी नहीं हैं। इसके उत्तर में, मद्रास राज्य ने वर्ष 1906 से लेकर अब तक का इतिवृत्त दिया है कि यह सूची कैसे तैयार की गई थी और इसे कैसे अद्यतन रखा गया है और इसमें क्या-क्या आवश्यक संशोधन किये गए हैं। यह भी बताया गया है कि सूची में शामिल किये जाने का मुख्य मानदण्ड, इन जातियों द्वारा किये जाने वाले व्यवसायों के आधार पर जातियों का सामाजिक और शैक्षिक दृष्टि से पिछड़ा होना था। चूंकि समूची जाति के सदस्य सामाजिक और शैक्षिक दृष्टि से पिछड़े पाए गए थे इसलिये उन्हें इस सूची में रखा गया। संविधान में लागू होने के बाद, अनुच्छेद 15(4) में उल्लिखित उपबंधों के आधार पर मामले की अंतिम रूप से जांच की गई। चूंकि इन समूची जातियों के सदस्य सामाजिक और शैक्षिक दृष्टि से पिछड़े हुए पाए गए और सूची 1906 की ही स्थिति में रही, इसलिए उसे अनुच्छेद 15(4) के प्रयोजन के लिए अंतिम रूप से स्वीकार कर लिया गया। संक्षेप में, मद्रास राज्य का मामला यह है कि सूची में शामिल की गई जातियां उन जातियों के व्यक्तियों के वर्ग का केवल संक्षिप्त संकेत हैं और व्यक्तियों के इन वर्गों को अनुच्छेद 15(4) के प्रयोजन के लिए सूची में शामिल किया गया था क्योंकि ये सामाजिक और शैक्षिक दृष्टि से पिछड़े हुए पाए गए थे।

8. यह स्थिति वह है जो मद्रास राज्य की ओर से प्रस्तुत किये गए शपथ-पत्र में स्पष्ट की गई है। दूसरी ओर, याचिकाओं में केवल यह बात कही गई है कि चूंकि सूची केवल जाति पर आधारित है, इसलिये इससे अनुच्छेद 15(1) का उल्लंघन हुआ है। किन्तु मद्रास राज्य द्वारा दिए गए स्पष्टीकरण के आधार पर, जिसका प्रत्युत्तर द्वारा खंडन नहीं किया गया है, यह अवश्य स्वीकार किया जाना चाहिये कि हालांकि सूची में कुछ जातियां दिखाई गई हैं, किन्तु उन जातियों के सदस्य वास्तव में सामाजिक और शैक्षिक दृष्टि से पिछड़े नागरिकों के वर्गों के हैं। याचिका दाताओं/अपीलकर्ताओं की ओर से यह बताने का प्रयास नहीं किया गया कि इस सूची में उल्लिखित कोई जाति सामाजिक या शैक्षिक दृष्टि से पिछड़ी हुई नहीं है। शपथ-पत्र में अपने मामलों में न कोई ऐसा प्रमाण प्रस्तुत किया गया और न ही प्रत्युत्तर शपथ-पत्र प्रस्तुत करते हुए, मद्रास राज्य की ओर से प्रस्तुत किये गए मामले का खंडन करने का कोई प्रयास किया गया जिसमें सूची में शामिल की गई जातियों में से एक भी जाति के बारे में यह बताया गया हो कि अमुक जाति सामाजिक और शैक्षिक दृष्टि से पिछड़ी हुई नहीं है। अभिवचन की इस स्थिति में, हम इस निष्कर्ष पर पहुंचे हैं कि हालांकि सूची जाति-वार तैयार की गई है, फिर भी उसमें शामिल की गई समूची जातियां सामाजिक और शैक्षिक दृष्टि से पिछड़ी हुई हैं, इसलिए इस सूची से अनुच्छेद 15 का उल्लंघन नहीं हुआ है। अतः, नियम 5 के संबंध में की गई आपत्ति समाप्त हो जाती है।

निर्णय

(i) जाति भी नागरिकों का एक वर्ग है और यदि समूची जाति सामाजिक और शैक्षिक दृष्टि से पिछड़ी हुई है, तो ऐसी जाति के लिए इस आधार पर आरक्षण किया जा सकता है कि यह अनुच्छेद 15(4) के आशय के अन्तर्गत नागरिकों का सामाजिक और शैक्षिक दृष्टि से पिछड़ा हुआ वर्ग है ।

(ii) न्यायालय ने यह निर्णय किया कि नियम 5 की वैधता पर आपत्ति करने वाले याचिकादाताओं को यह बताना चाहिये था कि सूची में उल्लिखित जातियां सामाजिक और शैक्षिक दृष्टि से पिछड़ी हुई नहीं हैं।

ए० पेरियाकरुप्पन बनाम तमिलनाडु राज्य

ए आई आर 1971 एस० सी० 2303

तथ्य

तमिलनाडु राज्य में आठ मैडिकल कॉलेज थे जिनमें से तीन मद्रास में हैं और एक-एक कॉलेज मदुरै, चिंगलपेट, कोयम्बटूर, तंजावुर और तिरुनेलवेली में है। मद्रास कालेज में कुल उपलब्ध सीटें 500 थीं और मदुरै, चिंगलपेट, कोयम्बटूर, तंजावुर और तिरुनेलवली में क्रमशः 200, 50, 100, 200 और 75 सीटें उपलब्ध थीं। वर्तमान मामले में यूनिट-वार चयन किए गए। राज्य में 6 यूनिट बनाए गए। मद्रास नगर के मैडिकल कॉलिजों को एक यूनिट माना गया और अन्य प्रत्येक मैडिकल कॉलेजों को एक यूनिट माना गया। इन यूनिटों के लिए चयन विभिन्न चयन समितियों द्वारा किय गए। 1125 सीटों में से कुछ सीटें कुछ विशेष वर्गों के छात्रों के लिए आरक्षित थीं। चूंकि उनके बारे में कोई विवाद नहीं था, इसलिये उस आरक्षण के संबंध में कोई आन्दोलन नहीं हुआ। किन्तु शेष सीटों में से 41% सीटें सामाजिक और शैक्षिक दृष्टि से पिछड़े वर्गों, अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों के छात्रों के लिए आरक्षित कर दी गई और बाकी सामान्य पूल में रख दी गई।

विवाद्यक

(i) क्या मैडिकल कॉलिजों में यूनिट-वार चयन अनुच्छेद 14 और 15 का उल्लंघन था?

(ii) क्या केवल जाति के आधार पर पिछड़े वर्गों का निर्धारण वैधानिक रूप से अनुमेय था?

(iii) क्या पिछड़े वर्गों, अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों के लिए 41% आरक्षण अधिक था?

न्यायमूर्ति हैगड़े के निर्णय से संगत उद्धरण

11. "हम सर्वप्रथम यूनिट-वार आधार पर मैडिकल सीटों के विभाजन के संबंध में दिए गए तर्क पर विचार करेंगे। यह स्वीकार किया गया है कि कुछ यूनिटों में चयन किये जाने के लिए अपेक्षित न्यूनतम अंक अन्य यूनिटों में अपेक्षित न्यूनतम अंकों से कम हैं। अतः, संबंधित स्कीम के अनुसार प्रत्यक्षतः कुछ आवेदकों के प्रति भेदभाव किया गया है। राजेन्द्रन के मामले में (1968) 2 एस सी आर 786=(ए आई आर एस सी 1012) (सुपरा), इस न्यायालय ने यह निर्णय किया कि उपलब्ध सीटों का जिलेवार वितरण संविधान के अनुच्छेद 15 का उल्लंघन है। किन्तु राज्य की ओर से यह तर्क किया गया कि सीटों का यूनिट-वार वितरण प्रशासनिक सुविधा के लिए लागू किया गया था। यह कहा गया कि सभी आवेदकों का इंटरव्यू लेना एक चयन समिति के लिए संभव नहीं था। अतः, विभिन्न समितियां गठित करनी पड़ी। पिछली बार जब आवेदकों का इंटरव्यू विभिन्न समितियों द्वारा लिया गया तो इस प्रकार की शिकायतें की गई कि विभिन्न समितियों द्वारा अपनाए गए मानक अलग-अलग थे और इसलिए आवेदक की योग्यता की परीक्षा समान मानक के आधार पर नहीं की गई। आगे यह कहा गया कि जब विभिन्न समितियों द्वारा चयन किये गए, तो उस समय समेकित सूची तैयार करने में विलंब हो गया था। हम इन कारणों को वर्गीकरण के वास्तविक कारणों के रूप में स्वीकार नहीं कर सकते। यह शिकायत कि राज्य-वार चयन के समय विभिन्न समितियों द्वारा अपनाए गए मानक अलग-अलग थे, विभिन्न समितियों द्वारा किए गए यूनिट-वार चयन के समय भी यह शिकायत बनी रहेगी। चाहे विभिन्न समितियों द्वारा राज्य-वार आधार पर चयन किया गया हो या यूनिट-वार आधार पर, उन समितियों द्वारा अपनाए गए मानक में, अलग-अलग हो सकते हैं। अतः सिद्धांततः इसमें कोई अंतर नहीं है।

12. अब हम विलंब के प्रश्न पर आते हैं। हमें इसका कोई कारण दिखाई नहीं देता कि समेकित सूची तैयार करने में कोई विलंब क्यों होना चाहिये। बहरहाल जो भी हो विलंब का कारण ऐसा नहीं है जिसकी वजह से राज्य-वार आधार पर और योग्यता के आधार पर चयन के सिद्धांत से विचलन को न्यायोचित कहा जा सके। किसी वर्गीकरण को उचित सिद्ध किये जाने से पहले यह आवश्यक है कि वह वास्तविक मानदण्ड पर आधारित हो और प्राप्त किये जाने वाले लक्ष्य से उसका उचित संबंध हो। इस मामले में प्राप्त किया जाने वाला लक्ष्य है मैडिकल कॉलेजों में प्रवेश के लिए सर्वोत्तम प्रवेशार्थियों का चयन करना। जो तरीका अपनाया गया है उससे वह उद्देश्य संतोषजनक रूप से पूरा नहीं हो सकता। याचिकादाताओं की शिकायत है कि 1967-68 में लागू किये गए यूनिट-वार वितरण में कुछ बल है, हालांकि रिकार्ड किये गए आंकड़ों के आधार पर हमारा यह कहना कि यूनिट-वार वितरण आनुषंगिक प्रयोजनों के लिए किया गया था उचित नहीं होगा। यही कहना पर्याप्त होगा कि सीटों का यूनिट-वार वितरण संविधान के अनुच्छेद 14 और 15 का उल्लंघन है। इस तथ्य से कि आवेदक किसी भी एक यूनिट में आवेदन कर सकता है स्कीम अनुच्छेद 14 और 15 की रिष्टि से बाहर नहीं हो जाती। यह स्मरण रहे कि छात्रों को यह सूचित किया गया था कि वे यथासंभव अपने निवास-स्थान से निकटतम यूनिट में ही आवेदन करें।

22. इस विवाद का कोई आधार नहीं है कि पिछड़े वर्गों के लिए किया गया आरक्षण अधिक है। हमें यह नहीं बताया गया कि यह अधिक क्यों है। निस्संदेह, हमें यह नहीं भूलना चाहिए कि हमारे मैडिकल कॉलेजों में योग्य और सक्षम छात्रों के लिए प्रवेश द्वार बन्द कर देना राष्ट्र के तात्कालिक हित के विरुद्ध है किन्तु यदि दीर्घकालीन हित होता है तो राष्ट्र का तात्कालिक हित उससे सुमेलित हो जाता है। इस तथ्य से इन्कार नहीं किया जा सकता कि इस देश में लोगों के कई वर्ग बिना सहायता के राष्ट्र के प्रगतिशील वर्गों से प्रतिस्पर्द्धा नहीं कर सकते। ऐतिहासिक कारणों की वजह से प्राप्त किये गए लाभों को मूल अधिकारों के रूप में नहीं समझा जाना चाहिये। दीर्घकालीन हित को ध्यान में रखते हुए यदि पिछड़े वर्गों की आगे बढ़ने में सहायता की जाए और वे लोगों के प्रगतिशील वर्गों के साथ अपना स्थान बना सकें तो इससे राष्ट्र का सर्वाधिक हित होगा। यही कारण है कि बालाजी के मामले में (1963) सप्लीमेंट 1 एस सी आर 439=(ए आई आर 1963 एस सी 649) (सुपरा), इस न्यायालय ने यह निर्णय किया कि पिछड़े वर्गों, अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों के लिए कुल आरक्षण सामान्यतः उपलब्ध सीटों के 50% से अधिक नहीं होना चाहिये। वर्तमान मामले में यह 41% है। हमारे समक्ष प्रस्तुत आंकड़ों के आधार पर हम यह नहीं कह सकते कि उक्त आरक्षण अधिक है।

24. चित्रलेखा के मामले में (1964) 6 एस सी आर 368= (ए आई आर 1964 एस सी 1823) (सुपरा), इस न्यायालय ने यह दोहराया कि किसी वर्ग के पिछड़े होने के बारे में अभिनिश्चय करने के लिए जाति एक संगत तथ्य है। उस मामले में आगे यह टिप्पणी की गई :—

"हालांकि इस न्यायालय ने नागरिकों के किसी वर्ग के पिछड़ होने के बारे में अभिनिश्चय करने के लिये जाति को अपवर्जित नहीं किया है, फिर भी किसी वर्ग के पिछड़ेपन के अभिनिश्चयन के आधार के लिए जाति को अप्रतिरोध्य तथ्य नहीं माना है। दूसरे शब्दों में संबंधित प्राधिकारी व्यक्तियों के वर्ग के पिछड़ा होने के बारे में अभिनिश्चय करने के लिये जाति को ध्यान में रख सकता है किन्तु यदि वह ऐसा न करे और यदि वह व्यक्तियों के किसी ग्रुप के पिछड़ा होने के बारे में अन्य संगत मानदंड के आधार पर अभिनिश्चय करता है, तो इस कारण से उसकी पद्धति अमान्य नहीं होगी।"

26. जाति को हमेशा एक वर्ग के रूप में माना गया है। भारतीय दंड संहिता की धारा 153-क में प्रयुक्त "महामहिम की प्रजा के वर्ग" अभिव्यक्ति की व्यवस्था करते समय न्यायमूर्ति वासुदेव ने नारायण वासुदेव बनाम सम्राट के मामले में ए आई आर 1940 बम्बई 379 में यह टिप्पणी की :—

"मेरे विचार से, संहिता की धारा 155-क में "महामहिम की प्रजा के वर्ग" अभिव्यक्ति का प्रयोग सीमित अर्थ में किया गया है जोकि सामान्य और एकमात्र अभियान से संबंधित और सामान्य और एकमात्र विशिष्टताओं वाले व्यक्तियों के समूह या ग्रुपों का द्योतक है जो उनकी उत्पत्ति, वंश या धर्म से संबंद्ध हो सकते हैं और उस धारा के अन्तर्गत "वर्ग" उनकी इतनी अधिक मात्रा में संख्या का प्रतीक है कि उन्हें एक सजातीय समुदाय में रखा जा सकता है।"

27. पिछड़ा वर्ग आयोग की रिपोर्ट के अध्याय V के पैरा 10 में यह टिप्पणी की गई है :—

"हमने जाति का परिहार करने की कोशिश की परन्तु हमें यह पता चला कि वर्तमान परिस्थितियों में जाति की उपेक्षा करना कठिन है। हम यह चाहते हैं कि वर्तमान परिस्थिति में जाति को सामाजिक पिछड़ेपन से अलग कर दिया जाए। आजकल कोई भी व्यक्ति कोई भी धंधा कर सकता है। यदि ब्राह्मण सिलाई का काम करे तो वह जाति से दर्जी नहीं हो जाता और न ब्राह्मण के कम रूप में उसकी सामाजिक प्रतिष्ठा घटती है। ब्राह्मण बूट और जूते बनने का काम कर सकता है और फिर भी उसकी वजह से उसकी सामाजिक प्रतिष्ठा नहीं घटती। अतः आजकल सामाजिक पिछड़ापन किसी व्यक्ति के विशेष व्यवसाय के कारण नहीं है किन्तु भारत में सामाजिक पिछड़पन पर विचार करने के लिए जाति को अलग नहीं कर सकते।"

31. राजेन्द्रन का मामला (1968), 2 एस सी आर 786= (ए आई आर 1968 एस सी 1012) (सुपरा), इस प्रतिज्ञप्ति का प्रमाण है कि पिछड़े वर्गों का जातियों के आधार पर वर्गीकरण अनुच्छेद 15(4) की सीमा के अन्तर्गत है, यदि वे जातियां सामाजिक और शैक्षिक दृष्टि से पिछड़ी हुई दिखाई गई हों। यह स्पष्ट करने के लिये हमारे पास कोई और सामग्री प्रस्तुत नहीं की गई है कि पिछड़े वर्गों के लिए आरक्षण, जिससे हमारा यहां संबंध है, अनुच्छेद 15(4) के अनुसार नहीं है। इस तथ्य को दोहराने से कोई लाभ नहीं है कि इस देश में ऐसी बहुत सी जातियां हैं जो सामाजिक और शैक्षिक दृष्टि से पिछड़ी हुई हैं। उनके अस्तित्व की उपेक्षा करना जीवन के तथ्यों की उपेक्षा करना है। अतः हम इस विवाद का समर्थन नहीं कर सकते कि आरक्षण जिसके बारे में विरोध किया गया है, अनुच्छेद 15(4) के अनुसार नहीं है। किन्तु फिर भी, सरकार को इस आधार पर अग्रसर नहीं होना चाहिये कि जो वर्ग एक बार पिछड़ा वर्ग मान लिया गया है वह हमेशा पिछड़ा वर्ग ही बना रहे। इससे आरक्षण का वास्तविक प्रयोजन ही व्यर्थ हो जायेगा क्योंकि जब कोई वर्ग प्रगति की अवस्था तक पहुंच जाए, जिसे कुछ आधुनिक लेखक उठाने की अवस्था कहते हैं, तो उनकी भावी प्रगति के लिए प्रतियोगिता आवश्यक है। सरकार को चाहिए कि वह सीटों के आरक्षण के प्रश्न की हमेशा समीक्षा करती रहे और आरक्षण का लाभ केवल उन्हीं वर्गों को दिया जाए जो वास्तव में सामाजिक और शैक्षिक दृष्टि से पिछड़े हुए हैं। निहित स्वार्थ के लिये सीटें आरक्षित न की जायें। यह तथ्य कि पिछड़े वर्गों के सदस्यों ने सामान्य पूल में लगभग 50% सीटें प्राप्त की हैं, यह प्रकट करता है कि इस प्रश्न की नए सिरे से विस्तृत जांच करने का समय आ गया है। यह स्मरण रहे कि इस संबंध में सरकार का निर्णय न्यायिक समीक्षा के लिये विचाराधीन है।

निर्णय

1. यूनिट-वार चयन को अनुच्छेद 14 और 15 का उल्लंघन समझा गया। इस निष्कर्ष के बावजूद पहले से किये गए चयन को रद्द नहीं किया गया क्योंकि चुने गए सदस्यों को याचिका के संबंध में पक्षकार नहीं बनाया गया था। न भरी गई 24 सीटों को न्यायालय के आदेश के अनुसार भरे जाने का आदेश दिया गया।

2. 41% आरक्षण को अधिक नहीं माना गया।

3. पिछड़े वर्गों के जातियों के आधार पर वर्गीकरण को अनुच्छेद 15(4) की सीमा के अन्तर्गत समझा गया। न्यायालय का निर्णय राजेन्द्रन के मामले में किये गये अपने पिछले निर्णय पर निर्भर था।

तथ्य

सरकार के उस परिपत्र पर आपत्ति की गई जिसके अनुसार, सार्वजनिक नीलामी द्वारा नदी तल की भूमि को बेचने के सम्बन्ध में वर्तमान आदेश को रद्द करके और उस भूमि से अन्य व्यक्तियों को अपवर्जित करके लोगों के कुछ ग्रुपों को उसकी बिक्री किए जाने को नियमित कर दिया गया था। उस भूमि को बेचने की प्राथमिकता इस प्रकार थी :—

(i) गांव के वास्तविक कृषक, जिनके पास 5 एकड़ से कम जोत नहीं है। हरिजनों, आदिवासियों और पिछड़ वर्गों के लोगों को तरजीह दी जाएगी।

(ii) जिनके पास बेट भाटा भूमि के निकट 16 एकड़ से कम जोत-क्षेत्र है और कलक्टर की राय में जिन्हें अपने परिवारों के भरण-पोषण के लिए अतिरिक्त भूमि की वास्तव में आवश्यकता है। इस मामले में भी उपर्युक्त (i) के अनुसार परस्पर तरजीह दी जाएगी।

(iii) हरिजनों, आदिवासियों और पिछड़े वर्गों के व्यक्तियों की सहकारी कृषि समितियां।

(iv) भूमिहीन मजदूरों या लघु जोतधारियों की सहकारी कृषि समिति।

(v) ऐसा कोई व्यक्ति जिसे जलमग्न भूमि नियमावली के अधीन प्राथमिकता दी गई है।

विवाद्यक

क्या पिछड़े वर्गों के लिए भूमि के आरक्षण की मात्रा अधिक थी ?

उद्धरण

न्यायमूर्ति मेहता

अतः, इन खण्डों का अर्थ यह नहीं है कि छोटे भूमिधारियों या उन भूमिहीन व्यक्तियों के लिए विशेष व्यवस्था की गई है जिन्हें अपने भरण-पोषण के लिए भूमि की आवश्यकता है और जो सार्वजनिक नीलामी में धनवानों के मुकाबले बोली नहीं लगा सकते। समूचा वर्गीकरण दो अनिवार्य सिद्धान्तों पर आधारित है—सहकारी समिति और हरिजनों, आदिवासियों और पिछड़े वर्गों के व्यक्तियों के अलग-अलग सदस्य के कारण व्यक्ति को अपवर्जित किया गया है। हालांकि राज्य ने कोई सूची प्रस्तुत नहीं की है, फिर भी राज्य को उन व्यक्तियों के बारे में अतिरिक्त शपथ-पत्र प्रस्तुत करने का उचित अवसर दिया गया है जिन्हें पिछड़े वर्गों के व्यक्ति समझा जाता है और जिनके लाभ के लिए यह आरक्षण किया गया है। अतः "पिछड़े वर्गों के व्यक्ति" की श्रेणी को निर्दिष्ट करने के लिए कोई सामग्री नहीं है जैसा कि इस संगत सरकारी संकल्प में स्पष्ट किया गया है। यह तथ्य रह जाता है कि ऐसे भूमिहीन व्यक्ति या छोटे भूमिधारी को भी, जिसके पास पाँच एकड़ से कम जोत है, अपनी वर्तमान काश्तकारी से निकाल बाहर कर दिया जाएगा क्योंकि उसका पट्टा नया नहीं किया जाएगा यदि वह खण्ड 5 में उल्लिखित व्यवस्था के अनुसार प्राथमिकताधारी नहीं है, जबकि किसी भी प्रकार की सहकारी समिति का पट्टा नया किया जा सकेगा यदि उस समिति का ऐसा प्रत्येक सदस्य, जिसके पास बेट भाटा भूमि के अतिरिक्त 16 एकड़ से कम जोत है, अलग-अलग रूप से शर्त सं० (i) पूरी करता है और दी जाने वाली भूमि को शामिल करके कुल जोत सदस्यों की संख्या को 16 एकड़ से गुणा करने पर जितने एकड़ आएं उससे अधिक न हो। इसके अतिरिक्त हरिजनों, आदिवासियों और पिछड़े वर्ग के व्यक्तियों के मामले में आरक्षण इतना अधिक है जिसकी वजह से ऐसे वास्तविक कृषक पूर्णतः अपवर्जित हो जाएंगे जिनके पास कोई भूमि नहीं है या जिनके पास 5 एकड़ से कम भूमि है जिन्हें अन्यथा रूप में प्राथमिकताधारियों की प्रथम श्रेणी के अन्तर्गत आना चाहिए था। इसी प्रकार, दूसरी श्रेणी में भी यदि विचार का आधार बेट भाटा भूमि के निकट भूमि की जोत है, भले ही परिवार के भरण-पोषण के लिए अतिरिक्त भूमि की वास्तव में आवश्यकता हो, तो इसकी वजह से भी व्यक्ति को अपवर्जित कर दिया जाएगा और हरिजनों, आदिवासियों आदि को तरजीह दी जाएगी, भले ही प्राथमिकताधारियों को ये दोनों तरजीह प्राप्त श्रेणियां किसी व्यक्ति को अपवर्जित करने के लिए वहां न हों या भूमिहीन व्यक्तियों को सहकारी कृषि समिति भी उसे अपवर्जित करेगी और उन मामलों में उन सहकारी सदस्यों की जोतों की सीमाओं का उल्लेख नहीं किया गया है। यहां तक कि अपवर्जन केवल सहकारी सदस्यों द्वारा या गांव के प्राथमिकता वाले वर्ग के व्यक्तियों के कारण ही नहीं अपितु 5 मील के दायरे में आने वाले आसपास के गावों में भी वही सिद्धान्त लागू होने की वजह से भी होगा। यह इस अपवर्जन स्कीम के आधार पर है जिसमें सक्षम प्राधिकारी का कोई विवेकाधिकार नहीं होगा और इससे इस खण्ड में उल्लिखित सहकारी समिति या प्राथमिकताधारियों के अतिरिक्त अन्य व्यक्तियों के नाम कोई पट्टा नया कराए जाने के सम्बन्ध में बिल्कुल रोक लग जाएगी कि पक्षकारों के प्रतिद्वन्द्वी विवाद पर हमें विचार करना होगा। इस अवस्था में यह उल्लेख करना संगत होगा कि खण्ड (6) के अधीन लगान निर्धारण का तरीका वही है जो पिछले तीन वर्षों की नीलामी से हुई औसत वसूली का है या यदि ऐसी कोई नीलामी नहीं की गई है तो उसी प्रकार की आसपास की भूमि के सम्बन्ध में वस्तुतः वसूल किए गए लगान के निर्धारण का है। निर्धारण के इस तरीके के न अपनाए जाने की स्थिति में, यह लगान नकद रूप में परिवर्तित कुल उपज के 1/6 के आधार पर कलक्टर द्वारा निर्धारित किया जाएगा जिसे खण्ड 7 में बताए गए अनुसार संशोधित किया जा सकेगा। यह लगान 10 वर्ष के पट्टे की नवीकरण अवधि के लिए अपरिवर्तनीय रहेगा जब तक कि खण्ड 8 के अधीन उसे संशोधित न कर दिया जाए। इस प्रकार, बेट और भाटा भूमि के इन सभी मामलों में परिपत्र का प्रभाव यह होगा कि वर्ष-दर-वर्ष सार्वजनिक नीलामी का एक भी उदाहरण नहीं मिलेगा जिससे राजस्व में वृद्धि होगी बल्कि 10 वर्ष की अवधि के लिए भूमि खण्ड (6) में उल्लिखित इन मूल्यों के आधार पर ही दी जाएगी।

याचिकादाता द्वारा उठाए गए दूसरे प्रश्न के सम्बन्ध में स्थिति यह है कि इस कानूनी व्यवस्था में असमानता बहुत अधिक है। यद्यपि राज्य को उचित शपथ-पत्र प्रस्तुत करने का अवसर दिया गया था किन्तु पिछड़े वर्गों की कोई सूची नहीं दी गई है जिसमें यह बताया गया हो कि राज्य द्वारा अपनाया गया मानदण्ड वही था जो इस सम्बन्ध

में उच्चतम न्यायालय के न्यायमूर्तियों द्वारा निर्धारित किया गया था। इसके अतिरिक्त, जैसा कि हम पहले ही बता चुके हैं कि आरक्षण इतना अधिक है कि लगभग 100% भूमि इन हरिजनों, आदिवासियों और पिछड़े व्यक्तियों को ही प्राप्त हो जाएगी और संविधान के अनुच्छेद 15(4) में दिए गए अपवाद के आशय के अन्तर्गत आरक्षण आरक्षण नहीं रहेगा। आन्ध्र प्रदेश राज्य बनाम पी० सागर, ए०आई०आर० 1968 एस०सी० 1370 में उच्चतम न्यायालय के निर्णय के बाद, इस सम्बन्ध में अब कानून अच्छी तरह से तय हो गया है। पृष्ठ 1512 पर यह टिप्पणी की गई है कि खण्ड 4 के अधिनियमन की व्यवस्था करके संसद ने नागरिकों के समानता के अधिकार के अनुसार व्यक्तियों के कमजोर वर्गों की उन्नति के लिए व्यवस्था को अनुमति देकर उनकी विशेष आवश्यकताओं को सन्तुलित रखने का प्रयास किया है। खण्ड (4) को कार्यान्वित करने के लिए यह स्पष्ट हो जाना चाहिए कि विशेष व्यवस्था के हिताधिकारी ऐसे वर्ग हैं जो सामाजिक और शैक्षिक दृष्टि से पिछड़े हुए हैं और ये वर्ग अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जन-जातियों से भिन्न हैं और जो व्यवस्था की गई है वह उनकी उन्नति के लिए है। समाज के कमजोर वर्गों के हित को बढ़ावा देने के लिए आरक्षण लागू किया जाए, किन्तु ऐसा करते समय यह ध्यान रखा जाए कि सुपात्र और योग्य सदस्य उच्चतर शैक्षिक संस्थाओं में प्रवेश से अपवर्जित न हो जाएं। पिछड़ेपन का निर्धारण करने का मानदण्ड केवल धर्म, वंश, जाति, लिंग और जन्म-स्थान पर आधारित नहीं होना चाहिए और सामाजिक और शैक्षिक दृष्टि से पिछड़ापन उसी प्रकार का होना चाहिए जिससे अनुसूचित जातियां और अनुसूचित जनजातियां आक्रान्त हैं। ये वही सिद्धान्त हैं जो एम० आर० बालाजी के मामले ए०आई०आर० 1963 एस०सी० 644 और आर० चित्रलेखा बनाम मैसूर राज्य के मामले में ए०आई०आर० 1964 एस०सी० 1823 में उच्चतम न्यायालय के निर्णयों में प्रतिपादित किए गए हैं। बालाजी के मामले में, यह बताया गया कि जिस आरक्षण से इन पिछड़े वर्गों के लिए 50% से भी अधिक सीटें प्राप्त करना सम्भव हो गया है, वह आरक्षण अधिक साबित होगा **क्योंकि आरक्षण को संकल्पना के अंतर्गत 50% प्रतिशत से कम का आरक्षण विवक्षित होगा**। अतः इस संक्षिप्त आधार पर यह सांविधिक आदेश वर्ग विधान के बराबर है और इसका अभिखण्डन किया जाना चाहिए। जब न्यायालय के समक्ष यह विवाद रखा गया था तो पृष्ठ 1384 पर उक्त निर्णय में न्यायमूर्तियों ने यह बताया है कि विशेष कानून, जो कि भेदभाव के विरुद्ध गारन्टी का विरोधी है, इस तर्क के आधार पर वैध है कि यह अनुच्छेद 15 के खण्ड 4 के अधीन अनुमत है। राज्य का यह तर्क कि राज्य के अधिकारियों ने उसी मानदण्ड को ध्यान में रखा था जो कि नागरिकों के सामाजिक और शैक्षिक दृष्टि से पिछड़े वर्गों के बारे में निश्चय करने के लिए न्यायालयों द्वारा लागू किए गए थे, दावे की वैधता की पुष्टि के लिए पर्याप्त नहीं होगा। देश के न्यायालयों को उस कानून की वैधता निश्चित करने की शक्ति प्रदान की गई है जिससे नागरिकों और अन्य व्यक्तियों के मूल अधिकारों का उल्लंघन होता है। जब भी प्रश्न उठा है कि क्या अमुक कानून जिससे गारन्टीकृत मूल अधिकारों का प्रत्यक्षतः उल्लंघन होता है, अपवाद के अन्तर्गत है, तो ऐसी स्थिति में उन मानदण्डों के आधार पर जो उससे सम्बन्धित हैं पूरी तरह विचार करने के बाद ही उस कानून को वैध माना गया है और यह अपवाद के अन्तर्गत है, कोई कानून बनाने से कहीं मूल अधिकार का उल्लंघन तो नहीं हुआ है यह निर्धारित करने की न्यायालयों की अधिकारिता को अपवर्जित नहीं किया गया है। नागरिकों के मूल अधिकारों का स्पष्टतया उल्लंघन करने वाले कानून की वैधता को केवल इसी आधार पर परिपुष्ट नहीं किया जा सकता कि चूंकि कानून बनाने वाला उससे सन्तुष्ट था कि जो उसने किया वह सही है या उसे यह विश्वास है कि उसने नागरिकों की सांविधानिक प्रतिश्रुतियों के अनुरूप कार्य किया है। जिस कानून के सम्बन्ध में यह आरोप लगाया जाए कि उससे नागरिकों के मूल अधिकारों का उल्लंघन हुआ उस कानून या उस कानून के कार्यान्वयन में की गई कार्रवाई की वैधता की कसौटी का आधार यह नहीं है कि उस कानून को बनाने वाले या उसे कार्यान्वित करने वाले व्यक्ति को उसमें विश्वास है बल्कि उस सम्बन्ध में न्यायालयों के समक्ष साक्ष्य और तर्क प्रस्तुत किया जाए कि प्रतिश्रुत अधिकार का उल्लंघन नहीं हुआ है। अतः केवल यह कहना कि राज्य ने संविधान के नीति निर्देशक सिद्धान्त कार्यान्वित किए हैं या संविधान के अनुसार कमजोर वर्गों के लिए आरक्षण कर दिया है, कोई तर्क नहीं है जिससे यह उचित रूप से सिद्ध होता हो कि ऐसे किसी वर्ग के लिए कानून बन गया है, जब तक किसी साक्ष्य और तर्क के आधार पर यह न बताया जाए कि यह आरक्षण अनुच्छेद 15(4) के अन्तर्गत आता है। इसके अतिरिक्त, इस तथ्य से कि वर्गीकरण उचित है, इसकी पुष्टि नहीं होगी जब तक वर्गीकरण और प्राप्त किए जाने वाले उद्देश्य में परस्पर सम्बन्ध न हो। जैसा कि हम पहले बता चुके हैं कि प्राप्त किया जाने वाला उद्देश्य पूर्णतः सांपार्श्विक उद्देश्य है और आरोपित वर्गीकरण के सम्बन्ध में जो मानदण्ड अपनाए गए हैं अर्थात् सहकारी समिति की सदस्यता और हरिजन, आदिवासी या पिछड़े वर्ग के व्यक्ति भू-राजस्व में वृद्धि के उद्देश्य से किसी भी प्रकार से उचित सम्बन्ध नहीं रखते जो कि संसूची संहिता का अन्तर्निहित उद्देश्य होगा जिसमें जनता के लाभ के लिए उक्त भूमि के विक्रय की सांविधिक शक्ति भी शामिल है। जब किसी सांविधिक आदेश के अनुसार राज्य द्वारा ऐसी सांविधिक शक्ति का प्रयोग किया जाए तो ऐसी स्थिति में संहिता में व्यक्तियों के किसी प्रकार के अपवर्जन पर विचार नहीं किया गया था। अतः इस सांविधिक आदेश से संविधान के अनुच्छेद 14 का स्पष्ट रूप से उल्लंघन हुआ है और इस आधार पर भी इसे अभिखण्डित किया जाना चाहिए।

अतः यह याचिका अवश्य स्वीकार की जाए और इस प्रकार 28 दिसम्बर, 1960 के आक्षिप्त सरकारी संकल्प को अधिकार से परे माना जाए और इसे अभिखण्डित किया जाए। प्रत्यर्थियों और राज्य के राजस्व प्राधिकारियों को यह निदेश दिया जाए कि वे विवादास्पद बेट और भाटा भूमि के पट्टों के नवीकरण या उसके विषय के प्रश्न पर विचार करते समय इस परिपत्र को ध्यान में न रखे और कानून के अनुसार इस भूमि के नवीकरण और विक्रय के प्रश्न पर पहले निर्णय किए बिना, कानून के उचित अनुक्रम की स्थिति को छोड़कर, याचिकादाता को बेदखल न करें। तदनुसार प्रत्येक मामले में सुनिश्चित नियम बनाया जाए। प्रत्येक मामले में याचिकादाता का खर्च राज्य अदा करेगा।

निर्णय

पिछड़े वर्गों के पक्ष में आरक्षण अधिक पाया गया और उसे असांविधिक माना गया।

तथ्य

अनुसूचित जातियों, अनुसूचित जनजातियों, पिछड़े वर्गों और पिछड़े क्षेत्रों के निवासियों और अन्य वर्गीकृत श्रेणियों के लिए मैडिकल कालेजों में प्रवेश के सम्बन्ध में 50 प्रतिशत सीटों के आरक्षण के बारे में जारी किए गए सरकारी आदेशों पर आपत्ति की गई। आरक्षण की मात्रा इस प्रकार थी :—

(i) अनुसूचित जातियां/जनजातियां	20%
(ii) पिछड़े वर्ग	2%
(iii) पिछड़े क्षेत्र	10%
(iv) पुरुष खिलाड़ी/महिला खिलाड़ी	2%
(v) केन्द्रीय सरकार के नामित व्यक्ति जिनमें जम्मू और कश्मीर से नामित व्यक्ति शामिल हैं	6%
(vi) महिला अभ्यर्थी	1%
(vii) पंजाब के सीमा क्षेत्रों के अभ्यर्थी	5%
(viii) पंजाब अधिवास के स्वतन्त्रता संघर्ष के राजनीतिक पीड़ित व्यक्तियों के बच्चे	2%
(ix) (क) ऐसे रक्षा कार्मिकों के बच्चे जिनकी मृत्यु हो गई है	
(ख) विकलांग रक्षा कार्मिकों के बच्चे	
(ग) सीमा सुरक्षा बल के मारे गए/विकलांग कार्मिकों के बच्चे	2%
(घ) भारतीय सशस्त्र सेनाओं के भूतपूर्व सैनिकों के बच्चे	

विवाद्यक

(i) क्या मैडिकल कौलेजों में प्रवेश के सम्बन्ध में पिछड़े वर्गों के लिए आरक्षण करने के लिए परिवार की आर्थिक स्थिति की कोई संगति है ?

(ii) क्या पिछड़े क्षेत्रों के निवासियों के लिए आरक्षण सांविधानिक है ?

उद्धरण

न्यायमूर्ति एम० आर० शर्मा

अब मद सं० (ii) पर की गई आपत्ति पर विचार किया जाए। पिछड़े वर्गों के सम्बन्ध में यह निवेदन किया गया है कि किसी जाति या समुदाय विशेष के लिए आरक्षण नहीं किया जा सकता क्योंकि पिछड़ापन न्यूनाधिक रूप से परिवार की आर्थिक स्थिति पर निर्भर करता है। इस सम्बन्ध में, राज्य के विद्वान परामर्शी ने मेरा ध्यान राज्य सरकार द्वारा जारी किए गए तारीख 20 अप्रैल, 1963 के परिपत्र सं० 2662-5 डब्ल्यू०जी० II-63/6934 की ओर दिलाया है जिसमें यह व्यवस्था की गई है कि जिस परिवार की वार्षिक आय 1,000 रु० से कम है, उसे पिछड़ा परिवार समझा जाना चाहिए और कुछ ऐसे समुदायों को भी पिछड़े समुदायों के रूप में समझा जाना चाहिए जिन्हें राज्य के व्यक्ति सामाजिक रूप से हीन समझते हैं और जिनकी वार्षिक आय 1,800 रु० से अधिक नहीं है और जिन्हें राज्य सरकार ने इस रूप में घोषित किया है। इससे यह प्रकट होता है कि इस परिपत्र में किसी परिवार को पिछड़े वर्ग से सम्बन्धित घोषित किए जा सकने से पहले उसके पिछड़ेपन के पहलू के सम्बन्ध में पर्याप्त लक्षणों का उल्लेख किया गया है। ऐसा वर्गीकरण संविधान के अनुसार स्वीकार्य है और इसका अभिखण्डन नहीं किया जा सकता। मद सं० (iv), (v) और (ix) में किए गए आरक्षण की सांविधानिक वैधता पर आपत्ति नहीं की गई है। अगली मद जिसके सम्बन्ध में निष्कर्ष पर पहुंचना है, वह है "पिछड़े क्षेत्र"। प्रत्यर्थी के विद्वान परामर्शी ने मुझे पटियाला और अमृतसर के राजकीय मैडिकल कौलेजों में एम०बी०बी०एस० की प्रथम वर्ष कक्षा में प्रवेश सम्बन्धी विवरणिका प्रस्तुत की है। पिछड़े क्षेत्र के अभ्यर्थियों के सम्बन्ध में निम्नलिखित शर्तें निर्धारित की गई हैं :—

"पिछड़े क्षेत्र के अभ्यर्थी

राज्य के पिछड़े क्षेत्रों के प्रवेश चाहने वाले अभ्यर्थियों को चाहिए कि वे अपने आवेदन-पत्रों के साथ उपायुक्त/उपायुक्त के प्रधान सहायक, सम्बन्धित जिले के उप-मण्डल अधिकारी (सिविल) का इस आशय का प्रमाण-पत्र प्रस्तुत करें कि अभ्यर्थी का दावा, पंजाब सरकार के मुख्य सचिव के तारीख 7 सितम्बर, 1956 के पंजाब सरकार के पत्र सं० 15595-डब्ल्यू०जी० 56/4174 में दी गई निम्नलिखित श्रेणियों में से किसी एक श्रेणी में आता है :—

(क) ऐसा व्यक्ति जो अपने परिवार के सदस्यों के साथ दस वर्ष या अधिक समय से लगातार किसी विशेष गांव या कस्बे में रह रहा है और जिसके वहां लगातार रहने की सम्भावना है।

(ख) यदि कोई व्यक्ति किसी गांव या कस्बे में दस वर्ष से कम समय से रह रहा है किन्तु वहां जिसके इस तथ्य के कारण रहने की सम्भावना है कि उसे लाभकर रोजगार मिल गया है या वह सेवा-निवृत्ति के बाद वहां बस गया है, तो ऐसे व्यक्ति को भी स्थायी निवासी समझा जाएगा, यदि वह वहां कम से कम पांच वर्ष से रह रहा हो।

(ग) यदि कोई व्यक्ति उक्त क्षेत्र में किसी गांव या कस्बे में रहा हो, तो उसकी दोनों स्थानों पर रहने की अवधि को उस क्षेत्र में निवास के रूप में गिना जाएगा।"

इस उपबन्ध की व्याख्या से यह पता चलता है कि किसी विशेष गांव या कस्बे में किसी विशेष अवधि से रहने वाले व्यक्ति को केवल निवास के आधार पर तरजीह दी गई है। इन क्षेत्रों में रहने वाले लखपति और कंगाल को बराबर समझा गया है। यदि चिकित्सा संस्थाओं में आरक्षण करने का उद्देश्य आर्थिक दृष्टि से पिछड़े व्यक्तियों को तरजीह देना है तो किसी की समझ में यह नहीं आएगा कि उसी राज्य के नगरों में रहने वाले व्यक्ति को न्यायोचित रूप से तरजीह कैसे दी जा

सकती हैं । संविधान के अनुच्छेद 15(4) में यह दिया गया है कि नागरिकों के सामाजिक और शैक्षिक दृष्टि से पिछड़े वर्गों की उन्नति के लिए राज्य कोई विशेष व्यवस्था करे । इस अनुच्छेद में उल्लिखित नागरिकों के वर्गों का सम्बन्ध उन नागरिकों से नहीं होता जो अपने व्यक्तिगत लाभ या उपलब्धि के बिना कुछ भौगोलिक सीमाओं में रहते हैं । यह निस्सन्देह सही है कि कानून बनाते समय या कार्यकारी कार्य करते समय, राज्य भौगोलिक सीमाओं के आधार पर उचित वर्गीकरण कर सकता है किन्तु इसके पीछे वह उद्देश्य होना चाहिए जिसके लिए यह वर्गीकरण किया गया है और उस वर्गीकरण का भी प्राप्त किए जाने वाले उद्देश्य से उचित सम्बन्ध होना चाहिए । किसी राज्य के विशेष क्षेत्र में उसी राज्य के अन्य नागरिकों के रूप में निवास से अतिरिक्त विशेषाधिकारों की मांग का आधार नहीं बन सकता। यदि किसी कानून में ऐसी व्यवस्था कर दी जाए, तो संविधान के अनुच्छेद 15 के आधार पर उसकी परीक्षा की जाएगी । यह मत और भी पुष्ट हो जाता है क्योंकि पिछड़े वर्गों का वर्गीकरण करते समय राज्य ने ही सामान्य समुदायों और राज्य के व्यक्तियों द्वारा सामाजिक दृष्टि से तिरस्कृत किए जाने वाले समुदायों के बीच युक्तिसंगत वर्गीकरण किया है । प्रथम प्रवर्ग के मामले में, परिवार की आय की सीमा 1,000 रु० वार्षिक निर्धारित की गई है और दूसरे प्रवर्ग के मामले में परिवार की वार्षिक आय 1,800 रु० निर्धारित करते हुए सामाजिक पक्षपात के प्रभाव को प्रतिसन्तुलित करने का प्रयास किया गया है । वास्तविकता यह है कि पिछड़े क्षेत्र वे हैं जिनमें रहने वाले लोग आर्थिक दृष्टि से पिछड़े हुए हैं और कुछ तो इन क्षेत्रों में शैक्षिक संस्थाओं के अभाव के कारण और कुछ उन क्षेत्रों के निवासियों के पास काफी दूर स्थित संस्थाओं में उच्च शिक्षा प्राप्त करने के साधन न होने के कारण जो उच्च शिक्षा की सुविधा से वंचित रह जाते हैं । ऐसे क्षेत्रों के वस्तुतः सुपात्र निवासियों को राहत देने के लिए वहां के निवासियों की तुलनात्मक सम्पन्नता अवधारित करने के लिए कोई मानदण्ड तैयार किया जाना चाहिए । उपर्युक्त उपबन्धों से ऐसा कोई संकेत नहीं मिलता । मेरा इस सम्बन्ध में सुविचारित मत यह है कि किसी मानदण्ड के अभाव में, जिससे किसी क्षेत्र के नागरिकों के सामाजिक और शैक्षिक दृष्टि से पिछड़ा होने के बारे में निर्धारण किया जा सकता है, अनुबन्ध 'क' में क्रम सं० (iii) में उल्लिखित पिछड़े क्षेत्रों के लिए आरक्षण संविधान के अनुच्छेद 14 और 15 का उल्लंघन है । इस आरक्षण को अभिखण्डित किया जाना चाहिए ।

निर्णय

(i) पिछड़ेपन के निर्धारण के लिए परिवार की आर्थिक स्थिति संगत घटक है ।

(ii) पिछड़े क्षेत्रों के निवासियों के लिए आरक्षण असांविधिक माना गया ।

बी० सईद अहमद बनाम मैसूर राज्य

1969 (1) मैसूर एल०जे० 79

तथ्य

प्रार्थी ने एम०बी०बी०एस० डिग्री के मार्गदर्शक पूर्व-व्यावसायिक पाठ्यक्रम में प्रवेश के लिए इस आधार पर आवेदन किया था कि वह सामाजिक और शैक्षिक दृष्टि से पिछड़े वर्ग का सदस्य है। उसे प्रवेश देने से इन्कार कर दिया गया हालांकि उसने पिछड़े वर्ग के अन्य सदस्य से, जिसके कम अंक थे, अधिक अंक प्राप्त किए थे।

विवाद्यक

क्या अपने पिता के पेशे (मैकेनिक) के आधार पर वह सामाजिक और शैक्षिक दृष्टि से पिछड़े वर्ग के अन्तर्गत आता था ?

उद्धरण

न्यायमूर्ति नारायण पै

चयन समिति के अध्यक्ष के प्रति शपथ-पत्र में निर्दिष्ट शिकायत का उत्तर यह है कि उनके समक्ष प्रस्तुत की गई सामग्री के आधार पर, याचिकादाता को सामाजिक और शैक्षिक दृष्टि से पिछड़े वर्ग के सदस्य के रूप में वर्गीकृत नहीं किया जा सकता था और इसीलिए उसे सामान्य पूल में माना गया जिसमें वह अपने अंकों के आधार पर प्रवेश प्राप्त नहीं कर सकता था। हालांकि आवेदन-पत्र के साथ प्रस्तुत किए गए शपथ-पत्र में याचिकादाता के पिता को "विक्रम इण्डस्ट्रीज" नामक प्रतिष्ठान का भूतपूर्व कर्मचारी बताया गया था, फिर भी हमारे समक्ष इस याचिका के सम्बन्ध में प्रस्तुत किए गए याचिकादाता के और चयन समिति के अध्यक्ष के शपथ-पत्र से यह स्पष्ट होता है कि यह अभिनिश्चय किया गया था कि याचिकादाता का पिता "मैकेनिक" था किन्तु गठिया के कारण, आवेदन की तारीख से कुछ महीने पहले से और आवेदन के समय भी वह उस काम को नहीं करता था।

केवल इस तथ्य के आधार पर कि आवेदन के समय अस्वस्थता के कारण याचिकादाता का पिता वास्तव में उस काम को नहीं करता था, यह कहना उचित नहीं है कि उसका पेशा "मैकेनिक" का नहीं था। विश्वनाथ बनाम मुख्य सचिव, मैसूर राज्य के मामले में इस न्यायालय द्वारा बताए गए अनुसार आवेदक के पिता या संरक्षक का स्थायी पेशा सही कसौटी है और स्थायी पेशे को करने में किसी प्रकार की अस्थायी असमर्थता अयोग्यता नहीं है। अतः, निस्सन्देह याचिकादाता के पिता का पेशा "मैकेनिक" का था।

यह भी निर्विवाद है कि पिता की वार्षिक आय 1,200 रु० से कम थी और आवेदन के समय उसकी आय केवल 624 रु० थी और वह भी अपने पैतृक मकान से प्राप्त किराए के रूप में थी।

अतः केवल यही प्रश्न बच रहता है कि क्या "मैकेनिक" का व्यवसाय उन व्यवसायों में से एक तो नहीं है, जो उस सम्बन्धित सरकारी आदेश में निर्दिष्ट हैं, जिसमें सामाजिक और शैक्षिक स्तर पर पिछड़े वर्गों की व्याख्या दी गई है। उक्त आदेश में निर्दिष्ट व्यवसाय इस प्रकार है :—

(i) वास्तविक कृषक ;

(ii) शिल्पकार ;

(iii) खुदरा व्यवसायी ;

(iv) अवर सेवा, अर्थात् श्रेणी IV के सरकारी कर्मचारी और उपयुक्त नियोजन की तदनुरूपी श्रेणी तथा नैमित्तिक श्रमिक, और

(v) शारीरिक श्रम से सम्बन्धित कोई अन्य व्यवसाय।

इस दृष्टिकोण के सम्बन्ध में कि "मैकेनिक" का व्यवसाय ऊपर उल्लिखित व्यवसायों में से किसी भी व्यवसाय के सीमा क्षेत्र के अन्तर्गत नहीं आता, प्रत्यर्थी की ओर से यह तर्क दिया गया था कि इस प्रश्न का वस्तुतः समाधान ही नहीं हुआ कि क्या "मैकेनिक" का व्यवसाय ऐसा व्यवसाय है, जिसमें मुख्य रूप से शारीरिक श्रम करना पड़ता है या क्या इसमें आनुपातिक रूप से अधिक बौद्धिक श्रम नहीं करना पड़ता। हमें यह प्रतीत होता है कि उपर्युक्त बातों के आधार पर कोई अन्वेषण करना अनावश्यक है। आक्सफोर्ड शब्द-कोष के अनुसार "मैकेनिक" वह व्यक्ति होता है, जो पूर्णतः शिल्पकार की श्रेणी में ही आता है, और उक्त शब्द-कोष में "मैकेनिक" शब्द में "शिल्पकार" भी शामिल है। उक्त शब्द-कोष में "शिल्पकार" शब्द का जो अर्थ दिया गया है, उसमें (1) "ऐसा व्यक्ति, जो किसी औद्योगिक कला से सम्बद्ध है, (2) "मैकेनिक या दस्तकार, (3) "शिल्पी" शामिल है।

निर्णय

मैसूर सरकार के जुलाई, 1963 के आदेश के अधीन "मैकेनिक" को "शिल्पकार" शब्द के विवरण के अन्तर्गत ही रखा गया था, अतः प्रार्थी इस आधार पर प्रवेश पाने का हकदार था कि वह पिछड़े वर्ग से सम्बन्धित था। चयन समिति को निदेश देते हुए यह परमादेश जारी किया गया था कि प्रार्थी के आवेदन-पत्र पर विचार किया जाये।

अब्दुल लतीफ बनाम राज्य

ए०आई०आर० 1964 पी०ए०टी०-393

तथ्य

बिहार सरकार ने 20 अगस्त, 1958 के आदेश द्वारा अनुसूचित जाति और अनुसूचित जनजाति के आवेदकों के नाम आबकारी (गांजा) की दुकानें आबंटित करने के लिए निम्नलिखित मार्गदर्शी नियम जारी किये थे :—

(i) समाज कल्याण विभाग को इस सम्बन्ध में सूचना देना, जो अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों के बीच यथोचित प्रचार करेगा।

(ii) जब आबकारी की किसी एक दुकान के लिए अनेक उम्मीदवार हों, जिनमें से अनुसूचित जाति या अनुसूचित जनजाति का कोई ऐसा उम्मीदवार हो, जो उपयुक्त हो, तो दुकान का आबंटन पर्चियां डालने की विधि से न करके उसी आवेदक को कर दिया जाये।

(iii) यदि अनुसूचित जाति या अनुसूचित जनजाति के एक से अधिक उपयुक्त उम्मीदवार हों, तो दुकान का आबंटन ऐसे उम्मीदवारों के बीच पर्चियां डालकर किया जायेगा और जिस उम्मीदवार के नाम की पर्ची निकलेगी, उसी को दुकान आबंटित कर दी जाएगी।

(iv) मामले पर सावधानी से विचार करने के बाद ही अनुसूचित जाति और अनुसूचित जनजाति के उम्मीदवार के आवेदन-पत्रों को रद्द किया जाय, अन्यथा नहीं।

प्रार्थी का आवेदन-पत्र, जो कि 39 आवेदकों में से एक था, रद्द कर दिया गया था और उसने उस आदेश पर आक्षेप किया।

विवाद्यक

क्या अनुसूचित जाति और अनुसूचित जनजाति के उम्मीदवारों के लिए आरक्षण करना ज्यादती नहीं है ? क्या यह अनुच्छेद 15(4) के अधीन वैध है ?

उद्धरण

मुख्य न्यायमूर्ति वी० रामास्वामी और न्यायमूर्ति ऊंटवालिया

अर्थान्वयन के रूप में यह प्रकट होता है कि संविधान का अनुच्छेद 15(4) कोई स्वतन्त्र या मूल विधिकरण नहीं है, बल्कि यह संविधान के अनुच्छेद 15(1) के अधीन मुख्य गारन्टी का एक अपवाद है या उसकी एक अर्हता है। अतः संविधान के अनुच्छेद 15(4) का निर्वचन ऐसे रूप में करना अनुमत्य नहीं है, जिससे संविधान के अनुच्छेद 15(1) के अधीन गारन्टी का अर्थ ही नष्ट या अकृत हो जाये। क्योंकि समाज के अपेक्षाकृत कमजोर वर्गों की उन्नति को बढ़ावा देने से कुल मिलाकर समाज को ही लाभ होता है, अतः संविधान के अनुच्छेद 15(4) के अधीन विशेष उपबन्ध करने का प्राधिकार दिया गया है। किन्तु यदि यह उपबन्ध, जो कि एक अपवाद के रूप में है, समाज के बाकी हिस्से को बहिष्कृत कर देता है, तो स्पष्ट रूप से यह अनुच्छेद 15(4) के विषय-क्षेत्र से बाहर है।

निर्णय

एकमात्र अनुसूचित जाति और अनुसूचित जनजाति के आवेदकों के लिए ही किया गया आरक्षण असंवैधानिक माना गया।

हृदय नारायण बनाम मोहम्मद शरीफ

ए०आई०आर० 1968 पी०ए०टी० 296

तथ्य

बिहार अधिधृति अधिनियम की धारा 49 एम और ब बिहार सरकार की तारीख 7 फरवरी, 1956 की अधिसूचना सं० ए/टी–1015/55–1091–आर की वैधता से सम्बन्धित मुख्य संवैधानिक प्रश्न, जिनमें हजाम (मद सं० 13) को पिछड़े वर्ग के समुदाय के रूप में दिखाया गया है।

विवाद्यक

क्या हजाम पिछड़े वर्ग के अन्तर्गत आते थे ?

उद्धरण

मुख्य न्यायमूर्ति नरसिंहम् : श्री महेन्द्र प्रसाद पांडय हमारे सामने ऐसी कोई सामग्री प्रस्तुत नहीं कर सके हैं, जिसके आधार पर यह निर्णय किया जा सके कि हजाम (हिन्दू और मुसलमान) सामाजिक और शैक्षिक रूप से पिछड़े वर्ग के नहीं हैं। दूसरी ओर श्री पी० सी० राय चौधरी के दरभंगा जिला के गजेटियर के पृष्ठ 86 पर यह उल्लेख किया गया कि :—

> "इनमें साक्षरता बहुत कम प्रतीत होती है, किन्तु इनमें से कुछ ऐसे व्यक्तियों ने, जो पढ़े-लिखे हैं, दूसरे व्यवसाय भी अपनाए हैं।"

इस प्रकार इसमें कोई भी सन्देह नहीं है कि वे शैक्षिक रूप से पिछड़े हुए हैं। सामाजिक रूप से भी ऐसे कोई आंकड़े नहीं हैं, जिनसे यह पता चलता हो कि वे पिछड़े हुए नहीं हैं। अतः केवल इस कारण से ही अधिसूचना को रद्द करने का कोई आधार नहीं है कि इन वर्गों का उल्लेख उनकी जाति के नाम से किया गया है।

निर्णय

हजामों को सामाजिक और शैक्षिक रूप से पिछड़ा हुआ माना गया था। न्यायालय ने दरभंगा जिला के गजेटियर को आधार माना।

तथ्य

प्रार्थी नायर समुदाय का था और उसने 639 अंक लेकर बी०एस०-सी० में प्रथम श्रेणी प्राप्त की थी। उसे मैडिकल कालेज में दाखिला नहीं दिया गया।

विवाद्यक

सामाजिक और शैक्षिक रूप से पिछड़े वर्गों की पहचान करने का क्या मानदण्ड है ?

उद्धरण

न्यायमूर्ति मैथ्यू

प्रार्थी के वकील ने इस मामले में निवेदन किया कि प्रार्थी पाठ्यक्रम में दाखिला पाने का हकदार है क्योंकि जिन व्यक्तियों को आरक्षण वाली सीटों पर दाखिला दिया गया है, उन्होंने प्रार्थी से कम अंक प्राप्त किये हैं। यह दलील दी गई कि प्रार्थी के पिता की आय 6,000 रुपये से बहुत कम है और फिर भी प्रार्थी को इस पाठ्यक्रम में दाखिला नहीं दिया गया। जबकि एज्हावा समुदाय के सदस्यों को, जिनके परिवारों की आय 6,000 रुपये से कम है, पिछड़े वर्ग का माना गया है और उन्हें इस पाठ्यक्रम में दाखिला दे दिया गया है और यह कि ऐसा किया जाना एक भेदभावपूर्ण कार्य है। दूसरे शब्दों में, जो तर्क दिया गया, वह यह था कि यह निर्णय करने के लिए यदि आय ही एक मान-दण्ड है कि कोई वर्ग पिछड़ा वर्ग है या नहीं, तो प्रार्थी भी पिछड़े वर्ग का ही है और उसे उनकी अपेक्षा इस पाठ्यक्रम में पहले दाखिला दिया जाना चाहिए था क्योंकि प्रार्थी ने उन सभी से अधिक अंक प्राप्त किये थे। वकील ने यह निवेदन किया कि क्योंकि वर्गीकरण मुख्यतः आय के आधार पर ही किया गया है, अतः वह वर्गीकरण देश के सभी समुदायों के सदस्यों पर भी लागू किया जाना चाहिए था और क्योंकि आय पर आधारित वर्गीकरण केवल कुछ समुदायों पर ही लागू किया गया है, अतः यह अनुचित है। मैं यह तर्क मानने को तैयार नहीं हूं। उच्चतम न्यायालय द्वारा इस विषय पर सुनाए गये सम्बन्धित निर्णय का हवाला दिये जाने के बाद ही केरल की शैक्षणिक संस्थाओं में स्थानों के आरक्षण के आयुक्त ने किसी वर्ग को पिछड़े वर्ग के रूप में अवधारित किये जाने के लिए साधन तथा जाति/समुदाय सम्बन्धी परख को स्वीकार करने का निर्णय किया। आयोग की टिप्पणी उसकी रिपोर्ट के पृष्ठ 35 पर दी गयी है :—

> "अतः हम यह समझते हैं कि साधन तथा जाति/समुदाय सम्बन्धी परख को अपनाया जाना आवश्यक है, ताकि केवल निर्धन और योग्य व्यक्तियों को ही लिया जाये और समृद्धिशाली परिवारों के व्यक्तियों को नहीं।"

> "राज्य के जिन परिवारों के सदस्यों की सभी स्रोतों से कुल आय 4,200 रुपये प्रति वर्ष और उससे अधिक है, उन्हें सामाजिक रूप से पिछड़े हुए किसी वर्ग से सम्बद्ध नहीं माना जा सकता, भले ही वे किसी भी जाति या समुदाय के क्यों न हों।"

सरकार ने अपने आदेश सं० जी०ओ०(डी) 208/66/शिक्षा तारीख 2-5-1966 के अधीन इस सीमा को बढ़ाकर 6,000 रु० कर दिया है। जैसा कि मैंने पहले भी कहा कि यह अवधारित करना कि कोई वर्ग पिछड़ा वर्ग है या नहीं, एक जटिल प्रश्न है। इसके लिए अनेक कारणों पर विचार करना होगा। केवल आय के आधार पर ही इस प्रश्न का अवधारण नहीं किया गया था। अतः केवल इसलिए कि प्रार्थी के पिता की आय 6,000 रुपये से कम है, प्रार्थी इस बात का दावा करने का हकदार नहीं हो जायेगा कि वह आय की परख के आधार पर पिछड़े वर्ग से सम्बद्ध है। अतः मैं इस प्रतिवाद को नामंजूर करता हूं।

निर्णय

केवल परिवारों की वार्षिक आय से ही सामाजिक और शैक्षिक पिछड़ेपन का अवधारण नहीं किया जा सकता।

तथ्य

यह मामला मैसूर सरकार के जुलाई, 1963 के उस आदेश के निर्वचन से सम्बन्धित है, जिसमें सामाजिक तथा शैक्षिक रूप से पिछड़े वर्ग की परिभाषा दी गई है। प्रार्थी ने, जो कि मैडिकल कालेज में दाखिले के लिए आवेदक था, यह दावा किया कि वह मैसूर सरकार के आदेश के अर्थ के अनुसार पिछड़े वर्ग से सम्बद्ध था। उसने यह घोषणा की थी कि उसके पिता की वार्षिक आय केवल 650 रु० थी। उक्त आदेश में पिछड़ेपन के अवधारण के लिए आर्थिक स्थिति और व्यवसाय को मानदण्ड के रूप में अपनाया गया था। किसी व्यवसाय विशेष के साथ 1,200 रु० प्रति परिवार की आय-सीमा पिछड़ेपन के अवधारण के लिए एक मानदण्ड के रूप में नियत की गई थी।

विवाद्यक

(i) "परिवार" अभिव्यक्ति का क्या अर्थ है ?

उद्धरण

न्यायमूर्ति नारायण पै

यद्यपि जैसा कि इस न्यायालय का विचार था, उक्त आदेश का आशय परिवार और परिवार के सदस्यों की स्थिति का अवधारण करने के लिए परिवार का उल्लेख एक इकाई के रूप में करना है, या उसे एक इकाई के रूप में मानकर कार्रवाई करना है, किन्तु इससे जो कठिनाई उत्पन्न हुई है, वह यह है कि इसमें इस बात की व्याख्या नहीं की गई है कि उसका परिवार से क्या अभिप्राय है। यद्यपि "अविभाजित परिवार" अभिव्यक्ति का प्रयोग किया गया है और सामान्यतः लोगों द्वारा इस शब्द का प्रयोग भी किया जाता है किन्तु हिन्दुओं के विभिन्न वर्गों के सम्बन्ध में इस शब्द का प्रयोग करते हुए इसके निश्चित विधिक अर्थ का हमेशा ध्यान नहीं रखा जाता। यह उक्त आदेश केवल उन परिवारों पर लागू नहीं किया जा सकता या लागू न किया जाये, जो विधिक अभिव्यक्ति "हिन्दू अविभाजित परिवार" की श्रेणी में नहीं आते हैं, इस तथ्य से स्पष्ट है कि मैसूर राज्य में, जिस पर यह आदेश लागू होता है, ऐसे व्यक्तियों के भी परिवार हैं, जो हिन्दू नहीं हैं, किन्तु जो इस्लाम, ईसाई धर्म जैसे अन्य धर्मों को मानते हैं, और कम से कम यहां दो प्रकार के अविभाजित हिन्दू परिवार हैं, मिताक्षर परिवार और अलियासंथान परिवार, इन दोनों में एक बहुत बड़ा अन्तर है, अर्थात्, जबकि मिताक्षर परिवार में पिता और पुत्र एक ही परिवार के होते हैं, और अलियासंथान परिवार में पिता और पुत्र दो भिन्न परिवारों से सम्बद्ध होते हैं। अतः इस अभिव्यक्ति के निर्वचन के लिए जो सामान्य नियम अपनाया जाना चाहिए, वह यह है कि सरकारी आदेश में प्रयोग किया गया शब्द "परिवार" एक ऐसी अभिव्यक्ति है जो सभी व्यक्तियों पर लागू किये जाने के लिए है, भले ही उन पर लागू होने वाले परिवार विधि के नियम कुछ भी क्यों न हों। यदि ऐसा है, तो इसका सुस्पष्ट अर्थ यही है कि परिवार का अर्थ उसी सामान्य या प्राकृतिक परिवार से है, जिसमें पति, पत्नी और उनके बच्चे होते हैं, जो अपने साथ रहने वाले अन्य रिश्तेदारों के साथ एक साथ रहते हैं।

अतः बहस के दौरान तथा आवेदन-पत्र के साथ संलग्न शपथ-पत्र दोनों में दिया गया यह सुझाव कि आवेदक और उसके माता-पिता या अभिभावक को उल्लिखित व्यवसायों में से कोई एक व्यवसाय अपनाना चाहिए, हमें सही प्रतीत होता है।

अगला तथा और अधिक कठिन प्रश्न यह है कि आय की परख किस पर और किस तरीके से की जाये। यदि परिस्थितियों के अनुसार यह निर्णय करना सम्भव होता कि सरकारी आदेश में उल्लिखित परिवार ऐसा अविभाजित परिवार है, जो मिताक्षर विधि या अलियासंथान विधि या ऐसी किसी परिवार विधि की किसी अन्य प्रणाली में जाना जाता है, जिसमें सम्पत्ति का मालिक पूरा परिवार होता है, तो सम्भवतः यह कहना आसान होता कि सम्पूर्ण अविभाजित परिवार की आय को हिसाब में लिया जाये। यदि पहले बताए गये कारणों से उक्त आदेश में प्रयुक्त "परिवार" शब्द का ऐसा अर्थ नहीं लगाया जाता, तब उक्त आदेश के प्रयोजन के लिए आय आवेदक के या आवेदक के पिता के या दोनों के सम्पूर्ण अविभाजित परिवार की आय नहीं हो सकती।

हमें यह प्रतीत होता है कि उक्त आदेश के तीसरे पैरा में ही ऐसी बातें दी गई हैं, जिनसे इस कठिनाई को हल करने में हमारा कुछ मार्ग-दर्शन हो सकता है। उक्त आदेश के प्रयोजनों से वार्षिक आय की उच्चतर सीमा 1,200 रु० नियत करने का कारण निर्दिष्ट करते हुए यह बताया गया है कि :

> "1961 के लिए राज्य की प्रति व्यक्ति आय 226 रुपये प्रतिवर्ष थी। यदि हम एक औसत परिवार में पांच सदस्य मानें तो परिवार की आय 1,330 रुपये प्रति वर्ष बनती है।"

इसमें इस बात का सुस्पष्ट संकेत मिलता है कि एक अपेक्षित परिवार एक ऐसा प्राकृतिक या सामान्य परिवार होता है, जिसकी कुल आय आंकड़ों द्वारा अवधारित प्रति व्यक्ति आय की पांच गुना होती है। यह कथन इस बात पर आधारित है कि या तो परिवार के एक अकेले व्यक्ति की आय इतनी अधिक है, कि उससे परिवार को प्रति व्यक्ति आय से पांच गुना का लाभ मिलता है, या फिर परिवार के एक, दो या अधिक सदस्यों की आय, जो वास्तव में कमा रहे हैं या परिवार की आय में योगदान कर रहे हैं, प्रति व्यक्ति आय के पांच गुना से कम नहीं है। इसके बारे में किसी भी दृष्टि से विचार करें, इसमें अन्ततः जिस मूलभूत धारणा का संकेत मिलता है, वह यह है कि आवेदक के परिवार को जिसका अभिप्राय आवेदक, उसके माता-पिता, उसके भाई और बहनों और साथ रहने वाले अन्य रिश्तेदारों से है, इस तथ्य के निरपेक्ष 1,200 रुपये प्रति वर्ष की आय का लाभ मिलता है, कि परिवार के कौन से सदस्य और कितने सदस्य उक्त आय को अर्जित करते हैं या ऐसी सम्पत्तियों के मालिक हैं, जिनसे उक्त आय होती है, बशर्ते कि ऐसी समस्त आय परिवार को मिलती हो और इसलिए उसका लाभ आवेदक को भी मिलता है।

अतः हम यह निर्णय करते हैं कि आवेदक को उस स्थिति में सामाजिक और शैक्षिक रूप से पिछड़े वर्ग का समझा जाये, यदि :—

(i) वह और/या उसके माता-पिता या उनमें से कोई एक या यदि वह अनाथ हो, तो उसका अभिभावक सरकारी आदेश में उल्लिखित व्यवसायों में से कोई भी व्यवसाय करता है/करते हैं, और

(ii) यदि माता-पिता की (या दोनों की मृत्यु हो जाने की स्थिति में अभिभावक की) कोई सम्पत्ति हो, तो उससे होने वाली आय, तथा यदि आवेदक की और उसके भाई या बहनों या साथ रहने वाले अन्य रिश्तेदारों की कोई सम्पत्ति हो, तो उससे होने वाली आय, जो परिवार को उपलब्ध होती है, 1,200 रुपये से अधिक नहीं है ।

यदि कोई भाई या बहन परिवार की आय में अंशदान नहीं देता/देती या परिवार के अनुरक्षण के लिए अपनी आय का योगदान नहीं देता/देती तब उसकी आय परिकलन के लिए उपलब्ध नहीं होती । इसी प्रकार यदि किसी भाई या बहन या रिश्तेदार की सम्पत्ति की आय आवेदक के परिवार को उपलब्ध नहीं होती है, तब वह आय भी परिकलन के लिए उपलब्ध नहीं होती ।

निर्णय

जैसा न्याय-निर्णय में दिया गया है ।

सुधा बनाम मेडिकल कालेज

एस० सी-ए०आई०आर० 1967 मैसूर 221

तथ्य

प्रार्थी राज्य के एक राजकीय मेडिकल कालेज में दाखिले के लिए एक आवेदक थी। उसने बंगलौर विश्वविद्यालय की प्री-युनिवर्सिटी पाठ्यक्रम परीक्षा उत्तीर्ण की थी। उसने वैकल्पिक विषयों में 197 अंक और साक्षात्कार में 35 अंक और कुल 232 अंक प्राप्त किये थे। उसने यह दावा किया कि वह सामाजिक और शैक्षिक रूप से पिछड़े वर्ग से संबद्ध थी। बंगलौर विश्वविद्यालय के सामान्य पूल में जो अंतिम उम्मीदवार चुना गया था, उसने 240 अंक प्राप्त किये थे, जब कि सामाजिक और शैक्षिक रूप से पिछड़े वर्ग के लिए आरक्षित स्थानों में जो अंतिम उम्मीदवार चुना गया था, उसने कुल 222 अंक प्राप्त किये थे। यह निर्विवाद बात थी कि यदि उसका ऐसे पिछड़े वर्ग से संबद्ध होने का दावा मान लिया जाता है तो वह किसी एक मेडिकल कालेज में दाखिले के लिए चुने जाने के लिए हकदार है और यदि उसका दावा इस प्रकार स्वीकार नहीं किया जाता तो वह चुने जाने के लिए हकदार नहीं होगी।

विवाद्यक

क्या प्रार्थी इस आधार पर सामाजिक और शैक्षिक रूप से पिछड़े वर्ग की है, कि उसके पिता का "पुरोहित" का व्यवसाय ऐसा व्यवसाय है, जिसमें मैसूर सरकार के जुलाई, 1973 के आदेश के विषय-क्षेत्र के अंतर्गत शारीरिक श्रम करना पड़ता है?

उद्धरण

न्यायमूर्ति चन्द्रशेखर

प्रार्थी के पिता द्वारा दिये गये शपथ पत्र में यह अभिकथित है कि उसका "पुरोहित" का व्यवसाय "ऐसे किसी अन्य व्यवसाय के अन्तर्गत आता है, जिसमें शारीरिक श्रम करना पड़ता है और यह कि वह ऐसा छोटा-मोटा पुरोहित है, जिसे "परिचारिका" का काम करना पड़ता है, जो एक सहायक को करना पड़ता है।

यह निर्णय करने के लिए कि किसी व्यवसाय में शारीरिक श्रम करना पड़ता है या बौद्धिक श्रम करना पड़ता है, हमें यह देखना पड़ता है कि उस व्यवसाय की मुख्य विशेषताएं क्या हैं। ऐसे प्रत्येक व्यवसाय में, जिसमें बौद्धिक श्रम करना पड़ता हो, उसमें कुछ शारीरिक श्रम करना पड़ सकता है। एक शल्य चिकित्सक को शल्य क्रिया करते समय अपने हाथों से काम करना पड़ता है, किन्तु इसमें कोई शल्य चिकित्सा श्रमिक नहीं बन जाता, क्योंकि उसके व्यवसाय में सतत अध्ययन ज्ञान तथा वृद्धि का प्रयोग करना आवश्यक होता है। यद्यपि पुरोहित को कुछ अनुष्ठानों तथा रस्मों को पूरा करते हुए अपने हाथों का इस्तेमाल करना पड़ सकता है, किन्तु उसके व्यवसाय की मुख्य विशेषता यह है कि इसमें धर्म ग्रंथों तथा विविध परंपराओं का अध्ययन तथा जानकारी होना आवश्यक होता है और उसका कार्य मुख्यतः मंत्रोच्चार अथवा मंत्रों का पाठ करना होता है। हम यह निर्णय करने में असमर्थ हैं कि चयन समिति ने जो यह दृष्टि कोण अपनाया है, कि पुरोहित के व्यवसाय में शारीरिक श्रम नहीं करना पड़ता है, भ्रांतिपूर्ण है।

निर्णय

पुरोहित का व्यवसाय ऐसा व्यवसाय है, जिसमें शारीरिक श्रम नहीं करना पड़ता है, अतः प्रार्थी पिछड़े वर्ग से संबद्ध होने का दावा नहीं कर सकता।

वी राघवेन्द्र बनाम आन्ध्र प्रदेश राज्य

ए०आई०आर० ए० पी० 129

तथ्य

पिछड़े वर्ग के दो आवेदकों ने मेडिकल कालेजों में दाखिले के लिए आवेदन किया। उनका साक्षात्कार तो लिया गया, किन्तु उन्हें इस आधार पर नहीं चुना गया कि पिछड़े वर्गों के लिए आवंटित अधिकतम स्थान पिछड़े वर्गों के ऐसे अन्य आवेदकों से भर गए थे जिन्होंने प्रार्थियों से उच्चतर अंक प्राप्त किये थे, यद्यपि वस्तुतः उन्होंने उन दो उम्मीदवारों से अधिक अंक प्राप्त किये थे, जिन्हें सामान्य प्रतियोगिता के लिए खुले छोड़े गए स्थानों के लिए चुना गया था। इन दोनों उम्मीदवारों ने अनुच्छेद 15 और 29 के उल्लंघन के रूप में इस चयन पर आक्षेप किया। सरकार ने पिछड़े वर्गों के लिए अधिकतम 15 प्रतिशत आरक्षित स्थान नियत किए थे।

विवाद्यक

(1) क्या अन्य उम्मीदवारों के साथ प्रतियोगिता में बैठने से पिछड़े वर्गों के उम्मीदवारों को मना करना अनुच्छेद 15 और 29(2) का उल्लंघन है?

(2) क्या पिछड़े वर्गों के लिए आरक्षण की अधिकतम प्रतिशतता नियत करना संवैधानिक है?

उद्धरण

मुख्य न्यायमूर्ति के० सुब्बाराव

संशोधन द्वारा अनुच्छेद 29(2) में दी गई किसी बात से किसी राज्य को सामाजिक तथा शैक्षिक रूप से पिछड़े वर्ग के नागरिकों की उन्नति के लिए कोई विशेष व्यवस्था करने से रोका नहीं जा सकता। उस सीमा तक अनुच्छेद 29(2) के अधीन किसी नागरिक के कुल अधिकार में राज्य कमी कर सकता है। किन्तु मूल अधिकार में कमी करना कुछ शर्तों के अधीन होता है और यह उक्त खंड के सीमित उपबंधों के अधीन होता है। राज्य द्वारा की गई कोई विशेष व्यवस्था पिछड़े वर्गों के नागरिकों की उन्नति के लिए होनी चाहिए, और इससे संविधान के अधीन उनको प्रतिभूत अधिकारों में कमी नहीं की जानी चाहिए और न ही उनकी प्रगति में कोई रुकावट पैदा होनी चाहिए।

उदाहरण : राज्य व्यावसायिक कालेजों में पिछड़े वर्गों के लिए कुछ न्यूनतम स्थान आवंटित कर सकता है। यह व्यवस्था पिछड़े वर्गों की उन्नति के लिए होगी, क्योंकि उन्होंने कितने ही अंक प्राप्त क्यों न किए हों, इन वर्गों को कुछ स्थान मिल जाने की गारंटी रहेगी। किन्तु यदि किसी विशेष क्षेत्र में पिछड़े वर्गों के सदस्य अधिक अंक प्राप्त करते हैं और वे अन्य वर्गों के विद्यार्थियों के साथ प्रतियोगिता में आगे आने में सफल हो जाते हैं, तो उन्हें उनको आवंटित कोटा से अधिक संख्या में कालेजों में दाखिला लेने के अपने अधिकार से अधिक वंचित नहीं किया जायेगा।

ऐसी व्यवस्था वास्तव में पिछड़े वर्गों की उन्नति के लिए ही होगी दूसरी ओर, यदि अधिकतम सीमा निर्धारित की जाती है, तो ऊपर प्रकल्पित आकस्मिक स्थिति में उक्त वर्गों की उन्नति के लिए व्यवस्था करने के स्थान पर, इससे उनकी प्रगति में बाधा ही उत्पन्न होगी, क्योंकि उक्त वर्गों के ऐसे विद्यार्थियों को, जो उन विद्यार्थियों से अधिक अंक प्राप्त कर लेते हैं, जो सामान्य स्थानों के लिए प्रतियोगिता में भाग लेते हैं और अपने वर्ग के विद्यार्थियों की तुलना में कम अंक प्राप्त करते हैं, स्थान नहीं मिलेंगे।

उस सीमा तक राज्य द्वारा की गई व्यवस्था, अनुच्छेद (4) के अधीन राज्य को प्रदान की गई शक्तियों से अधिक होगी, अतः इससे नागरिकों के मूल अधिकार पर कोई प्रतिकूल प्रभाव नहीं पड़ सकता, भले ही वे पिछड़े वर्ग से सबद्ध हों अथवा नहीं। दूसरे शब्दों में प्रत्येक नागरिक को एक नागरिक के रूप में चाहे वह पिछड़े वर्ग का हो अथवा नहीं, अनुच्छेद 29 के खण्ड 2 में उल्लिखित किसी शिक्षा संस्था में दाखिला पाने का अधिकार है।

उक्त मूल अधिकार को राज्य द्वारा सामाजिक और शैक्षिक रूप से पिछड़े वर्गों के नागरिकों की उन्नति के लिए की गयी विशेष व्यवस्था से कम कर दिया गया है। यदि उक्त व्यवस्था ऐसे वर्गों की उन्नति के लिए की गयी है, तो किसी नागरिक के मूल अधिकार का अतिलंघन नहीं होता क्योंकि उसका अधिकार तो उक्त व्यवस्था से अपने आप कम हो जाता है।

यदि उक्त व्यवस्था से, यद्यपि इसका आशय पिछड़े वर्ग की उन्नति से है, वस्तुतः उनके अधिकार कम हो जाते हैं, तो उनके संपूर्ण अधिकारों, संपूर्ण व्यवस्था या उसके उस भाग का, जिससे उनके अधिकार कम हो जाते हैं, प्रत्येक नागरिक के मूल अधिकार पर कोई प्रभाव नहीं पड़ेगा, भले ही वह पिछड़े वर्ग का सदस्य हो अथवा न हो।

वर्तमान मामले में राज्य ने निदेश दिया कि किसी भी संकाय में कुल स्थानों के अधिकतम 15 प्रतिशत स्थान पिछड़े वर्ग के उम्मीदवारों के लिए आरक्षित किये जायें। स्पष्टतः उक्त नियम इस पूर्वानुमान के आधार पर बनाया गया है कि आकस्मिक स्थिति में किसी भी संकाय के कुल स्थानों में से 15 प्रतिशत से अधिक स्थान खुली प्रतियोगिता में पिछड़े वर्ग के उम्मीदवारों द्वारा प्राप्त कर लिए जायेंगे अथवा प्राप्त किए जा सकते हैं।

यह पूर्वानुमान वर्तमान मामले में गलत सिद्ध हो गया है। अतः पिछड़े वर्ग की उन्नति के उद्देश्य को पूरा करने की बजाए उक्त व्यवस्था का यह प्रभाव पड़ा है कि इससे इन वर्गों के कुछ सदस्यों को स्थान प्राप्त करने में बाधा ही उत्पन्न हुई है, जो स्थान उन्हें इस स्थिति में अन्यथा मिल जाते, यदि सभी स्थानों को सामान्य पूल के अन्तर्गत रखा गया होता। यह संभव है कि ऐसी अन्य बस्तियों में, जहां अन्य समुदायों के सदस्य तेलंगाना क्षेत्र के दूसरे क्षेत्र के लोगों की तुलना में शैक्षिक रूप से बहुत आगे हैं, यह नियम पिछड़े वर्ग के उम्मीदवारों की उन्नति के लिए कारगर सिद्ध हो सकता है।

अतः यह समझना ठीक नहीं है कि उक्त नियम अच्छा नहीं है, बल्कि इस नियम को ऐसे मामले तक ही लाग् करना पर्याप्त होगा, जिसमें उक्त

नियम में निहत पूर्वानुमान ही लागू होता हा और यह मानना ही पर्याप्त होगा कि ऐसे अन्य मामलों में, जिनमें उक्त नियम पिछड़े वर्ग की उन्नति के लिए लागू नहीं होता है, उक्त वर्ग के नागरिकों के मूल अधिकार पर उक्त व्यवस्था का कोई प्रतिकूल प्रभाव नहीं पड़ेगा।

हमारा यह सुझाव है कि इस नियम में "न्यूनतम 15 प्रतिशत" के स्थान पर "अधिकतम 15 प्रतिशत" शब्द रख कर या किसी अन्य उपयुक्त तरीके से संशोधन कर दिया जाये। यह निर्विवाद है कि यदि उक्त व्यवस्था न होती, तो दोनों प्रार्थियों के नामों पर सामान्य पूल से चुने गये आवेदकों के साथ विचार किया गया होता, और यदि उनके नामों पर विचार किया गया होता तो वे चुन लिये गये होते।

निर्णय :

1. अन्य उम्मीदवारों के साथ पिछड़े वर्ग के उम्मीदवारों को प्रतियोगिता में भाग लेने से मना करना अनुच्छेद 15 और 29(2) का उल्लंघन करना माना गया।

2. पिछड़े वर्ग के लिए आरक्षण की अधिकतम प्रतिशतता निर्धारित करने की बजाए न्यूनतम प्रतिशतता निर्धारित की जानी चाहिए।

जैकब मैथ्यू बनाम केरल राज्य

ए० आई० आर० 1964 केर० 39

तथ्य

केरल सरकार ने 1957 में एक आदेश पारित किया, जिसमें व्यावसायिक कालेजों में दाखिले के लिए पिछड़े वर्गों के लिए स्थानों का आरक्षण किया गया था। आरक्षण की मात्रा पिछड़े वर्गों के लिए 35 प्रतिशत थी और अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जन-जातियों के लिए 5 प्रतिशत थी। पिछड़े वर्गों को फिर निम्नलिखित समूहों में उप-विभाजित किया गया था :—

(1) एहवाज	13%
(2) मुसलमान	9%
(3) लेटिन कैथोलिक	3%
(4) पिछड़े वर्ग के ईसाई	1%
(5) अन्य हिन्दु	9%
कुल जोड़	35%

केरल सरकार के आदेश पर आक्षेप किया गया तत्कालीन न्यायमूर्ति वैद्यलिंगम (एकल न्याय पीठ) ने यह निर्णय दिया कि राज्य सरकार ने स्वयं जिस सामग्री का हवाला दिया है, उससे यह स्पष्ट है कि सरकार ने इस बात का वैध रूप से अवधारण नहीं किया कि किसे पिछड़े वर्ग में शामिल किया जाये। कुल मिलाकर एहवाज और मुसलमानों को पिछड़े वर्ग में शामिल करने का आधार मुख्य रूप से जाति और धर्म की परख पर आधारित है और उनकी आर्थिक स्थिति के संबंध में कोई जांच पड़ताल नहीं की गयी है। परिणामतः पिछड़े वर्गों का वर्गीकरण अनुच्छेद 15(4) के अधीन अवैध है। आरक्षण की 35% मात्रा और इस 35% का उप-विभाजन भी वैध नहीं है।

II. केरल राज्य बनाम आर० जैकब के मामले में खण्ड न्यायपीठ को अपील करने पर

ए० आई० आर० 1964 केर० 316 उच्च न्यायालय (मुख्य न्यायमूर्ति एम० एस० मेनन तथा न्यायमूर्ति माधवन नायर) ने निम्नलिखित निर्णय दिया :—

उद्धरण

1963 के ओ० पी० सं० 1266 में प्रथम तथा द्वितीय प्रत्यर्थी हमारे समक्ष प्रार्थी हैं। वे हैं—केरल राज्य, जिनका प्रतिनिधित्व सरकार के मुख्य सचिव ने किया है और मेडिकल कालेज त्रिवेंद्रम के प्रिंसिपल।

यह विवाद प्रदर्श आर० 1 से संबंधित है, जो राज्य के मेडिकल कालेजों में दाखिले के लिए उम्मीदवारों के चयन से संबंधित सरकार का एक आदेश है। यह आदेश 7 जून, 1963 का है, और यह इस विषय पर जारी किए गए पूर्व आदेशों का अनुवर्ती आदेश है।

प्रदर्श आर० 1 में एम० बी० बी० एस० पाठ्यक्रम के लिए 13 प्रतिशत स्थान एहवाज के लिए 9 प्रतिशत मुसलमानों के लिए और तीन प्रतिशत स्थान एंगलो इंडियनों को मिलाकरके लैटिन कैथोलिक्स के लिए आरक्षित रखे गए हैं। पहला विचारणीय प्रश्न यह है कि क्या इन आरक्षणों को संविधान के अनुच्छद 14, 15 और 29 को ध्यान में रखते हुए बनाए रखा जा सकता है।

इस मामल में हमारा संबंध किसी अनुसूचित जाति या अनुसूचित जन-जाति से नहीं है और संविधान के अनुच्छेद 15(4) की दृष्टि से केवल विचारणीय प्रश्न यहीं है कि क्या एहवाज मुसलमानों और एंगलों इंडियनों को शामिल करके लैटिन कैथोलिकों को "सामाजिक तथा शैक्षिक रूप से पिछड़े वर्ग के नागरिक" समझा जा सकता है। **एम० आर० बाला जी बनाम मैसूर राज्य** ए० आई० आर० 1963 एस० स० 649 के मामले में उच्चतम न्यायालय का कथन था:

"अनुच्छेद 15(4) के अधीन पिछड़ापन सामाजिक और शैक्षिक ही होना चाहिए। यह पिछड़ापन केवल सामाजिक या केवल शैक्षिक नहीं है, बल्कि यह पिछड़ापन सामाजिक और शैक्षिक दोनों रूप में है।"

मानव जीवन और मूल्यों के इन क्षेत्रों में कार्य और कारण के ये सुस्पष्ट अंतर एक दूसरे में लीन हो जाते हैं। सामाजिक पिछड़ापन शैक्षिक पिछड़ेपन का कारण होता है, जबकि शैक्षिक पिछड़पन से सामाजिक पिछड़ेपन को बढ़ावा मिलता है; और प्रायः दोनों ही निर्धनता की पराकाष्ठा और रूढ़ि तथा परंपरा के शामक प्रभाव के अपरिहार्य परिणाम हैं। राज्य की ओर से प्रस्तुत किए गए तारीख 10 अगस्त, 1953 के शपथ पत्र में और तीसरे प्रत्यर्थी के अभिभावक के तारीख 14 अगस्त, 1963 के शपथ पत्र में प्रस्तुत किये गये ब्यौरों को देखते हुए हमें यह निर्णय देने में कोई संकोच नहीं है कि संविधान के अनुच्छेद 15(4) के अर्थ के अंतर्गत एहवाज, मुसलमान और लैटिन कैथोलिक, जिनमें एंगलो इंडियन भी शामिल हैं, "सामाजिक और शैक्षिक रूप से पिछड़े वर्ग के नागरिक" हैं।

वस्तुतः मुसलमानों और लैटिन कैथोलिकों, जिनमें एंगलो इंडियन भी शामिल हैं, के सामाजिक और शैक्षिक पिछड़ेपन के बारे में कोई गंभीर विवाद नहीं था और हमारा यह सोचना सही है। आक्षेप तो अनिवार्यतः एहवाज समुदाय के पक्ष में किये जाने वाले स्थानों के आरक्षण पर था।

राज्य की आबादी के लगभग पचीस प्रतिशत लोग एहवाज हैं, और हमारे सामने जो सामग्री है, उसके आधार पर यह कहना संभव नहीं है, सरकार का यह अनुमान गलत है कि अहवाज एक ऐसा समुदाय है, जो "सामाजिक और शैक्षिक रूप से पिछड़ा हुआ है"। श्री एल० के० अनन्त कृष्ण अय्यर द्वारा लिखित "कोचीन ट्राइब्स एण्ड कास्ट्स श्री सी० अच्युत मेनन द्वारा लिखित कोचीन स्टेट मेनुअल, भारत के राष्ट्रपति द्वारा नियुक्त पिछड़ा वर्ग आयोग की रिपोर्ट, केरल सरकार द्वारा गठित मूल्यांकन समिति की रिपोर्ट और अन्य प्रकाशनों की संगत प्रविष्टियों के अवलोकन से, जिनकी ओर हमारा ध्यान दिलाया गया है, यह पता चलता है कि इन तीनों समुदायों को, जिनके पक्ष में आरक्षण किया गया है, सामाजिक और शैक्षिक दोनों प्रकार से पिछड़ा हुआ समझा जाये।"

हमारे सामने यह तर्क प्रस्तुत किया गया कि "1112 एम० ई० की ट्रावनकोर मंदिर प्रवेश उद्घोषणा" "1123 एम० ई० की कोचीन मंदिर—प्रवेश उद्घोषणा, "1947 का मद्रास मंदिर प्रवेश प्राधिकरण अधिनियम" और "भारत के संविधान के अनुच्छेद 17" से, जिसमें यह कहा गया है कि :

"अस्पृश्यता" समाप्त की जाती है और इस को व्यवहार में लाना निषिद्ध है। "अस्पृश्यता" के परिणामस्वरूप उत्पन्न होने वाली कोई निर्योग्यता एक अपराध मानी जायेगी, जो विधि के अनुसार दण्डनीय होगी। एहवाज का प्राचीन स्वरूप परिवर्तित हो गया है, और यह कि उन्हें अब सामाजिक रूप से पिछड़ा हुआ न माना जाये। यह सच है कि कुछ अवसरों पर और कुछ देशों में, समाज ने विधि का पथ प्रदर्शन किया है। किंतु भारत में स्थिति इसके विपरीत ही रही है। "सम आस्पेक्ट आफ इंडियन ला टुडे" की अपनी भूमिका में श्री एम० सी० चागला का कथन है :—

"यह सच है कि कुछ अवसरों पर समाज ने विधि का पथ प्रदर्शन किया है, किन्तु जहां तक भारत का संबंध है, यहां तो स्थिति इसके विपरीत ही रही है। यहां तो विधि ने समाज का पथ प्रदर्शन किया है, और विधि ने समाज के सामने ऐसे आदर्श और मूल्य रखे हैं, जिनका लोगों को अनुपालन करना चाहिए। "ऐसे मामलों में सामाजिक आदर्शों और मूल्यों का पालन उसी समय नहीं किया जाता जब सांविधिक अधिनियमों या संवैधानिक प्रलेखों की उद्घोषणा की जाती है। समय को अपनी भूमिका अदा करनी होती है, और केवल समय ही विधि के आदर्शों को प्रतिदिन के जीवन की वास्तविकताओं में संचारित करता है। यह कोई नहीं कह सकता कि प्रगतिशील उपायों को लागू करना उन्नति की प्रक्रिया का अंत है, आरंभ नहीं। विचारधारा को बदलना बड़ा मुश्किल होता है और ऐसा करने में काफी समय लगता है और ताड़ी बेचने जैसे व्यवसायों के साथ उनका सामाजिक कलंक एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी तक साथ चलता रहता है और दशाब्दियों तक उनके आचरण और व्यवहार को अपनी लपेट में लेता चलता है।

हमें आर० चित्रलेखा बनाम मैसूर राज्य, सिविल अपील, 1963 की सं० 1056 और 1057 (ए० आई० आर० 1964 एस० सी० 1823) के मामले में उच्चतम न्यायालय के बहुमत निर्णय की टंकित प्रति प्रस्तुत की गयी है। हमने निर्णय की अंतिम रूप रेखा नहीं देखी है और हमें इस बात की बिल्कुल कोई जानकारी नहीं है कि जिन न्यायाधीशों के निर्णय के विरुद्ध मत दिया गया है, उनके निर्णय में क्या कहा गया है। हमारा विशेष ध्यान निर्णय के निम्नलिखित उद्धरणों की ओर दिलाया गया था :

"अनुच्छेद 15(4) में जो तथ्य ध्यान देने योग्य हैं, वह यह है कि इसमें जातियों की चर्चा नहीं की गयी है बल्कि केवल वर्गों की ही चर्चा की गयी है। यदि संविधान के निर्माता सामाजिक और शैक्षिक पिछड़ेपन की इकाइयों के रूप में जातियों को भी लेना चाहते तो उन्होंने ऐसा कहा होता जैसे कि उन्होंने अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जन-जातियों के संबंध में कहा है।"

बहुमत के निर्णय के आधार पर जो तर्क प्रस्तुत किया गया, वह यह था कि उच्चतम न्यायालय के प्राधिकार के अनुसार यह कहा गया है कि जातियों के आधार पर कोई आरक्षण नहीं होगा। हम इस रूप में इस निर्णय को समझने में असमर्थ हैं। उक्त निर्णय में ए० आई० आर० 1963 एस० सी० 649 के कुछ अंशों का हवाला देते हुए यह कहा गया है कि :

उक्त प्रेक्षणों में दो सिद्धान्त मुख्य रूप से महत्वपूर्ण हैं, अर्थात् (1) कुछ नागरिकों के समूह की जाति उनका सामाजिक पिछड़ापन निश्चित करने के लिए एक संगत परिस्थिति हो सकती है और (2) यद्यपि नागरिकों के किसी वर्ग के सामाजिक पिछड़ेपन के अवधारण के लिए यह एक संगत कारण हो सकता है, किंतु इस संबंध में "यह एक मात्र या प्रमुख मापदण्ड नहीं हो सकता," और

"दूसरे शब्दों में, संबंधित प्राधिकारी व्यक्तियों के किसी समूह के पिछड़ेपन के निर्धारण के लिए जाति को भी ध्यान में रख सकता है, किंतु यदि वह ऐसा नहीं करता, तो यदि वह किसी अन्य संगत मापदण्ड के आधार पर व्यक्तियों के किसी समूह के पिछड़ेपन का निर्धारण कर सकता है, तो इस संबंध में उसका आदेश अनुचित नहीं माना जायेगा।"

फंक तथा वेगनाल्स मानक शब्दकोष के अनुसार "जाति" एक वंशानुगत वर्ग के अतिरिक्त और कुछ नहीं है, जिसमें हिन्दु समाज विभाजित है। और हमें उच्चतम न्यायालय के निर्णय में ऐसा कुछ नहीं दिखाई पड़ता, जिससे इस निष्कर्ष तक पहुंचने में कोई बाधा उत्पन्न होती हो कि यदि कोई सम्पूर्ण जाति या उसका अधिकांश भाग सामाजिक और शैक्षिक रूप से पिछड़ा हुआ है तो उस जाति का नाम नागरिकों के ऐसे वर्ग का प्रतीक या पर्याय होगा (या नहीं होगा) जो सामाजिक और शैक्षिक रूप से पिछड़े हुए हैं और इस प्रकार यह संविधान के अनुच्छेद के खण्ड (4) की परिधि में आता है।

ऊपर जो कुछ कहा गया है, उसको देखते हुए हमें आर० जैक्ब मैथ्यू बनाम केरल राज्य, 1963 के एल० टी०, 783 (ए० आई० आर० 1954 केरल 39) के मामले में अपीलाधीन निर्णय को, जहां तक इसमें एहवाज, मुसलमानों और लेटिन कैथोलिकों, जिनमें ऐंगलो इंडियन भी शामिल हैं, के पक्ष में किए गए आरक्षण को रद्द किया गया है, हमें अवश्य उलट देना चाहिए और हम उसे उलटते हैं।

धन कर अधिकारी बनाम थुम्पन नम्बूदरीपाद, सिविल अपील सं० 1963 की 262 से 266 (एस० सी०) के मामले में उच्चतम न्यायलय को इस बात पर विचार करना पड़ा कि धन कर अधिनियम 1957 में हिन्दु अविभाजित परिवारों से संबंधित व्यवस्था से संविधान के अनुच्छेद 14 द्वारा गारंटीकृत विधि के समक्ष समता का उल्लंघन तो नहीं होता है उच्चतम न्यायालय का यह कहना था कि :

"हम इस बात का उल्लेख करना चाहेंगे कि ऐसा प्रतीत होता है कि उच्च न्यायालय का यह विचार है कि यह सिद्ध करना राज्य का काम है कि अनुच्छेद 14 लागू नहीं होता है। यह सही नहीं है क्योंकि इस बात को प्रमाणित करने के लिए तथ्य प्रस्तुत करना तो उसी पक्ष का काम होगा, जो यह आरोप लेकर सामने आता है कि विधि के समक्ष समता या विधि के समान संरक्षण से उसे वंचित रखा जा रहा है।"

इस दृष्टिकोण में प्रमाण प्रस्तुत करने का दायित्व प्रथम प्रत्यर्थी पर होगा, और हमारे लिए जो बताना जरूरी है, वह यह है कि उसने यह सिद्ध नहीं किया है कि एहवाज, मुसलान और लेटिन कैथालिक, जिनमें एंगलो इंडियन भी शामिल हैं, संविधान के अनुच्छेद 15(4) द्वारा दिए जाने वाले संरक्षण के हकदार नहीं हैं।

तथापि हम इस बात की ओर ध्यान अवश्य दिलाना चाहेंगे कि अद्यतन आंकड़ों का अभाव अत्यंत चिंतनीय विषय रहा है। यह कहना असंभव है कि हमारे निष्कर्ष पर किसी भी रूप में कुछ सीमा तक राज्य में जीवन तथा कार्य के हमारे अपने अनुभव का कोई प्रभाव नहीं पड़ा है।

किंतु कोई स्थायी निष्कर्ष ऐसे आंकड़ों पर आधारित नहीं होना चाहिए, जो पूर्णतया अद्यतन नहीं है या ऐसे न्यायिक अनुभव पर आधारित नहीं होना चाहिए, जिसका ऐसे आंकड़ों से खण्डन हो जाता हो या जिसमें ऐसे आंकड़ों से परिवर्तन हो जाता हो। हमारा यह विचार है कि यह जरूरी है कि राज्य उन मामलों की तत्काल तथ्यान्वेषी जांच कराए, जो संगत हैं, और उस जांच के परिप्रेक्ष्य में उपयुक्त आदेश तैयार करें। हम राज्य को ऐसा करने के आदेश देते हैं।

निर्णय:

(1) यदि किसी जाति का संपूर्ण या अधिकांश भाग सामाजिक या शैक्षिक रूप से पिछड़ा हुआ हो तो उस जाति को सामाजिक और शैक्षिक रूप से पिछड़े वर्ग के बराबर माना जा सकता है। तदनुसार एहवाड लेटिन कैथोलिक, मुसलमान और पिछड़े हुए इसाई पिछड़े वर्ग में आते हैं।

रामकृष्ण सिंह बनाम मैसूर राज्य

ए०आई०आर० 1960 मैसूर 338

तथ्य

मैसूर सरकार के निम्नलिखित दो आदेशों पर, जिनमें पिछड़े वर्गों की सूची दी गई है, और व्यवसायिक कालेजों में उनके आरक्षण का उल्लेख किया गया है, आक्षेप किया गया।

(1) 14 मई, 1969 का आदेश।

(2) 22 जुलाई, 1959 का आदेश।

पिछड़े वर्गों की सूची में राज्य की 95 प्रतिशत आबादी शामिल है और ब्राह्मण, बनिया, कायस्थ के अतिरिक्त हिन्दुओं के अन्य सभी समुदायों और जातियों को और एंगलो इंडियनों और पारसियों को छोड़कर राज्य के सभी समुदायों को इस सूची में शामिल किया गया है।

इन दोनों आदेशों के अन्तर्गत अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जन-जातियो के लिए 20 प्रतिशत, सामाजिक और शैक्षिक रूप से पिछड़े वर्गों के लिए 45 प्रतिशत स्थान नियत किये गये थे और शेष 35 प्रतिशत स्थान योग्यता के आधार पर भरे जाने थे।

22 जुलाई, 1959 के आदेश में सूचीबद्ध पिछड़े वर्गों को अनेक कोटियों में उप-विभाजित किया गया था और स्थानों के आरक्षण के लिए विभिन्न प्रतिशतता नियत की गयी थी। इसका कुल मिलाकर प्रभाव यह हुआ कि प्रत्येक उप समूह के व्यक्ति केवल उन्हीं स्थानों के लिए प्रतियोगी बन सकते थे, जो उनके लिए आरक्षित थे और वे शेष स्थानों के लिए पात्र नहीं थे, जो पिछड़े वर्गों के लिए आरक्षित थे, दूसरे शब्दों में उन्हें उक्त आदेश में उल्लिखित पिछड़े वर्गों के बीच होने वाली खुली प्रतियोगिता में शेष स्थानों के लिए प्रतियोगिता में भाग लेने से विवर्जित कर दिया गया था।

विवाद्यक

क्या पिछड़े वर्गों को विभिन्न उप-समूहों में विभाजित करना और ऐसे प्रत्येक समूह के लिए विभिन्न प्रतिशतता निर्धारित करना और किसी एक उप-समूह को अन्य उप-समूहों के लिए आरक्षित स्थानों के लिए प्रतियोगिता में भाग लेने से मना करना संवैधानिक है।

उद्धरण

न्यायमूर्ति एस०आर० दास गुप्ता

उपर्युक्त अधिसूचना से यह पता चलता है कि केवल तथाकथित सामाजिक और शैक्षिक रूप से उन पिछड़े वर्गों को जिनका उल्लेख प्रथम अधिसूचना में किया गया है, विभिन्न उप-समूहों में उप-विभाजित ही नहीं किया गया है, अपितु प्रत्येक समूह के सम्बन्ध में स्थानों के आरक्षण की प्रतिशतता भी विनिर्दिष्ट की गयी है। दूसरे शब्दों में प्रत्येक समूह केवल उतने प्रतिशत स्थान पाने का हकदार है, जितने प्रतिशत स्थान उस समूह के लिए विनिर्दिष्ट हैं। इस प्रकार उदाहरण के लिए समूह सं० 1 से सम्बन्धित वर्ग पिछड़े वर्गों के लिए आरक्षित स्थानों के 2.6 प्रतिशत स्थान पाने का ही हकदार है और समूह 2 इसके 3.9 प्रतिशत स्थान पाने का हकदार है। इसका परिणाम स्पष्ट है।

ऐसे किसी एक समूह के व्यक्ति केवल उन्हीं स्थानों के लिए प्रतियोगिता में भाग ले सकते हैं, जो उस समूह के लिए आरक्षित किये गये हैं और वे शेष स्थानों के लिए पात्र नहीं हैं, जो पिछड़े वर्गों के लिए आरक्षित हैं। दूसरे शब्दों में उन्हें प्रथम अधिसूचना में उल्लिखित पिछड़े वर्गों के सदस्यों के बीच खुली प्रतियोगिता द्वारा भरे जाने वाले उक्त शेष स्थान प्राप्त करने से विवर्जित कर दिया गया है। अतः इस अधिसूचना से पिछड़े वर्गों को लाभ देने के बजाए, उनके अधिकार कम हो जाते हैं और संविधान के अनुच्छेद 15(4) के उपबन्ध द्वारा इनका समर्थन नहीं किया जा सकता।

ए०आई०आर० 1958 ए०पी० 129 में उल्लिखित मुकदमे में आन्ध्र प्रदेश उच्च न्यायालय के न्यायमूर्तियों ने जैसे कि टिप्पणी की थी कि यदि उक्त व्यवस्था, यद्यपि इसका अभिप्राय पिछड़े वर्गों की उन्नति के लिए है, जिससे वस्तुतः उनके अधिकार कम हो जाते हों, तो सम्पूर्ण व्यवस्था या उसका कोई भाग, जिससे उनके अधिकार कम हो जाते हों, ठीक नहीं रहेगी। इस अधिसूचना का कुल मिलाकर यह परिणाम हुआ कि पिछड़े वर्गों के लिए विशेष व्यवस्था करने का उद्देश्य सामने रखते समय उनके साथ पक्षपात किया गया है। यह निश्चित रूप से संविधान के अनुसार नहीं है।

संविधान प्रत्येक नागरिक के मूल अधिकार की सुरक्षा का आश्वासन देता है, भले ही वह पिछड़े वर्ग का सदस्य हो अथवा नहीं। इस अधिकार में सरकार द्वारा चलाई जाने वाली किसी शिक्षा संस्था में दाखिला पाने का अधिकार शामिल है, भले ही उसका कोई भी धर्म, मूलवंश, जाति, लिंग या उनमें से कोई भी कुछ भी क्यों न हो। अनुच्छेद 15(4) में उस अधिकार को कम करने की अनुमति दी गई है। किन्तु यह न्यूनीकरण पिछड़े वर्गों के लाभ के लिए ही होना चाहिए। उक्त अनुच्छेद के अनुसार पिछड़े वर्गों के लिए विशेष व्यवस्था की जा सकती है, शिक्षा संस्थाओं में दाखिले के मामले में जिसका अभिप्राय यह है कि उनके लिए सीमित संख्या में कुछ स्थान आरक्षित किय जायें, ताकि उन्हें बाकी स्थानों के लिए प्रतियोगिता में भाग लेने की छूट मिल सके।

यदि, जैसी कि ए०आई०आर० 1958 आन्ध्र प्रदेश 569 में उल्लिखि मुकदमे में आन्ध्र प्रदेश उच्च न्यायालय के न्यायमूर्तियों ने टिप्पणी की थी, पिछड़े वर्गों के लड़के अपनी योग्यता से ही सामान्य प्रतियोगिता में निर्धारित स्थानों से अधिक स्थान प्राप्त कर लेते हैं, तो निर्धारित संख्या से अधिक संख्या में प्रतियोगिता में सफल होने वाले लड़कों की उम्मीदवारी को रद्द करने के लिए यह नियम लागू नहीं किया जा सकता, क्योंकि उस स्थिति में अनुच्छेद 29(2) के अधीन उनके मूल अधिकार का उल्लंघन हो जायगा। किन्तु वर्तमान आदेश ने वस्तुतः विभिन्न समूहों के लड़कों को पिछड़े वर्गों के लिए निर्धारित स्थानों से अधिक स्थान प्राप्त करने से विवर्जित कर दिया है। ऐसा करने से इस आदेश द्वारा उनको लाभ पहुंचने की बजाए उनके मूल अधिकार कम हो गये है।

हमारे समक्ष यह तर्क प्रस्तुत किया गया कि प्रत्येक समूह में एक उन्नत वर्ग को शामिल किया गया है। उदाहरण के लिए हमें यह बताया गया कि जैनियों को बहुत से अनेक वर्गों के समूह में शामिल किया

गया है और उस समूह के लिए आरक्षण केवल 5.6 प्रतिशत है हमारे समक्ष यह तर्क प्रस्तुत किया गया, जो हमारी राय में सही है, कि इस प्रकार से समूहबद्ध करने का परिणाम यह हो सकता है कि उक्त अधिसूचना में उल्लिखित वर्गों के लिए आरक्षित कुछ सीमित प्रतिशत स्थान भी उन समुदायों द्वारा हथिया लिए जायेंगे, जो उस समूह के अन्य वर्गों से अधिक उन्नत हैं, जिसके परिणामस्वरूप वास्तव में पिछड़े वर्गों के लोग ही पीछे रह जायेंगे, जिन्हें आरक्षित स्थानों की प्रतिशतता कम होते हुए भी उनमें से भी कोई स्थान प्राप्त करने का कोई अवसर नहीं मिलेगा ।

जब मामले का यह पक्ष विद्वान वकील के समक्ष प्रस्तुत किया गया तो उसने यह कहकर सरकार की कार्रवाई को औचित्यपूर्ण सिद्ध करने का प्रयास किया कि जब तक ऐसे उप-विभाजन नहीं किये जाते और ऐसे प्रत्येक उप-समूह के लिए विशेष आरक्षण नहीं किये जाते, तब तक प्रथम आदेश में निर्दिष्ट सूची में उल्लिखित अपेक्षाकृत उन्नत वर्गों के लोग पिछड़े वर्गों के लिए आरक्षित सभी स्थान प्राप्त कर ले जायेंगे और ऐसी स्थिति में जो लोग वास्तव में पिछड़े हुए हैं, वे सब उक्त अधिसूचना के अधीन मिलने वाले हर लाभ से वंचित हो जायेंगे । यह तर्क, मेरे विचार में, प्रथम आदेश की मूल भावना को ही विखण्डित कर देता है ।

इससे यह सिद्ध होता है कि उक्त अधिसूचना संविधान के अनुच्छेद 15(4) के उपबन्धों के अनुसार नहीं है ।

निर्णय

पिछड़े वर्गों के ऐसे प्रत्येक उप-समूह को अन्य उप-समूहों के साथ प्रतियोगिता में भाग लेने से मना करने की कार्रवाई को असंवैधानिक ठहराया गया ।

शार्दूल सिंह बनाम मैडिकल कालेज

ए०आई०आर० 1970 जे० एण्ड के० 45

तथ्य

श्रीनगर के मैडिकल कालेज में उम्मीदवारों के दाखिले के सम्बन्ध में दायर की गयी याचिकाएं/प्रार्थी ऐसे उम्मीदवार थे, जिन्हें मैडिकल कालेज में दाखिला देने से इन्कार कर दिया गया था और जिन्होंने कुछ प्रत्यर्थी उम्मीदवारों के दाखिले की इस आधार पर निन्दा करते हुए कि उनका दाखिला पक्षपात, साई भतीजावाद के रंग में रंगा हुआ है, ये याचिकाएं दायर की हैं और यह भी कि राज्य सरकार द्वारा किये गये कुछ आरक्षण भारत के संविधान के अनुच्छेद 14, 15 और 29 के अधीन अनुमत्य नहीं है और राज्य के इस भेदभाव के कारण प्रार्थियों का चयन नहीं हो सकता था। सरकारी आदेश में यह व्यवस्था की गई थी कि:

> इन वर्गों के लिए तकनीकी प्रशिक्षण और उच्च शिक्षा के लिए ऐसा प्रशिक्षण या शिक्षा देने वाली और राज्य द्वारा चलाई जाने वाली या राज्य की निधि में से सहायता अनुदान प्राप्त करने वाली शिक्षा संस्थाओं में स्थान आरक्षित रखे जायेंगे, जो कि ऐसी संस्थाओं में ऐसे प्रशिक्षण या शिक्षा के लिए उपलब्ध कुल स्थानों के लगभग उतने अनुपात में ही होंगे, जैसा कि नीचे ऐसे प्रत्येक वर्ग के सामने निर्दिष्ट है, और ऐसी संस्थाओं में ऐसे प्रशिक्षणों और शिक्षा के लिए दाखिला तदनुसार विनियमित किया आयेगा :—
>
> (क) स्थायी निवासी जनजातियां 5%
>
> (ख) लद्दाख जिले के स्थायी निवासी 2%

विवाद्यक

क्या लद्दाख जिले के स्थायी निवासियों तथा अनुसूचित जाति के पक्ष में किया जाने वाला आरक्षण अनुच्छेद 15(4) के अधीन संवैधानिक है ?

उद्धरण

न्यायमूर्ति फजल अली

आगे यह तर्क प्रस्तुत किया गया कि लद्दाख के रहने वाले लोगों के लिए या अनुसूचित जातियों के लोगों के लिए आरक्षण भी उचित नहीं है। किन्तु इस तर्क का उल्लेख केवल इसे रद्द करने के लिए ही किया जाये, क्योंकि अनुच्छेद 15(4) के अन्तर्गत विशिष्ट रूप से राज्य को सामाजिक तथा शैक्षिक रूप से पिछड़े वर्गों के नागरिकों या अनुसूचित जातियों के सदस्यों की उन्नति के लिए विशेष व्यवस्था करने का प्राधिकार दिया गया है। वर्तमान मामले में सरकार ने उस आधार सामग्री का उल्लेख किया है, जिसके आधार पर वह इस निष्कर्ष पर पहुंची कि लद्दाख जिले से सम्बद्ध सदस्य और अनुसूचित जातियों के सदस्य पिछड़े वर्गों के नागरिक थे। सरकार की अधिसूचना जिस सामग्री के आधार पर पारित की गयी थी, उस पर हमारे समक्ष कोई आक्षेप नहीं किया गया है, न ही इसे इस प्रकार सिद्ध किया गया है, जिससे हमारी सन्तुष्टि हो जाये कि लद्दाख से आने वाले व्यक्ति पिछड़े हुए नहीं हैं। ए०आई० आर० 1968 एस०सी० 1012 (पी० राजेन्द्रन बनाम मद्रास राज्य) में इस आधार पर आरक्षण कि कुछ उम्मीदवार ऐसे खास जिले से सम्बद्ध थे, जो कि पिछड़ा हुआ था, मान लिया गया, बशर्ते कि आरक्षण विशुद्ध रूप से जन्म-स्थान के आधार पर नहीं किया गया था। इस सम्बन्ध में न्यायमूर्तियों का यह विचार था: "यद्यपि इस दृष्टिकोण में कुछ सारतत्व हो सकता है कि इस जटिल और ग्रामक विधि की व्यवस्था अनुच्छेद 15(1) में निर्दिष्ट निषेध को छल-कपट द्वारा दूर करने के लिए ही की गयी है, किन्तु हम यह नहीं कह सकते कि अनुच्छेद 15(1) का स्पष्ट रूप से उल्लंघन किया गया है, क्योंकि जिस जिले के सम्बन्ध में उम्मीदवार दावा करता है वह जरूरी नहीं कि उसका जन्म-स्थान ही हो। इस मुकदमे में निःसन्देह न्यायमूर्तियों ने स्थानों के जिलावार आवंटन या वितरण को स्वीकृति प्रदान नहीं की, किन्तु वर्तमान मामले में ऐसा नहीं किया गया है। लद्दाख राज्य के जिलों में से केवल एक जिला है और सरकार ने इस क्षेत्र के नागरिकों को सामाजिक और शैक्षिक रूप से पिछड़े वर्ग का घोषित किया है, जिससे वे भारत के संविधान के अनुच्छेद 15(4) द्वारा दिये जाने वाले संरक्षण के अन्तर्गत आ जायें। इस प्रकार सरकार द्वारा लद्दाख जिले के उम्मीदवारों और अनुसूचित जातियों के सदस्यों के लिए किया गया आरक्षण पूर्ण रूप से वैध है और इसे यह मानकर रद्द नहीं किया जा सकता कि इससे भारत के संविधान के अनुच्छेद 14, 15 या 19 का उल्लंघन होता है।

निर्णय

लद्दाख जिले और अनुसूचित जातियों के उम्मीदवारों के पक्ष में आरक्षण वैध है। लद्दाख जिले के स्थायी निवासी सामाजिक और शैक्षिक रूप से पिछड़े वर्ग के हैं।

इस मुकदमे के तथ्य लगभग उसी प्रकार के थे, जैसे कि रघुरामुलू मुकदमे के थे ।

विधायक

यह भी वही थे, जैसे कि रघुरामुलू मुकदमे के थे ।

उद्धरण

मुख्य न्यायमूर्ति के० सुब्बाराव

प्रार्थी के विद्वान वकील ने यह तर्क दिया कि उक्त निर्णय में उम्मीदवारों का चयन दो भागों में किये जाने के सिद्धान्त को स्वीकार किया गया है, एक पिछड़े वर्गों के लिए आबंटित कोटे के लिए और दूसरा सामान्य पूल के लिए, अतः सामान्य पूल के लिए आयोजित प्रतियोगिता में सफल होने वाले पिछड़े वर्गों के लड़कों को आरक्षित क्षेत्र में किये जाने वाले चयन से अवश्य निकाल दिया जाये । उक्त निर्णय में ऐसा कोई सिद्धान्त स्वीकार नहीं किया गया था ।

उसमें यह निर्णय किया गया था कि उस मुकदमे की परिस्थितियों के अन्तर्गत इस नियम का पिछड़े वर्ग के समुदायों के नागरिकों के मूल अधिकार पर कोई प्रतिकूल प्रभाव नहीं पड़ता था और यह कि इसमें यह निदेश दिया गया कि सामान्य पूल से चुने गये विद्यार्थियों से अधिक अंक प्राप्त करने वाले प्रार्थियों को दाखिला दिया जाये । इसमें यह युक्ति नहीं दी गयी कि यदि पिछड़े वर्गों के लड़कों को सामान्य पूल में ले लिया जाता है तो पिछड़े वर्गों के विद्यार्थियों के लिए न्यूनतम गारन्टीकृत स्थानों का परिरक्षण करते हुए प्रार्थियों को निकाल दिया जायेगा । अतः हमें इस मुकदमे में इस प्रश्न पर निर्णय करने का कोई अवसर नहीं मिला कि चयन दो भागों में किया जाये अथवा नहीं ।

इस मामले में उक्त प्रश्न विवादपूर्ण है । किसी नागरिक का मूल अधिकार, भले ही वह किसी पिछड़े वर्ग के समुदाय का हो अथवा नहीं, केवल धर्म, मूल वंश, जाति या उनमें से किसी भी आधार पर उसके साथ कोई भेदभाव बरते बिना, राज्य द्वारा चलाई जाने वाली किसी शिक्षा संस्था में दाखिला प्राप्त करना है । राज्य सामाजिक और शैक्षिक रूप से पिछड़े वर्ग के नागरिकों की उन्नति के लिए कोई व्यवस्था करके इस अधिकार को कम कर सकती है । ऐसा मानकर उक्त शक्ति का प्रयोग करते हुए, राज्य ने यह निदेश दिया कि प्रत्येक संकाय में पिछड़े वर्गों के उम्मीदवारों के लिए अधिकतम 15 प्रतिशत स्थान आरक्षित रखे जायें । यदि पिछड़े वर्गों के लड़के अपनी योग्यता से सामान्य प्रतियोगिता में 15 प्रतिशत से अधिक स्थान प्राप्त कर लेते हैं, तो निर्धारित संख्या से अधिक सफलता पाने वाले लड़कों की उम्मीदवारी रद्द करने के लिए यह नियम लागू नहीं किया जा सकता, क्योंकि, उस स्थिति में अनुच्छेद 29(2) के अधीन उनके मूल अधिकार का उल्लंघन हो जायेगा ।

दूसरी ओर, यदि चयन दो अलग-अलग भागों में इस प्रकार से किया जाता है कि पिछड़े वर्गों के कुछ लड़कों को सामान्य पूल की प्रतियोगिता में और कुछ को आरक्षित स्थानों की प्रतियोगिता में भाग लेने दिया जाता है, तो इससे अन्य समुदायों के लड़कों को बड़ा कष्ट होगा । अतः नियम इस प्रकार से बनाया जा सकता है, जिससे पिछड़े वर्गों के विद्यार्थियों के हितों की रक्षा करने के साथ-साथ अन्य समुदायों के विद्यार्थियों के हितों पर कोई प्रतिकूल प्रभाव न पड़े । उदाहरण के लिए: यदि मैडिकल कालेज में दाखिले के चयन के लिए 100 आवेदक हैं, तो उन्हें उनकी योग्यता के क्रम में रखा जायेगा और यदि पिछड़े वर्गों के 15 प्रतिशत से अधिक उम्मीदवार भी केवल योग्यता के आधार पर चुने जा सकते हों, तो उन्हें इस प्रकार चुन लिया जायेगा ।

यदि उनकी संख्या उक्त संख्या से कम होती है, तो उनकी संख्या की कमी को पूरा करने के लिए उनका चयन उनमें से ही उनकी परस्पर योग्यता के आधार पर किया जायेगा, भले ही उन्हें अन्य समुदायों के लड़कों से कम अंक प्राप्त हुए हों । इस प्रक्रिया से उन्नत वर्गों के विद्यार्थियों के साथ कोई अन्याय किये बिना पिछड़े वर्गों के विद्यार्थियों के हितों की रक्षा हो जायेगी । इस न्यायालय ने पूर्व निर्णय में नियम में जिस संशोधन का सुझाव दिया है, उसमें विभिन्न भागों में चयन करने पर जोर नहीं दिया गया है, अपितु कुछ विशेष समुदायों के लिए केवल कुछ स्थान आरक्षित किये गये हैं । इस दृष्टिकोण से, क्योंकि प्रार्थी सामान्य प्रतियोगिता में सफल नहीं हुआ था और क्योंकि पिछड़े वर्गों के हितों की रक्षा के लिए उनके लिए आरक्षित स्थान पूरे हो गये थे, प्रार्थी के किसी अधिकार का अतिलंघन नहीं होता ।

निर्णय

वही, जैसा रघुरामुलू के मामले में दिया गया था ।

तथ्य

महाराष्ट्र सरकार द्वारा राज्य के मैडिकल कालेजों में दाखिले के लिए बनाए गये नियमों पर प्रार्थी द्वारा आक्षेप किया गया था, जिसने पुणे के बी० जी० मैडिकल कालेज में दाखिला मांगा था और जिसे नियमों के अनुसार दाखिला नहीं दिया गया था।

नियम इस प्रकार थे :—

मैडिकल कालेजों में दाखिले केवल वर्ष में एक बार शैक्षणिक वर्ष के आरम्भ में दिये जाते हैं। भारत सरकार द्वारा मनोनीत किये जाने वाले विद्यार्थियों के लिए रखे जाने वाले स्थानों और बी० जे० मैडिकल कालेज, पुणे और मीरज मैडिकल कालेज, मीरज के स्थानों को छोड़कर प्रत्येक मैडिकल कालेज में सभी स्थान उन विश्वविद्यालयों के विद्यार्थियों के लिए सुरक्षित रखे जाते हैं, जिनसे मैडिकल कालेज—विशेष सम्बद्ध होता है।

नियम 4(घ) में जो व्यवस्था की गई है, वह इस प्रकार है :—

कोटि	आरक्षण की प्रतिशतता
1. अनुसूचित जातियां और अनुसूचित जातियों से परिवर्तित नव-बौद्ध	13 प्रतिशत
2. अनुसूचित जनजातियां, इनमें वे भी शामिल हैं, जो विनिर्दिष्ट क्षेत्रों से बाहर की हैं	7 प्रतिशत
3. अनधिसूचित जनजातियां तथा खानाबदोश जनजातियां .	4 प्रतिशत
4. अन्य पिछड़े वर्ग	10 प्रतिशत
कुल . . .	34 प्रतिशत

उपर्युक्त ग्रुप में से किसी ग्रुप में विद्यार्थी उपलब्ध न होने के कारण उस ग्रुप में खाली रहने वाले स्थान अन्य ग्रुपों को मिलने चाहिए, भले ही किसी ग्रुप विशेष में स्थानों की प्रतिशतता उस ग्रुप के लिए निर्धारित प्रतिशतता से अधिक क्यों न हो जाये, किन्तु शर्त यह होगी कि स्थानों की कुल प्रतिशतता पिछड़े वर्गों के लिए नियत कुल स्थानों के 34 प्रतिशत से अधिक नहीं होगी। ये स्थान केवल उस स्थिति में ग्राम विद्यार्थियों को मिलने चाहिए, जब इन स्थानों के भरने के लिए उपर्युक्त में से किसी ग्रुप से पिछड़े वर्ग के विद्यार्थी उपलब्ध न हों। उपर्युक्त प्रतिशतता में उन विद्यार्थियों की संख्या भी शामिल होनी चाहिए, जिन्हें योग्यता के आधार पर दाखिला मिलता है, और यह संख्या उसके अतिरिक्त नहीं होनी चाहिए।

विवाद्यक

(i) क्या मैडिकल कालेजों में दाखिले के लिए आरक्षण की मात्रा नियत करने में राज्य की कुल जनसंख्या में पिछड़े वर्गों, अनुसूचित जातियों, अनुसूचित जनजातियों के अनुपात को आधार मान लेना संवैधानिक है ?

(ii) क्या पिछड़े वर्ग के किसी एक उप-समूह के खाली आरक्षित स्थानों को उप-समूह के स्थानों में शामिल कर लेना वैध है ?

उद्धरण

न्यायमूर्ति वैद्य

श्री पराजंपे ने याचिका के समर्थन में केवल जिस अन्य आधार पर जोर दिया, वह यह था कि अनुसूचित जातियों, अनुसूचित जनजातियों और पिछड़े वर्गों के लिए राज्य की जनसंख्या में इन समुदायों की संख्या के अनुपात के आधार पर किये गये आरक्षण, जैसा कि श्री गठकर द्वारा दाखिल किये गये शपथ-पत्र में उल्लिखित है, तर्क संगत नहीं था, और इसके अतिरिक्त जातियों के आधार पर अन्य पिछड़े वर्गों का वर्गीकरण अवैध था। उन्होंने यह तर्क दिया कि नियम 4(घ) में उल्लिखित व्यवस्था भी, जिसमें यह निर्दिष्ट है कि किसी भी आरक्षित समूह में, उस समूह में विद्यार्थी उपलब्ध न होने के कारण खाली रहने वाले आरक्षित स्थान अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों और पिछड़े वर्गों के अन्य समूहों को मिलने चाहिए, व्यवहार्य और तर्क संगत नहीं है।

हमें इनमें से किसी भी तर्क में कोई सार-तत्व दिखाई नहीं देता। यह सम्भव है कि स्थानों के आरक्षण के लिए कोई दूसरा तरीका अपनाया जाये, किन्तु यह नहीं कहा जा सकता कि महाराष्ट्र सरकार ने अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों तथा अन्य पिछड़े वर्गों के लिए स्थानों के आरक्षण के लिए पिछली जनगणना के आधार पर जनसंख्या के अनुपात को आधार मानने का जो तारीका अपनाया है, वह अनुचित है। इस विषय पर एम० आर० बालाजी बनाम मैसूर राज्य ए०आई० आर० 1963 एस०सी० 649 के मुख्य मुकदमे में तत्कालीन न्यायमूर्ति गजेन्द्रगडकर ने न्यायालय के पक्ष में बोलते हुए और मैसूर सरकार के उस आदेश को जिसके परिणामस्वरूप मैसूर राज्य की 68 प्रतिशत जनसंख्या को पिछड़े वर्गों के रूप में मानकर उनके लिए स्थान आरक्षित कर दिये गये थे, अनुच्छेद 15(4) के बिल्कुल अननुरूप मानकर रद्द करते हुए निम्नलिखित सिद्धान्त निर्धारित किये :—

"हमारे देश में, जहां एक राज्य से दूसरे राज्य में सामाजिक और आर्थिक स्थितियों में भिन्नता है, दृष्टिकोणों में पूर्ण रूप से एकरूपता की आशा करना निरर्थक होगा, किन्तु अनुच्छेद 15(4) की नीति के कार्यान्वयन के लिए प्रशासनिक कार्रवाई करने के लिए राज्यों के लिए इस बात को ध्यान में रखना जरूरी है कि जिस नीति को कार्यान्वित किया जाना है, वह ऐसी नीति है, जो अनुच्छेद 46 और संविधान की भूमिका के अधीन घोषित की गयी है। सामाजिक और आर्थिक न्याय की प्राप्ति के लिए ही अनुच्छेद 15(4) में उल्लिखित समुदायों की उन्नति के लिए विशेष व्यवस्था करने का प्राधिकार दिया गया है, भले ही ये व्यवस्था ऐसी क्यों न हो, जो अनुच्छेद 15 या 29(2) के अधीन गारन्टीकृत मूल अधिकारों के अननुरूप हों, अतः सन्दर्भ के अनुसार यह अपेक्षित है

कि राज्य द्वारा की जाने वाली प्रशासनिक कार्रवाई सभी प्रकार के बाह्य प्रभाव के मुक्त तटस्थ दृष्टिकोण पर ही आधारित होनी चाहिए ।

उक्त कार्रवाई सामाजिक तथा आर्थिक न्याय करने के लिए ही की जानी होती है और यह कार्रवाई ऐसे तरीके से ही की जानी चाहिए जिससे सबके साथ न्याय हो और न्याय किया जाये ।"

वर्तमान मामले के तथ्यों पर उक्त सिद्धान्त लागू करते हुए हमने यह पाया है कि सरकार ने मैडिकल कालेजों में आरक्षित किये जाने वाले स्थानों के अनुपात के अवधारण के लिए एक तटस्थ और न्यायपूर्ण परीक्षण विधि अपनाई है । श्री पराजंपे ने आगे यह निवेदन किया कि क्योंकि राज्य की बाकी जनसंख्या का शिवाजी और पुणे विश्वविद्यालयों से कोई सम्बन्ध नहीं था, अतः शिवाजी विश्वविद्यालयों से सम्बद्ध मैडिकल कालेजों में आरक्षित किए जाने वाले स्थानों के अनुपात का अवधारण करने के लिए पूरे राज्य की सम्पूर्ण जनसंख्या की तुलना में इन समुदायों के अनुपात को आधार बनाना तर्कहीन था । हमें इसमें कोई बात तर्कहीन नहीं लगती । अनुच्छेद 15(4) के अधीन पिछड़े वर्गों के लिए आरक्षण की अनुमति दी गयी है और ऐसे आरक्षण के लिए सम्भवतः इससे अच्छा और कोई आधार नहीं है कि राज्य की सम्पूर्ण जनसंख्या की तुलना में पिछड़े वर्गों की जनसंख्या के अनुपात को आधार बनाया जाये । राज्य से यह आशा करना पूर्णतया अनुचित होगा कि वह पूरे राज्य में इन दो विश्वविद्यालयों के या इनमें से प्रत्येक विश्वविद्यालय के क्षेत्रों के पिछड़े वर्गों की जनसंख्या की अलग से जनगणना कराये । श्री पराजंपे का यह तर्क कि राज्य की शेष जनसंख्या की इन दो विश्वविद्यालयों के मैडिकल कालेजों में दाखिलों में कोई रुचि नहीं है नामंजूर करना आवश्यक है क्योंकि राज्य के सभी भागों के लिए आरक्षण का एक समान नियम अपनाना महाराष्ट्र सरकार के लिए निश्चित रूप से न्यायोचित है, और यदि राज्य सरकार ने जनसंख्या के आधार पर एक समान नियम अपनाया है, तो इसमें ऐसा कुछ नहीं समझते, जो तर्कहीन हो या जिस पर अनुच्छेद 14 या 15 का कोई प्रतिकूल प्रभाव पड़ता हो ।

श्री पराजंपे ने आगे यह तर्क दिया कि इन समुदायों के लिए आरक्षण की नीति इस तथ्य से भी निष्फल हो जाती है कि वे यदि अन्य विद्यार्थियों के लिए निर्धारित 40 प्रतिशत अंकों की तुलना में 40 प्रतिशत अंक भी प्राप्त कर लेते हैं, तो वे दाखिले के लिए आवेदन करने के पात्र हो जाते हैं और इससे सरकार पिछड़े वर्गों की उन्नति में सहायता करने की बजाय ऐसी नीति को प्रोत्साहन दे रही थी, जिससे वे दूसरे वर्गों की तुलना में कम प्रगति करें । इस तर्क में उस प्रयोजन की ही उपेक्षा की गयी है, जिसके लिए अनुच्छेद 15(4) बनाया गया है । पिछड़े वर्गों, जिन्हें इस रूप में मान्यता प्राप्त है, और अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों को शताब्दियों से सामाजिक और आर्थिक कठिनाइयों का सामना करना पड़ता रहा है और उनकी स्थिति में जिन तरीकों से सुधार किया जा सकता है, उनमें से एक तरीका यह भी है कि ऐसे विद्यार्थियों को, जिन्हें अपेक्षाकृत कुछ कम अंक भी प्राप्त हों, मैडिकल कालेजों में दाखिले का पात्र बना दिया जाये, और इसे पिछड़े वर्ग के इन समुदायों की उन्नति के एक उपाय के रूप में ही समझा जाना चाहिए ।

इसी प्रकार श्री पराजंपे के इस तर्क में कि एक ग्रुप विशेष का रिक्त स्थानों को पिछड़े वर्ग के ग्रुपों में आगे ले जाना अव्यवहारिक है कोई सार नहीं है क्योंकि हमारी राय में नियम 4(घ) बहुत व्यावहारिक और न्यायसंगत है और उसे आसानी से लागू किया जा सकता है । हमें इसे लागू करने में कोई कठिनाई महसूस नहीं होती । उपर्युक्त नियम का उद्धरण ऊपर दिया गया है । यह स्पष्ट है कि नियम में उल्लिखित चारों ग्रुप नागरिकों के "आर्थिक तथा शैक्षिक दृष्टि से पिछड़ वर्ग के हैं और अनुसूचित जाति तथा अनुसूचित जनजाति के लोग हैं और अनुच्छेद 15(4) में यह निर्धारित किया गया है कि अनुच्छेद 15 या अनुच्छेद 29 के खण्ड (2) में ऐसा कुछ नहीं कहा गया है जो उपर्युक्त वर्गों, जातियों और जनजातियों की उन्नति के लिए राज्य द्वारा की गई विशेष व्यवस्थाओं में बाधक बने । महाराष्ट्र सरकार ने नियम 4(घ) में उल्लिखित चारों ग्रुपों के लिए ऐसी ही एक विशेष व्यवस्था की है । उन्हें अनुच्छेद 15(4) के अधीन विशेष तरजीह दी जा सकती है और दी भी जा रही है । उक्त नियम के अन्तर्गत 34 प्रतिशत स्थान सभी चारों ग्रुपों के लिए आरक्षित रखे जाते हैं और इन्हीं 34 प्रतिशत स्थानों में ही आगे यह विशेष व्यवस्था भी की गई है कि चारों में से किसी एक या अधिक ग्रुपों के लिए आरक्षित स्थानों में से रिक्त स्थानों को उन विद्यार्थियों के लिए अनारक्षित करके भरा जाए तो शेष ग्रुपों से सम्बन्धित हैं ये चारों ग्रुप सामाजिक तथा शैक्षिक दृष्टि से पिछड़े हुए नागरिकों की ही कोटि में आते हैं । उन्हें तरजीह दी जानी चाहिए । इसलिए यह व्यवस्था रखी गई है कि रिक्त स्थान उन्हीं स्थानों में से भरे जाएं जो उनके लिए आरक्षित किए गए हैं । चारों ग्रुपों में उप-विभाजन करने का स्पष्ट कारण यह है कि आरक्षण उन्हीं चार ग्रुपों में बांटा जाए जो सामाजिक तथा शैक्षिक दृष्टि से पिछड़े नागरिकों की एक कोटि के अन्तर्गत आते हैं ताकि किसी एक ग्रुप के ऐसे विद्यार्थी जो अपेक्षतया अधिक प्रतिभासम्पन्न हैं, दूसरे ग्रुपों के विद्यार्थियों को उनके लाभ से वंचित न कर दें । हमारी राय में यह सब भारत के संविधान के अनुच्छेद 15(4) के अधीन अनुमत्य है और अनुच्छेद 46 के अनुकूल है जिसमें यह अपेक्षा की गई है कि राज्य कमजोर वर्गों की जनता और खास तौर से अनुसूचित जाति और जनजाति के लोगों के शैक्षिक तथा आर्थिक हितों को पूरा करने की दिशा में विशेष ध्यान दें । अतः याची इस आधार पर नियम 4(घ) को चुनौती नहीं दे सकता कि विभिन्न ग्रुपों में से प्रत्येक के लिए स्थान आरक्षित करने के बाद उसमें एक ग्रुप में खाली स्थानों को अन्य ग्रुपों के विद्यार्थियों के लिए खाली घोषित करके विशेष व्यवस्था की गई है या इस आधार पर कि चार में से किसी भी ग्रुप के रिक्त स्थान योग्यता के अनुसार सभी विद्यार्थियों के लिए खाली घोषित करके उन्हें उपर्युक्त ग्रुपों के विद्यार्थियों को फिर से उपलब्ध न कराया जाए ।

निर्णय

(i) न्यायालय ने यह निर्णय दिया कि राज्य की कुल जनसंख्या की तुलना में पिछड़े वर्गों, अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों की जनसंख्या के अनुपात के आधार पर जो आरक्षण की मात्रा का निर्धारण करने के लिए पिछली जनगणना के आधार पर लगाया गया था वैध तथा न्यायसंगत है ।

(ii) पिछड़े वर्ग के एक उप-ग्रुप के रिक्त आरक्षित स्थानों को इस प्रकार के पिछड़े वर्गों के लिए उपलब्ध आरक्षण की मात्रा के अनुसार दूसरे उप-ग्रुप में ले जाने की व्यवस्था को विधिमान्य माना गया ।

तथ्य

उन सम्प्रदायों के याचियों ने जो सामाजिक तथा शैक्षिक रूप से पिछड़े वर्गों से सम्बन्धित हैं केरल सरकार के ता० 2-5-1968 के सरकारी आदेश पी० 208/66/शिक्षा में लगाए गए प्रतिबन्ध की संवैधानिकता को चुनौती दी जिसमें यह शर्त रखी गई थी कि केवल वहीं आवेदक जिनका ऐसे परिवारों से सम्बन्ध है जिनकी वार्षिक आय 6000 रुपए से कम हो, उन स्थानों में प्रवेश पाने के पात्र हैं जो पिछड़े वर्ग के विद्यार्थियों के लिए आरक्षित रखे गए हैं। जिन याचियों ने 1974-75 में एम०बी०बी०एस० पाठ्यक्रम के प्रथम वर्ष में प्रवेश के लिए आवेदन किया था उन्हें प्रवेश नहीं दिया गया। सरकारी आदेशानुसार पिल्लै आयोग की रिपोर्ट के परिणामस्वरूप पास किया गया जिसमें 4200 रुपए तक की आय-सीमा की सिफारिश की गई थी।

वाद विषय

(i) क्या उच्चतर आय के आधार पर उन व्यक्तियों को बहिष्कृत करना जो सामाजिक तथा शैक्षिक दृष्टि से पिछड़े वर्ग से सम्बन्धित हैं अनुच्छेद 15(4) के अधीन वैध था, दूसरे शब्दों में क्या आय के आधार पर पिछड़े वर्गों का उप-विभाजन सम्भव है।

(ii) क्या 6000 रुपए की उच्चतम सीमा मनमानी थी।

निर्णय (एकस जज, के० के० नरेन्द्रन न्यायमूर्ति)

(i) उच्चतर आय के आधार पर सामाजिक तथा शैक्षिक दृष्टि से पिछड़े वर्गों के व्यक्तियों का बहिष्कार अनुच्छेद 15(4) के अन्तर्गत उचित नहीं था।

(ii) वर्तमान मामले में 6000 रुपए की उच्चतम सीमा को मनमानी और असंगत करार दिया गया।

(iii) जब शमीम के मामले की अपील केरल उच्च न्यायालय की खण्ड न्यायपीठ में की गई तो न्यायालय ने केरल राज्य बनाम कृष्ण कुमारी (आल इण्डिया रिपोर्टर 1976 केरल 851) में निम्नलिखित निर्णय दिया।

उद्धरण

मुख्य न्यायमूर्ति गोविन्दन नायर

12. आयोग को एजवा और मुसलमानों के प्रमुख सम्प्रदायों के मामले में जिनकी राज्य की आबादी में भारी संख्या है, अपनी रिपोर्ट तैयार करते समय इस कार्य में बड़ी कठिनाई आई कि इन सम्प्रदायों को न तो समग्र रूप से और न ही अधिकांश रूप से सामाजिक तथा शैक्षिक दृष्टि से पिछड़ा हुआ कैसे करार दिया जाए। इस प्रकार की जातियों के सभी सदस्यों की सामाजिक तथा शैक्षिक दृष्टि से पिछड़ा हुआ मानने की असंगति की तत्काल इस न्यायालय के हरिहरन पिल्लै बनाम केरल राज्य 1967 के एल०टी० 266 की पूर्ण न्यायपीठ के निर्णय में किया गया। किन्तु पूर्ण न्यायपीठ ने यह अनुभव किया कि उसके पास इस निष्कर्ष तक पहुंचने का कोई आधार नहीं है कि इस जाति के सदस्यों का एक वर्ग विशेष सामाजिक तथा शैक्षिक दृष्टि से पिछड़ा हुआ नहीं है। इसलिए न्यायालय यह मानने के लिए तैयार नहीं था कि इस जाति के सदस्यों को अधिकांशतः सामाजिक तथा शैक्षिक दृष्टि से पिछड़ा हुआ कहना ठीक नहीं है। परन्तु साथ ही उसने अपने निर्णय के 22वें पैराग्राफ में एक चेतावनी भी दर्ज कर दी थी। हम यहां पैराग्राफ 22 और 23 के उद्धरण प्रस्तुत कर रहे हैं:—

> 22. किन्तु यह आवश्यक है कि यहां यह गम्भीर चेतावनी दर्ज कर दी जाए क्योंकि जिस आधार-सामग्री पर विश्वास किया गया है जैसे कि 1935 के पहले त्रावनकोर सरकार द्वारा गठित समिति की रिपोर्ट तथा उस समिति की रिपोर्ट जिसने इसी प्रश्न पर 1957 में विचार किया था और साथ ही 1941 की जनगणना रिपोर्ट जिन पर विश्वास किया गया है ये सभी अब बिल्कुल पुरानी और बेकार हो गई हैं। इसलिए आवश्यकता इस बात की है कि सम्बद्ध आंकड़े समय-समय पर इकट्ठे किए जाएं। संविधान के अनुच्छेद 15(4) और 16(4) के उपबन्ध मात्र अल्पकालिक उपबन्ध हैं और उनके अनुसार की गई कार्रवाई में समयानुसार परिवर्तन करते रहना चाहिए। ऐसा तभी सम्भव है जबकि नियमित अन्तराल पर सर्वेक्षण किया जाए और ब्यौरेवार सूचना एकत्रित की जाए। मैं विगत कमोबेश बीस या तीस वर्षों से प्रवर्तित सिद्धान्तों के आधार पर किए गए चयन में हस्तक्षेप करने के पक्ष में नहीं हूं परन्तु साथ ही मैं इस प्रणाली के जारी रखने के भी पक्ष में नहीं हूं जब तक कि इस मामले पर नये सिरे से विचार न कर लिया जाए।
>
> 23. मेरा विचार है कि "पिछड़े वर्गों" में नागरिकों के सभी कमजोर वर्ग शामिल किए जाने चाहिए चाहे उन वर्गों के धर्म और/अथवा जातियां कुछ ही क्यों न हों। इस उद्देश्य को मद्दे नजर रखते हुए यह वांछनीय प्रतीत होता है कि राज्य यथाशीघ्र एक विस्तृत सर्वेक्षण करे। जब तक सम्बन्धित प्रश्न का नये सिरे से मूल्यांकन नहीं कर लिया जाता उन सिद्धान्तों को लागू करते रहने का कोई औचित्य नहीं है जो 31-3-1978 के बाद सामान्य नियमावली के नियम 14 से 17 में सम्मिलित किए गए थे।

इस न्यायालय की पूर्ण न्यायपीठ के इन विचारों को मद्दे नजर रखते हुए ही वर्तमान समिति का गठन किया गया था। आयोग ने जो सिद्धान्त लागू किए थे उनका उल्लेख आयोग ने रिपोर्ट में किया है। उसने यह **सिद्धांत लागू किया है कि सामाजिक पिछड़ेपन को असल कसौटी आर्थिक स्थिति तथा जाति संप्रदाय माने जाने चाहिए।** आयोग ने यह बात अपनी रिपोर्ट के पृष्ठ 29 के पैराग्राफ 11 में कही है। विचार के लिए जो मुख्य प्रश्न उठता है वह यह है कि क्या इस प्रकार की कसौटी निर्धारित करना संविधानिक उपबन्धों के अनुसार आवश्यक है जिनका निर्वचन उच्चतम न्यायालय ने किया है अथवा आयोग ने जिस बात पर विचार किया है वह असम्बद्ध या असंगत विचार मात्र है जिसके कारण इस प्रकार के वर्गीकरण से संविधान के अनुच्छेद 14 का अतिक्रमण होता है। श्री शिवरमण नायर तथा राज्य परामर्शी ने हमारे समक्ष बहुत जोरदार ढंग से यह तर्क प्रस्तुत किया है कि सामाजिक तथा शैक्षिक दृष्टि से पिछड़ी जातियों के एक बहुत

साधारण वर्ग को आयोग ने आय के कृत्रिम स्तर के आधार पर बहिष्कृत किया है । यह भी दावा किया गया कि यह "लघु" वर्गीकरण, जैसा कि श्री शिवरमण नायर ने इसे अभिहित किया है, न केवल अनौचित्यपूर्ण है वरन् स्वेच्छाचारितापूर्ण भी है ।

13. गरीबी और आर्थिक स्तर सामाजिक पिछड़ेपन के निर्धारण के लिए संगतकारक हैं क्योंकि आर्थिक स्थिति सामाजिक तथा शैक्षिक स्तर का पिछड़ेपन से सीधा सम्बन्ध है । आर्थिक पिछड़ेपन से सामाजिक पिछड़ापन आता है और उसी से शैक्षिक उन्नति में भी बाधा आती है ····।

17. वर्गीकरण के सभी मामलों में सीमान्त मामले आ जाते हैं । यदि वर्गीकरण अनुमत्य है तो इस बात से कि इसके कारण कुछ व्यक्तियों को कठिनाई हो जाएगी वह वर्गीकरण न तो अन्यायपूर्ण हो जाता है, न ही अनुचित या स्वेच्छाचारितापूर्ण अथवा विकृत होता है । चाहे आय का कोई भी स्तर निर्धारित कर दिया जाए सीमान्त मामले निश्चित ही होंगे । वास्तविक प्रश्न यह है कि क्या जातियों का सामाजिक तथा शैक्षिक पिछड़ापन जो ऐतिहासिक कारणों से उत्पन्न हुआ है हमेशा के लिए बनाए रखा जाए और उन जातियों को समग्र रूप से सामाजिक तथा शैक्षिक दृष्टि से पिछड़ा हुआ माना जाए चाहे उन जातियों में कुछ लोगों के ऐसे समूह भी हों जो सामाजिक और शैक्षिक दृष्टि से पिछड़े हुए नहीं हैं । क्या ऐसे सम्प्रदाय के सभी सदस्य हमेशा पिछड़े हुए ही रहें । आरक्षण करने के पीछे जो भावना है वह यह है कि ऐसी जातियों या सम्प्रदाय के सदस्यों को उन लोगों के बराबर के मौके दिए जाएं जिन्हें समाज में सामाजिक तथा शैक्षिक दृष्टि से उन्नत वर्ग माना जाता है । यदि उन जातियों/सम्प्रदायों का एक ग्रुप सामाजिक, शैक्षिक तथा आर्थिक क्षेत्रों में उन्नति करने में समर्थ हो गया है तो उनके लिए आरक्षण करने का यह मतलब होगा कि उन्हीं सम्प्रदायों/जातियों के उन लोगों को इस प्रकार के अवसरों से वंचित रखा जाए जो वास्तव में सामाजिक और शैक्षिक दृष्टि से पिछड़े वर्ग में आते हैं ····।

18. इसका यह तात्पर्य हरगिज नहीं है कि ये जातियां या सम्प्रदाय आयोग और सरकार द्वारा अपनाए गए स्थानों के आरक्षण सम्बन्धी सिद्धान्त के कारण किसी प्रकार के नुकसान में रहें । जहां तक सम्प्रदाय के सदस्यों के आरक्षण की मात्रा का प्रश्न है वह उतनी ही है जिन्हें बहुत हद तक वही सम्प्रदाय माना जाता है जिसमें वे व्यक्ति आते हैं जो सामाजिक तथा शैक्षिक दृष्टि से पिछड़े हुए हैं । इसलिए रिपोर्ट के परिशिष्ट भाग में उल्लिखित सम्प्रदायों का एक स्थान भी कम नहीं हुआ है जो उनके लिए उस समय आरक्षित कर दिए गए थे जब कि आयोग की रिपोर्ट को सरकार के आदेश द्वारा स्वीकृत भी नहीं किया गया था । अब मुकाबिला जातियों के अधिक उन्नत वर्ग तथा कम उन्नत वर्ग के बीच रहता है । असल प्रश्न तो यह है कि क्या आयोग के समक्ष ऐसी सामग्री मौजूद थी जिसके आधार पर उन्होंने यह कहा कि जातियों में जो लोग आर्थिक दृष्टि से सम्पन्न हैं उन्हें सामाजिक दृष्टि से पिछड़ा हुआ नहीं माना जा सकता । इस सम्बन्ध में आयोग ने कुछ साक्ष्य एकत्र किए हैं और इसलिए यह कहना असम्भव है कि आयोग के सामने इस निष्कर्ष तक पहुंचने के लिए कोई सामग्री उपलब्ध नहीं थी । यह निश्चयपूर्वक कहा जा सकता है कि यह इस न्यायालय का काम नहीं है कि उपलब्ध साक्ष्य की मात्रा को आंके या जो निष्कर्ष निकाले गए हैं उन पर अपना निर्णय दे ····· ।

अतः अब जो प्रश्न रह जाता है वह यह है कि क्या आयोग द्वारा अपनाया गया दृष्टिकोण सही था, क्या उसने उच्चतम न्यायालय द्वारा निर्धारित मार्गदर्शक सिद्धान्तों का ध्यान रखा था, क्या उसके समक्ष कुछ सामग्री थी, और क्या उसने निष्कर्ष निकालते समय किसी असम्बद्ध अथवा असंगत मामलों पर विचार तो नहीं किया था । हम यह कहने के लिए तैयार नहीं हैं कि उनके द्वारा अपनाए गए दृष्टिकोण या सिद्धान्तों के अपनाने में कोई त्रुटि रही है । आयोग के समक्ष सामग्री थी और वह किसी प्रकार के असंगत या असम्बद्ध विचारों से प्रभावित नहीं हुआ था । अतः यह तर्क कि वर्गीकरण अनुचित था वैध नहीं माना जा सकता ।

22. इसके बाद परामर्शी ने यह तर्क दिया कि आर्थिक दृष्टि से श्रेष्ठतर लोगों के रूप में वर्गीकरण के लिए 6000 रुपये की जो आय निर्धारित की है वह बिल्कुल मनमानी है । यह बताया गया कि कम से कम चयन के समय जिससे कि हमारा इन मामलों के सिलसिले में संबंध है 6000 रुपये की राशि बहुत ही छोटी राशि है । आयोग ने अपनी रिपोर्ट प्रस्तुत करते समय इस बात के लिए कारण बताए हैं कि उसने 4200 रुपये की राशि क्यों तय की है । सरकार ने यह राशि बढ़ाकर 6000 रुपए कर दी । इस निर्णय पर पुनर्विचार करना आवश्यक है । सरकार का आदेश 1966 को जारी किया गया था और 6000 रुपये की राशि को निश्चित हुए अब लगभग दस वर्ष पूरे हो गए हैं । हमें विश्वास है कि सरकार इस मामले पर ध्यान देगी और यह निश्चय करते समय कि 6000 रु० की राशि बनी रहने दी जाए या इसे बदला जाए समुचित कारकों पर विचार करेगी । यह ऐसा मामला है जिस की ओर सरकार को ध्यान देना चाहिए । लेकिन हम यह कहने के लिए तैयार नहीं हैं कि 6000 रुपये की जो राशि निश्चित की गई थी वह मनमानी थी । आयोग ने 4200 रुपये की राशि की सिफारिश करते समय उसके कारण बताए हैं और इस संबंध में संगत सामग्री का हवाला भी दिया है और हमारा मत है कि सरकार का 4200 रुपए की राशि को 6000 रुपए तक बढ़ाने का निर्णय न्याय-संगत था।

निर्णय

शमीम के मामले में एकल न्यायपीठ का निर्णय उलट दिया गया ।

(iii) उच्चतम न्यायालय में अपील होने पर इस न्यायालय ने के० एस० जयश्री बनाम केरल राज्य (आल इंडिया रिपोर्टर 1976 उ० न्या० 2381) कृष्णा कुमारी के मामले में केरल उच्च न्यायालय के निर्णय को परिपुष्ट किया ।

उद्धरण

मुख्य न्यायमूर्ति ए० एन० राय०

7. आयोग ने 14 जुलाई, 1964 को कार्यभार ग्रहण किया और 31 दिसम्बर, 1965 को अपनी रिपोर्ट प्रस्तुत की । आयोग ने यह सिफारिश की कि केवल यही नागरिक जो ऐसे परिवारों के सदस्य हैं जिनकी कुल वार्षिक आय 4200 रुपए से कम है और जो उन जातियों और संप्रदायों से संबंधित हैं जिनका उल्लेख परिशिष्ट VIII में किया गया है अनुच्छेद 15(4) के प्रयोजन के लिए सामाजिक तथा शैक्षिक रूप से पिछड़े वर्गों के अन्तर्गत आते हैं ।

7-क. जब सरकार ने 2 मई 1966 को आदेश पारित किया तो उस आदेश में अन्य बातों के साथ यह भी कहा गया था:—"जब आयोग ने अपनी रिपोर्ट के लिए आंकड़े एकत्रित किए थे तब से अब तक निर्वाह खर्च बहुत बढ़ चुका है और आयकर छूट की सीमा भी बढ़ा दी गई है । किसी भी व्यावसायिक या तकनीकी संस्था के विद्यार्थी के आजकल के निर्वाह खर्च को देखते हुए सरकार का विचार है कि आयोग द्वारा सुझाई गई 4200 रुपये की आय सीमा को उचित रूप से बढ़ाकर 6000 रुपये

परिवर्ष कर देना चाहिए। ऐसी परिस्थितियों में सरकार ने उपर्युक्त सिफारिश को इस संशोधन के साथ स्वीकार किया है कि केवल वही नागरिक जो ऐसे परिवारों के सदस्य हैं जिनकी वार्षिक आय कुल मिलाकर 6000 रुपये से कम है और जो उन जातियों तथा संप्रदायों से संबंध रखते हैं जिनका उल्लेख सरकार ने इस आदेश के अनुबंध में किया गया है अनुच्छेद 15(4) के प्रयोजन के लिए सामाजिक तथा शैक्षिक दृष्टि से पिछड़े वर्गों में आते हैं :

9. राज्य सरकार ने 2 सितंबर, 1975 को एक आदेश पारित किया जिसमें अन्य बातों के साथ-साथ यह भी कहा गया है

"सरकार का आदेश जारी होने के बाद निर्वाह खर्च और अधिक बढ़ गया है और भाथकर छूट की सीमा भी बढ़ाई गई है। किसी व्यवसायिक या तकनीकी संस्था के विद्यार्थी के आजकल के निर्वाह खर्च को दृष्टिगत रखते हुए सरकार का विचार है कि सरकार के आदेश में निर्धारित 6000 रुपये की आय सीमा को समुचित रूप से बढ़ा दिया जाना चाहिए। ऐसी परिस्थितियों में सरकार निर्धारित 6000 रुपये की आय सीमा को 1975-76 के शैक्षिक सत्र से बढ़ाकर 10,000 रुपये वार्षिक करती है।"

19. आयोग ने शैक्षिक पिछड़ेपन के लिए कई प्रकार के परीक्षण किए—आवास का परीक्षण जो साधन और जाति/संप्रदाय परीक्षण के लिए आवश्यक था और साधन और जाति/संप्रदाय परीक्षण के लिए आय स्तर और इस निष्कर्ष पर पहुंची कि केरल राज्य के वे नागरिक जो उन परिवारों के सदस्य हैं जिनकी कुल वार्षिक आय सभी स्रोतों से 4200 रुपये से कम है और जो उन जातियों या संप्रदायों से संबंध रखते हैं जिनका उल्लेख परिशिष्ट VIII में किया गया है अनुच्छेद 15(4) के प्रयोजनों के लिए सामाजिक तथा शैक्षिक दृष्टि से पिछड़े वर्गों के अन्तर्गत आते हैं। आयोग ने यह भी देखा कि सामान्य तौर पर उन जातियों या संप्रदायों के सदस्य जिनका उल्लेख परिशिष्ट VIII में हुआ है शैक्षिक दृष्टि से पिछड़े हुए हैं और निम्नतर आय के ग्रूप जिनकी वार्षिक आमदनी कुल मिलाकर 4200 रुपये से कम है सामाजिक दृष्टि से भी पिछड़े हुए हैं। इन जातियों और संप्रदायों में निम्नतर आय वाले ग्रूप के बारे में आयोग का विचार है कि वे ऐसे नागरिक वर्ग हैं जो सामाजिक और शैक्षिक दोनों ही दृष्टियों से पिछड़े हुए हैं।

20. नागरिकों के किसी वर्ग विशेष के सामाजिक पिछड़ेपन का पता लगाने के लिए उस नागरिक वर्ग की जाति पर विचार करना असंगत न होगा। किन्तु जाति को ही इसकी एक मात्र अथवा प्रमुख कसौटी मान लेना ठीक नहीं है। सामाजिक पिछड़ापन यदि कुल मिलाकर देखा जाए तो बहुत हद तक गरीबी का ही परिणाम होता है। सामाजिक पिछड़ापन जो गरीबी से पैदा होता है और भी बढ़ जाता है जब उसे जाति विशेष के साथ जोड़ दिया जाता है। इससे जाहिर होता है कि नागरिकों के पिछड़ेपन के निर्धारण में जाति तथा दरिद्रता दोनों ही की किसी प्रासंगिकता है। वैसे गरीबी ही के आधार पर सामाजिक पिछड़ेपन का निश्चय कर लेना काफी नहीं है। जहां तक सामाजिक पिछड़ेपन का सवाल है उसमें गरीबी की भी अपनी प्रासंगिकता होती है। आयोग ने यह निष्कर्ष निकाला कि कम आय वाले लोग ही सामाजिक और शैक्षिक दृष्टि से पिछड़े हुए हैं। आरक्षण का आधार आमदनी नहीं है बल्कि सामाजिक तथा शैक्षिक पिछड़ेपन का निर्णय संगत मानदण्डों के आधार पर ही किया जा सकता है। यदि नागरिकों की पिछड़ी हुई जातियों का कोई भी वर्गीकरण नागरिकों की जाति विशेष पर ही आधारित हो तो उससे जाति प्रथा की कुरीति निरंतर बनी रहेगी। इसी प्रकार यदि वर्गीकरण का आधार केवल गरीबी ही मान लिया जाए तो वह तर्कसंगत नहीं होगा। समाज जनसाधारण के उद्धार की दिशा में प्रयत्नशील है। इस महाकाम में समाज उन ग्रूपों और जातियों की सहायता करता है जो सामाजिक और शैक्षिक दृष्टि से पिछड़े हुए हैं और यही हमारे संविधान का आधारभूत लक्ष्य है। इसी संदर्भ में यदि हम सामाजिक पिछड़ेपन का आवेश लें जो दरिद्रता की ही परिणाम है तो देखते हैं कि जाति से संबद्ध होने पर इसका रूप विकराल हो जाता है। व्यवसाय और आवास ये भी दोनों ऐसे तत्व हैं जो इस बात का निर्धारण करने में सहायक होते हैं कि कौन से वर्ग सामाजिक तथा शैक्षिक दृष्टि से पिछड़े हुए हैं। इस समस्या के समाधान में और सामाजिक तथा शैक्षिक दृष्टि से पिछड़े वर्गों के निर्धारण के लिए समुचित मानदण्ड स्थिर करने की दिशा में सामाजिक तथा आर्थिक कारण भी अपनी निश्चित भूमिका अदा करते हैं। यही कारण है कि हमारे संविधान में सामाजिक तथा शैक्षिक रूप से पिछड़े नागरिकों तथा अनुसूचित जातियों और अनुजातियों के लिए विशेष सुविधाएं उपलब्ध कराई गई हैं। यदि इस समस्या का समाधान करना है तो उसका एक मात्र तरीका यही है कि समाज और राज्य को यह निदेश दिया जाए कि वे इन वर्गों के सामाजिक तथा शैक्षिक उद्धार के लिए उन्हें हर प्रकार की सुविधाएं प्रदान करें। आयोग ने इसी संदर्भ में प्रस्तुत मामले को देखा-परखा है और यह नतीजा निकाला है कि परिशिष्ट VIII में उल्लिखित नागरिक वर्गों के लिए उनके सामाजिक तथा शैक्षिक पिछड़ेपन का निश्चय करने में उनकी आय की बहुत प्रासंगिकता है।

21. कौन सामाजिक और शैक्षिक दृष्टि से पिछड़े वर्ग हैं इस समस्या का समाधान निश्चित रूप से कोई आसान काम नहीं है। उनके निर्धारण के लिए उपयुक्त मानदण्ड स्थिर करते समय समाजशास्त्रीय तथा आर्थिक कारकों की भी अपनी भूमिका होती है। यह कार्य वस्तुतः राज्य का है। न्यायालय के क्षेत्राधिकार में तो केवल यह निर्णय करना भर आता है कि जो कसौटी अपनाई गई है वह मान्य है या नहीं। यदि यह जान पड़े कि जो मानदंड अपनाए गए हैं वे उपयुक्त और वैध हैं तो उन मानदण्डों के आधार पर सामाजिक और शैक्षिक दृष्टि से पिछड़े वर्गों का जो वर्गीकरण किया गया है वह अनुच्छेद 15(4) की शर्तों के अनुरूप है या नहीं। संगत मानदंड लागू करने के बाद आयोग ने यह नतीजा निकाला है कि परिशिष्ट VIII में उल्लिखित संप्रदायों के कम आय वाले ग्रुप सामाजिक तथा शैक्षिक दृष्टि से पिछड़े वर्गों में आते हैं। इस प्रश्न पर विचार करते समय कि कोई नागरिक वर्ग विशेष सामाजिक दृष्टि से पिछड़ा हुआ है या नहीं इस बात को मद्देनजर रखना असंगत न होगा कि उस नागरिक वर्ग की जाति क्या है। यह स्मरण रखना आवश्यक है कि विशेष व्यवस्था नागरिकों के वर्गों के लिए रखी गई है अलग-अलग नागरिकों के लिए नहीं और इसीलिए यद्यपि नागरिक वर्ग की जाति पर विचार करना संगत हो सकता है किन्तु उसके महत्व को अनावश्यक रूप से बढ़ाना उचित नहीं यदि वर्गीकरण का एकमात्र आधार नागरिकों की जाति को माना जाए तो वह तर्कसंगत न होगा। सामाजिक पिछड़ापन बहुत हद तक गरीबी का नतीजा होता है इसलिए पिछड़ेपन का निर्धारण करने के लिए जाति और दरिद्रता दोनों ही संगत हैं। किन्तु अकेले न तो जाति और न ही गरीबी को इसकी कसौटी माना जा सकता है। यदि आयोग ने किसी वर्ग-विशेष को सामाजिक तथा शैक्षिक दृष्टि से पिछड़ा वर्ग घोषित कर दिया है तो उसका आधार केवल उस वर्ग की आय ही नहीं है बल्कि यह निर्धारण न्यायालय द्वारा निर्धारित संगत मानदण्डों पर आधारित है। साक्ष्य तथा अन्य सामग्री आयोग के समक्ष प्रस्तुत की गई। अनुच्छेद 15(4) में जिसमें नागरिक वर्गों के पिछड़ेपन का जिक्र किया गया है यह संकेत किया गया है कि महत्व नागरिकों के वर्गों पर दिया गया है व्यक्तियों पर नहीं अनुच्छेद 15(4) में अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जन जातियों का भी उल्लेख किया गया है। इसलिए अनुच्छेद 15(4) में वर्णित नागरिकों के सामाजिक तथा शैक्षिक दृष्टि से पिछड़े वर्गों को और जातियों को समान नहीं माना जा सकता। **आर० चित्रलेखा बनाम मैसूर राज्य** (1966) एस० सी० आर० 368 = (ए आई आर 1964 एस सी 1823) में इस न्यायालय ने कहा था

कि आर्थिक परिस्थियों और व्यवसायों के आधार पर पिछड़े वर्गों का वर्गीकरण अनुच्छेद 15(4) के प्रतिकूल नहीं है।

22. आयोग की रिपोर्ट के परिशिष्ट VIII में जिन विभिन्न जातियों का उल्लेख किया गया है उन्हें आयोग ने सामाजिक तथा शैक्षिक दृष्टि से पिछड़े वर्गों के लोगों के रूप में स्वीकृत नहीं किया है। परिशिष्ट VIII के उल्लिखित जातियों के सदस्यों में से केवल वे जिनका आर्थिक स्तर आयोग द्वारा निर्धारित स्तर से नीचा है सामाजिक तथा शैक्षिक दृष्टि से पिछड़े हुए माने गए हैं। किसी भी वर्ग की आर्थिक स्थितियों से भी उनके शैक्षिक पिछड़ेपन का बहुत हद तक आभास हो जाता है।

निर्णय

पिछड़ेपन का निर्धारण करने के लिए जाति तथा दरिद्रता दोनों ही प्रासंगिक तत्व हैं। आयोग द्वारा वर्णित जातियों के सदस्यों के सामाजिक तथा शैक्षिक पिछड़ेपन का निश्चय करने के लिए आर्थिक साधनों के मानदण्ड को न्यायालय ने वैध ठहराया है।

बी०सी० स्वेन, बनाम सचिव, निर्माण तथा परिवहन विभाग

ए आई आर 1974 उड़ीसा 115

तथ्य

बिहार सरकार के 1970 के एक आदेश को जिसके अनुसार एक्सप्रैस हाइवे नं० 1 के आसपास की भूमि को अस्थायी रूप से वार्षिक आधार पर भूमिहीन हरिजनों को कृषि तथा मत्स्यपालन के प्रयोजन के लिए पट्टे पर दिया गया था और जिसमें भूमिहीन हरिजनों की मत्स्य सहकारी संस्थाओं को तरजीह दी गई थी इस आधार पर चुनौती दी गई कि उससे अनुच्छेद 15(4) का अतिक्रमण होता है।

वादविषय :

(i) क्या "हरिजन" वर्ग के रूप में सामाजिक तथा शैक्षिक दृष्टि से पिछड़े हुए हैं।

(ii) क्या हरिजन जाति होती है ?

(iii) क्या न्यायालय इस तथ्य पर न्यायायक दृष्टि से विचार कर सकता है कि हरिजन सामाजिक तथा शैक्षिक दृष्टि से पिछड़े हुए हैं।

उद्धरण

न्यायमूर्ति पंडा

हरिजनों की गणना संविधान में वर्णित अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जन जातियों के अंतर्गत निश्चित ही नहीं की जाती। अतः श्री रथ का पहले यह तर्क कि यदि हरिजन "सामाजिक तथा शैक्षिक दृष्टि से पिछड़े नागरिकों के लिए वर्ग" की कोटि में नहीं आते तो उस आदेश पर जिस पर आक्षेप किया गया है इस कारण अनुच्छेद 15 का प्रतिकूल प्रभाव पड़ेगा क्योंकि केवल जाति के आधार पर यह भेदभाव किया गया है। श्री रथ का इस संबंध में दूसरा दावा यह है कि इस बात का कि हरिजन जाति के रूप में सामाजिक तथा शैक्षिक दृष्टि से पिछड़े हुए हैं न तो कोई प्रमाण है और न ही ऐसा किसी की धारणा है।

निश्चय ही "हरिजन" नाम की कोई जाति नहीं है। न ही किसी स्थान पर "हरिजन" की इस प्रकार परिभाषा दी गई है। इस शब्द का प्रचलन हाल ही में 1920 और 1930 के बीच से होना प्रारंभ हुआ है और इसके प्रवर्तक थे महात्मा गांधी। भाषा कोष के अनुसार स्वर्ण हिन्दुओं ने जो निम्नजाति के हिन्दुओं को गिरी हुई दृष्टि से देखते हो कुछ जातियों को अछूत मान लिया और उसी श्रेणी में ये लोग गिने जाने लगे इस प्रकार हरिजन उन जातियों के लोग हैं—जिन्हें गैर-हरिजन या स्वर्ण हिन्दु अछूत मानते हैं। इस प्रकार यह निष्कर्ष निकलता है कि हरिजन कोई जाति नहीं है। बल्कि विभिन्न जातियों के लोगों का समूह है जिन्हें सवर्ण हिन्दुओं ने अछूत मानना शुरू कर दिया। अतः यह तर्क कि हरिजन के रूप में वर्गीकरण जाति पर आधारित है, ठीक नहीं है "हरिजन" शब्द का अर्थ केवल जाति की परिकल्पना तक ही सीमित नहीं है।

1958 के आल इंडिया रिपोर्टर में दर्ज मध्य प्रदेश के एक मामले 352(1958) (सी० आर० आई० एल० जे 1398) (राज्य बनाम पूर्णचन्द) में "हिरजन" शब्द का निर्वचन करते हुए कहा गया है:

यह सर्वविदित है कि "हरिजन" शब्द का प्रयोग अछूतों के लिए किया जाता है और साक्षी द्वारा प्रयुक्त इस शब्द को यह मानने के लिए पर्याप्त समझा जाना चाहिए कि "मोहन लाल को मंदिर में जाने से इसलिए रोका गया था कि वह अछूत था।"

श्री रथ अपने इस कथन के समर्थन में कि हरिजन या गैर-हरिजन के रूप में किया गया वर्गीकरण जाति पर आधारित है किसी लिखित प्रमाण का हवाला नहीं दिया है। इसके विपरीत वस्तुस्थिति तो यह है कि भारत के सभी नागरिकों को दो वर्गों में वर्गीकृत किया जा सकता है जैसे हरिजन और गैर-हरिजन और इन दोनों में से प्रत्येक के अंतर्गत विभिन्न जातियां आ जाती हैं। इसलिए हम इस दावे को कि "हरिजन" के रूप में किया गया वर्गीकरण "जाति" पर आधारित है अस्वीकार करते हैं।

अगला विचारणीय मुद्दा यह है कि क्या हरिजन सामाजिक और शैक्षिक दृष्टि से पिछड़े वर्ग के नागरिक हैं। श्री रथ के कथनानुसार वे नहीं हैं बल्कि उनमें तो बड़े धनवान और संपन्न लोग भी हैं और उच्च शिक्षा प्राप्त व्यक्ति भी और यदि न्यायालय यह निष्कर्ष निकाले कि हरिजन लोग सामाजिक तथा शैक्षिक दृष्टि से पिछड़े हुए नागरिक हैं और उन्हें अनुच्छेद 15(4) का संरक्षण प्राप्त है, उचित नहीं होगा। यह सच है कि याचिका में एक अस्पष्ट आरोप लगाया गया है जिसे ऊपर उद्धृत किया गया है कि इलाके के कुछ हरिजन खुशहाल हैं जबकि कुछ अन्य जातियों के लोग उतने उन्नत नहीं हैं जितने कि इलाके के हरिजन हैं, लेकिन न तो कोई स्पष्ट दृष्टान्त दिया गया है और न ही वह साबित करने के लिए किसी प्रतिज्ञप्त का संकेत दिया है कि वे स्वर्ण हिन्दुओं से अधिक खुशहाल कैस हैं। यदि ऐसा है भी कि कुछ हरिजन मंत्री या उच्च कार्यपालक अधिकारी बन गए हैं तो उसका यह मतलब है कि हरिजन लोग वर्ग के रूप में सामाजिक तथा शैक्षिक दृष्टि से पिछड़े वर्ग के अन्तर्गत नहीं आते जैसा कि अनुच्छेद 15(4) का आशय है बल्कि वे लोग हैं जो आर्थिक दृष्टि से खुशहाल नहीं हैं। श्री रथ ने एक निर्णय विभि का जो 1973 में (1) सर्व एल० आर० 719(ए आई आर 1973 एस सी 930) में (जानकी प्रसाद बनाम जम्मू और काश्मीर राज्य) प्रकाशित हुआ था, आधार मानकर पिछड़े वर्ग शब्दों का निर्वचन किया है। उसमें कहा गया है :—

"अनुच्छेद 15(4) में" सामाजिक तथा शैक्षिक दृष्टि से पिछड़े हुए नागरिकों के वर्ग के बारे में कहा गया है जबकि अनुच्छेद 16(4) में "किसी भी पिछड़े वर्ग के नागरिक" का उल्लेख किया गया है। किन्तु अब यह निश्चित हो गया है कि अनुच्छेद 16(4) में उल्लिखित अभिव्यक्ति "पिछड़े वर्ग के नागरिक का वही अर्थ है जोकि अनुच्छेद 15(4) में उल्लिखित अभिव्यक्ति कोई भी सामाजिक तथा शैक्षिक दृष्टि से पिछड़े वर्ग के नागरिक" का है। "पिछड़े वर्ग का नागरिक" कहलाने के लिए यह आवश्यक है कि वह व्यक्ति सामाजिक तथा शैक्षिक दृष्टि से पिछड़े वर्ग का सदस्य हो। अनुच्छेद 15(4) और 16(4) दोनों के प्रयोजनों के लिए किसी भी वर्ग का सामाजिक और शैक्षिक दृष्टि से पिछड़ा होना महत्वपूर्ण है। किसी भी वर्ग के केवल शैक्षिक दृष्टि से अथवा केवल सामाजिक दृष्टि से पिछड़ा होने से नागरिकों का कोई वर्ग पिछड़ा नहीं बन जाता बल्कि वर्ग के रूप जैसा कि ऊपर निर्दिष्ट किया गया है वही वर्ग आता है जो शैक्षिक तथा सामाजिक दोनों दृष्टियों से पिछड़ा हो। भारत में

सामाजिक तथा शैक्षिक पिछड़ेपन का संबंध आर्थिक पिछड़ेपन से भी होता है। पिछड़ापन, चाहे सामाजिक हो अथवा शैक्षिक अंततः और मूल रूप से गरीबी के कारण ही आता है। किन्तु यदि गरीबी को ही एकमात्र मानदंड मान लिया जाए तो भारत की जनसंख्या का एक बहुत बड़ा भाग सामाजिक और शैक्षिक दृष्टि से पिछड़ा हुआ माना जाएगा और यदि आरक्षण केवल आर्थिक कारणों से ही दिए जाएं तो एक ऐसी असाम्य स्थिति उत्पन्न हो सकती है क्योंकि उन क्षेत्रों में भी जो सामाजिक तथा शैक्षिक दृष्टि से उन्नत माने जाते हैं कुछ ऐसे भाग निकल आएं जहां घोर दरिद्रता है। इस देश में अपवादों के एक छोटे प्रतिशत को छोड़कर सामान्यतया लोग गरीब हैं कुछ अधिक गरीब और कुछ कम गरीब। इसलिए जब एक सामाजिक अन्वेषक सामाजिक तथा शैक्षिक दृष्टि से पिछड़े वर्गों को पहचानने का प्रयत्न करता है तो वह पूरे विश्वास के साथ कह सकता है कि वे निश्चित रूप से गरीब हैं। इसलिए उसकी प्रमुख दिलचस्पी यह निर्धारित करने में है कि कोई ग्रुप या वर्ग सामाजिक और शैक्षिक दृष्टि से पिछड़ा है या नहीं। यद्यपि इन दो अभिव्यक्तियों "सामाजिक दृष्टि से और शैक्षिक दृष्टि से" का प्रयोग पिछड़े वर्ग का वर्णन करने के प्रयोजन से सामूहिक रूप से किया जाता है लेकिन देखा यही गया है कि यदि कोई वर्ग विशेष समग्रतः शैक्षिक दृष्टि से उन्नत है तो वह सामान्यतः सामाजिक रूप से भी उन्नत होता है क्योंकि शिक्षा का उस वर्ग विशेष पर सुधारात्मक प्रभाव पड़ता है "उन्नत" तथा "पिछड़ा" ये ऐसे शब्द हैं जिनका आपेक्षिक प्रयोग होता है और "उन्नत" तथा "पिछड़े" इन दोनों के बीच वर्गों की अनेक परतें या स्तर आते हैं और कठिनाई यह आती है कि इन अनेक परतों में से किस वर्ग को "सामाजिक और शैक्षिक दृष्टि से पिछड़ा" माना जाय। हमारा विचार है कि इससे याची को कुछ नहीं मिलेगा उल्टे यह उसके हितों के प्रतिकूल होगा।

इस प्रकार जो तीन विचारार्थ प्रस्तुत हैं वह यह कि क्या उपर्युक्त परिवेश में न्यायालय जायज तौर पर यह निष्कर्ष निकाल सकता है कि "हरिजन" सामाजिक, शैक्षिक तथा आर्थिक दृष्टि से पिछड़े होते हैं। श्री रथ ने ऐसा कोई लिखित प्रमाण उद्धृत नहीं किया है जिसके कारण न्यायालय इस प्रकार का निष्कर्ष न निकालने के लिए बाध्य हो। भारतीय साक्ष्य अधिनियम के भाग II, अध्याय III में वे "तथ्य अंकित किए गए हैं जिनको साबित करना आवश्यक नहीं है" इसी अधिनियम की धारा 57 में "वे तथ्य गिनवाए गए हैं जिनको न्यायालय को न्यायिक अपेक्षा करनी चाहिए।" अभिवचन किसी प्रकार के भी हों न्यायालय को यह शक्ति प्राप्त है कि वह कुछ तथ्यों को जो मान लिए गए हैं न्यायिक अवेक्षा कर सकता है अतः यह देखना है कि क्या न्यायालय इस तथ्य की न्यायिक अवेक्षा कर सकता है कि हरिजन एक वर्ग के रूप में सामाजिक, शैक्षिक तथा आर्थिक दृष्टि से पिछड़े हुए हैं। अब यह सुस्थापित विधि है कि जिन तथ्यों की न्यायिक अवेक्षा की जाती है वे उन तथ्यों तक सीमित नहीं हैं जिनको प्रवृत्ति का उल्लेख स्पष्ट रूप से साक्ष्य अधिनियम की धारा 57 के खण्ड (1) से (13) में किया गया है। इन खण्डों में जिन मामलों का उल्लेख किया गया है उनके अतिरिक्त ऐसे अन्य अनेक मामले हैं जो इतने कुख्यात हैं कि उनको सिद्ध करने की आवश्यकता नहीं है अतः यही वे तथ्य हैं जिनकी न्यायिक अवेक्षा की जाती है। ऐसे मामलों पर जिनकी सभी को जानकारी है कि उनके लिए प्रमाण खोजना अपनी बुद्धिहीनता दर्शाना है, इसी प्रकार कार्रवाई की जानी चाहिए। चूंकि न्यायाधीशों को जिन प्रश्नों पर निर्णय देना होता है उन पर विचार करते समय जीवन के सामान्य विषयों के बारे में अपने ज्ञान का प्रयोग करना होता है इसलिए यह आवश्यक नहीं है कि किसी कार्रवाई पर विचारण के समय ऐसे मामलों पर औपचारिक साक्ष्य प्रस्तुत किए जाएं जिनकी साधारण बुद्धि के लोगों को भी जानकारी होती है चाहे वह जानकारी सामान्य प्रकृति की हो अथवा प्राकृतिक घटनाओं के संबंध में और चाहे वे शांति से संबद्ध हों अथवा युद्ध से। (हाल्सबरीज लॉज ऑफ इंग्लैंड खण्ड 15 तीसरा संस्करण, पृ 399) ऐसी अनेक प्रकार की बातें होती हैं जिनको न्यायालय न्यायिक अवेक्षा कर सकता है, उदाहरण के लिए ऐतिहासिक तथ्य, भौगोलिक सच्चाई, वैज्ञानिक अन्वेषण एक समय विशेष में सामाजिक आर्थिक परिस्थितियां और रोजमर्रा की जिन्दगी की घटनाएं और इसी प्रकार की अन्य बातें यहां तक कि स्वयंसिद्ध सत्य और प्राकृतिक घटनाएं भी।

आधुनिक परिपाटी की यह प्रवृत्ति है कि न्यायिक अवेक्षा के क्षेत्र में प्रोत्साहन दिया जाए, यहां तक कि जूरी तक इसका विस्तार किया गया है और कहा गया है, "जूरर या पंच न्यायाधीशों की ही तरह अपने न्यायिक कार्यों के कारण इस बात के लिए बाध्य नहीं किए जाते हैं कि वे उन मामलों के संबंध में जिन्हें हर कोई जानता है अपने ज्ञान से मुंह मोड़ें।"

हमने जो कुछ कहा है उसको और पुष्ट करने की दृष्टि से हम यहां केवल दो निर्णयों का हवाला देंगे, जिनमें से एक उच्चतम न्यायालय का है—ए आई आर 1970 उ० न्या० 35 चित्ता घोष बनाम भारत संघ और दूसरा इस न्यायालय का है—ए आई आर 1953 ओड़िसा 53—(1953 सी आर आई एल जे 544) शिवनाथ बनाम राज्य।

नीचे उद्धृत अवतरणों (रेखांकित अंश) से पता चलता है कि उच्चतम न्यायालय के न्यायमूर्ति सामान्य ज्ञान पर कितना निर्भर करते हैं। यह इस तर्क के लिए भी एक प्रमाण है कि अनुच्छेद 8 किस प्रकार भेदभावपूर्ण नहीं है।

"पहला ग्रुप जिसके व्यक्तियों के लिए स्थान आरक्षित किए गए हैं उन लोगों के लड़के और लड़कियां हैं जो दिल्ली से इतर संघ शासित क्षेत्रों के निवासी हैं। ये क्षेत्र अपेक्षाकृत पिछड़े होने के कारण भी मशहूर हैं और हिमाचल प्रदेश को छोड़कर किसी और क्षेत्र में उनका अपना कोई मैडिकल कालेज नहीं है। यह जरूरी था कि इन क्षेत्रों के वे व्यक्ति जो आयुर्विज्ञान की शिक्षा प्राप्त करने के इच्छुक थे उनके लिए कुछ सुविधाएं उपलब्ध कराई जायें। जहां तक केन्द्रीय सरकार के उन कर्मचारियों के लड़कों/लड़कियों का प्रश्न है जो विदेश में भारतीय मिशनों में तैनात हैं यह भी सर्वविदित ही है कि उनकी सेवा की अपेक्षाओं के कारण उन लोगों को शिक्षा के मामले में अनेक कठिनाइयां पेश आती हैं। भाषा की समस्या के अलावा विदेशों में उन संस्थाओं में प्रवेश लेना भी न तो आसान है और न ही हमेशा संभव जहां आयुर्विज्ञान की शिक्षा दी जाती है। जहां तक जम्मू काश्मीर के विद्यार्थियों का प्रश्न है यह स्मरणीय है कि उनसे संबंधित समस्याएं विशिष्ट प्रकार की हैं और उस राज्य में वहां के विद्यार्थियों को डाक्टरी पढ़ाने के लिए पर्याप्त व्यवस्था नहीं है।"

इन सभी मामलों में जो वर्गीकरण किया गया है उसका आधार वह बोधगम्य विशिष्ट है जो उन्हें उस ग्रुप से अलग करता है जिससे याची संबद्ध है।

पश्चोक्त मामले में न्यायमूर्ति नरसिंहम्, (जो वे उस समय था) ने यह निर्णय दिया:

"न्यायालय इस तथ्य की न्यायिक अवेक्षा कर सकता है कि जहां तक चावल के उत्पादन का प्रश्न है संभलपुर एक ऐसा जिला है जो अधिशेष उत्पादन का जिला माना जाता है और उस जिले से पड़ोस के राज्यों जैसे बिहार और मध्य प्रान्त को व्यापक पैमाने पर तस्करी की जाती है।"

निर्णय

(i) हरिजन सामाजिक और शैक्षिक दृष्टि से पिछड़े हुए हैं।

(ii) न्यायालय उपर्युक्त तथ्य की न्यायिक अवेक्षा कर सकता है।

(iii) हरिजन कोई जाति नहीं बल्कि विभिन्न जातियों के लोगों का समूह है जिन्हें स्वर्ण हिन्दू अस्पृश्य मानते हैं।

शान्ता कुमार बनाम मैसूर राज्य

(1971) 1 मैसूर लॉ जर्नल 21

तथ्य

याची मैसूर राज्य के मेडिकल कालेज में प्रवेश के लिए आवेदक था । उसका दावा था कि वह सामाजिक तथा शैक्षिक दृष्टि से पिछड़े वर्गों से संबंधित है । मेडिकल कालेज में प्रवेश के लिए गठित चयन समिति ने उसका यह दावा स्वीकार नहीं किया कि उसका संबंध इस प्रकार के पिछड़े वर्गों से हो चूंकि जो अंक प्राप्त किए थे वे इतने अच्छे नहीं थे कि उसे मेडिकल कालेज में अनारक्षित स्थानों में से किसी के लिए चुना जा सकता इसलिए वह नहीं चुना गया । इस याचिका में याची ने चयन समिति के उस निर्णय का विरोध किया है जिसके अनुसार उसे सामाजिक तथा शैक्षिक दृष्टि से पिछड़े वर्ग का सदस्य नहीं माना गया । याची ने दावा किया है कि चूंकि उसे उसके चाचा ने 16 वर्ष की आयु में ही दत्तक पुत्र बना लिया था इसलिए अब वह सामाजिक तथा शैक्षिक दृष्टि से पिछड़े वर्ग का सदस्य बन गया है ।

वाद विषय

क्या सामाजिक तथा शैक्षिक दृष्टि से पिछड़े वर्ग में दत्तक के रूप में लिए जाने के कारण दत्तक मैसूर सरकार के जुलाई 1963 के आदेश से लाभान्वित होने का दावा कर सकता है । इस संबंध में उसके नैसर्गिक पिता की आय और व्यवसाय को संगत मनाना जाए या दत्तक लेने वाले पिता की आय और व्यवसाय को ।

उद्धरण

न्यायमूर्ति धनपोडर

याची ने अपने प्रवेश के लिए दिए गए आवेदन पत्र में यह कहा है कि उसकी उम्र 19 वर्ष की है और यह कि उसके पिता रमैया शेट्टी हैं जो व्यवसाय से कुली हैं जिनकी वार्षिक आय 450 रुपए है (उक्त रमैया शेट्टी ने आवेदन पत्र पर याची के पिता के रूप में हस्ताक्षर किए हैं । याची ने आवेदन पत्र के साथ 10-3-1969 के दत्तक विलेख की प्रति संलग्न की है जिसका पंजीकरण 14-4-1969 को हुआ था । इस दस्तावेज के अनुसार याची के स्वाभाविक पिता एम कृष्णा शेट्टी ने इस दस्तावेज की तारीख से लगभग 3 वर्ष पहले याची को दत्तक के रूप में रमैया शेट्टी को दिया था । इस दस्तावेज में यह भी कहा गया है कि कृष्णा शेट्टी और रमैया शेट्टी की पत्नियां आपस में बहनें हैं और रमैया शेट्टी ने जो निस्संतान है याची का पालन पोषण किया है ।

दूसरी ओर चयन समिति के अध्यक्ष ने जो प्रति शपथपत्र प्रस्तुत किया है उसमें उन्होंने प्रकथन किया है कि याची का पिता एम कृष्णा शेट्टी कनकपुर राष्ट्रीय विस्तार सेवा कार्यालय में पर्यवेक्षक है । प्रतिशपथपत्र में निम्नलिखित परिस्थितियों का उल्लेख किया गया है जो असामान्य बताई गई हैं तारीख 30-5-1966 के एस० एस०सी० प्रमाण पत्र में याची के पिता का नाम एम कृष्णा शेट्टी दिया गया है । याची के प्रवेश के लिए आवेदन पत्र में तथा आवेदन पत्र के साथ संलग्न शपथपत्र में याची का आद्याक्षर "के" दिया गया है जो उसके पिता कृष्णा शेट्टी के लिए प्रयुक्त होता है । याची के पिता ने जिसकी आर्थिक स्थिति अपेक्षतया अच्छी थी, बताया जाता है कि उसने अपने पुत्र को एक कुली को दत्तक के रूप में दे दिया जिसकी आमदनी बहुत थोड़ी हो यद्यपि दत्तक ग्रहण के बारे में कहा गया है कि वह 1966 में किया गया था जबकि दत्तक विलेख प्रवेश के लिए आवेदन पत्र देने के तीन मास पहले ही निष्पन्न हुआ है।

प्रतिशपथ पत्र में कहा गया है कि उपर्युक्त परिस्थितियों को देखते हुए चयन समिति को यह विश्वास हो गया कि दत्तक पत्र एक मात्र इस प्रयोजन के लिए तैयार कराया होगा ताकि सामाजिक और शैक्षिक दृष्टि से पिछड़े वर्गों के लिए आरक्षित स्थान के लिए दावा किया जा सके और इसीलिए याची का यह दावा कि वह इस प्रकार के पिछड़े वर्ग का है स्वीकार नहीं किया गया ।

संविधान के अनुच्छेद 15 (4) के अधीन सामाजिक और शैक्षिक दृष्टि से पिछड़े वर्गों के लिए आरक्षण का तर्काधार यह है कि इस प्रकार के पिछड़े वर्गों के व्यक्तियों का पर्यावरण सामाजिक तथा शैक्षिक उन्नति के लिए हितकर या सहायक नहीं होता बल्कि उससे सामाजिक तथा शैक्षिक पिछड़ेपन में वृद्धि ही होती है ।

याची जिसका नैसर्गिक पिता राष्ट्रीय विस्तार सेवा में पर्यवेक्षक है जब 16 वर्ष की आयु में गोद दिया गया था तो उस समय तक उसे पर्यावरण की दृष्टि से कोई हानि नहीं पहुंची थी । परन्तु उसके दत्तकग्राही पिता के घर का वातावरण, जहां वह तीन वर्ष तक पला-बढ़ा चाहे वह पिता सामाजिक तथा शैक्षिक दृष्टि से पिछड़े वर्ग का ही क्यों न हो ऐसा वही माना जा सकता जिसके कारण वह उन सुविधाओं से वंचित हो गया हो जो उसे वातावरण में प्राप्त थीं जहां उसका अपने नैसर्गिक माता-पिता के साथ सोलह वर्ष तक अर्थात् दत्तक के रूप में ग्रहण किए जाने के पहले लालन-पालन हुआ था । किसी ऐसे लड़के के संबंध में जिसे अपेक्षाकृत छोटी आयु में अर्थात् 4 या 5 वर्ष की आयु में ही दत्तक दे दिया गया हो, चाहे कुछ भी होता हो, याची के मामले में जिसके बारे में कहा गया है कि वह लगभग 16 वर्ष की आयु में दत्तक दिया गया है और जिसे इतने अर्से तक वे सभी सुख-सुविधाएं प्राप्त रहीं जो उसके नैसर्गिक पिता की आय तथा व्यवसाय के फलस्वरूप उसे उपलब्ध थीं यह मानना तर्कसंगत नहीं होगा कि उसके नैसर्गिक पिता की आय और व्यवसाय को आधार मानकर उसके दत्तकग्राही पिता की आय और व्यवसाय के अनुसार इसका निश्चय किया जाए कि वह सामाजिक और शैक्षिक दृष्टि से पिछड़े वर्ग का है । इस संबंध में यदि कोई अन्य मत अपनाया जाए तो इस प्रकार के पिछड़े वर्गों के लिए किए गए आरक्षण का प्रयोजन ही निष्फल हो जाएगा क्योंकि तकनीकी और व्यावसायिक कालेजों और संस्थाओं में प्रवेश के लिए आवेदन करने के समय से कुछ पहले दत्तक-ग्रहण की भुक्ति को स्वीकार करने से वे व्यक्ति उस लाभ तक संरक्षण से वंचित हो जाएंगे जो वास्तव में पर्यावरण संबंधी असुविधाओं के शिकार हैं ।

प्रस्तुत मामले की परिस्थितियों में चयन समिति का याची को सामाजिक तथा शैक्षिक दृष्टि से पिछड़े वर्गों से संबद्ध न मानने का निर्णय अविवेकपूर्ण नहीं कहा जा सकता । हमारे पास इस प्रकार के निर्णय में हस्तक्षेप करने के कोई समुचित कारण नहीं हैं ।

निर्णय

इस बात का निश्चय करने के लिए कि याची पिछड़े वर्ग की कोटि में आता है या नहीं उसके नैसर्गिक पिता की आय और व्यवसाय ही प्रासंगिक है । यदि इस नियम को लागू किया जाए तो याची पिछड़ा होने का दावा नहीं कर सकता ।

सुभाषिणी बनाम राज्य

ए० आई० आर० 1966 मैसूर 40

मैसूर सरकार के जुलाई 1963 के आदेश को जिसके अधीन मैडिकल कालेजों में प्रवेश के लिए आरक्षण किए गए थे, चुनौती दी गई है। आदेश पर आक्षेप करने का एक आधार यह था कि इसके अधीन उपलब्ध स्थानों में से 50 प्रतिशत से अधिक स्थान आरक्षित थे और इस प्रकार आरक्षण की मात्रा बालाजी सीमा से अधिक थी। वस्तुत. मैडिकल कालेजों में उपलब्ध स्थानों की संख्या 750 थी। इनमें से 3 स्थान भारतीय मूल के उन सांस्कृतिक विद्यार्थियों के लिए नियत थे जो विदेशों के अधिवासी है, दो स्थान कोलंबो योजना के विद्यार्थियों के लिए थे, 4 स्थान भारतीय मूल के उन विद्यार्थियों के लिए थे जो बर्मा से प्रवास कर के आए हैं, 4 स्थान एशिया और अफ्रीका के देशों से आने वाले विद्यार्थियों के लिए थे, 2 स्थान एल० ए० एम० एस० तथा एल० यू० एम० एस० के लिए थे, 5 स्थान गोवा के विद्यार्थियों के लिए थे, ढाई प्रतिशत स्थान रक्षा कार्मिकों के बालकों के लिए थे, एक प्रतिशत स्थान उन विद्यार्थियों के लिए थे जिन्होंने खेल-कूद में असाधारण कौशल और अभिरुचि का परिचय दिया है, 75 स्थान अन्य राज्यों के विद्यार्थियों के लिए केन्द्रीय कोटे के रूप में थे। यदि इनमें से कोई स्थान न भरा जाता तो रिक्त स्थान सामान्य पूल को स्थानांतरित कर दिए जाते शेष स्थानों में से 18 प्रतिशत स्थान अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों के लिए आरक्षित थे और 30 प्रतिशत सामाजिक तथा शैक्षिक दृष्टि से पिछड़े वर्गों के लिए आरक्षित थे।

वाद विषय

क्या आरक्षण संबंधी मात्रा पर लगाई गई बालाजी सीमा और पिछड़े वर्गों की कुछ सामान्य श्रेणियों के लिए किए गए आरक्षण पर भी लागू होती है।

निर्णय का सारांश

न्यायमूर्ति हेगड़े

यह तर्क दिया गया है कि सभी ग्रुपों के लिए किए गए कुल आरक्षण बालाजी सीमा के 50 प्रतिशत से अधिक थे। इस तर्क को अस्वीकार करते हुए मैसूर उच्च न्यायालय ने निर्णय दिया कि सामाजिक तथा शैक्षिक दृष्टि से पिछड़े वर्गों के लिए स्थानों के आरक्षण की वैधता का निर्णय अनुच्छेद 15(4) में निर्धारित शर्तों के अनुसार किया जाना चाहिए। सामाजिक तथा शैक्षिक दृष्टि से पिछड़े वर्गों, अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों से इतर वर्गों के लिए किए गए आरक्षणों की वैधता का निर्णय अनुच्छेद 14 की अपेक्षाओं के आधार पर किया जाना था। इस प्रकार के आरक्षणों को अनुच्छेद 15(4) के अधीन किए गए आरक्षणों के साथ मिला नहीं देना चाहिए। बालाजी के मामले में निर्धारित उच्चतर सीमा केवल उसी आरक्षण पर लागू होती है जो अनुच्छेद 15(4) के अधीन किया गया है। इसके अंतर्गत ऐसा कोई आरक्षण नहीं आता जो अन्यथा किया गया है।

एस ए पार्थ बनाम मैसूर राज्य

ए० आई० आर० 1961 मैसूर 220

तथ्य

मैसूर सरकार के आदेशों को चुनौती दी गई है जिसके अधीन डा० नगेन गोडा समिति की अंतरिम रिपोर्ट के आधार पर जो राज्य में सामाजिक तथा शैक्षिक दृष्टि से पिछड़े वर्गों की पहचान के लिए मानदण्ड निर्धारित करने के प्रयोजन से गठित की गई थी और जिसके अनुसार तकनीकी तथा व्यावसायिक संस्थाओं में प्रवेश के लिए आरक्षण किए गए थे। सरकार ने 22 प्रतिशत आरक्षण पिछड़े वर्गों के लिए किया, 15 प्रतिशत अनुसूचित जातियों के लिए और 3 प्रतिशत अनुसूचित जनजातियों के लिए किया। शेष 60 प्रतिशत स्थानों के लिए खुली प्रतियोगिता के आधार पर केवल योग्यता के अनुसार चुनाव किया जाना था। यदि अनुसूचित जातियों या अनुसूचित जनजातियों के उम्मीदवारों के लिए आरक्षित स्थान न भरे जा सकें तो उन स्थानों को अन्य पिछड़े वर्गों के उम्मीदवारों द्वारा भरा जाना था।

भाव विषय

(i) जब आरक्षण पिछड़े वर्गों, अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों के लिए किया जाता है तो क्या वे अपने पिछड़ेपन के आधार पर उन स्थानों से अधिक स्थानों की मांग कर सकते हैं जो आरक्षण में शामिल किए गए हैं।

(ii) क्या अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों के लिए रखे गए ऐसे स्थानों को जो भरे न गए हों अन्य पिछड़े वर्गों को अंतरित किया जाना संविधान के अनुच्छेद 15(1) और 29(2) के अधीन संवैधानिक है।

उपर्युक्त दो मुद्दों पर दिए गए निर्णय का सारांश

ए० एन० पै०, न्यायमूर्ति श्री० एम० आई० हुसैन जे जे

न्यायालय ने निर्णय दिया कि जब स्थानों के एक विशेष प्रतिशत का आरक्षण अनुसूचित जातियों या अनुसूचित जनजातियों या अन्य पिछड़े वर्गों के पक्ष में किया जाता है तो वे अपने पिछड़ेपन के आधार पर आरक्षित प्रतिशत में सम्मिलित स्थानों से अधिक स्थानों की मांग नहीं कर सकते। स्थानों के इस प्रकार के विभाजन पर दोनों श्रेणियों के नागरिकों के मूल अधिकारों की दृष्टि से आपत्ति की जा सकती है अर्थात् पिछड़े वर्गों तथा उन्नत वर्गों की ओर से। आरक्षण की पात्र श्रेणी के किसी सदस्य को सामान्य श्रेणी की पात्रता के लिए प्रतियोगिता से रोकने से उसके मूल अधिकार का उल्लंघन होता है। उसे आरक्षित श्रेणी और सामान्य श्रेणी दोनों के लिए अलग-अलग प्रतियोगिता में भाग लेने की अनुमति देने का परिणाम यह होगा कि सामान्य श्रेणी के सदस्य के मूल अधिकार का उल्लंघन उन सीमाओं से कहीं अधिक होगा जो संविधान के अधीन आरक्षित श्रेणी के संरक्षण के लिए निश्चित की गई है। इसलिए स्थानों के एक विशेष प्रतिशत के लिए आरक्षण को संवैधानिक दृष्टि से ठीक या उपयुक्त तभी माना जा सकता है जबकि वह अलग-अलग खानों में विभक्त न होकर सभी श्रेणियों के नागरिकों में होने वाली सामान्य प्रतियोगिता के दौरान निर्धारित न्यूनतम आश्वासन के रूप में हो।

अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों के स्थानों के न भरे जाने पर उनके अन्य पिछड़े वर्गों में अंतरित किए जाने के संबंध में न्यायालय का कहना है ये तीनों ग्रुप तीन विभिन्न श्रेणियां है जिनका वर्गीकरण विभिन्न चिन्हों के आधार पर किया गया है जबकि दूसरे पिछड़े वर्गों का वर्गीकरण उनके पिछड़ेपन के स्वरूप के संदर्भ में समयानुसार भिन्न हो सकता है। फलस्वरूप यह निर्णय दिया गया कि उन आदेशों के उपबंधों के जिनका प्रतिवाद किया गया है अधीन पिछड़े वर्गों के लिए आरक्षित 22 प्रतिशत से अधिक स्थानों के लिए खुली प्रतियोगिता से इतर किसी ढंग से किया गया आबंटन अन्य नागरिकों के मूल अधिकारों पर लगाया गया एक प्रकार का अन्यायपूर्ण प्रतिबंध है और इसीलिए संविधान के प्रतिकूल है।

सुभाष चंद्र बनाम उत्तर प्रदेश राज्य

ए० आई० आर० 1973 इलाहाबाद 295

तथ्य

उत्तर प्रदेश राज्य के अंतर्गत पांच मैडिकल कालेज इलाहाबाद, कानपुर, मेरठ, आगरा और झांसी में हैं। इनके अलावा लखनऊ विश्वविद्यालय का भी एक मेडिकल कालेज हैं जिसका नाम किंग जार्ज मेडिकल कालेज है। राज्य सरकार ने लखनऊ विश्वविद्यालय के परामर्श से इन छः मेडिकल कालेजों में प्रवेश के लिए विद्यार्थियों का चयन करने के प्रयोजन से एक मिली जुली प्रि-मेडिकल परीक्षा आयोजित करने का निर्णय किया। प्रि-मेडिकल परीक्षा कराने का कार्य मेरठ विश्वविद्यालय को सौंपा गया। इन छः मेडिकल कालेजों में कुल 758 स्थान थे जिनमें से 60 स्थानों का आवंटन भारत सरकार के विभिन्न नामितों के लिए किया गया था। शेष 732 स्थान मिली जुली प्रि-मेडिकल परीक्षा के द्वारा भरे जाने थे। राज्य सरकार द्वारा जारी किए गए विभिन्न आदेशों के अधीन कई स्थान विभिन्न वर्गों के लिए आरक्षित कर दिए गए थे। स्थानों का अंतिम आरक्षण इस प्रकार था :—

(1)	कन्या अभ्यर्थी	20 प्रतिशत
(2)	ग्रामीण क्षेत्रों के अभ्यर्थी	12 "
(3)	पर्वतीय क्षेत्रों के अभ्यर्थी	3 "
(4)	उत्तराखंड मण्डल के अभ्यर्थी	3 "
(5)	अनुसूचित जातियों के अभ्यर्थी	7 "
(6)	ग्रामीण क्षेत्रों की अनुसूचित जातियों के अभ्यर्थी	3 "
(7)	और अनुसूचित जनजातियों के अभ्यर्थी	1 "
	कुल	49 "

आरक्षण के परिणामस्वरूप 368 स्थान सामान्य अभ्यर्थियों के लिए रह गए। यह कुल स्थानों अर्थात् 732 का 51 प्रतिशत था जो मिली जुली प्रि-मेडिकल परीक्षा के माध्यम से भरे जाने थे शेष 368 (49 प्रतिशत) आरक्षित स्थान थे।

वाद विषय

(i) क्या ग्रामीण क्षेत्रों, पर्वतीय क्षेत्रों और उत्तराखंड मंडल के अभ्यार्थी सामाजिक तथा शैक्षिक दृष्टि से पिछड़े वर्गों से संबंध रखते हैं।

(ii) क्या 49 प्रतिशत आरक्षण कुछ अधिक नहीं है।

उद्धरण

न्यायमूर्ति सतीश चन्द्र

अनुच्छेद 15 के उप अनुच्छेद (3) और (4) में स्त्रियों, बालकों, सामाजिक तथा शैक्षिक दृष्टि से पिछड़े वर्ग के नागरिक अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों को विशिष्ट समूहों के रूप में वर्गीकृत किया गया है। यदि राज्य सरकार उन ग्रुपों या समूहों के संबंध में आरक्षण करती है तो यह नहीं कहा जा सकता कि यह वर्गीकरण युक्तियुक्त वैशिष्टय पर आधारित नहीं है। विभिन्न श्रेणियों के अभ्यर्थियों के पक्ष में किए गए आरक्षण का उद्देश्य है कि उनकी उन्नति के लिए विशेष सुविधाएं प्रदान करना। अनुच्छेद 15 के उप अनुच्छेद (3) और (4) में इसकी स्पष्ट रूप से अनुमति दी गई है अतः इस प्रकार के वैशिष्ट्य का न्यायसंगत रूप से उन उद्देश्यों से संबंध है जो आरक्षण के द्वारा प्राप्त किए जाने हैं अर्थात् अनुच्छेद 15(3) और (4) की अपेक्षाओं की पूर्ति। कन्याओं के लिए किया गया आरक्षण संविधान के अनुच्छेद 15(3) के अंतर्गत आता है जिसमें स्त्रियों के लिए विशेष व्यवस्था रखी गई है। ग्रामीण क्षेत्रों, पर्वतीय क्षेत्रों और उत्तराखंड मण्डल के उम्मीदवारों के लिए किए गए आरक्षण के बारे में यह कहा गया है कि यह इसलिए किया गया है कि इन क्षेत्रों के नागरिक सामाजिक तथा शैक्षिक दृष्टि से पिछड़े हुए वर्गों के नागरिक हैं। हमारा विचार है कि आयुर्विज्ञान की शिक्षा की दृष्टि से यह बात निर्विवाद भी है क्योंकि इस राज्य में केवल छः मेडिकल कालेज हैं जिनमें से प्रत्येक म्युनिसिपल नगर में स्थित है। ग्रामीण अथवा पर्वतीय क्षेत्रों में या उत्तराखंड मंडल में आयुर्विज्ञान की शिक्षा के लिए कोई सुविधा उपलब्ध नहीं है। इसलिए आयुर्विज्ञान की शिक्षा प्रदान करने की दृष्टि से राज्य सरकार ने इन क्षेत्रों को सामाजिक तथा शैक्षिक दृष्टि से पिछड़े वर्ग के नागरिकों के क्षेत्र मानकर ठीक ही किया है।

अपीलकर्ता की ओर से यह आग्रह किया गया है कि यदि केन्द्रीय सरकार के नामितों के लिए आरक्षित 26 स्थानों पर विचार न किए जाए तो आरक्षित स्थानों का प्रतिशत 49 रह जाता है। चूंकि 26 स्थानों का आरक्षण भी ऐसा आरक्षण है जिसके कारण सामान्य स्थानों के लिए अभ्यर्थियों का चयन उन स्थानों के लिए नहीं किया जा सकता इसलिए आरक्षित स्थानों में प्रतिशत का हिसाब लगाते समय इन 26 स्थानों पर भी विचार किया जाना चाहिए। यदि इन 26 स्थानों को शामिल कर लिया जाए तो आरक्षित स्थानों का प्रतिशत 62 हो जाएगा। जो उच्चतम न्यायालय के निर्णयानुसार तर्कसंगत नहीं है। अतः यह तर्क भ्रांतिजन्य ही कहा जा सकता है। जो सरकार मेडिकल कालेज चलाती है और जो उनका सारा खर्च उठाती है उसे यह अधिकार है कि वह उन स्रोतों का निर्धारण करे जहां से विद्यार्थियों का चयन होना है। उच्चतम न्यायालय ने चंचल बनाम मैसूर राज्य ए आई आर 1971 उच्चतम न्यायालय 1762 के पैरा 23 में यह मत व्यक्त किया है:

"इस प्रकार के स्रोतों का निर्धारण करने की व्यवस्था सच पूछा जाए तो आरक्षण नहीं है। यह उस अर्थ में आरक्षण नहीं है जो अनुच्छेद 15 के अंतर्गत दिया गया है जिसके विरुद्ध इस आधार पर आपत्ति की जाए कि यह अत्यधिक है। हो सकता राज्य सरकार भारत सरकार के नामितों के लिए स्थानों का आरक्षण करने के लिए बाध्य रही हो। ये 26 स्थान प्रि-मेडिकल परीक्षा के द्वारा नहीं भरे जाते थे। जबकि अन्य सभी श्रेणियों के आरक्षित स्थान मिली जुली प्रि-मेडिकल परीक्षा के द्वारा भरे जाने थे। इसलिए हमारी राय में स्थानों के आरक्षण की तर्कसंगतता का निर्धारण करते समय इन 26 स्थानों को शामिल नहीं किया जा सकता"।

निर्णय

(i) ग्रामीण क्षेत्रों, पर्वतीय क्षेत्रों और उत्तराखण्ड मण्डल के लोग सामाजिक तथा शैक्षिक दृष्टि से पिछड़े वर्गों के लोग हैं जो अनुच्छेद 15 (4) के अधीन आरक्षण के पात्र है।

(ii) आरक्षण की मात्रा अर्थात् 49 प्रतिशत अत्यधिक नहीं है।

तथ्य

उत्तर प्रदेश के मेडिकल कालेजों में स्थानों के आरक्षण को रजिस्ट्रार, मिलीजुली प्रि-मेडिकल परीक्षा, आगरा विश्वविद्यालय द्वारा जारी किए गए अनुदेशों के पैरा 10 के अधीन यह कहकर चुनौती दी गई है कि यह अनुच्छेद 15 (4) का अतिक्रमण है। स्थानों का वितरण निम्न प्रकार से किया गया था :

मेडिकल कालेज

	लख०	कान०	आगरा	इलाहा०	मेरठ	झांसी
(क) सामान्य (पुरुष) अभ्यर्थियों के लिए स्थान	103	104	63	55	55	26
(ख) कन्या अभ्यर्थियों के लिए	35	37	24	20	20	10
(ग) ग्रामीण क्षेत्रों के अभ्यर्थियों के लिए	28	28	19	15	15	6
(घ) पर्वतीय क्षेत्रों के (उत्तराखण्ड मंडल के अतिरिक्त) अभ्यर्थियों के लिए	5	6	4	3	3	2
(ङ) उत्तराखण्ड मण्डल के अभ्यर्थियों के लिए (इन स्थानों में से 50 प्रतिशत उत्तराखण्ड मण्डल की कन्या अभ्यर्थियों के लिए आरक्षित हैं)	5	6	4	3	3	2
(च) अनुसूचित जातियों के अभ्यर्थियों के लिए	5	6	4	3	3	2
कुल	181	187	118	99	99	50

वादविषय

(i) क्या ग्रामीण पर्वतीय और उत्तराखण्ड क्षेत्रों के लिए विभिन्नतया स्थानों का आरक्षण सांविधानिक दृष्टि से अनुमत्य है।

(ii) क्या शैक्षिक पिछड़ेपन का निश्चय करने के लिए अपनाए गए मानदण्ड सांविधानिक दृष्टि से वैध हैं।

उद्धरण

न्या मूर्ति डी० एस० माथुर

इन अनुदेशों की दो प्रमुख विशेषताएं हैं पहला तो यह कि सामान्य उम्मीदवारों, कन्या उम्मीदवारों और ग्रामीण क्षेत्रों के उम्मीदवारों के लिए प्रत्येक विषय में न्यूनतम अर्हक अंक 25 प्रतिशत तथा सभी विषयों में कुल अंक 33 प्रतिशत हैं जबकि अनुसूचित जाति के उम्मीदवारों के लिए यही न्यूनतम अंक 25 प्रतिशत और 30 प्रतिशत हैं। उत्तराखण्ड मंडल के उम्मीदवारों के मामले में इस प्रकार के न्यूनतम अर्हक अंक हैं ही नहीं जिसका परिणाम यह होता है कि यदि किसी अभ्यर्थी को किसी भी विषय में कोई भी अंक न मिलें तब भी उसका दाखिला हो जाएगा बशर्ते कि उत्तराखंड मंडल के उम्मीदवारों की कुल संख्या उपर्युक्त अनुदेशों में निर्धारित संख्या से अधिक न हो। अनुदेशों की एक और विशेषता यह है कि आरक्षण न केवल अनुसूचित जातियों के उम्मीदवारों के लिए किए जाते हैं बल्कि कन्या छात्राओं, ग्रामीण क्षेत्रों के उम्मीदवारों, उत्तराखंड मंडल से इतर पर्वतीय क्षेत्रों के उम्मीदवारों और उत्तराखंड मंडल के उम्मीदवारों के लिए भी किए जाते हैं। कन्या अभ्यर्थियों के मामले में यदि कोई कन्या अभ्यर्थी सामान्य अभ्यर्थियों में से चुन ली जाती है तो कन्या अभ्यर्थियों के लिए किए गए आरक्षण में उतनी ही कमी कर दी जाती है किन्तु अन्य लोगों के मामले में ऐसा नहीं होता। इसका परिणाम यह होना है कि यदि अर्ह उम्मीदवार खासी संख्या में उपलब्ध हों तो उन श्रेणियों के लिए अनुदेशों में निर्धारित उम्मीदवारों से अधिक उम्मीदवारों को (कन्या अभ्यर्थियों के अलावा) मेडिकल कालेजों में दाखिला मिल जाता है।

वर्तमान मामले में राज्य ने इस बात का औचित्य सिद्ध करने का प्रयास किया है कि वे विभिन्न ग्रुप या क्षेत्र जिनका उल्लेख अनुदेशों में किया गया है शैक्षिक दृष्टि से पिछड़े हुए क्यों माने गए। किन्तु इस संबंध में कोई संकेत नहीं दिया गया है कि उन सभी को सामाजिक दृष्टि से पिछड़ा हुआ क्यों और कैसे मान लिया जाए। शैक्षिक पिछड़ेपन की मुख्य कसौटी प्रि-मेडिकल परीक्षा में प्राप्त अंकों का प्रतिशत आरक्षित क्षेत्रों के उम्मीदवारों की संख्या जो प्रि-मेडिकल परीक्षा में बैठते हैं और साथ ही इन क्षेत्रों में उच्चतर माध्यमिक विद्यालयों की कमी होती है। हमारा कहना यह है कि उन क्षेत्रों के सभी निवासियों को शैक्षिक दृष्टि से पिछड़े वर्गों के रूप में वर्गीकृत करने के लिए यही पर्याप्त नहीं है। किसी

गांव के सभी निवासी शैक्षिक दृष्टि से पिछड़े हो सकते हैं लेकिन यही बात सभी ग्रामीण क्षेत्रों के बारे में नहीं कही जा सकती। इस प्रकार के दृष्टांत मिल जाएंगे जहां ग्रामीण क्षेत्र में साक्षरता बहुत अधिक है, बल्कि कहीं कहीं तो शतप्रतिशत ही है । इस प्रकार उत्तराखंड मंडल से इतर पर्वतीय क्षेत्रों में नागरिकों में ऐसे वर्ग भी है जिन्हें शैक्षिक दृष्टि से पिछड़ा हुआ नहीं कहा जा सकता । उत्तराखंड मंडल विभिन्न श्रेणी में आता है और आंकड़े उपलब्ध न होने की स्थिति में यह कहा जा सकता है कि उनका अधिकांश भाग सामाजिक तथा शैक्षिक दृष्टि से पिछड़ा हैं, किन्तु उत्तराखंड मंडल में भी कुछ ऐसे इलाके हैं जहां के सभी निवासी सामाजिक तथा शैक्षिक दृष्टि से पिछड़े नहीं कहे जा सकते।

दूसरे शब्दों में इसे यों कहा जा सकता है कि यदि उत्तराखंड मंडल को सामाजिक और शैक्षिक दृष्टि से पिछड़े वर्ग में रख देने का कोई औचित्य हो भी उत्तराखंड मंडल से इतर सभी ग्रामीण क्षेत्रों और पर्वतीय क्षेत्रों को उस श्रेणी में रखने का कोई औचित्य नहीं है।

निर्णय

(i) प्रि-मेडिकल परीक्षा में प्राप्त अंक, आरक्षित क्षेत्रों से प्रि-मेडिकल परीक्षा में बैठने वाले उम्मीदवारों की संख्या और उन क्षेत्रों में उच्चतर माध्यमिक विद्यालयों की कमी इस बात के लिए पर्याप्त कारण नहीं है कि उन क्षेत्रों के सभी निवासियों को शैक्षिक दृष्टि से पिछड़े वर्गों में वर्गीकृत कर दिया जाए।

(ii) उत्तराखंड मंडल के उम्मीदवारों के लिए किए गए आरक्षण को वैध माना गया परन्तु ग्रामीण तथा पर्वतीय क्षेत्रों के लिए उसे वैध नहीं माना गया।

भाग III

संविधान सभा के विचार-विमर्श और अनुच्छेद 16(4) के अधीन
न्यायालय के मामलों का सारांश

संविधान सभा विचार-विमर्श

(i) अनुच्छेद 16(4)

अनुच्छेद 16(4) जिसे संविधान में समाविष्ट किया गया है अनुच्छेद 10(3) के प्रारूप के अनुरूप है। इसमें कहा गया है:

"इस अनुच्छेद की कोई बात राज्य को नियुक्तियों या पदों के किसी भी पिछड़े वर्ग के नागरिकों के पक्ष में व्यवस्था करने से नहीं रोकेगी जिनका राज्य के मतानुसार राज्य के अधीन सेवाओं में पर्याप्त प्रतिनिधित्व नहीं होता है।"

यह वस्तुतः लोक नियोजन में समान अवसर के सिद्धान्त का अपवाद है जिसका संविधान के इस अनुच्छेद में आश्वासन दिया गया है।

के० एम० मुंशी तथा अम्बेडकर द्वारा प्रस्तुत अनुच्छेद 10 का प्रारूप जिसकी प्रायः यही शब्दावली है 30 नवम्बर, 1948 को सभा के समक्ष विचारार्थ आया और उसमें विभिन्न संशोधन सुझाए गए।

लोकनाथ मिश्र (ओड़िसा : सामान्य) ने प्रस्ताव रखा कि खंड 3 को बिल्कुल निकाल दिया जाए। उनकी राय में यह अनावश्यक था क्योंकि इससे "पिछड़ेपन तथा असमता को बल मिलता है।" इसके अतिरिक्त किसी भी नागरिक का यह मूल अधिकार नहीं है कि वह योग्यता के अतिरिक्त किसी अन्य कारण से राज्य में नियोजन प्राप्त करने का दावा करे। खंड 3 के निकालने के लिए इसी प्रकार का तर्क दामोदर स्वरूप सेठ (संयुक्त प्रांत : सामान्य) ने इस आधार पर प्रस्तुत किया था कि "यद्यपि यह खंड प्रकटतः न्यायोचित और युक्तिसंगत प्रतीत होता है परन्तु सिद्धान्त की दृष्टि से यह गलत है"।[2] उन्होंने बताया कि "पिछड़ा" शब्द की परिभाषा करना सरल नहीं है और न ही किसी संप्रदाय या वर्ग के पिछड़ेपन का निश्चय करने के लिए कोई उपयुक्त मानदंड ढूंढना ही असम्भव है।[2a] उन्होंने दलील दी कि यदि इस खंड को स्वीकार कर लिया गया तो इससे जातिवाद और पक्षपात को बढ़ावा मिलेगा जिसके लिए एक धर्म-निरपेक्ष राज्य में कोई स्थान नहीं होना चाहिए। वैसे पिछड़े वर्गों को उनकी शैक्षिक योग्यताओं में सुधार लाने के लिए और उनके रहन-सहन का सामान्य स्तर उन्नत करने के लिए आवश्यक रिआयतें दी जा सकती हैं लेकिन जहां तक पदों पर नियुक्ति का प्रश्न है वह तो केवल योग्यता और अर्हता के आधार पर ही की जानी चाहिए और पिछड़ेपन[3] के आधार पर किसी भी वर्ग को रिआयतें नहीं दी जानी चाहिए।

कुछ और संशोधनों में यह सुझाव दिया गया कि खंड 3 को बनाए रखा जाए अलबत्ता इसमें कुछ संशोधन कर दिए जाएं।

अतः हृदय नाथ कुंजरु ने यह संशोधन सुझाया कि खंड 3 में "आरक्षण के लिए किसी भी व्यवस्था करने से राज्य को नहीं रोकेगा" के स्थान पर ये शब्द रख दिए जाएं "इस संविधान के प्रारंभ होने के बाद दस वर्ष की अवधि में राज्य को किसी प्रकार का आरक्षण करने से नहीं रोकेगा।"

संशोधन का रूप निम्नलिखित होगा:

"इस अनुच्छेद की कोई भी बात इस संविधान के शुरू होने के बाद दस वर्ष की अवधि में राज्य को पिछड़े वर्ग के नागरिकों के पक्ष में जो .... हैं पदों पर नियुक्ति के लिए किसी प्रकार के आरक्षण करने से नहीं रोकेगी।[5]

उनके मतानुसार यह वांछनीय नहीं था कि किन्हीं संप्रदायों को संरक्षण प्रदान की दृष्टि से दी गई विशेष सुविधाएं अनिश्चित काल तक नहीं बनी रहनी चाहिए। इसके अलावा "पिछड़े" शब्द की परिभाषा संविधान में कहीं भी नहीं दी गई है। यह बात न्यायालयों के निर्णय पर छोड़ दी गई थी कि कोई वर्ग पिछड़ा वर्ग है या नहीं। उनका विचार था कि "पिछड़ा" शब्द की परिभाषा सदन में की जानी चाहिए ताकि भविष्य में इसके अर्थ के बारे में कोई विवाद न उठ सके।

अहीज अहमद खां (संयुक्त प्रांत : मुस्लिम) ने यह संशोधन सुझाया कि खंड 3 में "पिछड़ा" शब्द निकाल दिया जाए। उन्होंने प्रश्न किया कि जब अल्पसंख्यक रिपोर्ट सदन के समक्ष प्रस्तुत की गई थी तो "पिछड़ा" शब्द उसमें मौजूद नहीं था और "अंत में यह निर्णय किया गया था[4a] कि उसे शामिल करना अनावश्यक है। इसके अलावा यदि यह संशोधन स्वीकृत नहीं किया गया तो संविधान के प्रारूप के अनुच्छेद 296 और 299 अनुच्छेद 10[8] के प्रतिकूल हो जाएंगे। अनुच्छेद 296 और 299 के प्रारूप संविधान के अनुच्छेद 335 और 338 के अनुच्छेद 335 के अंतर्गत "अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों के सेवाओं और पदों पर नियुक्ति के लिए दावों का संरक्षण किया गया है। अनुच्छेद 338 में "अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जन जातियों के लिए राष्ट्रपति द्वारा नियुक्त एक विशेष अधिकारी की" व्यवस्था है। उस अधिकारी के कर्त्तव्यों में यह कार्य भी शामिल होगा "अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों के लिए निर्धारित संरक्षण से संबंधित सभी मामलों की जांच करना" और वह उस पर एक रिपोर्ट राष्ट्रपति को प्रस्तुत करेगा।

इस प्रकार यह जाहिर हो जाता है कि इन अनुच्छेदों में "पिछड़े वर्गों" का कोई उल्लेख नहीं किया गया है जैसा कि अनुच्छेद 10(3) के प्रारूप में जो कि संविधान के अनुच्छेद 16(4) के अनुरूप है, में किया गया है इस सीमा तक तो इन अनुच्छेदों में परस्पर विरोध है लेकिन फिर भी यह तर्क दिया जा सकता है कि यह परस्पर व्यापन का मामला है क्योंकि अनुच्छेद 16(4) में उल्लिखित "पिछड़े वर्ग" के अंतर्गत "अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों" के सदस्यों का आरक्षण स्पष्ट रूप से शामिल किया गया है।

जब खण्ड 3 पर सामान्य चर्चा शुरू हुई तो "पिछड़े" शब्द को लेकर मतभेद उठ खड़ा हुआ क्योंकि इस शब्द के विस्तार की परिभाषा ठीक प्रकार से नहीं की गई थी। अतः अरि बहादुर गुरंग (पश्चिम बंगाल : सामान्य) प्रश्न उठाया कि क्या "पिछड़े वर्ग" शब्द में इन तीनों श्रेणियों के लोग शामिल हैं जैसे अनुसूचित जाति अनुसूचित जनजाति और एक विशिष्ट वर्ग जिसे अभी तक "पिछड़े" शब्द के अंतर्गत शामिल नहीं किया गया था यद्यपि वह शैक्षिक तथा आर्थिक दृष्टि से पिछड़ा वर्ग है।"[9] उन्होंने आग्रह किया कि एक विशिष्ट वर्ग की श्रेणी में गुरखों को "जो भारत के अधिशासी हैं वही विशेष सुविधाएं मिलनी चाहिए जो भारत के अन्य पिछड़े संप्रदायों को उपलब्ध हैं।"[10]

जो सदस्य पिछड़े वर्गों से संबंध रखते थे और जिन्हें अपने विचार व्यक्त करने का सुअवसर प्रदान किया गया था सामान्य रूप से खण्ड 3 की व्यवस्था को बनाए रखने के पक्ष में थे। इनमें से अधिकांश ने "पिछड़ा" शब्द के विस्तार के संबंध में अपने संदेह प्रकट किए। उन्होंने एक ऐसे वर्गीकरण के लिए आग्रह किया जिसके अनुसार यह शब्द केवल किसी वर्ग विशेष के लिए लागू किया जा सके। वास्तव में आर० एम० नलवाड़े (बंबई : सामान्य) ने सुझाव दिया कि "पिछड़ा वर्ग" के स्थान पर "अनुसूचित जातियां" शब्द रख दिए जाएं। उनका तर्क यह था कि "पिछड़े वर्ग" ऐसे अस्पष्ट शब्द हैं कि उनका इस प्रकार निर्वचन किया जा सकता है कि इसके अंतर्गत बहुत से वर्ग शामिल हो जाएंगे जो शैक्षिक दृष्टि से काफी उन्नत हैं। धर्म प्रकाश (संयुक्त प्रांत : सामान्य) ने अनुरोध किया "कि "पिछड़े वर्ग" के स्थान पर "दलित वर्ग" या "अनुसूचित वर्ग" रख दिए जाएं क्योंकि इन दोनों के निश्चित अर्थ हैं।" उन्होंने कहा कि "पिछड़े वर्ग" की अभी तक परिभाषा नहीं हो पाई और "न ही निकट भविष्य में इसकी परिभाषा होने की कोई आशा है।"[13]

अतः उन्होंने इस संशोधन का समर्थन किया कि "पिछड़ा वर्ग"' की जगह "अनुसूचित जाति" शब्द रख दिए जाएं। चन्द्रिकाराम (बिहार : सामान्य) इस प्रश्न में थे "कि "पिछड़ा वर्ग" शब्द के बाद "अनुसूचित जाति" शब्द जोड़ दिया जाए।" उन्होंने यह तर्क दिया, चूंकि हरिजनों के आरक्षण की व्यवस्था सेवाओं में है, इसलिए उसी प्रकार की व्यवस्था पिछड़े वर्गों के लिए भी होनी चाहिए। सेठ दामोदर स्वरूप और लोकनाथ मिश्र के 'पिछड़ा वर्ग' शब्द निकाल देने के संशोधन से असहमति व्यक्त करते हुए उन्होंने कहा कि जिन लोगों की राय में देश में पिछड़ा वर्ग नहीं है उन्होंने हमारे देश के ऐतिहासिक तथ्यों, आधुनिक प्रगतिशील समाज और आजकल के हालात से आंखें मूंद ली हैं।[14]

पी० कक्कन (मद्रास : सामान्य) ने भी अनुच्छेद का समर्थन किया। उन्होंने कहा कि सरकार को कुछ वर्षों तक नियुक्तियों में हरिजनों के आरक्षण के लिए विशेष कदम उठाने चाहिए।[15] मुनि स्वामी पिल्लै (मद्रास : सामान्य) ने खण्ड VI का समर्थन करते हुए इस ओर संकेत किया कि 'पिछड़े' शब्द की उचित परिभाषा नहीं दी गई है। उन्होंने यह आशंका व्यक्त की कि पहले प्रशासन ने जिन समुदायों को निकाल दिया था, विशेष रूप से अनुसूचित जातियों को—क्या उनके लिए व्यवस्था की गई है। उन्होंने मांग की कि सदन को स्पष्ट आश्वासन देना चाहिए कि उनके हितों की रक्षा की जाएगी। सदन के कुछ सदस्यों द्वारा दिए गए इस तर्क को कि आरक्षण की आवश्यकता नहीं है उन्होंने 'दूषित धारणा' माना।[16] यह इसलिए कहा क्योंकि जब तक समाज में साम्प्रदायिकता का नासूर बना रहेगा तब तक आरक्षण की आवश्यकता रहेगी। किन्तु वे अनुसूचित जाति के केस की वकालत भिन्न कारणों से कर रहे थे अर्थात् उन्हें पीछे छोड़ दिया गया था और वर्षों[17] से उसमें सामाजिक, आर्थिक और शैक्षिक प्रगति का अभाव रहा है।

टी० चनय्या (मैसूर) भी 'पिछड़े' शब्द को बनाए रखने के पक्ष में थे। उन्होंने कहा कि संविधान के मसौदे में 'पिछड़े' शब्द की परिभाषा न होते हुए भी उत्तर भारत में सभी जानते हैं कि हिन्दुओं में कृषि और शिल्प में लगे लोग पिछड़े वर्ग में आते हैं। दक्षिण भारत में 'पिछड़े वर्ग' की स्थिति बिल्कुल स्पष्ट है। वे या तो सामाजिक दृष्टि से या शिक्षा की दृष्टि से पिछड़े हैं, किन्तु वे पिछड़े नहीं है जो आर्थिक दृष्टि से सम्पन्न है। मैसूर में 'बी' श्रेणी की रिक्तियों के लिए केवल 'पिछड़े वर्ग' के लोगों के आवेदनों पर विचार किया जाता है जबकि 'ए' श्रेणी की रिक्तियों के लिए ब्राह्मण और गैर ब्राह्मण दोनों पर विचार किया जाता है। वे अम्बेदकर की इस बात से सहमत थे कि 'पिछड़ा' शब्द इस कारण बनाए रखना चाहिए कि यदि अनुच्छेद 10[18] के खण्ड (3) में 'पिछड़ा' शब्द न रखा गया तो इस अनुच्छेद के खण्ड (1) और (2) अकृत और शून्य माने जाएंगे। उन्होंने यह भी कहा कि इस वर्ग को जितने समय तक सुविधाओं से वंचित रखा गया है उसे बराबर करने के लिए कुंजरू द्वारा सुझाई गई 10 वर्ष की आरक्षण अवधि को बढ़ा कर 150 वर्ष कर देना चाहिए।

शान्तनु कुमार दास (उड़ीसा : सामान्य) ने भी अनुच्छेद का समर्थन किया। उन्होंने यह राय दी कि 'विदेशी शासन के दुष्प्रभाव के कारण' संविधान के आरक्षण के उपबन्धों को हटाना संभव नहीं है। जब तक यह स्थिति रहेगी, तब तक हरिजनों और अनुसूचित जातियों के लिए, जिन्हें पिछड़े वर्गों में शामिल किया गया है, आरक्षण की मांग बनी रहेगी।

एच० जे० खांडेकर (सी पी और बरार : सामान्य) ने खण्ड 3 में 'पिछड़ा' शब्द का समर्थन किया उन्होंने यह तर्क प्रस्तुत किया कि इस शब्द के बिना "अनुसूचित जातियों का वह प्रयोजन सिद्ध न होगा जिसकी अपेक्षा की गई है"[19]। उन्होंने इस बात पर जोर दिया कि उनकी स्थिति शोचनीय हैं क्योंकि इनके उम्मीदवार यदि कुछ सरकारी पदों के लिए आवेदन करते भी हैं तो उनका चयन नहीं होता क्योंकि चयन करने वाले लोग दूसरे समुदायों या वर्गों के होते हैं। उन्होंने इस ओर भी ध्यान आकृष्ट किया कि 'पिछड़ा' शब्द अस्पष्ट है और इसकी कहीं भी परिभाषा नहीं दी गई है। उन्होंने चन्द्रिका राम की इस बात से असहमति प्रकट की कि इस प्रकार की परिभाषा जनगणना रिपोर्ट में दी गई है। वहां जो परिभाषा दी गई वह अनुसूचित जाति की है। इसलिए उन्होंने मुनि-स्वामी पिल्ले के इस संशोधन का समर्थन किया कि 'पिछड़े वर्ग' के बाद 'अनुसूचित जाति' शब्द जोड़ा जाना चाहिए।

इसके विपरीत कुछ सदस्यों ने 'पिछड़ा' शब्द निकाल देने का समर्थन किया क्योंकि उनके विचार में इस शब्द का राज्य सरकार द्वारा गलत अर्थ लगाए जाने की आशंका है जिसके कारण अल्पसंख्यक समुदाय के सरकारी सेवा में उचित प्रतिनिधित्व प्राप्त करने में बाधा आ सकती है।

इस प्रकार मोहम्मद इस्माइल साहब (मद्रास : मुस्लिम) ने कहा कि यद्यपि 'पिछड़े' शब्द को संविधान में परिभाषा नहीं दी गई है किन्तु मद्रास में इसका प्रयोग एक निश्चित एवं तकनीकी अर्थ[20] में किया जाता है। सरकार ने इस प्रकार के 150 से अधिक वर्गों की सूची तैयार की है—जो सभी बहुसंख्यक हिन्दू समुदाय के हैं—और यदि अनुसूचित जातियों को उसमें शामिल कर लिया जाता तो इनकी संख्या उस प्रान्त[21] की संपूर्ण जन-संख्या के आधे से अधिक हो जाती। यदि इसका अर्थ यही है तो उन्हें भय है कि अल्पसंख्यक समुदाय अर्थात् मुसलमान और ईसाइयों में से, इस खण्ड[22] के लेखाधिकार से पिछड़े वर्गों को निकाल दिया जाएगा।

अनुच्छेद के प्रारूप के विरुद्ध जो आरोप लगाए गए थे उनका उत्तर के० एम० मुंशी ने दिया। अनुसूचित जाति के सदस्यों के भय के संबंध में अपने विचार इस प्रकार व्यक्त किए।

मैं जीवन में इस बात की कल्पना भी नहीं कर सकता कि डेढ़ वर्ष के संविधान सभा के अनुभव के पश्चात् अनुसूचित जाति के किसी माननीय सदस्य को यह सोचना चाहिए कि उन्हें जब तक वे पिछड़े हैं, पिछले वर्गों में क्यों न शामिल किया जाएगा। देखिए, इस सदन में पिछड़े डेढ़ वर्ष से क्या हो रहा है? अनुच्छेद 11 को ही लीजिए। एक भी गैर अनुसूचित जाति का सदस्य नहीं है जिसने कभी इसके विषय में भ्रांति की हो।

इसके विपरीत, हम सब सदस्य जो अनुसूचित जातियों के नहीं हैं, समाज से इस कलंक को दूर करने के लिए, इस मामले में सदा आगे रहे हैं इस खण्ड के द्वारा हम दो बातों का आश्वासन चाहते हैं । मौलिक अधिकारों के प्रथम खण्ड में हम सरकारी सेवा में उच्चतम दक्षता प्राप्त करना चाहते हैं————साथ ही साथ देश के अनेक प्रान्तों की वर्तमान दशा को ध्यान में रखते हुए हम यह भी चाहते हैं कि पिछड़े वर्ग, वे वर्ग जो वास्तव में पिछड़े हैं, उन्हें सरकारी सेवा में अवसर प्रदान किया जाए । 'पिछड़े' शब्द का अर्थ पिछड़े वर्ग के लोगों से है वे चाहे छूत हों या अछूत, चाहे इस समुदाय के हों या दूसरे, इसका तात्पर्य उस वर्ग के लोगों से है जो इतना पिछड़े हैं कि सेवाओं में उन्हें विशेष संरक्षण देने की आवश्यकता है————।

श्री. टी० कृष्माचारी ने, जो के० एम० मुंशी के बाद बोले, अनुच्छेद 10 के संबंध में कहा कि यह 'शिथिल प्रारूपण"[24] का परिणाम है, जिसे मौलिक अधिकारों के अध्याय में उनके विचार से कोई स्थान न दिया जाना चाहिए । अनुच्छेद 3 का उल्लेख करते हुए अन्होंने पूछा कि पिछड़े वर्ग के नागरिक कौन हैं? यह पिछड़े जाति के लिए लागू नहीं होता । यह किसी अनुसूचित जाति या किसी विशिष्ट[25] समुदाय पर लागू नहीं होता । इसके अतिरिक्त 'पिछड़े' वर्ग का निर्धारण करने की कसौटी क्या होगी? उन्होंने शिक्षा को इस का आकार मानकर यह प्रश्न किया कि 'यदि शिक्षा को वर्गीकरण का आधार मान लिया जाए तो 80 प्रतिशत लोग पिछड़े वर्ग के अन्तर्गत आ जाएंगे । इसका अन्तिम निर्णय कौन करेगा ? सम्भवतः उच्चतम न्यायालय[26] । वह संविधान निर्माताओं के विचार का पता लगाएगा कि उनकी दृष्टि में पिछड़े वर्गों में कौन लोग आते हैं । क्या वह वर्ग आर्थिक स्थिति के आधार पर या शिक्षा के आधार पर अथवा जन्म के आधार पर माना जाएगा । किन्तु उन्हें यह विश्वास था कि इसकी व्याख्या अन्ततः उच्चतम न्यायालय ही करेगा जो जाति, समुदाय, धर्म, साक्षरता या आर्थिक स्थिति पर निर्भर होगी । उनके विचार में प्रारूपण समिति ने ऐसा करके वकीलों[28] के लिए रोजगार का अत्यन्त लाभदायक मार्ग प्रशस्त कर दिया है ।

बी० आर० अम्बेदकर के अनुच्छेद 10(3) के प्रारूप की आलोचना का उत्तर देते हुए 'पिछड़ा' शब्द अनुच्छेद में सम्मिलित किए जाने को उचित बतलाया क्योंकि प्रारूपण समिति को विपरीत दृष्टिकोणों में समन्वय स्थापित करने के लिए कोई सूत्र (फारमूला) प्रस्तुत करना था[27] जैसे कि किसी वर्ग या समुदाय को किसी प्रकार का आरक्षण दिए बिना सभी को समान अवसर दिया जाना चाहिए; इसके विपरीत, दूसरा दृष्टिकोण यह था, कि सिद्धान्त रूप में समान अवसर का अनुमोदन करते हुए कुछ ऐसे समुदायों के सेवा में प्रवेश की व्यवस्था होनी चाहिए, जो अब तक प्रशासन[28] से बाहर रहे हैं । इसे ध्यान में रखते हुए यह स्पष्ट है कि अनुच्छेद 10[29] के उप खण्ड (3) में सम्मिलित सूत्र (फार्मूले) से बेहतर कोई दूसरा तरीका नहीं हो सकता ।

यदि 'पिछड़ा' जैसा विशेषक वाक्यांश इसके साथ न जोड़ा गया जो आरक्षण के पक्ष में बनाए गए अपवाद इस नियम को ही पूरी तरह समाप्त कर देंगे । मैं सोचता हूं यही कारण है कि प्रारूपण समिति ने 'पिछड़ा' शब्द जोड़ने की जिम्मेदारी अपने कन्धे पर ली । मैं यह मानता हूं कि 'पिछड़ा' शब्द को मौलिक अधिकार में प्रारम्भ में उस रूप में नहीं लिया गया जिस रूप में इस सभा ने उसे पारित किया था ।

अन्त में अन्होंने उन दो प्रश्नों का उल्लेख किया जो संविधान सभा में बहस के समय उठाए गए थे, जैसे 'पिछड़े समुदाय' की परिभाषा और प्रारूप अनुच्छेद के खण्ड 3 का औचित्य 'पिछड़े समुदाय' के संबंध में उन्होंने कहा कि जो प्रारूप को भाषा पढ़ेगा उसे पता चल जाएगा कि मैंने इसका निर्णय प्रत्येक स्थानीय सरकार पर छोड़ दिया है । पिछड़ा समुदाय वह समुदाय है जो सरकार[30] की राय में पिछड़ा है । प्रारूप अनुच्छेद के खण्ड 3 के संबंध में उन्होंने यह विचार व्यक्त किया कि इसका कोई निश्चित उत्तर देना कठिन है । किन्तु व्यक्तिगत रूप में मैं सोचता हूं कि यह एक स्याट्य मामला[31] है ।

अब इस पर मतदान हुआ तो संविधान सभा ने अनुच्छेद संबंधी संशोधनों को निरस्त कर दिया और इसे बिना किसी संशोधन या परिवर्तन के स्वीकार कर लिया गया । किन्तु प्रारूपण समिति ने बाद में इसे 16(4) की संख्या दे दी ।

निष्कर्ष

प्रारूपण समिति द्वारा संविधान में यह खण्ड सम्मिलित किए जाने के उद्देश्य को के० एम० मुंशी ने विस्तार से बताया--अर्थात् इसका उद्देश्य सेवा में 'पिछड़े वर्गों' को प्रतिनिधित्व प्राप्त कराने में संरक्षण देना--यह संरक्षण की आवश्यकता इस समय देश के विभिन्न भागों में विद्यमान स्थितियों के कारण उत्पन्न हुई । चूंकि 'पिछड़े' शब्द को संविधान में कहीं भी परिभाषा नहीं दी गई है इसलिए इस पर विवाद होना स्वाभाविक है । किन्तु पारूपण समिति के सभापति, अम्बेदकर ने इसके सम्मिलित किए जाने को पूर्णतः उचित बताया । उन्होंने ठीक ही कहा कि यदि 'इस प्रकार का विशेषक' वाक्यांश न प्रयोग किया जाएगा तो आरक्षण के पक्ष में बनाए गए अपवाद अन्ततः इस नियम का उद्देश्य पूरी तरह समाप्त कर देंगे ।

संविधान सभा की बहस से पता चलता है कि प्रारूप बनाने वालों को स्वयं भी इस बात का ठीक-ठीक पता नहीं था कि 'पिछड़ेपन' को निर्धारित करने के लिए क्या कसौटी रखी जाए । इस मामले में वे लचीला रुख अपनाना चाहते थे । उनके विचार से प्रत्येक सरकार 'पिछड़ेपन' का निर्धारण करेगी और अन्ततः न्यायालय इसकी समीक्षा करेगा । एक दो सदस्यों ने यह विचार भी व्यक्त किया कि साक्षरता और व्यवसाय आदि को ही पिछड़ेपन का कारण माना जाए । यह भी कहा गया कि 'पिछड़े वर्गों' के अन्तर्गत अनुसूचित जातियां भी आ जाती हैं ।

पाद टिप्पणियां

1. सी० ए० डी० खण्ड VII पृष्ठ 673

1क. नजम्मुल हुसैन ने इसे निकाल देने का सुझाव दिया था । संविधान प्रारूप, IV चयन किए गए प्रलेख 31-2 में टीका टिप्पणी और सुझाव देखें ।

2. सी० ए० डी० खण्ड VII पृष्ठ 679

2क. ——वही——

3. ——वही——

4. ——वही——

5. सी० ए० डी० खण्ड VII पृष्ठ 679

6. टी० ए० रामलिंगम चेटियार ने भी ऐसा ही सुझाव दिया था । देखें 'संविधान प्रारूप' IV । चयन किए गए प्रलेख 31-2, टीका टिप्पणी देखें ।

7. ऊपर 681 पर टिप्पणी

8. अन्य सुझाव थे : बी० आर० दिवाकर और एस० वी० कृष्णामूर्ति ने खण्ड 3 में 'पिछड़े शब्द के पहले' आर्थिक दृष्टि से या सांस्कृतिक दृष्टि से शब्द जोड़ने का सुझाव दिया और उपेन्द्र० नाथ बर्मन ने 'पिछड़े' शब्द के पहले 'अनुसूचित जाति' शब्द सम्मिलित करने के लिए कहा देखिए ऊपर का नोट 1क ।

9 ऊपर का नोट 1 पृष्ठ 685
10. —वही—
11. —वही—पृष्ठ 686
12. —वही—पृष्ठ 687
13. —वही—पृष्ठ 686
14. —वही—पृष्ठ 688
15. —वही—
16. —वही—पृष्ठ 689
17. —वही—
18. —वही—पृष्ठ 690
19. —वही—पृष्ठ 691
20. —वही—पृष्ठ 692
21. —वही—
22. —वही—पृष्ठ 693
23. —वही—पृष्ठ 696-7
24. —वही— 697
24a. ऊपर का नोट 1 पृष्ठ 699
25. —वही—
26. —वही—
27. —वही—पृष्ठ 701
28. —वही—
29. —वही—
30. —वही—पृष्ठ 702
31. —वही—

II. अनुच्छेद 46

संविधान का अनुच्छेद 46 जो संविधान के प्रारूप के पैरा 37 के तदनुरूप हैं, उसमें यह कहा गया है:

"राज्य सरकार कमजोर वर्गों के लोगों और विशेषरूप से अनुसूचित जातियों तथा अनुसूचित जन जातियों के शैक्षिक एवं आर्थिक हितों का विशेष रूप से ध्यान रखेगी और सामाजिक अन्याय तथा सभी प्रकार के शोषण से उनकी रक्षा करेगी।"

संविधान सभा में इस अनुच्छेद पर 23 नवम्बर, 1948 को विचार किया गया। इसके बारे में दो संशोधन प्रस्तुत किए गए।

हुकुम सिंह (पूर्वी पंजाब, सिख) ने सुझाव दिया कि 'अनुसूचित जाति शब्दों के लिए 'प्रत्येक वर्ग और पार्टी के पिछड़े समुदाय शब्द रखा जाना चाहिए।[1] उन्होंने यह तर्क दिया कि 'कमजोर वर्ग' की कहीं भी परिभाषा नहीं दी गई है। इसलिए इस प्रकार की आशंका हो सकती है कि बाद वाले भाग पर अधिक ध्यान दिया जाए जो कि अनुसूचित जाति से संबंधित हैं, परिणामस्वरूप कमजोर वर्गों की उपेक्षा कर दी जाए और उसका कुछ अर्थ ही न रह जाए—। उन्होंने कहा कि संशोधन प्रस्तुत करने का एकमात्र उद्देश्य किसी भी प्रकार के भेदभाव को दूर करना था। उन्होंने इस संदर्भ में कहा कि 'अनुसूचित जाति' का आशय जनता की दृष्टि में उन्हीं जातियों के सिखधर्म मानने वाले सदस्यों को निकालना था। उनके विचार में चूंकि अनुच्छेद से 'शैक्षिक और आर्थिक' हितों की बात कही गई है इसलिए यह स्पष्ट कर दिया जाना चाहिए कि यह सभी पिछड़े वर्गों के लिए होना चाहिए, यह किसी विशेष धर्म या विश्वास के प्रति श्रद्धा रखने वाले लोगों के लिए न होना चाहिए[2]।

दूसरा संशोधन ए० वी० ठक्कर (यूनाइटेड स्टेट आफ काठियावाड़ सौराष्ट्र) ने पेश किया, जिसमें यह सुझाव दिया कि हिन्दुओं और मुसलमानों में पिछड़ा वर्ग शामिल किया जाए[3]।"

इस संशोधन पर चर्चा के समय प्रारूपण समिति के सभापति बी० आर० अम्बेदकर ने यह विचार व्यक्त किया कि उपर्युक्त दोनों संशोधन 'अनुसूची के लिए अधिक उपयुक्त होंगे'[4] और उस पर चर्चा के समय इन पर विचार किया जाएगा। इस प्रकार उन्होंने उस पर विचार स्थगित कराने का सुझाव दिया।

परिणामतः ए० वी० ठक्कर ने कहा कि वे इस स्तर पर अपना संशोधन न रखेंगे जबकि हुकुमसिंह ने अपना संशोधन जो स्वीकार कर लिया गया था, वापस ले लिया।

जब यह प्रस्ताव कि 'अनुच्छेद 37 संविधान' का एक अंश है' सदन में मतदान के लिए पेश किया गया, तो पास हो गया और बाद में अनुच्छेद 37 को अनुच्छेद 46 की संज्ञा देकर उसे संविधान में जोड़ दिया गया।

पाद टिप्पणियां

1. VII सी० ए० डी० 582
2. —वही—पृष्ठ 583
3. —वही—
4. —वही—
5. —वही—
6. —वही—
7. —वही—

III. अनुच्छेद 340

संविधान का अनुच्छेद 340 जो संविधान के प्रारूप के अनुच्छेद 301 के तदनुरूप है, उसमें यह व्यवस्था है:

(1) सम्पूर्ण भारत के सामाजिक और शैक्षिक दृष्टि से पिछड़े हुए वर्गों की परिस्थितियों और जिन कठिनाइयों में वे काम करते हैं, उनका पता लगाने के लिए राष्ट्रपति अपने आदेश से ऐसे व्यक्तियों का जिन्हें वह उचित समझे, एक आयोग गठित कर सकता है। यह आयोग इनकी कठिनाइयों दूर करने और दशा सुधारने के संबंध में अपनी सिफारिश देगा जिसे केन्द्र या राज्य सरकार अपनाएंगी। यह आयोग इस प्रयोजन के लिए अनुदान की सिफारिश के साथ ऐसी शर्तों भी सुझाएगा जिनके अधीन अनुदान दिया जाएगा। आयोग गठित करने के आदेश में आयोग द्वारा अपनाई जाने वाली कार्य-विधि भी दी रहेगी।

(2) इस प्रकार गठित किया गया आयोग उन सभी मामलों की जांच करेगा जो उसे सौंपे जाएंगे और जो तथ्य उसके सामने आएंगे उनकी रिपोर्ट उपयुक्त सिफारिशों के साथ राष्ट्रपति को प्रस्तुत करेगा।

(3) राष्ट्रपति इस रिपोर्ट पर की गई कार्यवाई के स्पष्ट ज्ञापन के साथ रिपोर्ट की एक प्रति संसद में प्रस्तुत करेगा।

अनुच्छेद 301 का प्रारूप 16 जून 1948 को संविधान सभा के समक्ष विचारार्थ प्रस्तुत किया गया। उस समय इस संबंध में कई संशोधन सुझाए गए।

के०वी० कामत (सी०पी० और बरार सामान्य) ने अनुच्छेद के प्रारूप के खण्ड I में से 'ऐसे व्यक्तियों को जिन्हें वह योग्य समझे' शब्दों को निकाल देने का प्रस्ताव किया, क्योंकि उनके विचार से ये शब्द "पूर्णतः अनावश्यक थे[1]।" उन्होंने यहां तक कहा कि 'यह राष्ट्रपति[2] की बुद्धिमत्ता पर आक्षेप है'। उन्होंने दूसरे संशोधन का सुझाव दिया अर्थात् अनुच्छेद के खण्ड I में 'कठिनाइयां' शब्द के लिए 'नियोग्यता'[3] शब्द रखा जाय। उनके विचार से उत्तरवर्ती शब्द में अधिक उपयुक्त भाव प्रकट होता है। उन्होंने कहा कि अनुच्छेद 9 (संविधान का अनुच्छेद 15, जिसमें कहा गया है कि धर्म, वंश, जाति, स्त्री-पुरुष और जन्म स्थान के कारण किसी प्रकार का भेद-भाव न किया जाएगा) में 'कठिनाई' शब्द नहीं है। इसके स्थान पर इसमें 'किसी निर्योग्यता, दायित्व, प्रतिबन्ध, शर्त आदि का उल्लेख किया गया है'। इस अनुच्छेद को संविधान सभा पहले ही पास कर चुकी है। उनके मत में 'कठिनाई' शब्द सांविधानिक नहीं प्रतीत होता इसके विपरीत 'निर्योग्यता' शब्द कहीं अधिक उपयुक्त है[4]। उन्होंने कई अन्य संशोधन सुझाए[5]।

1. अनुच्छेद 301 के खण्ड I में अनुदान दिया जाना चाहिए' शब्दों के स्थान पर 'अनुदान की व्यवस्था की जाए' रखा जाना चाहिए।

2. अनुच्छेद 301 के खण्ड (1) (पंक्ति 10) में 'और' शब्द के स्थान पर 'भी' शब्द रखा जाना चाहिए।

3. अनुच्छेद 301 के खण्ड (2) में प्रयुक्त 'उनके द्वारा पता लगाए' गए तथ्यों को एक रिपोर्ट' के स्थान पर 'उस संबंध में एक रिपोर्ट' शब्द रखे जाने चाहिए।

4. अनुच्छेद के प्रारूप के खण्ड (3) में 'इसके बारे में की गई कार्रवाई का स्पष्टीकरण देने वाले ज्ञापन के साथ' शब्दों को निकाल-कर 'इस प्रकार आगे कार्रवाई के लिए जो आवश्यक हो' शब्द अन्त में जोड़ दिए जाएं।

पहले सुझाव के बारे में उन्होंने कहा कि यह केवल मौखिक संशोधन था और इसे प्रारूपण समिति की सामूहिक जिम्मेदारी पर छोड़ दिया जाए। उन्होंने यह विचार व्यक्त करके कि 'भी' शब्द 'और' शब्द की अपेक्षा अधिक उपयुक्त भाव व्यक्त करता है, दूसरा सुझाव भी उस पर छोड़ दिया। तीसरा संशोधन "संक्षिप्तता और स्पष्टता"[6] लाने के लिए था। चौथे और अंतिम सुझाव का उल्लेख करते हुए उन्होंने कहा कि राष्ट्रपति संसद में किस ढंग से रिपोर्ट प्रस्तुत करें इसे नियंत्रित करना 'बुद्धिमानी' नहीं कहा जा सकता।

इस संशोधन के दूसरे भाग में यह तर्क दिया गया था कि राष्ट्रपति को नहीं, संसद को इस संबंध में आगे की आवश्यक[7] कार्रवाई करनी चाहिए।

प्रारूपण समिति के सभापति बी० आर० अम्बेडकर ने सुझाव दिया कि अनुच्छेद के प्रारूप के खण्ड (3) में प्रयुक्त 'संसद' शब्द के स्थान पर 'संसद का प्रत्येक सदन' शब्द रखे जाएं।

दो अन्य संशोधन जिनका नोटिस ठाकुरदास भार्गव (पूर्वी पंजाब, सामान्य) ने दिया था, नहीं पेश किए गए, इसके बदले उन्होंने अनुच्छेद के प्रारूप में बोलने की इच्छा व्यक्त की।

इस स्तर पर राष्ट्रपति ने अनुच्छेद और संशोधनों को चर्चा के लिए प्रस्तुत किया। ठाकुरदास भार्गव तथा शिब्बन लाल सक्सेना (संयुक्त प्रान्त, सामान्य) दोनों ने अनुच्छेद के प्रारूप का समर्थन किया।

ठाकुरदास भार्गव ने इसे 'संविधान की आत्मा'[8] कहा। इस अनुच्छेद का उद्देश्य, इस प्रक्रिया को पूरा करना, अर्थात् उन्हें (पिछड़े वर्गों को) सामान्य स्तर तक लाना है। इस अनुच्छेद से सम्पूर्ण राष्ट्र का यह दायित्व हो जाता है वह सभी कठिनाइयां और निर्योग्यताएं दूर करे। इसी लिए यह पिछड़े वर्गों की स्वतन्त्रता का वास्तव में एक चार्टर है[9] जब तक वे सामान्य स्तर तक न पहुंच जाएं, उस समय तक उन्हें सुविधाएं दी जाएं और यह अवधि कुछ निश्चित वर्षों तक सीमित न की जाए। किन्तु यह स्तर प्राप्त कर लेने पर उन्हें "पिछड़े वर्गों" की श्रेणी से निकाल दिया जाए[10]।

इसके अतिरिक्त अनुच्छेद के प्रारूप के खण्ड (1) के संदर्भ में, जिससे यह कहा गया है कि "राष्ट्रपति आदेश द्वारा नियुक्त आदि कर सकता है" उन्होंने एक संशोधन का नोटिस दिया कि 'कर सकता है' के स्थान पर 'करेगा'[11] शब्द रखा जाए। उन्होंने यह तर्क दिया कि यदि 'कर सकता है' शब्द प्रयुक्त किया जाए तो भी राष्ट्रपति का यह दायित्व है कि वह 'आयोग' गठित करे। इसलिए 'कर सकता है' शब्द का 'अर्थ 'करेगा' ही लिया जाए। उन्होंने कहा कि अल्पसंख्यकों अर्थात् मुसलमानों और सिखों का संरक्षण अब वापस ले लिया गया। संसद की अब एकजात जिम्मेदारी अनुसूचित जातियों और पिछड़े वर्गों [illegible]। उन्होंने कहा कि केवल इस अनुच्छेद का प्रारूप ही प्रस्ताव के उद्देश्यों का मूलरूप है और इसी में वह विधि बताई गई है जिससे प्रस्ताव को कार्यान्वित किया जा सकता है। उन्होंने अनुच्छेद में इस प्रकार एक उपबंध का सुझाव दिया कि यह केवल उन्हीं समुदायों पर लागू नहीं होगा जिनके लिए आरक्षण की व्यवस्था की गई है बल्कि उन सभी समुदायों पर लागू होना जो पिछड़े[12] हैं। शिब्बन लाल सक्सेना ने यह आशा व्यक्त की कि जो आयोग सम्पूर्ण भारत में पिछड़े वर्गों की स्थिति का पता लगा रहा है 'पिछड़े वर्ग' की परिभाषा भी देगा, क्योंकि इनके प्रयोग के बावजूद अभी तक संविधान में कहीं भी इसकी परिभाषा नहीं दी गई है।

जब संशोधन मतदान के लिए प्रस्तुत किए गए तो अम्बेडकर द्वारा सुझाए गए एक प्रस्ताव को छोड़ कर सभी अस्वीकार कर दिए गए। यथा[13] संशोधित अनुच्छेद 301 को संविधान में सम्मिलित किए जाने का प्रस्ताव पास हो गया। इस प्रकार बाद में इसे 340 की संख्या देकर संविधान में जोड़ दिया गया।

पाद टिप्पणियां

1. VIII सी०ए०डी० 943
2. —वही—
3. —वही—
4. —वही—
5. —वही— पृष्ठ 944
6. —वही—
7. —वही— पृष्ठ 945
8. —वही— पृष्ठ 946
9. —वही—
10. —वही—
11. —वही—
12. —वही— पृष्ठ 947
13. अनुच्छेद 301 के खण्ड (1) में एच०वी० कामथ द्वारा सुझाया गया यह संशोधन कि "अनुदान की व्यवस्था की जानी चाहिए" के स्थान पर "अनुदान दिया जाना चाहिए"।

उच्चतम न्यायालय

और

उच्च न्यायालय के मामले

वेंकटरमण बनाम मद्रास राज्य और अन्य

माल इंडिया रिपोर्टर 1951 एस०सी० 229

अन्य

राज्य सेवा में नियोजन के मौलिक अधिकार के अतिक्रमण का आरोप लगाते हुए याचिकादाता ने अनुच्छेद 12 के अधीन आवेदन किया।

याचिकादाता गणित का स्नातक था। उसके पास बी०एल० की डिग्री भी थी और 7 वर्षों से अधिक समय से वह एडवोकेट के रूप में प्रैक्टिस कर रहा था।

1949 में मद्रास लोक सेवा आयोग ने मद्रास सबार्डिनेट जुडिशल सर्विस में डिस्ट्रिक्ट मुंसिफ के 83 पदों के लिए आवेदन मांगे। 83 पदों में 12 पद मद्रास सिविल जुडिशल सेवा में कार्यरत व्यक्तियों के लिए अलग कर दिए गए। शेष 71 पद रिसीवर, सहायक लोक अभियोजक (असिस्टेंट पब्लिक प्रासीक्यूटर) और वकालत करने वाले व्यक्तियों से भरे जाने थे। यह भी अधिसूचित किया गया था उम्मीदवारों का चयन विभिन्न जातियों, धर्मों और समुदायों से किया जाएगा। सामुदायिक सरकारी आदेशों में निश्चित किए गए नियमों के अनुसार 19 हरिजन, 5 मुसलमान, 6 ईसाई, 19 पिछड़े वर्ग के हिन्दू, 32 अन्याह्मण हिन्दू और 11 ब्राह्मण लिए जाने थे।

यह स्वीकार किया गया कि याचिकादाता ने जितने अंक प्राप्त किए हैं, उनके आधार पर, यदि सामुदायिक सरकारी आदेश के उपबन्धों की उपेक्षा की जाती तो वह चुन लिया जाता। यह भी दावा किया गया कि मौखिक परीक्षा में भी उसने बहुत अच्छा किया था।

1950 में प्रकाशित परिणाम में चुने गए उम्मीदवारों के नाम दिए गए (शेष 71 पदों के लिए)। प्रत्येक समुदाय के आधार पर हरिजन 1, मुसलमान 7, ईसाई 4, पिछड़े वर्ग के हिन्दू 13, अन्याह्मण 32 और ब्राह्मण 4, चुने गए।

इसलिए याचिकादाता ने अपनी याचिका में यह प्रार्थना की कि सामुदायिक चक्र का नियम, जिसके आधार पर जिला मुंसिफों के पदों का चुनाव किया गया, असंवैधानिक घोषित किया जाए।

विवाद्यक (ईशु)

क्या मद्रास सामुदायिक सरकारी आदेश, जिसके द्वारा राज्य सरकार की सेवा में विभिन्न समुदायों के लिए (जो पिछड़े वर्गों में नहीं आते) उनके वंश, जाति और धर्म के अनुसार आरक्षण किया गया है, अनुच्छेद 16 में प्रदत्त मौलिक अधिकारों का अतिक्रमण करता है।

निर्णय

7 न्यायाधीशों की बेंच ने, जिसमें मुख्य न्यायाधीश, सर्व-न्यायमूर्ति कानिया, फजल अली, पतंजलिशास्त्री, महाजन, बी०के० मुखर्जी, एम०सी० वाम और बोस थे, यह विचार व्यक्त किया कि उक्त सामुदायिक सरकारी आदेश अनुच्छेद 16 के प्रतिकूल है इसलिए अमान्य और गैर-कानूनी है। न्यायालय का निर्णय निम्नलिखित कारणों पर आधारित था

(1) सरकारी नौकरियों में समानता के अवसर की गारंटी अनुच्छेद 16(1) में दी गई है और अनुच्छेद 16(2) में यह भी गारंटी दी गई है कि इस मामले में धर्म, वंश, जाति, स्त्री-पुरुष, जन्म स्थान या निवास स्थान के कारण कोई भेद-भाव न किया जाएगा।

(2) किसी पद के लिए केवल जाति, धर्म आदि के आधार पर किसी व्यक्ति को अपात्र मानना अनुच्छेद 16(2) का उल्लंघन है।

(3) अनुच्छेद 16(4) में पिछड़े वर्गों, अर्थात् राज्य सरकार की राय में जिन लोगों का उचित प्रतिनिधित्व राज्य सरकार की सेवाओं में नहीं है उनके लिए पदों के आरक्षण की स्पष्ट व्यवस्था है। इसमें उन व्यक्तियों के आरक्षण की व्यवस्था नहीं है जो इस श्रेणी में आते और न सरकार सामुदायिक आधार पर पदों का आरक्षण कर सकती है। समुदायों में एक निश्चित अनुपात में पदों का विभाजन अनुच्छेद 16(1) और 16(2) का उल्लंघन है।

अतः न्यायालय ने निम्नलिखित शब्दों में अपना निर्णय दिया :

"हमारी राय में सामुदायिक सरकारी आदेश द्वारा उत्पन्न इस अपात्रता को स्वीकृति अनुच्छेद 16(4) में नहीं दी गई है और याचिकादाता को एक नागरिक के रूप में अनुच्छेद 16(1) और 16(2) के अन्तर्गत प्रदत्त मौलिक अधिकारों का अतिक्रमण है। हमारी राय में यह सामुदायिक सरकारी आदेश अनुच्छेद 16 के उपबंधों के प्रतिकूल है और इस प्रकार अमान्य एवं गैर-कानूनी है।"

अधिकथित प्रतिपादना -- सरकार पिछड़े वर्गों के अन्तर्गत न आने वाले विभिन्न समुदायों के लिए इसके अधीन पदों का आरक्षण नहीं कर सकती।

जनरल मैनेजर, दक्षिण रेलवे बनाम रंगाचारी

ए० आई० आर० एस० सी० 36

तथ्य

प्रतिवादी रंगाचारी ने संविधान के अनुच्छेद 226 के अधीन मद्रास उच्च न्यायालय में एक याचिका फाइल की। उच्च न्यायालय ने परमादेश जारी करके अपीलकर्ता, अर्थात् जनरल मैनेजर, दक्षिण रेलवे, और कार्मिक अधिकारी (आरक्षण), दक्षिण रेलवे को रेलवे बोर्ड के उन निर्देशों को कार्यान्वित करने से रोक दिया जिनमें रेलवे सेवा की श्रेणी III के प्रवरण पदों में उन व्यक्तियों के विरुद्ध जो कोर्ट इन्स्पैक्टर की श्रेणी III के पदों पर काम कर रहे थे, जिसमें एक पद पर प्रतिवादी स्वयं काम कर रहा था, अनुसूचित जातियों और जनजातियों के आरक्षण का आदेश दिया गया था रिट जारी करने के बाद अपीलकर्ता ने प्रमाणपत्र के लिए आवेदन दिया और उसे उच्च न्यायालय ने अनुच्छेद 132 (1) के अधीन स्वीकार कर लिया क्योंकि इसमें विधि संबंधी महत्वपूर्ण प्रश्न उठाया गया था अर्थात् अनुच्छेद 16(4) का अधिकार क्षेत्र।

विचारणीय (इशू)

(i) क्या अनुच्छेद 16(4) के अधीन पदोन्नति के समय भी आरक्षण किया जा सकता है या केवल प्रारम्भिक नियुक्ति के समय।

(ii) अनुच्छेद 16(4) में केवल पिछड़े वर्गों का उल्लेख है। क्या पिछड़े वर्ग शब्द के अन्तर्गत अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियां भी आती हैं? उच्चतम न्यायालय के सामने इस विषय में कोई विवाद न था।

(iii) क्या आरक्षण के आदेश को पूर्वव्यापी माना जा सकता है?

बहुमत का निर्णय

पांच न्यायमूर्तियों की बेंच में दो के मुकाबले में तीन न्यायमूर्तियों ने मद्रास उच्च न्यायालय के निर्णय को उलट दिया और यह विचार व्यक्त किया कि आरक्षण ने अनुच्छेद 16(4) की सीमा का उल्लंघन नहीं किया है इसलिए वैध है। बहुमत के विचार से अनुच्छेद 16(1) में नियोजन संबंधी मामलों के अन्तर्गत केवल प्रारम्भिक नियुक्तियां ही नहीं बल्कि पदोन्नति और इसी प्रकार के अन्य मामले जैसे वेतन, अवधिक वेतन वृद्धियां, छुट्टी की शर्तें, उपदान (ग्रेचुटी) पेंशन और सेवा-निवृत्ति की आयु भी आती है। अनुच्छेद 16(4) अनुच्छेद 16(1) का अपवाद है, किन्तु पिछड़े वर्गों के बारे में नियुक्ति और पदोन्नति के अलावा अन्य मामलों में अपवाद नहीं हो सकता। "पद" का आशय सेवा से बाहर के पद य संवर्ग बाह्य पदों से नहीं है। अनुच्छेद 16(4) के अन्तर्गत प्रारम्भिक नियुक्ति और पदोन्नति दोनों आती हैं। न्यायालय के विचार में आरक्षण की व्यवस्था पूर्वव्याप्ति सहित या पर-व्याप्ति सहित भी की जा सकती है। सरकार को प्रतिनिधित्व की व्यवस्था करने से पूर्व देख लेना चाहिए कि पिछड़े वर्गों का प्रतिनिधित्व गुणात्मक एवं मात्रात्मक दृष्टि से पर्याप्त नहीं है।

"सामाजिक एवं शैक्षिक दृष्टि से पिछड़े वर्गों की उन्नति के लिए केवल यही अपेक्षित नहीं है कि उन्हें सेवा में प्रवरण पदों पर पर्याप्त प्रतिनिधित्व प्रदान किया जाए।"

न्यायालय का यह भी मत था कि अनुच्छेद 16(4) के अन्तर्गत प्रदत्त शक्तियों का प्रयोग करते समय "हमेशा यह प्रयत्न करना चाहिए कि पिछड़े वर्गों के दावे तथा अन्य कर्मचारियों के दावे के बीच एक उचित संतुलन बना रहे और साथ-साथ प्रशासन की कुशलता भी बनी रहे।"

बहुमत ने इसीलिए अपील स्वीकार कर ली। मद्रास उच्च न्यायालय का निर्णय उलट गया और रिट के लिए प्रतिवादी का आवेदन रद्द कर दिया गया।

अल्पमत का निर्णय

वांचू और आयंगर, दोनों न्यायमूर्तियों ने यह विचार व्यक्त किया कि आरक्षण अनुच्छेद 16(4) की सीमा से बाहर है इसलिए उनके विचार से अपील खारिज कर दी जानी चाहिए।

न्यायमूर्ति बहुमत के इस निर्णय से सहमत थे कि अनुच्छेद 16(4) को संविधान के अनुच्छेद 335 के साथ पढ़ा जाए और उस खण्ड में "पदों" का अर्थ सेवा के अन्तर्गत पदों से लिया जाए उससे बाहर के पदों से नहीं। किन्तु वे बहुमत के इस विचार से सहमत न थे कि "पद" शब्द में प्रवरण पद और प्रारम्भिक नियुक्तियां दोनों आती हैं। उनके विचार में "नियुक्ति" और "पद" दोनों का आशय प्रारम्भिक नियुक्ति से ही है। उन्होंने यह मत व्यक्त किया:

"नियुक्तियों के आरक्षण का अर्थ सेवा में प्रारम्भिक नियुक्तियों के आरक्षण की प्रतिशतता से है। पदों का अर्थ सेवा के कुल पदों से है जब उन पदों के संदर्भ में आरक्षण का उल्लेख किया जाता है तो इसका आशय सेवा में पदों की कुल संख्या में आरक्षता की प्रतिशतता से है।"

यह निष्कर्ष इस आधार पर निकाला गया कि अनुच्छेद 16(4) के अधीन सभी पदों या नियुक्तियों का आरक्षण करने से अनुच्छेद 16(1) के अधीन प्रदत्त मौलिक अधिकारों का हनन होगा। इसके अतिरिक्त अनुच्छेद 16(4) अनुच्छेद 16(1) का अपवाद है और संविधान के निर्माताओं का यह इरादा नहीं था कि इसकी व्याख्या इस प्रकार की जाए कि मुख्य उपबंध व्यर्थ हो जाए। यह भी कहा गया कि अनुच्छेद 16(4) के अधीन अधिसंख्यक नियुक्तियों या पदों के आरक्षण से अनुच्छेद 16(1) के अन्तर्गत प्रदत्त मौलिक अधिकार पूरी तरह समाप्त नहीं हो जाएंगे, फिर भी इसे "वास्तव में भ्रामक" बना देंगे, जो कि संविधान के निर्माताओं का इरादा नहीं था। न्यायमूर्ति आयंगर, न्यायमूर्ति वांचू के इस विचार से सहमत थे कि आरक्षण केवल प्रारम्भिक नियुक्ति के लिए किया जा सकता है इसलिए अपील खारिज कर दी जाये।

यह बहुमत की इस राय से सहमत न थे कि अनुच्छेद 16(4) के अन्तर्गत आरक्षण पूर्व-व्याप्ति सहित अथवा पर-व्याप्ति सहित किया जा सकता है। उनके विचार में उस खण्ड में केवल भविष्य में कार्रवाई किए जाने पर विचार किया गया है। उन्होंने निम्नलिखित विचार व्यक्त किया

"यदि आज कहीं अपर्याप्तता है तो पूर्वव्याप्ति सहित आरक्षण का प्रभाव जैसा कि आक्षेप-ग्रस्त अधिसूचना के कारण हुआ है, यह होगा कि आज जारी किए गए आदेश से भूतकाल के अपर्याप्त प्रतिनिधित्व का निराकरण हो जाएगा । मेरी राय में, आरक्षण के लिए प्रदत्त शक्ति के प्रयोग में ऐसा नहीं सोचा गया है, यह केवल भविष्य के लिए ही है" चूंकि इस विषय पर बहस नहीं की गई इसलिए उन्होंने इसे अपने निर्णय का आधार नहीं माना ।

अधिकथित प्रतिपादना

अनुच्छेद 16(4) के अन्तर्गत प्रारम्भिक नियुक्तियां और पदोन्नतियां दोनों ही होती हैं, आरक्षण पूर्वव्याप्ति और पर-व्याप्ति दोनों प्रकार से हो सकती है ।

टी० देवदासन बनाम सरकार

ए० आई० आर० 1964 एस० सी० 179

तथ्य

याचिकादाता ने संविधान के अनुच्छेद 32 के अधीन अपनी अपील में सरकार द्वारा जारी किए गए अनुदेशों को चुनौती दी जिनमें आरक्षित पदों को आगे ले जाने की व्यवस्था है। इस नियम के कारण किसी एक वर्ष में 50% से अधिक रिक्तियां आरक्षित की गई।

याचिकादाता स्नातक है और केन्द्रीय सेवा के ग्रेड में 1956 से है। वह जनवरी, 1958 से स्थायी कर दिया गया। अगला उच्च पद अनुभाग अधिकारी (सहायक अधीक्षक) का था। भर्ती के तीन तरीकों में एक तरीका संघ लोक सेवा आयोग द्वारा समय-समय पर ली गई विभागीय परीक्षा के आधार पर ग्रेड IV से ग्रेड III में पदोन्नति है। इस तरीके से 30 प्रतिशत भर्ती की जाती है। तदनुसार 6 फरवरी, 1960 को संघ लोक सेवा आयोग द्वारा जून, 1960 में ली जाने वाली पदोन्नति परीक्षा की अधिसूचना जारी की गई उसमें 12 प्रतिशत रिक्तियों का आरक्षण अनुसूचित जातियों के लिए और 5 प्रतिशत अनुसूचित जन जातियों के लिए कहा गया था, लेकिन आरक्षित पदों को आगे ले जाने के नियम के कारण भर्ती वर्ष के पिछले दो वर्षों में न भरी गई आरक्षित रिक्तियां इस प्रतिशतता में जोड़ दी गई। परिणाम अप्रैल, 1961 में घोषित किया गया। संघ लोक सेवा आयोग ने 16 उम्मीदवारों की अनारक्षित रिक्तियों में और निर्धारित प्रतिशत तथा आरक्षित पदों को आगे ले जाने वाले नियम के अनुसार 28 उम्मीदवारों की आरक्षित रिक्तियों में नियुक्ति के लिए सिफारिश की। बाद में आरक्षित कोटे में अनुसूचित जनजातियों के 2 अन्य उम्मीदवार भी जोड़ दिए गए। भरे जाने वाले पदों की अनुमानित संख्या 48 थी जिनमें 16 अनारक्षित और 32 आरक्षित थे, हालांकि संघ लोक सेवा आयोग ने आरक्षित पदों के लिए केवल 30 की सिफारिश की थी। किन्तु सरकार ने केवल 45 रिक्तियां भरी जिनमें से 29 अनुसूचित जाति और अनुसूचित जनजाति से भरी गई।

याचिकादाता का तर्क यह था कि—

1. उसने 61 प्रतिशत अंक प्राप्त किए थे जब कि अनुसूचित जातियों और जनजातियों के उम्मीदवारों को 35 प्रतिशत तक कम अंक मिले थे। उसने तर्क दिया कि संघ लोक सेवा आयोग, उनके लिए परीक्षा पास करने का एक मानक और अन्य उम्मीदवारों के लिए दूसरे प्रकार का मानक निर्धारित करने के लिए सक्षम नहीं है।

2. यदि भारत सरकार और संघ लोक सेवा आयोग उनके 17½% कोटे के आरक्षण के नियम का पालन करते तो उसके चयन की पूरी आशा थी। किन्तु इस प्रकार आरक्षण 65 प्रतिशत हो गया जो संघ लोक सेवा आयोग की अधिसूचना में उल्लिखित प्रतिशतता से कहीं अधिक था। 17½ प्रतिशत आरक्षण की सीमा रखने से केवल 8 पद अनुसूचित जाति और जनजाति से भरे जाते और शेष पद योग्यता के आधार पर अन्य उम्मीदवारों से।

भारत सरकार और संघ लोक सेवा आयोग द्वारा अपनाया गया "आगे ले जाने वाला नियम" असंवैधानिक था।

13 सितम्बर, 1950 के बाद भारत सरकार ने जब सेवा में सामुदायिक प्रतिनिधित्व की नीति के संबंध में संकल्प प्रकाशित किया तो उसके साथ पूरक अनुदेश भी 28 जनवरी, 1952 को जारी किए गए जिनमें दूसरे और तीसरे वर्ष आरक्षित पदों को आगे ले जाने के सिद्धांत अपनाने के लिए निर्देश दिया गया। किन्तु तीसरे वर्ष से आगे ले जाने का नियम नहीं था।

याचिकादाता ने इन अनुदेशों को भी चुनौती दी। उसने तर्क दिया कि अनुच्छेद 16(4) में नियोजन के मामले में सभी को समान अवसर की व्यवस्था का उल्लेख है। अनुच्छेद 16(4) के अन्तर्गत की गई इस व्यवस्था को मान लेने पर सरकार किसी भी पिछड़े वर्ग के लिए आरक्षण कर सकती है, किन्तु उस आरक्षण को इतना व्यापक नहीं बनाया जा सकता कि यह अनुच्छेद 16(2) में प्रदत्त अधिकारों को व्यर्थ बना दें या नष्ट कर दें। उसने कहा कि उच्चतम न्यायालय के पूर्व निर्णय के अनुसार अनुच्छेद 16(4), अनुच्छेद 16(1) का केवल अपवाद है और अनुच्छेद 16(1) के अधीन होने के कारण इसकी व्याख्या इस प्रकार नहीं की जा सकती कि मुख्य उपबंध ही अर्थहीन हो जाए। उसने यह भी तर्क दिया कि अनुच्छेद 16(4) को संविधान के अनुच्छेद 335 के साथ पढ़ा जाना चाहिए जिसमें अनुसूचित जाति और जनजाति के लिए की गई व्यवस्था के साथ-साथ प्रशासन की कुशलता पर भी जोर दिया गया है।

प्रतिवादियों ने यह दावा किया कि "आरक्षण को आगे ले जाने वाला नियम" वैध है और यह संविधान लागू होने से पहले से ही चला आ रहा है तथा संविधान लागू होने के बाद संविधान के उपबन्धों को पूरा करने के लिए उसे अपनाया जाता रहा है इसी आधार पर 1952 में पूरक अनुदेश जारी किए गए। इन अनुदेशों के समर्थन में उन्होंने अनुच्छेद 16(4) और अनुच्छेद 335 का हवाला दिया। उन्होंने इससे इनकार किया कि यह नियम कानून की दृष्टि में सभी की समानता के प्रतिकूल नहीं है और सरकार के अधीन सभी पदों पर नियुक्ति के समान अवसरों का विरोध भी प्रकट नहीं करता।

विवाद्यक (इशू)

1. मुख्य प्रश्न यह है कि 1955 में यथा संशोधित "आगे ले जाने वाला नियम" असंवैधानिक और संविधान के अनुच्छेद 16(1) या अनुच्छेद 14 का उल्लंघन है।

2. यह प्रश्न भी विचारार्थ उठाया गया कि क्या अनुसूचित जाति और जनजाति के पदों के आरक्षण संबंधी आक्षेप ग्रस्त उपबंध अनुच्छेद 16(4) का अतिक्रमण करते हैं।

बहुमत का निर्णय

पांच न्यायमूर्तियों—एस० के० दास, कार्यकारी मुख्य न्यायमूर्ति रघुवीर दयाल, एन० राजगोपाल आयंगर और जे० आर० मधोलकर (न्यायमूर्ति सुब्बाराव असहमत) ने मुख्य विवाद्यक को स्वीकार कर लिया और यह मत व्यक्त किया कि संशोधित "आगे ले जाने वाला नियम" अवैध और असंवैधानिक है।

न्यायमूर्ति मधोलकर ने न्यायालय का निर्णय सुनाते हुए कहा कि अनुच्छेद 14 में समानता का अर्थ है समान लोगों में समानता। अनुच्छेद 16(4) का प्रयोजन यह सुनिश्चित करना है कि पिछड़े वर्गों (जिनमें अनुसूचित जाति और अनुसूचित जनजाति भी शामिल है) के लोगों को सरकारी नौकरियों के मामले में किसी प्रकार की कठिनाई न हो। इसीलिए इस प्रकार के वर्गों के लिए, जिन्हें सरकारी सेवा में उचित प्रतिनिधित्व नहीं मिला है, पदों के आरक्षण की व्यवस्था का विचार किया गया है। इस प्रकार ऐसे आरक्षण की व्यवस्था करने वाले नियम के अनुच्छेद 14 का अतिक्रमण नहीं माना जा सकता। किन्तु यदि इस आरक्षण से अन्य समुदाय के लोगों को रोजगार के उपयुक्त अवसर मिलने में बाधा पड़ती है तो अन्य समुदायों का कोई भी सदस्य सरकार द्वारा समान अवसर न दिए जाने की शिकायत कर सकता है।

याचिकादाता ने अपने इस तर्क के सम्बन्ध में, कि "आगे ले जाने वाला नियम" अनुच्छेद 16(1) का अतिक्रमण है क्योंकि इससे आरक्षण की प्रतिशतता बहुत बढ़ जाती है, "एम० आर० बालाजी बनाम मैसूर राज्य, ए० आई० आर० एस० सी० 649 की नज़ीर का हवाला दिया जिसमें कहा गया है कि—

"·····जो अनुच्छेद 15(4) के विषय में सही है वही अनुच्छेद 16(4) के विषय में भी सही है। इस बात में कोई संदेह नहीं कि संविधान निर्माताओं ने सोचा होगा और उनका यह सोचना उचित भी था कि अनुच्छेद 16(4) के अन्तर्गत पर्याप्त आरक्षण करते समय इस बात का ध्यान रखा जाएगा कि आरक्षण अनुचित, अधिक या अनावश्यक न हो क्योंकि इससे व्यापक क्षेत्र में प्रतियोगिता समाप्त हो जाने तथा कर्मचारियों में घोर असंतोष पैदा होने से प्रशासन की कुशलता पर गहरा प्रभाव पड़ेगा। इस लिए अनुच्छेद 15(4) के अन्तर्गत विशेष उपबन्ध की अनुचित व्यवस्था द्वारा अनुच्छेद 16(4) के अधीन अनुमत्य एवं वैध सीमा से अधिक आरक्षण, संविधान के साथ धोखा माना जाएगा और इस पर आपत्ति की जा सकती है।"

यह बात वर्तमान मामले पर लागू होती है।

बालाजी के मामले से यह स्पष्ट हो जाएगा कि 50% से अधिक रिक्तियों का आरक्षण अनुच्छेद 15(1) का उल्लंघन होगा।

प्रस्तुत मामले में रिक्तियां भरी गई जिनमें 1955 में संशोधित अग्रेणीत नियम के परिणामस्वरूप 29 पद आरक्षित श्रेणी को दिए गए इस प्रकार भरी जाने वाली रिक्तियों की 64.4% संख्या आरक्षण को दी गई। आरक्षण को आगे ले जाने वाले नियम के परिणामस्वरूप न्यायालय ने बालाजी के मामले को आधार मानकर अपने निर्णय में इसे अनुचित बताया है। इन्होंने मैनेजर, दक्षिण रेलवे बनाम रंगाचारी, ए० आई० आर० 1962 एस० सी० 36 को आधार माना।

न्यायालय ने इस बात पर जोर दिया कि अनुच्छेद 16(1) में दी गई गारंटी का आशय नियोजन संबंधी मामलों में समान अवसर सुनिश्चित करना है। गारंटी को प्रभावी बनाने के लिए प्रत्येक वर्ष की भर्ती पर अलग-अलग विचार किया जाएगा। और पिछड़े वर्गों को इतना अधिक आरक्षण न दिया जाएगा कि जिससे उनका एकाधिकार हो जाए अथवा अन्य समुदायों के वैध अधिकारों पर प्रतिकूल प्रभाव पड़े।

अनुच्छेद 16(4), अनुच्छेद 16(1) का परन्तुक या अपवाद है। इसकी व्याख्या या अर्थनिरूपण इस प्रकार न किया जाएगा कि मुख्य उपबन्ध का प्रयोजन व्यर्थ अथवा नष्ट हो जाए। यह देखा गया है कि खण्ड (4) के अधीन असीमित आरक्षण का सिद्धान्त मानने से खण्ड (1) में दी गई गारंटी समाप्त हो जाती है या भ्रामक सिद्ध होती है। संविधान के किसी उपबंध अथवा किसी अधिनियम का ऐसा अर्थ नहीं लगाया जा सकता कि उसी के साथ अधिनियमित किसी दूसरे उपबन्ध का उद्देश्य ही नष्ट हो जाए। खण्ड (1) और (2) पर खण्ड (4) का अभिभावी प्रभाव केवल यह हो सकता है कि किन्हीं परिस्थितियों में एक उचित सीमा तक नियुक्तियों और पदों का आरक्षण किया जाए। न्यायालय ने यह निर्णय दिया कि याचिका आंशिक रूप से सफल है और 1955 का यथा संशोधित अग्रेनीत नियम अमान्य है।

अल्पमत निर्णय

दूसरी ओर, न्यायमूर्ति सुब्बाराव के असहमति सूचक निर्णय ने मुख्य मुद्दे को अस्वीकार कर दिया और यह विचार व्यक्त किया कि अग्रेनीत नियम संवैधानिक दृष्टि से मान्य है :

उनके विचार में अनुच्छेद 335 का अनुच्छेद 16(4) की व्याख्या करने में कोई महत्व नहीं है। इसलिए सरकार द्वारा बनाए गए उपबन्धों की मान्यता निश्चित करने के लिए केवल अनुच्छेद 16(4) का ही आश्रय लेना आवश्यक है।

अनुच्छेद 14 में समानता का सामान्य नियम बताया गया है अनुच्छेद 16 सरकारी नियुक्तियों के अवसर के विशेष संदर्भ में उनके प्रयोग का उदाहरण है। उनकी दृष्टि में अनुच्छेद 16(4), अनुच्छेद 16(1) का अपवाद नहीं है। उन्होंने कहा "यदि केवल इसी उपबन्ध को मान लें तो मूलतः असमान सामाजिक ढांचे में सभी पिछड़े समुदाय नष्ट हो जाएंगे। वे लोग, जब तक अपने पैरों पर खड़े होने लायक न हो जाएं, तब तक बिना विशेष सुविधा के खुली प्रतियोगिता में सफलता प्राप्त नहीं कर सकते। इसीलिए संविधान निर्माताओं ने अनुच्छेद 16 में खण्ड (4) जोड़ दिया। "इस अनुच्छेद में कुछ भी नहीं"—अभिव्यक्ति इसका आशय स्पष्ट करने का वैधानिक ढंग है कि उस अनुच्छेद के अधीन प्रदत्त शक्ति, मुख्य उपबन्ध द्वारा किसी प्रकार सीमित नहीं है लेकिन उस उपबन्ध से बाहर है। यह वास्तव में अपवाद नहीं है, बल्कि इसके द्वारा अनुच्छेद के अन्य उपबन्धों की अबाध शक्ति संरक्षित कर ली है।

आगे ले जाने वाले नियम के विषय में उन्होंने यह मत व्यक्त किया : "उनके इस दावे में कोई सार नहीं, कि "आरक्षण को आगे ले जाने" के सिद्धान्त के परिणामस्वरूप तीसरे वर्ष चुने गए अनुसूचित जाति और अनुसूचित जनजाति के उम्मीदवारों की संख्या उस वर्ष कुल आवेदकों की संख्या का 80 प्रतिशत थी और इसीलिए इस प्रकार के चयन से मौलिक अधिकारों का हनन हुआ है। यदि आरक्षण सरकार की क्षमता सीमा में था तो मुझे कोई कारण नहीं दिखता कि उक्त आकस्मिक परिस्थिति का प्रभाव इस प्रकार के आरक्षण पर कैसे पड़ेगा।

·····आरक्षण को आगे ले जाने का प्रभाव सामान्यतः वही होगा। एक बार चयन के समय आरक्षण करना, या कई बार चयन में आरक्षण करना, केवल आरक्षण के उपबन्ध को कार्यान्वित करने का एक सरल ढंग है। जब तक यह सिद्ध न हो जाए कि संवर्ग की संख्या का उचित अनुपात से अधिक भाग, उक्त जातियों और जनजातियों से भर लिया गया है यह कहना संभव नहीं कि यह आरक्षण की व्यवस्था नहीं है बल्कि मौलिक अधिकारों के समाप्त करने की व्यवस्था है। इस मामले में न इस प्रकार का अधिकथन है और न कोई साक्ष्य।

यदि उपबन्ध का आशय, आरक्षण के सम्बन्ध में कार्रवाई करना है, जो कि मैं मानता हूं, ठीक है तो फिर इसका कोई कारण नहीं दिखता कि इसे इसलिए बुरा कहा जाए क्योंकि प्रशासन की क्षमता के स्तर में कुछ गिरावट आएगी। कुछ सीमा तक प्रशासन के स्तर में गिरावट आना आरक्षण व्यवस्था में स्वाभाविक है, किन्तु इसके कारण इस व्यवस्था को बुरा नहीं कहा जा सकता। वास्तव में राज्य ने न्यूनतम योग्यताएं निर्दिष्ट कर दी हैं और सभी नियुक्तियां उन्हीं लोगों में से की जाती हैं, जिनके पास उक्त योग्यताएं हैं। इस व्यवस्था के कारण प्रशासन की

कुशलता में कितनी गिरावट आएगी यह बतलाना मेरा काम नहीं, बल्कि यह काम सरकार का है, जो अपने प्रशासन का स्तर बनाए रखना चाहती है ।"

उन्होंने बालाजी के मामले का हवाला दिया । उनके विचार से इस केस में 50 प्रतिशत से अधिक आरक्षण को असंवैधानिक मानने का कोई प्रस्ताव नहीं है । उन्होंने कहा कि—

"मेरे विचार से कॉलेज में भर्ती के संदर्भ में जो सामान्य बातें सामने आई हैं वे किसी विशिष्ट सेवा के संवर्ग की भर्ती के मामले में लागू नहीं होतीं । मौलिक अधिकारों के नष्ट करने का सिद्धान्त इस बात पर निर्भर करता है कि सम्पूर्ण संवर्ग की संख्या क्या है और उसमें आरक्षित पदों की संख्या क्या है । प्रेक्षण में प्रयुक्त शब्दों अर्थात् "सामान्य रूप से" और "मोटे तौर पर" का आशय केवल मार्ग दर्शन करना है न कि कॉलेज की भर्ती के मामले में भी कोई कठोर नियम बनाना ।"

अधिकथित प्रतिपादना

यदि किसी वर्ष आरक्षण बहुत अधिक (50 प्रतिशत से अधिक नहीं) न होने के कारण स्वतः असंवैधानिक न हो, तो भी आरक्षित पदों में आगे ले जाने वाले नियम के अन्तर्गत अन्य आरक्षित पद जोड़ दिए जाने के कारण किसी वर्ष आरक्षण अधिक हो जाता है, तो वह असंवैधानिक होगा ।

त्रिलोकी नाथ बनाम जम्मू और कश्मीर राज्य

ए० आई० आर०. 1967 एस० सी० 1283

तथ्य

संविधान के अनुच्छेद 32 के अन्तर्गत दो अध्यापकों ने याचिका फाइल की जिसमें प्रतिवादी संख्या 3 से 83 तक की पदोन्नति के आदेशों को उपयुक्त रिट जारी करके रद्द करने तथा पहले और दूसरे प्रतिवादी को, क्रमशः जम्मू और कश्मीर राज्य सरकार तथा शिक्षा निदेशक, जम्मू और कश्मीर राज्य, श्रीनगर, को अध्यापकों के राजपत्रित संवर्ग में पूर्व-व्याप्ति सहित पदोन्नत करने का निदेश देने का अनुरोध किया ।

याचिकादाता सं० 1 और 2, दोनों राज्य के सरकारी विद्यालयों में अध्यापक थे और दोनों ने क्रमशः 1943 और 1952 में सरकारी सेवा में प्रवेश किया । समय-समय पर प्रतिवादी संख्या 1 द्वारा वरिष्ठता सूची तैयार की जाती रही और उस वरिष्ठता सूची के अनुसार तथा निचले ग्रेड से अध्यापकों को पदोन्नत करके उच्चतर संवर्ग के पद भरे जाते रहे । 1961 में तैयार की गई अंतिम वरिष्ठता सूची में याचिकादाता सं० 1 और 2 को क्रम संख्या 104 और 140 पर रखा गया । यह अभिकथन था कि पदोन्नति करने में प्रतिवादी संख्या 1 और 2 ने निम्नलिखित आधार अपनाया :—

(1) 50 प्रतिशत पद मुसलमानों को दिए गए ;

(2) शेष पदों में से 60 प्रतिशत पद जामवी हिन्दुओं से भरे गए ; और

(3) 50 प्रतिशत पदों में से शेष 40 प्रतिशत पद कश्मीरी पंडितों को दिए गए, और कभी-कभी एक या दो पद पारी से हटकर सिखों को दिए गए ।

हालांकि यह आधार राज्य सरकार के किसी आदेश का परिणाम न था, यह केवल राज्य सरकार द्वारा समय-समय पर पदोन्नत किए गए कर्मचारियों की संख्या का विश्लेषण करके निकाला गया ।

याचिकादाताओं ने यह तर्क दिया कि पदोन्नतियों, योग्यता और वरिष्ठता के आधार पर नहीं बल्कि केवल धर्म, जाति और जन्म स्थान के आधार पर की गई । इसके परिणामस्वरूप दोनों याचिकादाताओं का, जो वरिष्ठता सूची में वरिष्ठ थे, प्रतिवादी संख्या 3 से 83 तक ने अधिक्रमण कर दिया क्योंकि वे कश्मीरी पंडित थे और प्रतिवादी (संख्या 3 से 83 तक) या तो मुसलमान थे या जम्मू के हिन्दू ।

राज्य सरकार ने जवाबी हलफनामें में पदोन्नति के तरीके से इनकार नहीं किया बल्कि आरक्षण का इस आधार पर समर्थन किया कि सम्पूर्ण राज्य के मुसलमान और जम्मू प्रान्त के हिन्दू "पिछड़े वर्गों" में आते हैं ।

विवाद्यक इशू

1. क्या अनुच्छेद 16(4) के प्रयोजनों के लिए सम्पूर्ण राज्य के मुसलमान और जम्मू प्रान्त के हिन्दू पिछड़े माने जा सकते हैं ?

2. क्या आरक्षण की प्रतिशतता उचित है ?

निर्णय

न्यायमूर्ति सुब्बाराव ने न्यायालय का निर्णय सुनाया । न्यायालय की इस बेंच में न्यायमूर्ति जे० सी० शाह, एस० एम० सीकरी, रामस्वामी, सी० ए० वैद्यलिंगम और वे स्वयं थे ।

न्यायालय ने एच० आर० बालाजी बनाम मैसूर राज्य ए० आई० आर० 1963 एस० सी० 649 और आर० चित्रलेखा बनाम मैसूर राज्य ए० आई० आर० 1964 एस० सी० 1823 में दिए गए अपने पूर्ववर्ती निर्णयों का हवाला दिया जिनमें कोई वर्ग पिछड़ा है या नहीं इस संबंध में जांच के लिए कुछ बातें बताई गई थीं । यह कहा गया कि बालाजी के मामले में अनुच्छेद 15(4) की व्याख्या की गई थी किन्तु उसमें निश्चित किए गए सिद्धान्त वर्तमान मामले पर भी समान रूप से लागू होंगे । उसमें निर्धारित सिद्धान्त को इन्होंने दोहराया अर्थात् पिछड़ापन सामाजिक और राजनीतिक दृष्टि से ही होता है और सामाजिक पिछड़ापन बहुत हद तक गरीबी का ही परिणाम है ।

न्यायालय ने तब चित्रलेखा के मामले का उल्लेख किया और कहा कि इस मामले में मैसूर सरकार द्वारा अपनाया गया सिद्धान्त मान लिया गया था, अर्थात् पिछड़े वर्गों का वर्गीकरण निम्नलिखित शर्तों पर किया जाना चाहिए : (1) आर्थिक स्थिति और (2) व्यवसाय । हालांकि जाति भी उपयुक्त कारण हो सकता है किन्तु यही एकमात्र या प्रमुख कारण नहीं माना जा सकता ।

वर्तमान मामले में सरकार का तर्क यह था "कि अनुच्छेद 16(4) के अधीन पिछड़ापन की मुख्य पहचान सेवाओं में उनका अपर्याप्त प्रतिनिधित्व माना गया है————यदि इस तर्क को स्वीकार कर लिया जाए तो वास्तव में पिछड़े वर्ग इस उपबन्ध के लाभ से वंचित रह जाएंगे और इसका लाभ नागरिकों के उस वर्ग को ही मिलेगा जो सम्पन्न और सुसंस्कृत हैं किन्तु जिन्होंने ये अन्य व्यवसाय अपना लिये हैं ।"

इस प्रकार अनुच्छेद 16(4) की ओर ध्यान आकृष्ट करने के लिए न्यायालय ने दो शर्तें निर्धारित कीं, अर्थात् (i) "नागरिकों का वह वर्ग पिछड़ा है अर्थात् बालाजी के मामले में जैसा स्पष्ट किया गया है, कि वे सामाजिक और शैक्षिक दृष्टि से पिछड़े हैं और (ii) राज्य की सेवाओं में उक्त वर्ग का उचित प्रतिनिधित्व नहीं है ।"

किन्तु प्रस्तुत की गई सामग्री के आधार पर न्यायालय कोई निर्णय नहीं कर सका और उसने जम्मू कश्मीर उच्च न्यायालय से रिपोर्ट मांगी जिसमें अधिक सामग्री हो अर्थात् सम्पूर्ण राज्य की कुल जनसंख्या दोनों प्रान्तों के अलग-अलग आंकड़े, भिन्न-भिन्न समुदायों आदि का सामाजिक और आर्थिक दृष्टि से पिछड़ापन ।

अधिकथित प्रतिपादना

राज्य सरकार की सेवाओं में अपर्याप्त प्रतिनिधित्व ही पिछड़ेपन की कसौटी नहीं माना जा सकता । जाति एक उचित कारण है, किन्तु प्रमुख कारण नहीं । आर्थिक स्थिति और व्यवसाय महत्वपूर्ण कारण है । यद्यपि राज्य सरकार यह सुनिश्चित करती है कि किस वर्ग के नागरिक पिछड़े हैं किन्तु यह न्याय प्रश्न है और न्यायालय इस बात की जांच कर सकता है कि राज्य सरकार ने कहीं शक्ति का दुरुपयोग तो नहीं किया ।

त्रिलोकी नाथ बनाम जम्मू और कश्मीर राज्य

ए० आई० आर० 1969 एस० सी० 1

तथ्य

उच्च न्यायालय द्वारा रिपोर्ट प्रस्तुत किए जाने के पश्चात् मामला फिर सुनवाई के लिए पेश किया गया। सुप्रीम कोर्ट के निर्देश के अनुसार इस रिपोर्ट में दोनों पक्षों द्वारा प्रस्तुत मौखिक एवं लिखित साक्ष्य के साथ सभी अपेक्षित सामग्री थी। किन्तु राज्य सरकार का कोई ऐसा औपचारिक आदेश नहीं था कि पिछड़े वर्गों के लिए आरक्षण किया जाए। राज्य सरकार द्वारा अभी तक सामुदायिक आरक्षण की नीति अपनाई जा रही थी जो कि पहले त्रिलोकी नाथ के मामले में रद्द की जा चुकी थी।

निर्णय

न्यायालय का निर्णय, जिसमें मुख्य न्यायमूर्ति हिदायत-उल्लाह, न्यायमूर्ति, जे० सी० शाह, एस० एम० सीकरी, बी० रामस्वामी और भार्गव थे, न्यायमूर्ति शाह ने पढ़ा।

न्यायालय ने राज्य सरकार के तर्क को अस्वीकार कर दिया। उन्होंने यह विचार व्यक्त किया अनुच्छेद 16(4) के प्रयोजन के लिए यह सुनिश्चित करने की दृष्टि से कि कौनसा समुदाय पिछड़ा वर्ग है "जाति, समुदाय, वंश, धर्म, स्त्री, पुरुष, उच्च कुल में जन्म अथवा निवास स्थान को ही आधार मानना ठीक नहीं।" क्योंकि इससे अनुच्छेद 16(2) का प्रत्यक्ष अतिक्रमण होता है। उन्होंने कहा कि संविधान द्वारा निर्धारित सामान्य नियम का तात्पर्य "सरकारी सेवा के इच्छुक व्यक्तियों के लिए समान अवसर प्रदान करना" है। किन्तु कुछ वर्गों के पिछड़ेपन के कारण राज्य सरकार उनके लिए पदों के आरक्षण की व्यवस्था कर सकती है किन्तु वर्तमान मामले में, आरक्षण किसी पिछड़े वर्ग के पक्ष में नहीं किया गया। यह केवल एक संयोग था कि कुल पदों या नियुक्तियों का विभाजन समुदाय या निवास के आधार पर किया गया। इस प्रकार का विभाजन अनुच्छेद 16(1) और (2) में दी गई संवैधानिक गारंटी के विपरीत था और खण्ड (4) द्वारा इसका बचाव नहीं हो सका।"

न्यायालय ने इस बात पर जोर दिया कि अनुच्छेद 16(4) के अधीन आरक्षण की व्यवस्था के लिए सांविधिक अधिनियम की आवश्यकता नहीं, केवल कार्यकारी आदेश या निदेश ही पर्याप्त है। किन्तु राज्य को विचारण योजना में कोई औपचारिक कार्यकारी आदेश भी नहीं था। अनुच्छेद 16(4) के अधीन की गई व्यवस्था जब तक किसी कानून या औपचारिक कार्यकारी आदेश द्वारा न की गई हो, प्रभावी होगी या नहीं न्यायालय ने इस प्रश्न के बारे में अपनी राय देना आवश्यक नहीं समझा।

न्यायालय ने प्रतिवादी संख्या 3 से 83 तक को दी गई पदोन्नति अनुच्छेद 16(1) और (4) के उपबन्धों के प्रतिकूल घोषित कर दी, इसलिये वे अमान्य हैं। किन्तु यह राज्य सरकार पर छोड़ दिया गया कि उन पिछड़े वर्गों के लिए जिनका सरकारी सेवाओं में उचित प्रतिनिधित्व नहीं है, कोई ऐसी योजना बनाए जो पिछड़े वर्गों के पक्ष में पदों पर नियुक्ति अथवा पदोन्नति के लिए आरक्षण को संविधान में दी गई गारंटी के अनुकूल हो।

अधिकथित प्रतिपादना

केवल जाति, समुदाय, वंश, धर्म, स्त्री-पुरुष, जन्म, जन्म स्थान या निवास स्थान को पिछड़ेपन की जांच का आधार नहीं माना जा सकता। सम्पूर्ण जाति या समुदाय को "पिछड़ा" घोषित किया जा सकता है, लेकिन केवल किसी विशेष जाति या समुदाय होने के कारण नहीं बल्कि एक नियत समय पर वे सामाजिक, आर्थिक और शैक्षिक मापदंडों से पिछड़े हों इसलिये "पिछड़ा वर्ग", "पिछड़ी जाती" अथवा "पिछड़े समुदाय" का पर्याय नहीं माना जा सकता।

मोहन लाल बनाम जम्मू और कश्मीर राज्य

ए० आई० आर० 1971 एस० सी० 2207

तथ्य

यह मामला त्रिलोकी नाथ बनाम जम्मू और कश्मीर राज्य के तथ्यों पर आधारित है। यह याचिका अनुच्छेद 32 के अधीन दी गई। इसमें इस न्यायालय द्वारा त्रिलोकी नाथ (ए० आई० आर० 1969 एस० सी० I) के मामले में जो कानून निर्दिष्ट किया था उसे तोड़-मोड़ कर अर्थ लगाने का प्रयत्न किया गया। इस मुकदमें में सुप्रीम कोर्ट ने समुदायवार पदों के आरक्षण की राज्य सरकार की नीति को असंवैधानिक घोषित किया था क्योंकि इससे अनुच्छेद 16 का उल्लंघन होता है। इस मामले में अनुच्छेद 16 की संवैधानिक व्याख्या का कुछ भी संबंध नहीं है। त्रिलोकी नाथ के मामले में यद्यपि न्यायालय ने कहा था कि अनुच्छेद 16 के अनुसार राज्य सरकार आरक्षण की योजना तैयार करे पर इस प्रकार की कोई योजना नहीं बनाई गई। किन्तु शिक्षा विभाग के अधिकारियों ने त्रिलोकी नाथ के मामले में न्यायालय के निर्णय को दिखावटी प्रभाव देने के लिए चतुराईपूर्ण युक्ति निकाली। किन्तु प्रतिवादी अध्यापकों को जिनकी पदोन्नतियां त्रिलोकी नाथ के मामले में दिए गए निर्णय के अनुसार अवैध हो गई थी, उन्हें उसी प्रकार उच्च पदों पर बनाए रखा चूंकि ऐसा करना अनुच्छेद 16 का उल्लंघन है, इसलिए न्यायालय ने उन पदोन्नतियों को रद्द घोषित कर दिया।

जानकी प्रसाद बनाम जम्मू और कश्मीर राज्य

ए० आई० आर० 1973 एस० सी० 930

तथ्य

भाखन लाल बनाम जम्मू और कश्मीर राज्य के मामले में दिए गए निर्णय के फलस्वरूप जम्मू और कश्मीर राज्य द्वारा की गई कार्रवाई के परिणामस्वरूप अनुच्छेद 32 के अधीन 3 याचिकायें पेश की गईं। जम्मू और कश्मीर अनुसूचित जाति तथा पिछड़े वर्गों की आरक्षण नियमावली 1970 तैयार की गई। इसमें वह कसौटी निर्दिष्ट की गई जिसके आधार पर "पिछड़े वर्ग" की परिभाषा के अन्तर्गत किस व्यक्ति को इसमें शामिल किया जा सकता है। याचिकादाताओं ने प्रतिवादी अध्यापकों को दी गई पदोन्नतियां रद्द करने के लिए याचिकायें पेश कीं। उन्होंने दावा किया कि वरिष्ठ होने और कुछ वर्षों तक प्रधान अध्यापक के पद पर स्थानापन्न रूप से काम करने के बावजूद उन्हें प्रतिवादी के पक्ष में, जो कि उनसे वरिष्ठता सूची में नीचे थे, निकाल दिया गया। उनका यह भी अभिकथन था कि पुराना सामुदायिक अनुपात अभी तक कायम है। उन्होंने यह दावा किया कि यद्यपि कुछ पद पिछड़े वर्गों के लिए नियम के अंतर्गत आरक्षित हैं, किन्तु यह सब मुसलमानों को 90 प्रतिशत पद सुरक्षित कराने की चाल है।

विवाद्यक (इशू)

(1) अनुच्छेद 16(4) के अधीन "नागरिकों का पिछड़ा वर्ग" शब्द का विस्तार क्षेत्र।

(2) क्या जम्मू-कश्मीर अनुसूचित जाति और पिछड़े वर्ग की आरक्षण नियमावली, 1970, असंवैधानिक है और इसके द्वारा अनुच्छेद 16(4) का उल्लंघन हुआ है।

निर्णय

याचिकाएं 5 सदस्यों की न्यायपीठ के समक्ष सुनवाई के लिए प्रस्तुत हुईं। न्यायपीठ के सदस्य के मुख्य न्यायमूर्ति एस०एम० सीकरी, न्यायमूर्ति ए०एन० रे, डी०जी० पालेकर, एम०एच० बेग तथा एस०एन० द्विवेदी। न्यायालय की ओर से बोलते हुए न्यायमूर्ति पालेकर ने कहा कि अनुच्छेद 16(4) में "नागरिकों का पिछड़ा वर्ग" पद अनुच्छेद 15(4) में "नागरिकों का कोई सामाजिक और शैक्षिक दृष्टि से पिछड़ा वर्ग" पद, अर्थ की दृष्टि से समान है। उन्होंने इस बात पर बल दिया कि केवल अकेला शैक्षिक पिछड़ापन अथवा सामाजिक पिछड़ापन नागरिकों के किसी वर्ग को पिछड़ा समझने का पर्याप्त आधार नहीं है। पिछड़ापन सिद्ध करने के लिए दोनों तत्व अर्थात् सामाजिक और शैक्षिक पिछड़ापन अवश्य होने चाहिएं।

न्यायालय ने टिप्पणी की :

यद्यपि पिछड़े वर्ग का वर्णन करने के उद्देश्य से "सामाजिक दृष्टि से" तथा "शैक्षिक दृष्टि से" दोनों शब्द इकट्ठे इस्तेमाल किए जाते हैं, हर व्यक्ति विचार कर सकता है कि यदि कोई एक पूरा वर्ग शैक्षिक दृष्टि से उन्नत है तो शिक्षा के सुधारात्मक प्रभाव के कारण वह वर्ग सामान्यतः सामाजिक दृष्टि से भी उन्नत होता है।

न्यायालय ने नियमों का व्यापक रूप से इस दृष्टि से पुनर्विलोकन किया कि राज्य द्वारा किया गया वर्गीकरण सही है या नहीं। सरकार द्वारा बनाए गए नियम, राज्य सरकार द्वारा नियुक्त पिछड़ा वर्ग संबन्धी समिति की सिफारिशों पर आधारित थे। यह समिति जम्मू और कश्मीर उच्च न्यायालय के भूतपूर्व मुख्य न्यायमूर्ति जे०एन० वजीर की अध्यक्षता में गठित की गई थी और इसने नवम्बर, 1969 में अपनी रिपोर्ट प्रस्तुत कर दी थी। इन नियमों के अनुसार पिछड़े वर्गों को निम्नलिखित छः वर्गों में वर्गीकृत किया गया था :

(1) कुछ विनिर्दिष्ट पारम्परिक व्यवसाय।

(2) 23 विनिर्दिष्ट सामाजिक जातियां।

(3) छोटे काश्तकार।

(4) अल्प आय वाले पेंशनभोगी।

(5) युद्ध विराम रेखा के आस-पास के क्षेत्र के निवासी।

(6) राज्य में "खराब बस्तियों" के कुछ क्षेत्र और उन से संबन्धित प्रत्येक पिछड़ा माना गया व्यक्ति।

उच्चतम न्यायालय को वस्तुतः इन सभी वर्गों में आंशिक रूप से या पूर्ण रूप से दोष दिखाई दिया। हमारा विचार है कि इस विषय पर न्यायालय के विश्लेषण का सार देने का प्रयास करने की बजाए इसे पूर्णतः उद्धृत करना उपयुक्त होगा। निर्णय से संबद्ध उद्धरणों की फोटोस्टेट प्रति साथ दी जा रही है।

27. जम्मू और कश्मीर अनुसूचित जाति और पिछड़े वर्ग आरक्षण नियमावली, 1970 के 5 भाग हैं। भाग I में 6 अध्याय हैं और नियम 3 में बताया गया है कि राज्य के जो स्थायी निवासी इन छः अध्यायों में बताए गए व्यक्तियों के वर्गों से संबन्ध रखते हैं, उन्हें नागरिकों के सामाजिक और शैक्षिक दृष्टि से पिछड़े वर्ग घोषित किया गया है। अध्याय I में उन व्यवसायों की सूची दी गई है, जो पारम्परिक व्यवसाय माने जाते हैं और नियम 4 में बताया गया है कि ऐसा प्रत्येक व्यक्ति, जिसका पारम्परिक व्यवसाय उसमें उल्लिखित 62 व्यवसायों में से कोई व्यवसाय है, पिछड़े वर्ग का व्यक्ति माना जाए। अध्याय II में 23 सामाजिक जातियां दी गई है और इन सामाजिक जातियों से संबन्धित व्यक्ति पिछड़े माने जाते हैं। अध्याय III में छोटे काश्तकारों को पिछड़ा बताया गया है। अध्याय IV में अल्प आय वाले पेंशन-भोगियों को पिछड़ा माना गया है। अध्याय V में युद्ध विराम रेखा के आस पास के क्षेत्र के निवासियों को पिछड़ा बताया गया है। अध्याय VI में राज्य में कुल क्षेत्रों को खराब बस्तियां" विनिर्दिष्ट किया गया है और उस क्षेत्र के प्रत्येक व्यक्ति को पिछड़े वर्ग से संबन्धित माना गया है। हमारा इन नियमों के अन्य भागों से सीधा संबन्ध नहीं है। याचियों की ओर से श्री सेन ने इन नियमों के अधीन बताए गए अनेक प्रकार के पिछड़े वर्गों पर और उस खास तरीके पर भी आपत्ति की है, जिस तरीके से परिभाषाएं बनाई गई हैं।

28. अध्याय I में वह वर्ग बताया गया है, जो पारम्परिक व्यवसायों के आधार पर है। कुल मिलाकर लगभग 62 व्यवसायों को पारम्परिक व्यवसाय माना गया है। इनका उन वर्गों से निकट का संबन्ध है, जिन्हें समिति ने अपनी रिपोर्ट में परम्परागत व्यावसायिक वर्गों का नाम दिया है। पैरा 124 में, समिति का कहना है कि अन्य लोगों के पिछड़े वर्ग निश्चित करने की दृष्टि से 1961 की जनगणना रिपोर्ट में बताए गए प्रत्येक व्यावसायिक और औद्योगिक वर्ग के दावे की सावधानी से जांच की गई है और यह स्पष्ट है कि पारम्परिक व्यवसायों की सूची को यथा-संभव व्यापक बनाया गया है। पारम्परिक व्यवसाय के आधार पर एक वर्ग सुनिश्चित किया जा सकता है। पारम्परिक व्यवसाय का अर्थ एक ऐसे परिवार में परम्परागत रूप में किए जाने वाले व्यवसाय या धन्धे से है, जिसमें वह व्यवसाय या धन्धा पूर्वजों द्वारा अपनी सन्तान को सौंप दिया जाता है। यदि आबादी का कोई भाग ऐसा है, जो इस प्रकार के व्यवसाय को अपनाता है, तो उस भाग को एक वर्ग माना जा सकता है। इस प्रकार के व्यवसाय साधारणतया ऐसे व्यवसाय होते है, जिनमें विशेष कौशल की आवश्यकता होती है, जैसे कि शिल्पी या दस्तकार का व्यवसाय। श्री सेन का तर्क था हालांकि पारम्परिक व्यवसायों के रूप में 62 व्यवसायों का उल्लेख किया गया है, लेकिन इनमें से अनेक व्यवसाय ऐसे है, जो वास्तव में परम्परागत नहीं है और जहां तक अन्य व्यवसायों की बात है, उनके बारे में इस दृष्टि से गहराई से जांच-पड़ताल नहीं की गई है कि वे पारम्परिक व्यवसाय है या नहीं। उनका यह भी तर्क है कि नियमों में दी गई "पारम्परिक व्यवसाय" की परिभाषा सारी स्थिति को अस्पष्ट बना देती है, क्योंकि आरक्षण की मांग करने वाले व्यक्त का पिता चाहे परम्परागत व्यवसाय को अपनाएं या नहीं, यदि उसके पितामह ने वह व्यवसाय किया है, तो वह उस वर्ग का हकदार माना जा सकता है।

29. इसमें कोई संदेह नहीं कि इस सूची में बताए गए व्यवसायों में से ज्यादातर व्यवसायों को परम्परागत व्यवसाय के रूप में अपनाया जा सकता है। लेकिन इनमें से कुछ व्यवसाय ऐसे अवश्य है जो परम्परागत व्यवसाय कहलाने के योग्य नहीं है। उदाहरण के लिए ऐक खेतिहर मजदूर को लीजिए। हमें इस बारे में भारी संदेह है कि खेतिहर मजदूर को एक परम्परागत व्यवसाय माना जा सकता है। यह एक मौसमी व्यवसाय है और जैसा कि सभी को मालूम है, यह एक ऐसे भूमि-हीन अकुशल श्रमिक की अन्तिम शरण है, जिसके पास ग्रामीण समाज में रोजगार का कोई और साधन नहीं होता। वास्तव में इस दृष्टि से यदि किसी पर विशेष रूप से विचार किया जाना चाहिए, तो वह खेतिहर मजदूर ही है, परन्तु आपत्ति इस बात को लेकर है कि क्या इसे एक परम्परागत व्यवसाय माना जा सकता है। खेतिहर मजदूर, मात्र एक मजदूर है और जहां कहीं अकुशल श्रमिक की आवश्यकता होती है, इसकी सेवाओं का उपयोग किया जाता है। वस्तुतः वह हमाल और ऐसे समान व्यवसायों के योग्य होता है, जिनमें केवल शारीरिक शक्ति और काम करने की क्षमता की जरूरत होती है। इसी प्रकार, यह कहना भी कठिन होगा कि निम्नलिखित व्यवसाय परम्परागत व्यवसाय हैं:—

(5) बैरा, बॉय, वेटर

(7) जिल्दसाज

(11) बावरची

(20) कसियारा

(21) हॉकर, फेरीवाला

(23) सामान ढोने वाला

(29) पुराने कपड़े बेचने वाला

(48) घड़ीसाज

(51) ग्रामीण क्षेत्रों के पंसारी

(53) ग्रामीण क्षेत्रों के दूध विक्रेता

(58) ग्रामीण क्षेत्रों के सब्जी विक्रेता

(62) तांगा चालक और जानवरों से चलने वाली अन्य गाड़ियों के चालक।

इन सभी व्यवसायों के लिए परम्परा से विकसित विशेष कुशलता की आवश्यकता नहीं होती और ऐसा कोई भी व्यक्ति इन्हें कर सकता है, जिसके पास अपेक्षित साधन हों। आगे फिर क्रम संख्या 34 और 56 पर पुरोहिती वर्ग की एक श्रेणी आती है, जो हालांकि परम्परागत पेशा तो करते हैं, लेकिन जिन्हें सामाजिक और शैक्षिक दृष्टि से पिछड़े वर्ग नहीं माना जा सकता। इसलिए हमारा विचार है कि परम्परागत व्यवसायों का समुचित पुनरीक्षण किया जाना चाहिए, जिससे कि वे सही रूप में नियम 4 के अन्तर्गत आ सकें।

30. लेकिन वास्तविक आपत्ति तो नियम 2(i) में दी गई कृत्रिम परिभाषा को लेकर है। एक व्यक्ति के संबंध में "परम्परागत व्यवसाय" का अर्थ उसके जीवित या स्वर्गवासी पितामह का मुख्य व्यवसाय है और

इसमें नैमित्तिक व्यवसाय को शामिल नहीं किया जाता। इसका मतलब यह होगा कि यदि कोई व्यक्ति पिछड़े वर्ग के सदस्य के रूप में विशेष लाभ उठाना चाहता है, तो उसके लिए इतना बतलाना काफी होगा कि उसके पितामह ने एक परम्परागत व्यवसाय अपना रखा था। हो सकता है कि उसके पिता ने वह परम्परागत व्यवसाय बिल्कुल ही न किया हो। यह भी हो सकता है कि उसने कोई अन्य व्यवसाय या धंधा अपनाने के लिए ही यह व्यवसाय छोड़ा हो। यह काफी नहीं है। दलील यह है कि पितामह ने एक परम्परागत व्यवसाय अपना रखा था, लेकिन वह व्यवसाय उसके पुत्र को भी करना चाहिए था, ताकि जिस समय पौत्र आरक्षण की सुविधा की मांग करे, उस समय तक वही व्यवसाय परिवार में चलता रहे और परिवार की जीविका का साधन बना रहे। इस दलील में काफी बल है। जो व्यक्ति अनुच्छेद 15(4) और 16(4) के अधीन विशेष व्यवहार की मांग कर रहा है, यदि उसका पिता कम आय वाला अपना व्यवसाय छोड़ देता है और एक व्यापारी या सरकारी कर्मचारी बन जाता है, तो उस व्यक्ति को मात्र इस आधार पर विशेष सुविधा प्रदान करना अनुचित होगा कि उसके पितामह ने एक परम्परागत व्यवसाय अपना रखा था। समिति ने अपनी रिपोर्ट के पैरा 129 में इसी तरह के दुरुपयोग के विरुद्ध चेतावनी दी थी। उसका विचार है :—

"पूर्ववर्ती व्यवस्था करते समय राज्य को यह सुनिश्चित करने के लिए हर संभव सावधानी बरतनी चाहिए कि ऐसी व्यवस्था का लाभ केवल उन्हीं व्यक्तियों को मिले, जो उन वर्गों के वास्तव में सदस्य हों, जिन्हें पिछड़े वर्ग घोषित किया गया है, झूठे दावेदारों को नहीं।" जैसा कि पहले कहा जा चुका है, राज्य को यह घोषणा करने की पूरी स्वतंत्रता है कि कम आय वाले ऐसे परिवारों के व्यक्तियों को, जिन्होंने कोई परम्परागत व्यवसाय अपना रखा है उस स्थिति में पिछड़े वर्ग का व्यक्ति माना जाए, जबकि कुल मिलाकर वह वर्ग सामाजिक और शैक्षिक दृष्टि से पिछड़ा हुआ हो। लेकिन यह भी उतना ही आवश्यक है कि जिस समय उक्त वर्ग से संबंधित कोई व्यक्ति विशेष व्यवहार की मांग करे, उस समय भी उसके परिवार ने वही परम्परागत व्यवसाय अपना रखा हो। चूंकि इस नियम से यह बात पूरी तरह से सुनिश्चित नहीं होती, इसलिए इसका दुरुपयोग किए जाने की संभावना है और वास्तव में जिस व्यक्ति की सुविधा के लिए यह नियम बनाया गया है, उसे यह सुविधा नहीं मिल पाएगी। इसलिए पारम्परिक व्यवसाय से संबंधित नियम को समुचित रूप से संशोधित किया जाना चाहिए।

31. अध्याय II में सामाजिक दृष्टि से नीची कोई 23 जातियों के संबंध में विचार किया गया है। समिति ने अध्याय XIII में इनमें से पहली 19 जातियां सुनिश्चित की हैं और कहा है कि इन जातियों को समाज में निम्नतर जातियां समझा जाता है, क्योंकि ये जातियां जिस प्रकार के कार्य करती हैं, उन्हें गन्दा माना जाता है। इन्हें सामाजिक विषमताओं का सामना करना पड़ता है और शैक्षिक तथा आर्थिक, दोनों ही दृष्टियों से ये घोर पिछड़ी जातियां हैं। नियम 5 में बताई गई अंतिम चार जातियों का रिपोर्ट के अध्याय XIII में उल्लेख नहीं किया गया है। यह भी पता नहीं चलता कि इन्हें किस आधार पर सामाजिक और शैक्षिक दृष्टि से पिछड़े वर्ग में शामिल किया गया है। यह हो सकता है कि राज्य सरकार के पास ऐसा करने के पर्याप्त कारण रहे हों, लेकिन हमारे सामने ऐसी कोई सामग्री नहीं है। इसलिए, जैसा कि इस समय उचित समझा गया है, हम इस आधार पर आगे विचार करने के लिए तैयार नहीं हैं कि क्रम संख्या 20 से 23 तक की जातियां पिछड़े वर्गों में आती हैं।

32. अध्याय III में थोड़ी जोत वाले काश्तकारों को पिछड़ा वर्ग माना गया है। जोत की सीमाएं, जिस जमीन पर काश्त की जाती है, उस जमीन की किस्म और जिस क्षेत्र में वह जमीन आती है, उस क्षेत्र के अनुसार अलग-अलग हैं। काश्तकार, स्वामी भी हो सकता है और अभिधारी भी। यहां तक कि वह गैर-काश्तकार भी हो सकता है, बशर्ते कि वह अपने जीवन-यापन के लिए पूरी तरह से भूमि पर निर्भर करता हो। काश्तकार को, समिति द्वारा अपनी रिपोर्ट के अध्याय XII में की गई सिफारिशों के आधार पर एक वर्ग माना गया है। समिति ने इसके जो कारण बताए हैं, उनसे पता चलता है कि इसमें प्रधान रूप से आर्थिक पहलू को ध्यान में रखा गया है। जैसा कि पहले विचार व्यक्त किया गया है, एक वर्ग, ऐसे लोगों का एक सजातीय सामाजिक प्रवर्ग होता है, जिनकी विशेषताएं समान होती हैं और जिसे उनके सामान्य गुणों से पहचाना जाता है। काश्तकारों के विषय में कुल मिलाकर यह कहा जा सकता है कि वे ऐसे लोग हैं, जो जमीन पर काश्त करते हैं या जमीन के सहारे जीते हैं और मात्र यह संयोग ही उन्हें एक वर्ग बना देता है कि उनके पास एक निश्चित सीमा से कम जमीन है। ऐसी स्थिति में सामाजिक और शैक्षिक पिछड़ेपन की सुसंगति गौण हो जाती है। कुछ क्षेत्रों में, जैसे कि कश्मीर घाटी में, एक काश्तकार के लिए उच्चतम सीमा सिंचित भूमि की 10 कनाल है। यदि किसी काश्तकार के पास 10 कनाल या इससे कम भूमि है, तो उसे पिछड़ा अर्थात् सामाजिक और शैक्षिक दृष्टि से पिछड़ा माना जाएगा। लेकिन यदि उसी गांव में रहने वाले उसके भाई के पास उच्चतम सीमा से आधा कनाल भूमि अधिक है, तो उसे पिछड़ा नहीं माना जाएगा। इससे सारी स्थिति एकदम अस्पष्ट हो जाती है। यह कहना बहुत कठिन होगा कि यदि एक व्यक्ति के पास 10 कनाल भूमि है, तो उसे सामाजिक और शैक्षिक दृष्टि से पिछड़ा माना जाए, जबकि आधा कनाल अधिक जमीन रखने वाले उसके भाई को पिछड़ा न माना जाए। ऐसे मामले में गलती आर्थिक पक्ष को उन पक्षों से अधिक महत्व देने में है जिनसे पता चलता है कि कोई विशिष्ट वर्ग सामाजिक और शैक्षिक दृष्टि से पिछड़ा है या नहीं। अध्याय IV में भी यही गलती दोहराई गई है, जहां एक पेंशनभोगी व्यक्ति के आश्रित को उस स्थिति में पिछड़े वर्ग का माना जाएगा, जबकि ऐसा पेंशनभोगी व्यक्ति परिशिष्ट I में उल्लिखित कुछ सरकारी पदों से सेवा-निवृत्त हुआ हो और जबकि इन पदों का अधिकतम वेतनमान 100 रु० प्रतिमाह से अधिक न रहा हो। इनमें सिपाही, नायक, हवलदार आदि रैंक के रक्षा सेवाओं के कार्मिकों को भी शामिल किया गया है। यह भी समिति की सिफारिशों पर आधारित है, जिसका अध्याय XI में कहना है कि "अन्य लोगों के साथ-साथ पेंशनभोगी व्यक्तियों के प्रतिनिधि भी समिति से मिले और उन्होंने वे कठिनाइयां बताईं, जिनका सामना उन्हें पेंशन से अल्प आय के कारण करना पड़ता है। अध्यावेदकों की दलील थी कि वे हमेशा बढ़ते रहने वाले मूल्यों का मुकाबला नहीं कर सकते, क्योंकि पेंशन की दरें स्थिर बनी रही हैं और उन्हें बढ़ाया नहीं गया है, जैसा कि नियमित सेवा के सरकारी कर्मचारियों के मामले में समय-समय पर किया जाता है। यह भी दलील दी गई कि वे अपने बच्चों की शिक्षा के लिए अपनी इस थोड़ी सी कमाई में से कुछ भी नहीं निकाल सकते हैं।" समिति ने महसूस किया कि ये पेंशनभोगी इन आधारों पर पिछड़े वर्गों के रूप में माने जाने के पात्र हैं, क्योंकि इनमें से ज्यादातर लोग चतुर्थ श्रेणी के या इसी प्रकार के पदों पर रहे थे। इस वर्ग में जो भूतपूर्व सैनिक आते हैं, उनकी संख्या लगभग 90,000 है और सिविल पदों के पेंशनभोगियों की संख्या लगभग 15,000 है। यह कहना मुश्किल है कि ये पेंशनभोगी इस अर्थ में एक वर्ग हैं कि ये एक सजाती वर्ग के हैं वे ऐसे सरकारी कर्मचारियों का अव्यवस्थित प्रवर्ग हैं, जो सेवा निवृत्ति के समय 100 रु० या इससे कम वेतन पाने के संयोग से या कुछ ग्रेडों में भूतपूर्व सैनिक होने के कारण एक कृत्रिम निकाय में आ जाते हैं। यह हो सकता है कि वे चतुर्थ श्रेणी या ऐसे ही ग्रेड की राज्य सेवा के सदस्य रहे हैं। परन्तु यह उनके सामाजिक या शैक्षिक पिछड़ेपन की कसौटी नहीं है। जिन दिनों रोजगार के साधन बहुत कम थे, अनेक लोगों ने सामाजिक दृष्टि से उन्नत होते हुए भी कम वेतन वाले कार्य स्वीकार कर लिए होंगे। उनमें से कुछ लोग शैक्षिक स्तर बनाने में असफल रहे और इसलिए आवश्यकता

के कारण वे ऐसे अल्प वेतन वाले कार्यों को स्वीकार करने के लिए बाध्य हो गए । कुछ अन्य लोग शायद उपर्युक्त वेतनमान वाले पदों से समय-पूर्व सेवा निवृत्त हो गए । इसलिए यह संयोग कि वे एक निश्चित श्रेणी के सरकारी कर्मचारियों के वर्ग में आते हैं, उनके सामाजिक पिछड़ेपन की कसोटी नहीं है। यदि ऐसे पेंशनभोगी व्यक्ति के भाई की स्थिति पर विचार किया जाए, तो यह कसोटी छिन्न-भिन्न हो जाती है। यदि भाई, जो स्वयं एक सरकारी कर्मचारी था, दुर्भाग्य से उस समय सेवा निवृत्त होता है, जबकि वह ऐसे पद पर नियुक्त था, जिसका अधिकतम वेतनमान 105 रु० था, तब उसे सामाजिक और शैक्षिक दृष्टि से पिछड़ा माना जाने की संभावना नहीं थी, जबकि जहां तक दोनों भाइयों का संबंध है, वे हर दृष्टि से एक ही सामाजिक स्तर के रहते हैं । एक अन्य भाई जो प्राइवेट नोकरी में है और बगैर किसी पेंशनी सुविधा के सेवा निवृत्त हो जाता है, इस कसोटी के अधीन पिछड़ा वर्गीकृत किए जाने का हकदार नहीं होगा । यह असंगति समिति द्वारा बनाए गए वर्ग के कृत्रिम स्वरूप के कारण है । यदि सभी भाई सामाजिक और शैक्षिक दृष्टि से पिछड़े हुए हैं, तो आप उनमें से कुछ को ज्यादा पिछड़ा हुआ और दूसरों को कम पिछड़ा हुआ कहकर उनमें भेद करेंगे, जो एक ऐसी बात है, जिसकी बालाजी का मामला, 1963 अनुपूरक (1) एस सी आर 439-4 (ए आई आर 1963 एस सी 649) इजाजत नहीं देता । इसलिए श्री सेन के इस तर्क में सार है कि समिति ने सामाजिक और शैक्षिक दृष्टि से पिछड़े वर्ग निश्चित करने के बजाय, संविधान के अंतर्गत कुछ सुविधाएं देने के प्रयोजन से "काश्तकार" और "पेंशनभोगी व्यक्ति" के दो कृत्रिम ग्रुप बना दिए हैं ।

33. नियमावली के अध्याय V और VI में कतिपय क्षेत्रों के निवासियों को पिछड़ा बताया गया है । अध्याय V के परिशिष्ट II में उल्लिखित कुछ गांवों के निवासियों को पिछड़ा माना गया है । ये गांव युद्ध-विराम रेखा से 5 मील की दूरी के अन्दर हैं । अध्याय VI में राज्य के कुछ क्षेत्रों को "खराब बस्तियां" माना गया है और इन क्षेत्रों के सारे निवासियों को पिछड़ा हुआ बताया गया है । इन दोनों अध्यायों में समिति द्वारा रपोर्ट के क्रमशः अध्याय X और IX में की गई सिफारिशों को समाविष्ट किया गया है । अध्याय IX "खराब बस्तियों" से संबंधित है । समिति ने ऐसी 10 खराब बस्तियां निश्चित की हैं और इनके अन्तर्गत अन्दर बहुत दूर के कुछ जिलों और तहसीलों के 696 गांव आते हैं । 1961 की जनगणना के अनुसार इन क्षेत्रों की आबादी लगभग तीन लाख थी । समिति की रिपोर्ट इस प्रकार है :

"यहां उदाहरण के लिए कुछ प्रसिद्ध बल्कि कुख्यात पिछड़े इलाके हैं, जिनके साथ राज्य के अन्य हिस्सों की तुलना में अलग व्यवहार करना आवश्यक होगा । कुछ दूसरे इलाके भी हैं, जो कठिन भू-भाग होने, वहां तक पहुंच न होने और वाहन संबंधी संचार-साधनों के अभाव के कारण अभी भी अपना आदिम स्वरूप बनाए हुए हैं । इनके अलावा भी कुछ और इलाके बच रहते हैं, जिन्हें वहां की मिट्टी पथरीली और रेतीली होने और सिंचाई की सुविधाएं कम और अपर्याप्त होने के कारण बहुत कम पैदावार की समस्या का सामना करना पड़ता है । इनके अतिरिक्त, ऐसे क्षेत्र भी हैं, जहां विद्युत शक्ति उपलब्ध न होने के कारण, कुटीर उद्योग के पैमाने पर भी औद्योगिक विकास शुरू नहीं हुआ है । कुछ ऐसे क्षेत्र हैं, जिनमें ये सारी या इनमें से कुछ विशेषताएं मिलती हैं ।"

उस समय ऐसी दस बस्तियों का विस्तार से परीक्षा का गई थी और समिति इस निष्कर्ष पर पहुंची कि संचार साधनों की कमी पहुंच का अभाव, भौतिक साधनों की कमी और ऐसे ही अन्य कारणों की वजह से इन क्षेत्रों के निवासी प्रायः आदिम अवस्थाओं में रह रहे हैं और वे सभी सामाजिक और शैक्षिक दृष्टि से पिछड़े हुए हैं । आधुनिक जीवन की सभ्यता का प्रभाव अभी उन तक नहीं पहुंचा है। इन क्षेत्रों का निर्धारण सावधानी से किया गया है। ये अगम्य पर्वतों के एकान्त स्थानों में बसे हुए हैं, जिन्होंने इनके निवासियों को उनकी एकदम आदिम अवस्था में बने रहने पर मजबूर किया है। इनकी आबादी जम्मू और कश्मीर की कुल आबादी की लगभग 8 प्रतिशत है और हमारी राय में, इन क्षेत्रों के निवासियों को पिछड़ा हुआ मानने पर कोई बड़ी आपत्ति नहीं है। यही बात युद्ध-विराम रेखा के निकटवर्ती क्षेत्रों के मामले में भी लागू होती है। इनके अन्तर्गत लगभग 179 गांव आते हैं, जिनकी आबादी लगभग एक लाख है । ऐसा प्रतीत होता है कि पिछले 25 वर्षों से युद्ध-विराम रेखा के पास रहने के कारण पैदा हुई कठिनाइयों ने इस क्षेत्र को जीवन की मुख्य धारा से अलग-अलग करने में योगदान किया है। समिति ने देखा कि इन क्षेत्रों में जीवन-यापन की परिस्थितियों में अन्तर्निहित कठिनाइयों ने निरपवाद रूप से इन क्षेत्रों के निवासियों को आर्थिक और शैक्षिक पिछड़ेपन की अवस्था में रहने पर बाध्य किया है । उनके स्वतंत्र रूप से विचरण करने पर पाबंदियां लगी हुई हैं और उन्हें सूरज छिपने के बाद अपने घरों में बन्द रहना पड़ता है। यहां के पुरुष सदस्य अपनी जीविका कमाने के लिए इस डर से अपने गांव छोड़ कर कहीं और नहीं जा सकते कि उनके बीवी-बच्चे पीछे असुरक्षित रह जायेंगे। यहां की जमीन अनुपजाऊ है। जमीन में इस वजह से कोई निवेश नहीं किया जा सकता कि वह युद्ध-विराम रेखा के नजदीक है। छापामारी के साथ-साथ पशुओं को उठा ले जाना और सम्पत्ति को क्षति पहुंचाना यहां साधारण बातें हैं। कभी-कभी जानें भी चली जाती हैं। यहां के निवासियों के लिए अपनी परम्परागत कला और दस्तकारी का काम कर पाना भी उतना ही कठिन है। जहां तक सामाजिक और शैक्षिक प्रगति का संबंध है, इन सभी सहयोगी घटकों के प्रभाव से ये क्षेत्र राज्य के बाकी हिस्सों से काफी पिछड़े रहे हैं । इस प्रकार हम देखते हैं कि समिति ने इस बारे में विशेष कारण बताए हैं कि उसने इन क्षेत्रों को सामाजिक और शैक्षिक दृष्टि से पिछड़े हुए क्षेत्र क्यों समझा है और चूंकि यह वर्गीकरण भाव-जन्मस्थान के आधार पर नहीं किया गया है, इसलिए हम नहीं समझते कि खराब बस्तियों और युद्ध-विराम क्षेत्रों के निवासियों को सामाजिक और शैक्षिक दृष्टि से पिछड़े हुए मानने के बारे में कोई बड़ी आपत्ति होगी। लेकिन नियम 10 और 12 इस प्रकार तैयार किए गए हैं कि झूठे दावेदार इस सुविधा का दुरुपयोग कर सकते हैं। आरक्षण की सुविधा चाहने वाले किसी व्यक्ति को इन क्षेत्रों का रहने वाला केवल तभी माना जाएगा, जबकि उसका पिता उस वर्ष के, जिसमें पिछड़ेपन का प्रमाणपत्र प्राप्त किया गया है, पूर्ववर्ती 20 वर्षों की अवधि में कम-से-कम 10 वर्ष की अवधि तक उस क्षेत्र में रहा है या दस वर्ष से रह रहा है। नियम इस बात पर जोर नहीं देते कि जिस समय इस सुविधा की मांग की गई हो उस समय या तो पिता या फिर पुत्र उस क्षेत्र का निवासी होना चाहिए। न ही यह इस बात की अपेक्षा करता है कि पुत्र ने अपनी प्रारम्भिक शिक्षा इन क्षेत्रों में प्राप्त की हो, जिससे यह सुनिश्चित किया जा सके कि वह स्वयं और उसका पिता उस क्षेत्र के स्थायी निवासी हैं। बाहर से आया ऐसा कोई भी व्यापारी या सरकारी कर्मचारी, जो इस सुविधा की मांग किए जाने की तारीख से पहले के 20 वर्षों में लगभग 10 वर्षों तक इन क्षेत्रों का निवासी रहा है, पिछड़े वर्ग से संबंधित होने का हकदार होगा। यह सुविधा इन क्षेत्रों के निवासियों को ही मिले, यह सुनिश्चित करने के लिए सरकार को नियमों में ऐसे पर्याप्त उपाय करने चाहिए ताकि केवल असली निवासियों को ही विशेष आरक्षण का लाभ मिल सके, बाहर से आए लोगों को नहीं। वर्तमान नियमों के अनुसार तो बाहर से आए ऐसे व्यक्ति भी इस सुविधा की मांग कर सकेंगे, जिन्हें अपने व्यापार या कारोबार के सिलसिले में पिछले 20 वर्षों में से 10 वर्ष तक इन क्षेत्रों में रहना पड़ गया है। इस कमी को

दूर किया जाना चाहिए और जब तक ऐसा नहीं किया जाता, तब तक किसी व्यक्ति के पिछड़ेपन के बारे में तहसीलदार का प्रमाणपत्र पेश किए जाने का कोई लाभ नहीं होगा।

34. ऊपर हमने उन नियमों में मौजूद कमियां बतलाई हैं, जिनका उद्देश्य राज्य के कुछ निवासियों को पिछड़ा हुआ बताना है। जब तक इन व्यक्तियों को दूर नहीं किया जाता, तब तक इन नियमों का प्रवर्तन संभव नहीं होगा।

35. उपर्युक्त निष्कर्ष को ध्यान में रखते हुए, विभागीय पदोन्नति समिति द्वारा किए गए चयन को रद्द कर देना होगा।

सी० ए० राजेन्द्रन बनाम भारत संघ तथा अन्य

ए०आई०आर० 1968 एस०सी० 507

तथ्य

याची ने प्रत्यर्थियों से इस विषय में कारण बताने की मांग करते हुए उच्चतम न्यायालय से अपना निर्णय देने का अनुरोध किया कि 1963 के कार्यालय ज्ञापन को रद्द करने और 1955 तथा 1957 के कार्यालय ज्ञापन में पहले पारित किए गए आदेशों को पुनः प्रतिष्ठित करने के लिए अनुच्छेद 32 के अधीन परमादेश (मैन्डेमस) के रूप में क्यों न एक रिट जारी की जाए ।

याची, रेलवे बोर्ड सचिवालय सेवा के ग्रेड IV अर्थात् श्रेणी III अराजपत्रित—लिपिक वर्गीय में स्थायी सहायक था । अगला उच्च पद, जिस पर उसने अपनी पदोन्नति का दावा किया था, अनुभाग अधिकारी का था जिसे श्रेणी II, ग्रेड III के रूप में वर्गीकृत किया गया है।

सरकार ने 1955 में एक कार्यालय ज्ञापन जारी किया था, जिसके अनुसार पदोन्नति द्वारा भरे जाने वाले पदों के संबंध में अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों के लिए आरक्षण की कोई व्यवस्था नहीं थी, हालांकि उन्हें कुछ रियायतें दी जानी थी । 1957 में एक और ज्ञापन में अनुसूचित जातियों के लिए 12½ प्रतिशत और अनुसूचित जनजातियों के लिए 5 प्रतिशत आरक्षण का निर्णय किया गया ।

दक्षिण रेलवे बनाम बी० रंगाचारी (ए० आई० आर० 1962 एस० सी० 36) मामले में इस न्यायालय ने बहुमत निर्णय से रेलवे बोर्ड के आक्षेपगत परिपत्रों को अनुच्छेद 16 (4) की परिधि के अन्तर्गत ठहराया था और इस प्रकार अपील मंजूर कर ली गई थी ।

इस निर्णय के परिणाम के रूप में, संघ सरकार ने 1963 में इस मामले की समीक्षा की और निर्णय लिया कि श्रेणी II और I में पदोन्नति के लिए वहां पदों का कोई आरक्षण नहीं होना चाहिए, जहां ऐसी पदोन्नति वरिष्ठता और प्रतियोगी परीक्षा के परिणामस्वरूप की जानी हों लेकिन तृतीय और चतुर्थ श्रेणी के पदों के संबंध में पिछड़े वर्गों के लिए आरक्षण की व्यवस्था जारी रखी गई । याची ने इस आधार पर इस आदेश को चुनौती दी कि श्रेणी I और II के पदों के संबंध में आरक्षण को समाप्त करना अनुच्छेद 16 (4) द्वारा पिछड़े वर्गों के लिए गारन्टीकृत मौलिक अधिकारों का प्रत्यक्ष अतिलंघन है।

विवाद्यक (इशू)

क्या अनुच्छेद 16 (4) ने सरकार पर पिछड़े वर्गों के लिए आरक्षण की व्यवस्था करने का कोई संवैधानिक दायित्व डाला है ।

निर्णय

यह मामला मुख्य न्यायमूर्ति के० एन० वांचू, सर्व न्यायमूर्ति आर० एस० बचवत, वी० रामास्वामी, जे० के० मित्तर और के० एस० हेगड़े के सामने पेश हुआ ।

न्यायालय ने इस मुद्दे का निर्णय नकारात्मक दिया और यह माना कि ऐसा कोई संवैधानिक दायित्व नहीं है । न्यायालय का निर्णय सुनाते हुए न्यायमूर्ति रामास्वामी ने कहा कि अनुच्छेद 16 (4) पदों के आरक्षण के संबंध में, चाहे ऐसा आरक्षण भरती की अवस्था में हो या पदोन्नति की अवस्था में, पिछड़े वर्गों को कोई मौलिक अधिकार प्रदान नहीं करता । यह केवल एक समर्थ बनाने वाला उपबंध है, जो "राज्य को नागरिकों के ऐसे पिछड़े वर्गों के पक्ष में नियुक्तियों में आरक्षण की व्यवस्था करने की वैवेकिक शक्ति प्रदान करता है, जिनका राज्य की सेवा में पर्याप्त प्रतिनिधित्व नहीं है ।" (पृष्ठ 513) नियुक्तियों या पदों के लिए आरक्षण की व्यवस्था करते समय सरकार को न केवल पिछड़े वर्गों के सदस्यों के दावों को ध्यान में रखना होता है बल्कि प्रशासन की दक्षता का भी ध्यान रखना होता है जो सर्वाधिक महत्वपूर्ण होती है।

न्यायालय ने निर्णय दिया कि याची की रिट याचिका असफल रही है और सरकार का आदेश अवैध है।

अधिकथित प्रतिपादना :—आरक्षण की व्यवस्था करना सरकार के विवेक पर निर्भर है । यहां तक कि यदि सरकार ने अपने किसी पहले आदेश के द्वारा आरक्षण की नीति अपनाई हो, तो वह परवर्ती आदेश द्वारा उसका त्याग भी कर सकती है।

पंजाब राज्य बनाम हीरा लाल,

ए०आई०आर० 1971 एस० सी० 1977

तथ्य

सितम्बर, 1963 में पंजाब सरकार ने अनुसूचित जातियों,अनुसूचित जनजातियों और पिछड़े वर्गों के लिए कुछ उच्च पद आरक्षित किए थे । मार्च, 1964 में एक पत्र द्वारा इस आदेश के संबंध में आगे स्पष्टीकरण जारी किया गया ।

प्रत्यर्थी संख्या 1 और 3 भारत सरकार के वन विभाग में मुख्य सहायक के रूप में कार्य कर रहे थे । प्रत्यर्थी 1, प्रत्यर्थी 3 से जो एक अनुसूचित जाति का था, वरिष्ठ था । सरकारी आदेश के परिणामस्वरूप प्रत्यर्थी 3 को प्रत्यर्थी 1 के दावे की उपेक्षा करके अस्थायी रूप से अधीक्षक के पद पर पदोन्नति कर दिया गया । इस प्रकार इस आदेश से व्यथित प्रत्यर्थी 1, प्रत्यर्थी 3 की पदोन्नति को रद्द कराने और उस पद पर अपनी पदोन्नति कराने के उद्देश्य से पंजाब उच्च न्यायालय के सामने गया । उच्च न्यायालय ने पदोन्नति रद्द कर दी । इस पर सरकार ने अपील की ।

उच्च न्यायालय के मत में, पिछड़े वर्गों के लिए किया गया आरक्षण उच्चतम न्यायालय द्वारा महाप्रबंधक, दक्षिण रेलवे बनाम रंगाचारी ए० आई० आर० 1962 एस० सी० 36 के मामले में किए गए निर्वचन के अनुसार अनुच्छेद 16 (4) को ध्यान में रखते हुए अनाज्ञेय नहीं है । परन्तु, सरकार ने 10 पदों के एक ग्रुप में से पहला पद इन वर्गों के लिए आरक्षित करके अनुच्छेद 16 (1) का अतिक्रमण किया है । उसने अभिनिर्धारित किया कि ऐसे आरक्षण से विभिन्न विषमताएं उत्पन्न हो सकती हैं जैसे कि जिस व्यक्ति को इसका लाभ मिला है, वह अनेक वरिष्ठ लोगों के ऊपर आकर बैठ सकता है?

विवाद्यक (इशू)

क्या अनुच्छेद 16(4) के अधीन किया गया आरक्षण अनुच्छेद 16(1) पर आघात करता है ?

निर्णय

यह मामला सुनवाई के लिए मुख्य न्यायमूर्ति जे० सी० शाह, न्यायमूर्ति के० एस० हेगड़े और न्यायमूर्ति एस० एन० ग्रोवर के सामने आया। न्यायमूर्ति हेगड़े के माध्यम से न्यायालय ने राज्य की अपील की पुष्टि की और अभिनिर्धारित किया कि आरक्षण से अनुच्छेद 16(1) का उल्लंघन नहीं हुआ है, इस बात की ओर ध्यान दिलाया गया कि "मात्र इस बात से आरक्षण बुरा नहीं हो जाता कि किए गए आरक्षण से उन व्यक्तियों में से कुछ को बहुत अधिक सुविधाएं मिल जाएंगी, जिन्हें आरक्षण की सुविधाएं प्राप्त हैं (पृष्ठ 1780) न्यायालय ने टिप्पणी दी कि अनुच्छेद 16(4) के अधीन किए गए प्रत्येक आरक्षण में, विशेषकर पदोन्नति के मामलों के संबंध में भेदभाव का तत्व आता है, ऐसे आरक्षण का अनिवार्य परिणाम यह रहा कि कनिष्ठ अधिकारियों को अपने वरिष्ठ अधिकारियों के आगे निकल जाने का मौका मिल गया। इससे उनमें से कुछ लोगों को निराशा हो सकती है, परन्तु संविधान को निर्माताओं ने सारे समाज के हित में यही उचित समझा कि इस संबंध में नागरिकों के पिछड़े वर्ग को कुछ संरक्षण दिया जाना चाहिए।" (पृष्ठ 178)।

उसने यही निष्कर्ष निकाला कि न तो उच्च न्यायालय के पास ऐसी कोई सामग्री थी और न इसके बाद ही ऐसी कोई सामग्री है, जिससे यह निष्कर्ष निकाला जा सके कि आदेश से अनुच्छेद 16(1) का अतिक्रमण हुआ है। "अनुच्छेद 16(4) के अधीन नियुक्तियों के आरक्षण को परिकल्पित आधारों पर या काल्पनिक सम्भावनाओं पर अभिखाण्डित नहीं किया जा सकता। जो भी व्यक्ति उक्त अनुदेश के अधीन आरक्षण को चुनौती देता है, उसे सन्तोषप्रद रूप में यह साबित करना चाहिए कि इससे अनुच्छेद 16(1) का अधिक्रमण हुआ है।"

अधिकथित प्रतिपादनाएं—मात्र इस तथ्य से आरक्षण अपने आप बुरा नहीं हो जाता कि आरक्षण की व्यवस्था से ऐसे कुछ व्यक्तियों को व्यापक सुविधाएं मिल जाएंगी, जिन्हें आरक्षण की सुविधा मिली हुई है । इसी प्रकार महत्व इस बात का नहीं है कि खुद की लम्बाई कितनी है, बल्कि इस बात का है कि इससे खाई कितनी पटेगी । (अर्थात् आरक्षित श्रेणी का जो व्यक्ति सूची में 73 वें स्थान पर होने पर पदोन्नति के लिए तैयार बैठा है, वह उस स्थिति में 72 अन्य व्यक्तियों से आगे आ सकता है, जबकि भरा जाने वाला पद केवल एक ही और यह पद आरक्षित श्रेणी के लिए हो) ।

केरल राज्य बनाम थामस

ए०आई०आर० 1976, एस०सी० 490

तथ्य

यह अपील केरल राज्य द्वारा उच्च न्यायालय के निर्णय के विरुद्ध की गई थी और केरल राज्य और अधीनस्थ सेवा नियमावली, 1958 के नियम 13 ए ए तथा दो आदेशों की वैधता के सम्बन्ध में थी।

प्रत्यर्थी रजिस्ट्री विभाग में निम्न श्रेणी लिपिक था। सेवा नियमों के नियम 13 ए के अधीन वरिष्ठता के आधार पर इस संवर्ग से उच्च श्रेणी लिपिकों के उच्च संवर्ग में पदोन्नति दो वर्षों के अन्तर निर्धारित परीक्षा उत्तीर्ण करने पर निर्भर थी। नियम 13 ए ए और तारीख 13 जनवरी 1972 तथा 11 जनवरी, 1974 के दो आदेशों में अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों को परीक्षा उत्तीर्ण करने के लिए अधिक अवधि अर्थात् दो अतिरिक्त वर्ष की अवधि देने की व्यवस्था थी। प्रत्यर्थी की शिकायत यही थी कि अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों को दी गई इस रियायत को देखते हुए वे प्रत्यर्थी से पहले पदोन्नति प्राप्त करने की स्थिति में थे, हालांकि उन्होंने परीक्षाएं उत्तीर्ण नहीं की थीं।

उच्च न्यायालय में प्रत्यर्थी का प्रधान तर्क यह था कि सेवा नियमों का नियम 13 ए ए और उसके अधीन दिए गए पदोन्नति के आदेश अनुच्छेद 16(1) और 16(2) का अतिक्रमण करते हैं। इसके अतिरिक्त, अनुच्छेद 16(4) के अलावा, जो कि अनुच्छेद 16(1) का अपवाद है, 16(1) के अधीन गारन्टीकृत अधिकार में कटौती नहीं की जा सकती। दूसरी ओर, राज्य की दलील थी कि आक्षेपगत नियम और आदेश, न केवल वैध और विधिमान्य हैं, बल्कि अनुच्छेद 16(1) के अधीन सुव्यवस्थित से वर्गीकरण से भी समर्थित हैं।

उच्च न्यायालय ने प्रत्यर्थी के इन तर्कों की पुष्टि की कि नियम 13 ए ए भेदभावपूर्ण और संविधान के अनुच्छेद 16(1) का अतिक्रमण करने वाला है और वह अनुच्छेद 16(4) द्वारा अनुमत आरक्षण से परे भी है।

उच्चतम न्यायालय के समक्ष अपीलार्थी ने दलील दी कि पहले तो नियम 13 ए ए ऐसे आरक्षण की व्यवस्था नहीं करता, जैसी कि अनुच्छेद 16(4) द्वारा की गई है। इस प्रकार, उच्च न्यायालय ने इस नियम को इस आधार पर रद्द करके भूल की है कि वह अनुच्छेद 16(4) द्वारा अनुमत आरक्षण से परे है। दूसरे, अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों के सदस्य एक ही जाति के सदस्य होते हैं। जिनका ऐतिहासिक कारणों से अपने आप में एक विशेष वर्ग बन गया है और स्वयं संविधान ने उन्हें एक ऊंचा स्थान प्रदान किया है। इस प्रकार अनुच्छेद 16(1) राज्य को ऐसा उचित वर्गीकरण करने से नहीं रोकता, जिससे कि सेवा को कार्यरूप देने के लिए उन्हें कतिपय रियायतें देकर अनुसूचित जातियों और जनजातियों के सदस्यों को आगे बढ़ाया जा सके।

उच्चतम न्यायालय ने सात में से पाँच के बहुमत से अपील का अनुमोदन कर दिया।

विवाद्यक (इशू)

(1) मुख्य विवाद्यक यह था कि क्या नियम 13 ए ए और दो आदेश अनुच्छेद 16(1) का अधिक्रमण करने के कारण असंवैधानिक है, (2) आनुषंगिक तौर पर यह प्रश्न भी विचारार्थ सामने आया कि क्या अनुच्छेद 16(4) अनुच्छेद 16(1) का अपवाद है।

बहुमत निर्णय

क्या नियम 13 ए ए और दो आदेश अनुच्छेद 16(1) का अतिक्रमण करने के कारण असंवैधानिक हैं, इस बारे में बहुमत राय में मुख्य विवाद्यक का उत्तर नकार में दिया और उन्हें असंवैधानिक नहीं माना।

मुख्य न्यायमूर्ति रे ने विचार व्यक्त किया कि अनुच्छेद 16(1) ऐसे तरीके से उचित वर्गीकरण करने की इजाजत देता है, जैसा कि अनुच्छेद 14 में बताए गए तरीके के अनुरूप हो अर्थात् वहां, जहां कि उसका प्राप्त किए जाने वाले उद्देश्यों से संबंध हो। इस प्रकार नियम 13 ए ए के अधीन, जो कि अनुसूचित जातियों और जनजातियों के सदस्यों को पदोन्नति के लिए विशेष परीक्षाएं उत्तीर्ण करने से छूट देता है। इन सदस्यों का वर्गीकरण "सभी नागरिकों को सरकारी कार्यालय में सेवा योजन या नियुक्ति संबंधी मामलों में समान अवसर प्रदान करने के उद्देश्य से युक्ति संगत संबंध रखने के कारण उचित और युक्तियुक्त है।" उन्होंने नोट किया कि इस वर्ग को ऐसी अस्थायी छूट काफी पहले, यानी 1 नवम्बर, 1956 को दी गई थी, जो केरल में सेवा शर्तों के प्रारम्भ की तारीख है। अब नियम 13 ए ए ने उसे केवल कानूनी आधार दिया है। इसलिए, ऐतिहासिक पृष्ठभूमि इस नियम के अधीन किए गए वर्गीकरण को उचित ठहराती है। स्वयं संविधान में इन लोगों के साथ अनुकूल बर्ताव करने के लिए विभिन्न उपबंधों में अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों का वर्गीकरण किया गया है। विशेष रूप से अनुच्छेद 335 यह आदेश देता है कि रोजगार के मामले में इनके दावों पर इस तरह से विचार किया जाए कि यह प्रशासनिक दक्षता बनाए रखने की दृष्टि से संगत हो। उन्होंने ध्यान दिलाया कि नियम 13 ए ए के अधीन एक अस्थायी अवधि के लिए छूट दिए बिना उन्हें पर्याप्त पदोन्नति मिलना सम्भव नहीं होगा। पदोन्नति में वरिष्ठता के सिद्धान्त का पालन अलबत्ता अभी भी किया जाता है। इस नियम के अधीन अस्थायी रियायत उनके पिछड़ेपन और राज्य सेवा में अपर्याप्त प्रतिनिधित्व के कारण न्यायसंगत है। इस प्रकार आक्षेपगत नियम और उसके अधीन दिए गए दो आदेश 335 की परिधि में आते हैं, क्योंकि वे एक असंतुलित सरकारी सेवा को ठीक करने और राज्य सेवा में सभी जातियों के बीच समता लाने का दावा करते हैं। प्रशासन में दक्षता की कसौटी का कम-से-कम इस दृष्टि से इस नियम के कारण ह्रास नहीं होता कि वह पदोन्नति के बाद परीक्षा उत्तीर्ण करने से हमेशा के लिए छूट नहीं देता, बल्कि केवल दो वर्ष की अतिरिक्त अवधि की छूट देता है। यदि अनुच्छेद 14 वर्गीकरण की इजाजत देता है, तो अनुच्छेद 16 भी समान रूप से इसकी इजाजत देता है, क्योंकि दोनों में ही समानता की बात कही गयी है। अनुच्छेद 16(1) के अधीन सेवाओं में "अवसर की समानता" प्राप्त करने के लिए सरकार सारे विधिसम्मत उपाय कर सकती है। अनुच्छेद 16(1) विधि के और उद्देश्य प्रयोजन के आधार पर वर्गीकरण की इजाजत देता है। वर्तमान प्रकरण में ऐसा वर्गीकरण इस दृष्टि से न्यायोचित है कि इससे अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों के सदस्य एक निश्चित सीमा तक पदोन्नति द्वारा सेवाओं, में पर्याप्त प्रतिनिधित्व प्राप्त करने के योग्य हुए हैं। उनके साथ ऐसा अलग प्रकार का बर्ताव "उन्हें दक्षता के अनरूप समानता देने के प्रयोजन के लिए" केवल समय की दृष्टि से किया गया है।

ऊपर बताए गए कारणों से उन्होंने नियम 13 ए ए और दो आदेशों को संवैधानिक और अनुच्छेद 16(1) का अतिक्रमण न करने वाला बताकर उनकी वैधता की पुष्टि की।

न्यायमूर्ति मैथ्यू ने उचित वर्गीकरण के अलावा राज्य की प्रतिकारात्मक कार्रवाई पर बल दिया। उनका विचार था कि "यद्यपि अवसर की पूरी समानता का होना असम्भव है ..... प्रतिकारात्मक स्वरूप के ऐसे उपाय, जिनका अवसर की समानता सुनिश्चित करने की दृष्टि से कारणीय बाधाओं में कमी करने के लिए हिसाब बताया जाता है, कभी भी अनुच्छेद 16(1) के विरुद्ध नहीं हो सकते।"

मुख्य न्यायमूर्ति रे की तरह, उन्होंने भी अनुच्छेद 335 का उल्लेख किया, जो अनुसूचित जातियों और जनजातियों के सदस्यों की राज्य सेवाओं में दक्षता बनाए रखने की दृष्टि से संगत पर्याप्त प्रतिनिधित्व की मांग करने के योग्य बनाता है। उन्होंने संयुक्त राज्य अमरीका के उच्चतम न्यायालय में "प्रतिकारात्मक राज्य कार्यवाई" के विचार का हवाला दिया और "ऐसा कोई कारण नहीं पाया, जिसकी वजह से न्यायालय को राज्य से यह मांग नहीं करनी चाहिए कि वह ऐसी अनुपातिक समानता का मानक स्वीकार करें, जिसमें नागरिकों के किसी वर्ग की भिन्नतापरक अवस्थाओं और परिस्थितियों का ध्यान रखा जाता हो ....."

"अवसर की समानता" सुनिश्चित करने के लिए राज्य अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों के सदस्यों को सेवाओं में पर्याप्त प्रतिनिधित्व पाने में समर्थ पाने के लिए कोई भी उपाय कर सकता है और "उसे प्रतिकारात्मक उपाय के रूप में उचित ठहरा सकता है", बशर्ते कि वह प्रशासन की दक्षता के पक्ष को न छोड़ें।

वे मुख्य न्यायमूर्ति रे से सहमत थे कि अनुच्छेद 16(1) अनुच्छेद 14 के सदृश वर्गीकरण की इजाजत देता है और नियम 13 ए ए में अनुसूचित जातियों और जनजातियों के पक्ष में दिए गए वर्गीकरण का "विधि के प्रयोजन के साथ, अर्थात् अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों के सदस्यों को प्रशासनिक दक्षता के ह्रास के बगैर ..... पदोन्नति में उन्हें उनका उचित हिस्सा प्राप्त करने के योग्य बनाने से, उचित सम्बन्ध है।"

वे इस सम्बन्ध में मुख्य न्यायमूर्ति रे के निष्कर्ष से सहमत थे और उन्होंने अपील मंजूर कर ली।

न्यायमूर्ति कृष्ण अय्यर ने अनुच्छेद 14 में दिए गए वर्गीकरण के अनुसार ही अनुच्छेद 16(1) के अधीन "उचित वर्गीकरण" पर जोर दिया और अनुच्छेद 335 का हवाला दिया। उन्होंने यह विचार व्यक्त किया

> "इस मामले में वास्तविक से बहुत ही कम प्रतिनिधित्व प्राप्त और अत्यन्त उपेक्षित वर्गों, जिन्हें अन्यथा अनुसूचित जातियां और अनुसूचित जनजातियां कहा गया है, के दावों को आगे बढ़ाने और प्रशासनिक क्षमता को बनाए रखने की दृष्टि से संगत रूप में उनका उत्थान करना ऐसा उद्देश्य है, जिसे अनुच्छेद 46 और 335 के जरिए संविधान में मान्यता प्रदान की है और जिसे अनुच्छेद 16(1) में उचित स्थान प्राप्त है।"

उन्होंने सावधान किया है कि इस फार्मूले में सारे जातिगत पिछड़ेपन को मान्यता नहीं दी जानी चाहिए क्योंकि यह अनुच्छेद 16(1) और (2) दोनों का नाशक होगा। वास्तविक भेदभाव के आधार के लिए सामाजिक विषमता तीखी और ठोस होनी चाहिए। केवल अनुसूचित जातियां और अनुसूचित जनजातियां ही इस वर्ग में आती हैं। यदि अन्य कोई जाति, राजनीतिक या दूसरे प्रकार का दबाव डालकर अनुच्छेद 16(1) और (2) से छूट प्राप्त करती है, तो उसे असंविधानिक भेदभाव का जोखिम उठाना

उन्होंने मुख्य न्यायमूर्ति के साथ सहमति व्यक्त करते हुए, इस चेतावनी के साथ ..... कि किसी भी जाति को, भले ही वह पिछड़ी हुई लगती हो ..... समस्त नागरिकों के लिए गारन्टीकृत अवसर की समानता की सीमाओं को तोड़ने की इजाजत नहीं दी जा सकती" अपना निर्णय दिया।

न्यायमूर्ति फजल अली ने भी "उचित वर्गीकरण" की संकल्पना पर जोर दिया। उन्होंने कहा :—

"अनुच्छेद 16 का खण्ड (1) राज्य के अधीन सेवाओं में सभी नागरिकों के लिए अवसर की समानता की व्यवस्था करता है .....

समुचित वर्गीकरण करके ऐसा किया जा सकता है, जिससे नागरिकों के प्रत्येक वर्ग को सेवाओं में उचित प्रतिनिधित्व प्राप्त हो। इससे सभी नागरिकों को समान अवसर प्राप्त हो सकें।

नियम 13 ए ए के संबंध में उनका विचार था कि नियम 13 ए ए समाविष्ट करके राज्य ने अनुच्छेद 335 में दिए गए आदेश का अतिक्रमण नहीं किया है, जैसा कि प्रत्यर्थी और अन्य पदोन्नत व्यक्तियों ने दावा किया है। उन्होंने यह उचित समझा कि नियम 13 ए ए में दी गई रियायत अनुच्छेद 16(1) के अधीन उपयुक्त वर्गीकरण के अनुरूप है, उसका अतिक्रमण नहीं करती।

उन्होंने सावधान किया कि न्यायालय को "सरकार द्वारा किए गए वर्गीकरण को पूरी छानबीन करके इस बात का पता लगाना होगा कि वह समानता की संकल्पना को नष्ट तो नहीं करता। दूसरे शब्दों में, राज्य को समानता की आड़ में पक्षपात या भाई-भतिजावाद का अवलंब लेने की इजाजत नहीं दी जा सकती।"

इस विशिष्ट मामले में उन्होंने सरकार द्वारा नियम 13 ए ए के समावेश द्वारा किए गए वर्गीकरण को अनुच्छेद 16 के अधीन उचित माना।

न्यायमूर्ति बेग ने नियम 13 ए ए और आदेशों को अनुच्छेद 16(4) के अधीन "आंशिक और सशर्त आरक्षण" मानकर उचित ठहराया। उन्होंने इस बात की ओर ध्यान दिलाया कि यदि इस अनुच्छेद में ऐसे उच्च पदों का, जिन पर पदोन्नति हो सकती है, पूरा आरक्षण शामिल किया जा सकता है, तो ऐसा कोई कारण नहीं है कि उसके साथ यह शर्त रख दी जाए कि अस्थायी पदोन्नति केवल तभी पूर्ण और पुष्ट पदोन्नति मानी जाएगी जबकि अस्थायी रूप से पदोन्नत व्यक्ति एक निश्चित अवधि के अन्दर कुछ परीक्षाएं पूरी कर लेगा।"

यदि इस नियम और आदेशों को ऐसे सापेक्ष या आंशिक या सशर्त आरक्षण के रूप में देखा जाए, जो अनुच्छेद 335 के अनुरूप पर्याप्त सामान्यता की अपेक्षाओं को पूरा करता है और अनुच्छेद 46 की दृष्टि से देखने पर सामान्यता और न्याय की मांग को पूरा करता है, तो यह नियम और आदेश, उनकी राय में, संविधान के अनुच्छेद 16(4) के अधीन न्यायसंगत होंगे।

उन्होंने टी देवदासन बनाम भारत संघ, ए० आई० आर० 1964 एस० सी० 179 और एम० आर० बालाजी बनाम मैसूर राज्य, ए० आई० आर० 1963 एस० सी० 649 के मामलों को अलग माना, जिनमें अनुच्छेद 16(4) के अधीन अन्तिम या पूर्ण आरक्षण के संबंध में इस आधार पर कसौटियां निर्धारित की गई हैं जबकि वर्तमान मामले में मात्र "आंशिक या अस्थायी या सशर्त आरक्षण की व्यवस्था है।"

वे इस बात से सन्तुष्ट नहीं थे कि उच्च न्यायालय का यह निष्कर्ष सिद्ध होता है कि आक्षेपगत नियम और आदेश अनुच्छेद 16(4) के क्षेत्र

से बाहर है। उनके मत में, प्रत्यर्थी की याचिका इस आधार पर खारिज कर दी जानी चाहिए थी एक यह "अपने विरुद्ध ऐसे भेदभाव, जो संविधान द्वारा समर्थित हो, किए जाने की बात साबित करने का दायित्व पूरा करने में असफल रहा है"। इसी के मुताबिक उन्होंने अपील मंजूर कर ली।

अल्पमत निर्णय :

दूसरी ओर दो न्यायमूर्तियों के विसम्मत निर्णय ने इस मुद्दे का उत्तर सकारात्मक दिया और इस नियम को अनुच्छेद 16(1) का अतिक्रामक बताया।

न्यायमूर्ति खन्ना ने इस बात पर जोर दिया कि अनुच्छेद 16(1) रोजगार के मामलों में अवसर की समानता सुनिश्चित करता है। यह सबसे कम योग्य और सबसे ज्यादा योग्य—सभी पर सामान्य रूप से लागू होता है। कुल लोगों के साथ तरजीही बर्ताव करना "अवसर की समानता के सिद्धान्त के विपरीत होगा"। इस अनुच्छेद के अधीन अवसर की समानता ऐसी "अमूर्त या अवास्तविक" नहीं है कि उसे "कोई आड़ लेकर नष्ट ही कर दिया जाए।" किसी वर्ग को दी गई छूट, चाहे वह सीमित ही हो, उस वर्ग के साथ पक्षपातपूर्ण बर्ताव करने के समान होगी। उन्होंने यह भी कहा :—

> "ऐसे व्यक्तियों के साथ तरजीही बर्ताव करने के प्रयोजन के लिए जिन्हें विभिन्न स्रोतों से भरती करने की कोशिश नहीं की गई है, और अनुच्छेद 16 के खण्ड (4) के दायरे में न आने वाले मामलों में वर्गीकरण को प्रोत्साहन देने का प्रभाव यदि अनुच्छेद 16 के खण्ड (1) में सुरक्षित अवसर की समानता के वैध सिद्धान्त को पूरी तरह से नष्ट करने वाला न हो, तो भी वह इसे काटने वाला तो अवश्य होगा।"

उन्होंने कहा कि अधिक वर्गीकरण करना समानता के महत्व को कम करना है, जैसा कि अनुच्छेद 16(1) के मामले में हुआ है। इस अनुच्छेद में वर्गीकरण की नई-नई परिकल्पनाएं सन्निविष्ट करने का प्रभाव, जैसी कि वर्तमान मामले में कोशिश की गई है, राज्य को वर्गीकरण के वेश में, आबादी के अलग-अलग भागों को सरकारी नौकरी के लिए कृपा-पात्र वर्गों के रूप में मानने की शक्ति देने वाला होगा।" (पृष्ठ 509)।

उनका निष्कर्ष यह था कि उक्त नियम और आदेश अनुच्छेद 16(1) के अधीन संवैधानिक दृष्टि से अनुज्ञेय नहीं हैं, क्योंकि इस बात के अलावा, कि वह उक्त अनुच्छेद के अधीन अवसर की समानता के सिद्धान्त का अतिक्रमण करेगा, "वह व्यवहार में उस दृष्टि के विरुद्ध भी होगा, जो अब तक इस न्यायालय ने चम्पकम (ए० आई० आर० 1951 एस० सी० 226), रंगाचारी (ए० आई० आर० 1962 एस० सी० 36) और देवदासन (ए० आई० आर० 1964 एस० सी० 179) के मामले में अभिनिर्धारित की थी। पिछड़े वर्गों के हितों की सुरक्षा के लिए राज्य को अनुच्छेद 16(4) के अधीन व्यापक शक्ति प्राप्त है। उनकी राय में, ऐसा कर पाने में राज्य की असफलता के कारण अनुच्छेद 16(1) का तोड़-मरोड़ कर अर्थ निकालना उचित नहीं है।

न्यायमूर्ति गुप्ता ने न्यायमूर्ति खन्ना के साथ सहमति व्यक्त करते हुए इस मुद्दे के एक पहलू के संबंध में कुछ बातें और कहीं :—

> उन्होंने स्वीकार किया कि अनुच्छेद 16(1) वर्गीकरण की इजाजत तो देता है, परन्तु केवल ऐसे वर्गीकरण की, जो उचित हो। उनकी दृष्टि से निम्न श्रेणी लिपिकों का दो श्रेणियों—वे जो अनुसूचित जातियों और जनजातियों के हैं और वे जो ऐसे नहीं है, में उप-विभाजन उचित नहीं है। उन्होंने विचार व्यक्त किया :
>
> "अनुच्छेद 16(1) के सन्दर्भ में नियम 13-ए द्वारा एक ही वर्ग के कर्मचारियों के बीच उप-वर्ग बनाया जाना, मेरे मत में, केवल वंश और जाति के आधारों पर भेदभाव करने के बराबर है, जो अनुच्छेद 16 के खण्ड (2) के अनुसार निषिद्ध है।"

क्या अनुच्छेद 16(4) अनुच्छेद 16(1) का अपवाद है ?

इस संबंध में बहुमत ने देवदासन के मामले में न्यायमूर्ति सुब्बा राव की विसम्मति का अनुसरण किया और यह अभिनिर्धारित किया कि अनुच्छेद 16(4) अनुच्छेद 16(1) का अपवाद नहीं है। मुख्य न्यायमूर्ति रे महोदय ने कहा कि अनुच्छेद 16(4) मात्र "यह स्पष्ट और खुलासा करता है कि पिछड़ेपन के आधार पर दिया गया वर्गीकरण अनुच्छेद 16(2) के अन्तर्गत नहीं आता और वह अनुच्छेद 16(1) के प्रयोजन के लिए विधिसम्मत है।" उन्होंने निष्कर्ष निकाला कि अनुच्छेद 16(4) मात्र अनुच्छेद 16(1) में समाविष्ट समानता प्राप्त करने की एक विधि का संकेत देता है।

न्यायमूर्ति मैथ्यू का विचार था कि अनुच्छेद 16(1) में परिलक्षित "अवसर की समानता" केवल परिणामी समानता द्वारा आंकी जा सकती है, केवल शाब्दिक समानता या संख्यापरक परिणाम के रूप में नहीं। उन्होंने कहा :—

> "मैं इस बात से सहमत हूं कि अनुच्छद 16(4) का निर्वचन उस स्थिति में अनुच्छेद 16(1) के अपवाद के रूप में किया जा सकता है, जबकि अनुच्छेद 16(1) में परिलक्षित अवसर की समानता निष्फल हो और वह संख्या-विषयक समानता की संकल्पना के प्रयोजन से हो, जिसमें अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों के सदस्यों की सामाजिक, आर्थिक और शैक्षिक पृष्ठभूमि पर कोई विचार नहीं किया जाता। यदि अनुच्छेद 16(1) के अधीन गारन्टीकृत अवसर की समानता का अर्थ प्रभावशाली और सारवान समानता है, तब अनुच्छेद 16(4) अनुच्छेद 16(1) का अपवाद नहीं है। यह केवल ऐसी सीमा लगाने का एक सुनिश्चित तरीका है, जहां तक अवसर की समानता को ले जाया जा सकता है अर्थात् यहां तक कि आरक्षण की व्यवस्था करने के बिन्दु तक इसे ले जाया जा सकता है।" (पृष्ठ 519)

न्यायमूर्ति कृष्ण अय्यर ने माना कि अनुच्छेद 16(4) अनुच्छेद 16(1) का अपवाद नहीं है, बल्कि एक स्पष्ट कथन है। यह मात्र एक ऐसा तरीका है जो "पिछड़े वर्गों के दावों और ऐसी खुली प्रतियोगिता के अवसर के बीच समन्वय करता है, जिसके लिए उन्नत वर्ग साधारणतया हकदार हो।" अपने विचार के समर्थन में उन्होंने देवदासन के मामले में न्यायमूर्ति सुब्बाराव की विसम्मत राय का हवाला भी दिया।

उन्होंने इस बात की ओर ध्यान दिलाया कि यद्यपि यह सच है कि साधारण तौर पर यह कहा जा सकता है कि अनुच्छेद 16(4) एक अपवाद है, परन्तु बारीकी से जांच करने पर इसे "संवैधानिक दृष्टि से शुद्ध वर्गीकरण" के रूप में देखा जा सकता है। यह कोई व्यावृत्ति खण्ड नहीं है, बल्कि विषयों को निस्सन्देह स्पष्ट बनाने के लिए प्रारूपकारों की अत्यधिक उत्सुकता के कारण शामिल किया गया है।

न्यायमूर्ति फजल अली ने अनुच्छेद 16(4) को एक ऐसा स्पष्टीकरण माना जिसमें आरक्षण के संबंध में जो वर्गीकरण का ही एक रूप है, जबकि वर्गीकरण के अन्य रूप अनुच्छेद 16(1) के अधीन अनुमत हैं, एक व्यापक और अनन्य उपबंध अन्तर्विष्ट है। आरक्षण की व्यवस्था करने वाला अनुच्छेद 16(4) इसी सीमा तक अनुच्छेद 16(1) पर अभिभावी

है और अनुच्छेद 16(1) के अधीन कोई आरक्षण नहीं किया जा सकता। वे इस न्यायालय द्वारा पहले व्यक्त किए गए इस विचार से सहमत नहीं थे कि खण्ड (4), निम्नलिखित कारणों से अनुच्छेद 16(1) का अपवाद है :

> पहली बात तो यह है कि इसे अपवाद मान लेने पर केवल यही निष्कर्ष निकलेगा कि अनुच्छेद 16(1) के अधीन किया गया वर्गीकरण अनुज्ञेय नहीं होगा, क्योंकि अनुच्छेद 16(4) में इसकी स्पष्ट रूप से व्यवस्था की गई है। यह अनुच्छेद 14 के अधीन समानता की मूल धारणा के विरुद्ध है, जो कि कतिपय शर्तों के अधीन किसी भी रूप में वर्गीकरण की इजाजत देता है। दूसरे, यदि अनुच्छेद 16(4) में सन्निविष्ट आरक्षण के सिवाय किसी और रूप में अनुच्छेद 16(1) के अधीन वर्गीकरण नहीं किया जा सकता, तो इससे अनुच्छेद 335 में सन्निविष्ट आदेश विफल हो जाएगा।

फिर भी, न्यायमूर्ति सर्वश्री खन्ना, गुप्ता और बेग के अल्पमत निर्णयों में बहुमत के इस विचार पर कड़ी आपत्तियां उठाई गई कि अनुच्छेद 16(4) अनुच्छेद 16(1) का अपवाद है।

न्यायमूर्ति खन्ना ने यह तर्क सामने रखा कि अनुच्छेद 16(4) का सर्वोपरि खण्ड बताता है कि यदि इस व्यवस्था के लिए यह उपबन्ध नहीं होता तो पिछड़े वर्गों के लिए आरक्षण अनुज्ञेय नहीं हो सकता था। आगे, यदि अनुच्छेद 16(1) विशेष बर्ताव की इजाजत देता भी है, तो भी अनुच्छेद 16(4) शामिल किए जाने की कोई आवश्यकता नहीं थी। उन्होंने ध्यान दिलाया कि यदि समानता की परिकल्पना में, जो कुछ अनुच्छेद 16(4) के अधीन अनुज्ञेय है, उसके आगे अतिचार की अनुमति दी गई, तो इसका अर्थ यह होगा कि "योग्यता की सर्वश्रेष्ठता सेवाओं की दक्षता और सरकारी नियोजन के क्षेत्र में भेदभाव रहित आदर्श स्पष्ट रूप से नष्ट हो जाएंगे।

इस पर न्यायमूर्ति बेग और गुप्ता के विचार लगभग समान थे।

सार रूप में, इन तीन न्यायधीशों की राय में, अनुच्छेद 16(1) का उद्देश्य योग्यता और दक्षता के दावों को सुरक्षित रखने का है। इससे अपने-आप ही सामाजिक-आर्थिक असमानताओं को दूर करने का आशय नहीं निकल सकता।

अधिकथित प्रतिपादना :—यदि राज्य पिछड़े वर्गों के पक्ष में आरक्षण की नीति इस प्रकार स्वीकार नहीं करता कि वह स्पष्ट रूप से अनुच्छेद 16(4) के कार्य-क्षेत्र में आ जाए, बल्कि ऐसी योजना स्वीकार करता है, जो अनुसूचित जातियों और जनजातियों को वरीयता देती है, तो भी न्यायालय इसकी अनुच्छेद 16(1) और 16(2) के अधीन "उचित वर्गीकरण" शीर्षक के अधीन परिपुष्टि कर सकता है। फिर भी, यह तरजीह असीमित मात्रा में नहीं दी जा सकती, राज्य इन वर्गों को "प्रशासनिक दक्षता की आवश्यकताओं" के अनुरूप ही तरजीह दे सकता है। इस प्रकार, पिछड़े वर्गों को तरजीह देते समय जिन दो बातों पर विचार किया जाना आवश्यक है, वे हैं : (i) सेवाओं में उनका कम प्रतिनिधित्व होना और (ii) यह तरजीह "अनुसूचित" नहीं होनी चाहिए। दूसरे शब्दों में उनके लिए नियमों में उचित ढील की इजाजत है, "अनुचित" ढील की नहीं।

केशव बनाम मैसूर राज्य,
ए० आई० आर० 1960 मैसूर 20

तथ्य

याची ने संविधान के अनुच्छेद 226 के अधीन बारह प्रत्यर्थियों के विरुद्ध, जिनमें राज्य, वह आयोग, जिसने मैसूर मुंसिफ (भरती और पदोन्नति) नियमावली, 1954 के अधीन परीक्षा आयोजित की थी और मुंसिफों के पदों पर नियुक्त दस व्यक्ति शामिल थे, एक परमादेश, उत्प्रेषण और अधिकारपृच्छा रिट जारी करने के लिए एक अर्जी दाखिर की। उसकी शिकायत थी कि प्रतियोगी परीक्षा में प्रथम दस व्यक्तियों को मुंसिफ नियुक्त किया जाना चाहिए था। उसके स्थान पर, अनुच्छेद 16(4) के अधीन अपेक्षित आरक्षण के अभाव में ये नियुक्तियां साम्प्रदायिक आधार पर की गई। उसका आग्रह था कि ऐसे आरक्षण के अभाव में प्रत्यर्थी 3, 4 और 5 को छोड़कर अन्य विभिन्न उम्मीदवारों की नियुक्तियां अविधिमान्य घोषित कर दी जाएं। सरकार ने ब्राह्मण जाति को छोड़कर बाकी सभी जातियों को पिछड़ी जाति विनिर्दिष्ट किया था।

विवाद्यक (इश्यू)

क्या याची की यह दलील मान्य है कि ये नियुक्तियां संविधान के अनुच्छेद 16(4) पर आघात के कारण अविधिमान्य हैं।

निर्णय

मैसूर उच्च न्यायालय (न्यायमूर्ति पद्मनाभैया और होम्बे गोड़ा) ने यह माना कि ये नियुक्तियां अनुच्छेद 16(4) का अतिलंघन नहीं करतीं। हालांकि दोनों के निष्कर्ष एक जैसे थे, लेकिन दोनों ने अलग निर्णय दिए।

न्यायमूर्ति पद्मनाभैया ने माना कि मैसूर सरकार का तारीख 16-6-1921 का आदेश जिसमें ब्राह्मणों को छोड़कर अन्य सभी जातियों को पिछड़ी हुई जातियों के रूप में वर्गीकृत किया गया था, संविधान के अनुच्छेद 16(4) के विरुद्ध नहीं था।

उन्होंने वेंकटरमण बनाम मैसूर राज्य, ए०आई०आर० 1961 एस०सी० 229 का हवाला दिया, जहां कि आरक्षण की व्यवस्था किसी विधायी उपबन्ध के द्वारा नहीं की गई थी, तो भी नियुक्तियों को विधिमान्य ठहराया गया था। इसलिए, उनका विचार था कि यह नहीं कहा जा सकता कि अनुच्छेद 16(4) में आए "उपबन्ध" शब्द का अर्थ एक "विधायी उपबन्ध" है, कार्यपालक सरकार द्वारा किया गया उपबन्ध नहीं।

आगे यह भी माना गया कि अनुच्छेद 16(4) एक समर्थकारी उपबन्ध है और राज्य इसके लिए बाधा नहीं है कि वह आरक्षण उपबन्धित करे।

उनकी राय में, अनुच्छेद 16(4) अनुच्छेद 16(1) का एक अपवाद है। अनुच्छेद 16(4) में प्रयुक्त "आरक्षण" शब्द यह निश्चित करता है कि यह सम्पूर्ण का एक छोटा हिस्सा ही हो सकता है। उससे संकेत मिलता है कि नागरिकों का प्रत्येक पिछड़ा वर्ग अनुच्छेद 16(4) के अधीन नियुक्ति के प्रयोजन के लिए एक स्वतंत्र वर्ग है। ऐसे मामलों में, ऐसे प्रत्येक वर्ग से संबंधित आरक्षण को दस में से एक माना जाना चाहिए, जो कि कुल नियुक्तियों का एक छोटा-सा हिस्सा है। इसलिए उन्होंने यह निष्कर्ष निकाला :

> "भरी जाने वाली दस नियुक्तियों के लिए यदि नागरिकों के ऐसे दस पिछड़े वर्गों के उम्मीदवार हैं, जिनका राज्य की राय में, सेवाओं में अपर्याप्त प्रतिनिधित्व है, तो उन सारी नियुक्तियों को "नागरिकों के पिछड़े वर्ग" शीर्षक के अन्तर्गत आने वाली जातियों को आवंटित कर देना राज्य के लिए गलत नहीं होगा। ऐसे वर्ग से संबंधित किसी सदस्य को, जिसका किसी विशिष्ट सेवा में खासा प्रतिनिधित्व हो, ऐसे नियुक्तियों के विरुद्ध कोई शिकायत नहीं हो सकती और न ही होनी चाहिए।

इसी के अनुसार याचिका खारिज कर दी गई।

न्यायमूर्ति होम्बे गौड़ा ने अपना निर्णय अलग से दिया। जिन्होंने उनके इस फैसले से सहमत होते हुए कि याचिका खारिज कर दी जाए, न्यायमूर्ति पद्मनाभैया द्वारा निकाले गए निष्कर्षों के समर्थन में कुछ और कारण जोड़े।

इसमें विशेष रूप से संगत उनका यह संप्रेषण है कि संविधान में कहीं भी "पिछड़े वर्ग" की परिभाषा नहीं दी गई है। उनके विचार से, सामाजिक, शैक्षिक, आर्थिक और अन्य प्रकार के पिछड़ेपन सहित सभी प्रकार के पिछड़ेपन को इसमें शामिल करना उचित होगा। निःसन्देह, जातियों को "पिछड़े वर्गों" के रूप में वर्गीकृत करने के लिए राज्य ही एकमात्र प्राधिकारी है।

टिप्पण :

यह एक पुराना मामला है और इसके इस निर्णय की वैधता संदिग्ध है कि ब्राह्मणों को छोड़कर बाकी सभी जातियों को "पिछड़ा" माना जा सकता है।

के०एन० चन्नबेसप्पा और अन्य बनाम मैसूर राज्य और अन्य

ए आई आर 1963 मैसूर 293

तथ्य

राज्य लोक सेवा आयोग ने मैसूर राज्य की न्यायिक सेवा में मुंसिफों के पदों के लिए एक प्रतियोगी परीक्षा आयोजित की थी। एक अधिसूचना निकाल कर इसके परिणामों की घोषणा की गई और नामों को योग्यता के क्रम से सूचीबद्ध किया गया। इसमें 229 उम्मीदवारों में से केवल 52 सफल हुए। याचियों ने जो कि परीक्षा में सफल नहीं हुए थे, इस अधिसूचना को इस आधार पर चुनौती दी कि यह विधिपूर्ण प्राधिकार के बगैर जारी की गई है।

इस परीक्षा का आयोजन संविधान के अनुच्छेद 234 और 309 के परन्तुक के अधीन राज्य के राज्यपाल द्वारा तैयार किए गए मैसूर मुंसिफ भरती नियम, 1958 के अधीन किया गया था। नियम 12 के अधीन, आक्षेपगत अधिसूचना आयोग द्वारा प्रकाशित की गई थी। इससे पहले उसने एक निर्णय लेकर, परीक्षा में सफलता के लिए अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों के उम्मीदवारों के लिए 45 प्रतिशत और अन्य उम्मीदवारों के लिए 55 प्रतिशत अर्हक अंक निश्चित किए।

विवाधक (इशू)

1. क्या राज्यपाल लोक सेवा आयोग को अर्हक अंक निर्धारित करने की शक्ति प्रत्यायोजित कर सकता है?

2. क्या दो प्रकार के अर्हक अंक एक अनुसूचित जातियों के लिए और दूसरे अन्य लोगों के लिए, निर्धारित करना वैध है और ऐसा करना अनुच्छेद 16(4) के अन्तर्गत आरक्षण के समान है?

निर्णय

यह मामला सुनवाई के लिए न्यायमूर्ति ए० आर० सोमनाथ अय्यर और मीर इकबाल हुसैन के सामने आया।

न्यायमूर्ति सोमनाथ अय्यर ने न्यायालय का निर्णय देते हुए अभिनिर्धारित किया कि मैसूर मुंसिफ भरती नियमावली के नियम 6 और 12 की भाषा से यह परिणाम निकालना सम्भव नहीं है कि राज्यपाल अर्हक अंक निर्धारित करने का अपना प्राधिकार लोक सेवा आयोग को प्रत्यायोजित कर सकता है।

प्रासंगिक विचार के जरिए न्यायालय ने दूसरे मुद्दे पर अपनी राय व्यक्त की। उसने ध्यान दिलाया कि लोक सेवा आयोग द्वारा दो प्रकार के अर्हक अंक निश्चित करना अवैध है और नियमावली के नियम 12 के परन्तुक अथवा अनुच्छेद 16(4) द्वारा प्राधिकृत नहीं है। अनुच्छेद 16(4) के अधीन आरक्षण की व्यवस्था "या तो अनुच्छेद 309 के परन्तुक के अधीन या अनुच्छेद 234 के अधीन नियम अधिनियमित करके केवल राज्य द्वारा की जा सकती है, राज्यपाल द्वारा नहीं।" किसी प्रतियोगी परीक्षा में सफलता के लिए अंकों की कम प्रतिशतता निर्धारित करना "अनुच्छेद 16(4) के अधीन किसी भी अर्थ में आरक्षण" के समान नहीं है। यहां तक कि राज्य के पास भी ऐसा आरक्षण करने की कोई शक्ति नहीं है।

न्यायालय ने इस प्रश्न पर कोई निश्चित मत व्यक्त करना आवश्यक नहीं समझा, क्योंकि सबसे पहले तो आयोग ही अर्हक अंक निश्चित करने के लिए सक्षम नहीं था।

इसलिए न्यायालय ने निष्कर्ष निकाला कि उक्त सूची विधिमान्य नहीं है।

तथ्य

सुधामा प्रसाद ने, जो कि पश्चिम रेलवे में चीफ क्लर्क के पद पर स्थानापन्न रूप में कार्य कर रहे थे, उन्हें निचले पद पर प्रत्यावर्तित करने वाले एक आदेश के विरुद्ध अनुच्छेद 226 के अधीन एक रिट याचिका दायर की थी।

रेलवे प्राधिकारियों ने पदोन्नति के लिए अनुमोदित एक पैनल तैयार किया था, जिसमें याची को नम्बर 1 स्थिति में रखा गया था और शंकर लाल, प्रत्यर्थी संख्या 3 को, जो इसी के समक्ष हेड क्लर्क के पद पर नियुक्त था, नम्बर 2 पर रखा गया था। चीफ क्लर्क के दो उच्च पद रिक्त हुए, जिनमें से एक अस्थायी और दूसरा स्थायी था। याची और प्रत्यर्थी संख्या 3, दोनों को क्रमशः अस्थायी और स्थायी रिक्ति में स्थानापन्न रूप में कार्य करने के लिए पदोन्नत किया गया। कुछ महीनों के बाद याची को प्रत्यर्थी संख्या 3 का पद दे दिया गया, क्योंकि वह वरिष्ठ था, जबकि प्रत्यर्थी संख्या 3 को हेड क्लर्क के अपने पद पर प्रत्यावर्तित कर दिया गया। अपने प्रत्यावर्तन के काफी समय बाद प्रत्यर्थी संख्या 3 ने एक प्रमाण पत्र प्राप्त किया जिसमें यह प्रमाणित किया गया था कि वह अनुसूचित जाति का है और उसने रेलवे प्राधिकारियों को अभ्यावेदन दिया कि वह याची के स्थान पर, जो कि अनुसूचित जाति का नहीं है, अनुसूचित जातियों के लिए आरक्षण के रोस्टर के अनुसार चीफ क्लर्क के पद पर नियुक्त किए जाने का हकदार है। इस पर याची को हेड क्लर्क के रूप में प्रत्यावर्तित करने और उसके स्थान पर प्रत्यर्थी संख्या 3 को नियुक्त करने का आदेश जारी किया गया।

याची की ओर से दलील दी गई :

1. चूंकि रिक्ति केवल एक थी और वह उस रिक्ति में कार्य कर रहा था, इसलिए उसे देवदासन के मामले में उच्चतम न्यायालय के फैसले के अनुसार आरक्षित नहीं माना जा सकता।

2. आक्षेपगत आदेश में उल्लिखित आधारों पर उसके प्रत्यावर्तन के परिणाम के रूप में उस अनुच्छेद 16 में गारन्टीकृत रोजगार के समान अवसर से वंचित किया गया है।

3. अनुच्छेद 311 का भी सहारा लिया गया।

दूसरी ओर, प्रत्यर्थियों की दलील थी कि आक्षेपगत आदेश संवैधानिक उपबन्धों पर आधारित एक ऐसी प्रशासनिक नीति के अनुरक्षण में पारित किए गए थे, जिसमें अनुसूचित जातियों के सदस्यों के साथ विशेष बर्ताव की व्यवस्था है। आगे यह भी कि, समान आदेश की तारीख को दो रिक्तियां थीं और प्रत्यर्थी संख्या 3 उनमें से एक के लिए उचित रूप में आरक्षण का दावा भी कर सकता था। प्रत्यर्थी संख्या 3 को प्रत्यावर्तित करने का आदेश त्रुटिपूर्ण था और उन्होंने आक्षेपगत आदेश पारित करके जो अनुच्छेद 16 या 311 का अतिक्रमण नहीं कर सकता, उस त्रुटि को सुधारा था।

विनिश्चयक (इशू)

1. क्या अनुच्छेद 16(4) का उपयोग याची को, जिसे एक बार विधिपूर्ण तरीके से नियुक्त किया जा चुका था, पदावनत करने के लिए किया जा सकता है ?

2. क्या यह आदेश अनुच्छेद 16(1) और (2) का अतिक्रमण करने के कारण अवैध है ?

निर्णय

न्यायालय ने, जिसमें मुख्य न्यायमूर्ति डी०एस० दवे और न्यायमूर्ति कानसिंह थे, अभिनिर्धारित किया :

(1) याची को उसकी विधिपूर्ण नियुक्ति के बाद, पदावनत करने के लिए अनुच्छेद 16(4) का उपयोग नहीं किया जा सकता। न्यायालय ने टिप्पणी दी :—"यह आश्चर्य की बात है कि प्रत्यर्थी संख्या 3 ने पदोन्नतियां किए जाने के समय या जिस समय उसके प्रत्यावर्तन का आदेश दिया गया था, उस समय भी कभी यह दावा नहीं किया कि प्राधिकारियों को इस बात की जानकारी है कि वह अनुसूचित जाति का है। प्रत्यर्थी संख्या 3 ने अपने प्रत्यावर्तन के काफी समय बाद यह प्रमाण पत्र हासिल किया है। हमारे विचार से उस प्रमाण पत्र का उपयोग प्रत्यर्थी संख्या 3 के लिए नया अवसर जुटाने के प्रयोजन के लिए नहीं किया जा सकता।

(2) आदेश अवैध था, क्योंकि उससे अनुच्छेद 16(1) और (2) का अतिक्रमण हुआ है।

बेनू रायडू और एक अन्य बनाम आन्ध्र प्रदेश लोक सेवा आयोग और अन्य

ए० आई० आर० 1967 ए० पी० 363

तथ्य

यह रिट अपील और रिट याचिका संविधान के अनुच्छेद 16(4) और अनुच्छेद 15(4) के निर्वचन से संबंधित समान प्रश्न के संबंध में थी। रिट अपील न्यायमूर्ति गोपालकृष्णन अय्यर के उस आदेश के संबंध में की गई थी, जिसके द्वारा रिट याचिका आरम्भ में ही खारिज कर दी गई थी।

आन्ध्र प्रदेश लोक सेवा आयोग के तारीख 29-10-1964 के आदेश द्वारा ग्रुप I के पदों पर सीधी भरती के लिए ली जाने वाली प्रतियोगी परीक्षा के लिए आवेदन-पत्र आमंत्रित किए थे। दोनों याचियों ने उक्त परीक्षा को शक्ति बाह्य घोषित करने और उन्हें परीक्षा आयोजित करने से रोकने का निर्देश जारी करने के लिए रिट अपील के रूप में एक अर्जी दाखिल की। याचियों की, जो दोनों पिछड़ वर्गों के सदस्य थे, शिकायत यह थी कि उनकी जाति पिछड़े वर्गों की एक ऐसी सूची में अनुमोदित थी, जो कि 1-4-1964 को प्रचलित थी, परन्तु उक्त सूची प्रत्यर्थी संख्या 2 द्वारा रद्द कर दी गई और तारीख 11-8-1964 के सरकारी आदेश संख्या 913 द्वारा नियमों में संशोधन कर दिया गया। राज्य द्वारा उसे रद्द किए जाने का आधार यह था कि वह पूरी तरह से जाति पर आधारित थी। इसके परिणाम के रूप में याची परीक्षा में बैठने के पात्र नहीं रहे।

विवाद्यक (इशू)

अनुच्छेद 16(4) के अधीन पिछड़े वर्ग निर्धारित करने की कसौटी क्या है?

निर्णय

न्यायालय ने, जिसमें न्यायमूर्ति वासी रेड्डी और गोपाल राव एकबोटे थे, अनुच्छेद 16(4) में "पिछड़े वर्ग" शब्दों के अर्थ पर और उसकी कसौटी पर विचार किया। रंगाचारी बनाम महाप्रबंधक, ए०आई०आर० 1961 मद्रास 35, और देवदासन बनाम भारत संघ, ए०आई०आर० 1964 एस०सी० 179 पर निर्भर करते हुए न्यायालय ने इस बात की ओर ध्यान दिलाया कि अनुच्छेद 366(24) और (25) क्रमशः अनुसूचित जातियों और जनजातियों की परिभाषा करते हैं और स्वयं संविधान में स्वीकार किया गया है कि इसके बावजूद भी कि वे मात्र अनुसूचित जातियों के हैं या नहीं, उन्हें पिछड़े वर्ग माना जाएगा। इसीलिए अनुच्छेद 15(4) में उनका विशेष उल्लेख किया गया। अनुच्छेद 16(4) में अनुसूचित जातियां शब्द के न होने से कोई फर्क नहीं पड़ता, क्योंकि उसमें प्रयोग किए गए "पिछड़े वर्ग" शब्द में अनुसूचित जातियां और अनुसूचित जनजातियां शब्द स्वतः शामिल हैं।

पिछड़े वर्गों का निर्धारण करने की कसौटी के संबंध में, न्यायालय का विचार था कि अनुच्छेद 340 ने इसे एक आयोग पर छोड़ दिया है कि वह राष्ट्रपति द्वारा इसके निर्धारण के लिए इसकी सिफारिश करे। लेकिन राष्ट्रपति ने अन्य पिछड़े वर्गों की सूची तय नहीं की है और न ही भारत सरकार या किसी राज्य सरकार ने अभी तक यह कसौटी निर्धारित की है। हालांकि यह बात एकदम तय है कि मात्र ऐसी कसौटी नहीं हो सकती। "पिछड़े वर्ग" शब्द केवल हिन्दू पिछड़े वर्गों तक सीमित नहीं है और न ही इसका अर्थ केवल हिन्दुओं की जातियां हैं। इस मामले में उन्होंने बाला जी बनाम मैसूर ए०आई०आर० 1963 एस०सी० 649 और चित्तलेखा बनाम मैसूर राज्य, के मामलों पर निर्भर किया, जहां यह निर्धारित किया गया था कि अनुच्छेद 15(4) के अधीन पिछड़ेपन की कसौटी निर्धारित करने के लिए अकेली जाति ही एक मात्र आधार नहीं हो सकती। उसने वेंकटरमण बनाम मद्रास राज्य, के मामले का जिक्र किया और उसे स्पष्ट किया, जिसमें साम्प्रदायिक सरकारी आदेश को अनुच्छेद 16(4) की सीमाओं से बाहर और अनुच्छेद 16(1) और (2) का अतिलंघन मानकर रद्द किया गया था।

याचियों की ओर से दिया गया यह तर्क कि पिछड़े वर्गों का निर्धारण करने के लिए जातियां एक मात्र आधार नहीं हो सकतीं, अनुच्छेद 15 के संबंध में तो ठीक है, परन्तु अनुच्छेद 16 के सम्बन्ध में नहीं, न्यायालय द्वारा अस्वीकार कर दिया गया। उसने अभिनिर्धारित किया कि अनुच्छेद 16(4) में आए "पिछड़े वर्ग" "एकमात्र या प्रधान रूप से जाति के आधार पर तय" नहीं किए जा सकते और इस निष्कर्ष का समर्थन करने के लिए उसने उच्चतम न्यायालय के दो निर्णयों अर्थात् महाप्रबंधक, दक्षिण रेलवे बनाम रंगाचारी, ए०आई०आर० 1962 एस०सी० 36 और देवदासन बनाम भारत संघ, ए०आई०आर० 1964 एस०सी० 179 का हवाला दिया। अनुच्छेद 16(4) का अवलम्ब लेने के लिए दो शर्तें अपेक्षित हैं: (क) नागरिकों का पिछड़ा वर्ग, (ख) राज्य सेवाओं में उनका अपर्याप्त प्रतिनिधित्व। इन शर्तों का पालन होने पर ही आरक्षण की व्यवस्था की जा सकती है। उपर्युक्त मामलों से इस बात का फैसला हो गया कि अत्यधिक आरक्षण कानूनी दृष्टि से खराब होगा, क्योंकि इससे अनुच्छेद 16 के मुख्य खण्डों का अतिलंघन होगा। इसी के सादृश्य पर, यदि जातियां एक मात्र कसौटी हों, तो अन्य जातियां उससे वंचित रह जाएंगी, जिसकी अनुच्छेद 16 के मुख्य खण्डों में उन्हें गारन्टी दी गई है। इसलिए, यह अनुच्छेद 16(4) के अधीन पिछड़ेपन की कसौटी निर्धारित करने वाले अनेक घटकों में एक घटक तो हो सकती है, लेकिन उसका एक मात्र या प्रधान आधार नहीं बन सकती। इस दृष्टि से अनुच्छेद 15(4) और अनुच्छेद 16(4) में कोई भेद नहीं है। अनुच्छेद 16(4) में कुछ शब्दों के न होने से कोई फर्क नहीं पड़ता।

इस बात पर ध्यान दिलाया गया कि आर्थिक पक्ष, जिसे अनुच्छेद 15(4) के अधीन सुविधाएं प्रदान करने का एक आधार स्वीकार किया गया था, सम्भवतः अनुच्छेद 16(4) के मामले में पूरी तरह से लागू नहीं होगा और अनुच्छेद 16(4) के लिए किसी अन्य उपयोगी कसौटी की तलाश करनी होगी, परन्तु इसका अर्थ यह नहीं है कि पिछड़े वर्गों की सूची एक मात्र या मुख्य रूप से जाति के आधार पर तय की जा सकती है। लेकिन फिर भी, अनुच्छेद 335 को ध्यान में रखते हुए अनुच्छेद 16(4) के लिए अन्ततः जो कसौटी प्राप्त होगी, उसमें प्रशासनिक दक्षता के पक्ष का भी ध्यान रखना होगा। मोटे तौर पर भी अनुच्छेद 16(4) के प्रयोजन के लिए कसौटी निर्धारित करने का आधार तय करना न्यायालय का काम नहीं है। लेकिन यह स्पष्ट है कि जाति एक मात्र या प्रधान पक्ष नहीं हो सकती।

न्यायालय का मत था कि पिछड़े वर्गों की जो सूची 1-4-1964 तक प्रचलित थी, पूरी तरह से जाति के आधार पर बनी हुई थी और इसलिए वह अनुच्छेद 15(4) और 16(4) दोनों के प्रयोजन के लिए अमान्य थी। इसलिए राज्य सरकार ने उसे रद्द करके ठीक ही किया है।

इसलिए न्यायालय ने रिट अपील और रिट याचिका खारिज कर दीं।

हरिहरन पिल्लै बनाम राज्य

ए० आई० आर 1968 केरल 42

तथ्य

राज्य सरकार के अनुदेश पर जब लोक सेवा आयोग ने मुंसिफ के पद विज्ञापित किए, तब याची ने उस पद के लिए आवेदन किया था। इसके लिए एक लिखित परीक्षा, उपयुक्त उम्मीदवारों के साक्षात्कार और केरल राज्य तथा अधीनस्थ सेवा नियमावली, 1958 के भाग II के अधीन सामान्य नियम के नियम 14—17 में "निर्धारित बारी-बारी से नियुक्ति का नियम" का उल्लेख किया गया था। परिणाम प्रकाशित होने पर, 195 नामों में याची का रैंक उस सूची में 24वां था और प्रत्यर्थी 3—12 के रैंक 26 और 72 के बीच थे। आयोग ने "बारी-बारी से नियुक्ति का नियम" लागू करके 31 नाम सूचित किए। याची, जिसे उनमें शामिल नहीं किया गया था, का आरोप है कि उसके साथ भेद-भाव किया गया है और प्रत्यर्थी 3—12 केवल धर्म या जाति के आधार पर चुने गए हैं। इसके उत्तर में राज्य का यह कहना था कि उसे रोजगार का अवसर इसलिए नहीं मिल पाया कि सरकार ने महसूस किया कि अनुच्छेद 16(4) के अधीन पिछड़े वर्गों के लिए आरक्षण की व्यवस्था की जानी चाहिए।

आरक्षण का आधार जाति था और निम्नलिखित जातियों को पिछड़ी हुई जातियां वर्गीकृत किया गया था:

1. एज्वास और शिव्या
2. मुसलमान
3. लेटिन कैथोलिक, एस०आई०यू०सी० और एंग्लो-इंडियन
4. पिछड़े हुए ईसाई (अन्य ईसाई)
5. एक साथ रखे गए अन्य पिछड़े वर्ग अर्थात "अन्य पिछड़े वर्गों की सूची में शामिल अन्य जातियां, जो उपर्युक्त 1 से 4 में उल्लिखित से भिन्न हों।

विवाद्यक (इशू)

विवाद्यक यह था कि क्या जाति पिछड़ेपन की कसौटी हो सकती है? दूसरे शब्दों में, क्या पिछड़े वर्गों को धर्म और/या जाति के नाम से निश्चित किया जा सकता है?

निर्णय

बहुमत (2 : 1) ने वर्गीकरण की परिपुष्टि की। न्यायालय ने ध्यान दिलाया कि पिछड़े वर्गों का निर्धारण करना एक जटिल कार्य है और इसके लिए आर्थिक, सामाजिक और अन्य आधार-सामग्री का बड़ी मेहनत से अन्वेषण करने की आवश्यकता होती है। राज्य द्वारा दाखिल किए गए प्रति शपथ पत्र के आधार पर बहुमत ने वर्गीकरण को सही ठहराया। हालांकि जिन आंकड़ों के आधार पर यह वर्गीकरण किया गया था, लगभग तीन दशक पुराने थे। यद्यपि न्यायालय ने यह स्वीकार किया कि जाति एक मात्र कसौटी नहीं हो सकती, तथापि जहां यह वर्गीकरण, सब मिलाकर, उस जाति के लोगों के पिछड़ेपन के कारण जाति के आधार पर किया गया हो, तो इसकी मुख्य कसौटी जाति नहीं, पिछड़ापन होगा। अतएव, न्यायालय ने निम्नलिखित सुझाव दिए :

1. संबंधित आंकड़े यथाशीघ्र रूप से एकत्र किए जाने चाहिए।
2. राज्य को, जितनी जल्दी संभव हो, एक नया विस्तृत सर्वेक्षण करना चाहिए।
3. यह भी संभव है कि राज्य ने कुछ वर्गों को पिछड़े हुए रूप में किया हो किन्तु वास्तव में वे पिछड़े हुए न हों। यह भी संभव है कि अन्य समुदायों के कुछ लोग वास्तव में पिछड़े हुए हों किन्तु उन्हें राज्य ने "पिछड़ा हुआ" वर्गीकृत न किया हो।

विसम्मत न्यायाधीश का विचार था कि राज्य ने यह वर्गीकरण परिस्थिति का समुचित मूल्यांकन किए बिना और सोच-विचार के बिना किया है। उन्होंने कहा कि राज्य ने दो दशक या उससे भी अधिक समय पहले जो राय कायम की थी उसे आज वर्गीकरण का आधार नहीं बनाया जा सकता। उनका यह भी विचार था कि यदि किसी जाति का काफी बड़ा वर्ग पिछड़ा हुआ हो तब भी उस पूरी जाति को पिछड़ी हुई जाति वर्गीकृत नहीं किया जा सकता क्योंकि उस जाति के कुछ लोग ऐसे भी हो सकते हैं जो पिछड़े हुए न हों।

> "शैक्षिक दृष्टि से पिछड़ेपन का मूल्यांकन, जो पहले परीक्षण के तौर पर किया गया था, अपर्याप्त है क्योंकि आंकड़े पूरे व अद्यतन नहीं है। अपूर्ण आंकड़ों से परीक्षण करने का परिणाम संतोषजनक नहीं हो सकता।"

टिप्पणी :—

अधिकांश व्यक्तियों की राय में यह वर्गीकरण संतोषजनक नहीं है और उन्होंने राज्य द्वारा किए गए इस वर्गीकरण की सीमाएं और कमियां बताई हैं। न्यायालय ने "पिछड़ापन" निर्धारित करने के लिए केवल पुराने आंकड़ों को ही आधार माना है जो सही नहीं है।

मंगल सिंह बनाम पंजाब राज्य

ए० आई० आर० 1968 पंजाब 306

तथ्य

अपीलार्थी मंगल सिंह, ने एक न्यायाधीश के आदेश से लैटर्स पेटेंट के खण्ड 10 के अधीन अपील की थी। उसने पंजाब सरकार की 1966 की अधिसूचना को नियम 15 के अधीन चुनौती दी। उक्त अधिसूचना के अनुसार सरकार ने वरिष्ठता के नियम के संबंध में पंजाब सिविल सचिवालय [राज्य सेवा, श्रेणी (III)] नियमावली (1952) में ढील दी थी।

वाद-विषय

क्या राज्य अनुच्छेद 16(14) के अधीन पिछड़े वर्गों के पक्ष में कार्यकारी आदेश में कोई व्यवस्था कर सकता है।

निर्णय

न्यायालय के न्यायमूर्ति आर०एस० नरुला और मुख्य न्यायमूर्ति मेहरसिंह ने निर्धारित किया कि ऐसा कार्यकारी आदेश विधिमान्य है। इसलिए कानून बनाने की आवश्यकता नहीं है।

न्यायालय ने हीरालाल बनाम महाबलपाल पंजाब (1976 की सिविल रिट सं० 271, ता० 29-11-1966 पंजाब) के मामले का अनुसरण करते हुए अपीलार्थी की इस धारणा को अस्वीकार कर दिया कि एक कार्यकारी आदेश या अनुदेश द्वारा 1952 के नियमों में संशोधन नहीं किया जा सकता। न्यायालय ने बालाजी के मामले को भी आधार बनाया जिसमें यह निर्दिष्ट किया गया था कि इस तर्क का खण्डन किया जाना चाहिए कि अनुच्छेद 15(4) के अधीन राज्य केवल कानून बनाकर ही व्यवस्था कर सकता है। इस संबंध में अनुच्छेद 16(4) का वही अर्थ है जो 15(4) का है।

इसलिए न्यायालय ने अपील नामंजूर कर दी।

आर० एल० प्रमाणिक बनाम भारत संघ

ए० आई० आर० 1969, कलकत्ता 576

तथ्य

प्रार्थी को, जो कि अनुसूचित जाति का है, अनुसूचित जाति के लिए आरक्षित कोटे में टंकक (टाइपिस्ट) के पद पर नियुक्त किया गया और उस पद पर उसकी पुष्टि हो गई । उसकी शिकायत यह थी कि यद्यपि प्रतिवादी अर्थात पूर्वी रेलवे द्वारा 1961 में तैयार की गई वरिष्ठता सूची में इनका 75वां स्थान था। अनुसूचित जाति का होने के कारण, इनकी पुष्टि अपेक्षाकृत जल्दी हुई थी और इनकी वरिष्ठता भी उसी आधार पर निर्धारित की गई थी।

किन्तु 1963 में एक आरोपित आदेश द्वारा उक्त वरिष्ठता सूची में संशोधन किया गया और प्रार्थी को क्रम संख्या 194-क (गुण-दोष के आधार पर) पर कर दिया गया। प्रार्थी का कहना है कि इसी के परिणामस्वरूप उसे अगले उच्च वेतनमान में पदोन्नत नहीं किया गया जो कि वरिष्ठता सूची में उसका 75वां स्थान बने रहने पर किया जाता। सरकार ने निर्णय किया कि "अनुसूचित जाति के व्यक्तियों के लिए अगले उच्च ग्रेड में पदोन्नति के लिए कोई आरक्षण नहीं होगा। ऐसी पदोन्नति के लिए वरिष्ठता का हिसाब पुष्टि की तारीख से न करके गुण-दोष के आधार पर निर्धारित वरिष्ठता के आधार पर किया जाएगा"।

वाद-विषय

उच्च ग्रेड में पदोन्नति के मामले में जहां मूल भर्ती अनुसूचित जाति के उम्मीदवारों के लिए आरक्षित सीटों पर हुई हो, क्या केवल गुण-दोष पर ही विचार किया जाएगा ?

निर्णय

रंगचारी और देवदासन के मामलों के अनुसरण में न्यायमूर्ति डी० बसु ने निर्णय किया कि संविधान का उल्लंघन नहीं किया गया है। उन्होंने कहा—

"अनुच्छेद 16(4) के विशेष उपबंधों के अनुच्छेद 335 के उपबंधों के साथ पढ़ा जाए ताकि अनुसूचित जाति के व्यक्तियों के लिए कोई ऐसा आरक्षण या विशेष व्यवस्था न की जाए जिससे "प्रशासनिक दीक्षिता" को नुकसान पहुंचता हो। अतः प्रतिवादी ने उच्च ग्रेड में पदोन्नति के लिए केवल गुण-दोष पर विचार करने की व्यवस्था करके संविधान का उल्लंघन नहीं किया है हालांकि निचले पदों पर भर्ती के लिए अनुसूचित जाति के व्यक्तियों के लिए आरक्षण की व्यवस्था है।"

एम० नटराजन बनाम महानिदेशक डाक-तार नई दिल्ली और अन्य

ए० आई० आर० 1970, मद्रास 459

तथ्य

यह मामला प्रार्थी द्वारा दो रिट याचिकाएं दायर किए जाने के परिणामस्वरूप उठाया गया। प्रार्थी ने वर्ष 1953 में डाक-तार विभाग के मद्रास सर्किल में छंटाईदार (सार्टर) के रूप में रेल डाक सेवा में सेवा आरंभ की थी और अब भी उसी पद पर कार्य कर रहे हैं। डाक-तार विभाग में सेवा के चार अंग थे। इनमें से दो अंग, डाक-अंग और रेल-डाक-सेवा थे। रेल-डाक-सेवा में पदों का काडर था जिसे रेल-डाक-सेवा निरीक्षक कहा जाता था। डाक-अंग में भी एक तदनुरूपी काडर था जिसे डाक-घर निरीक्षक कहा जाता था। इन पदों को, सेवा के संबंधित अंगों के उम्मीदवारों को, विभागीय प्रतियोगिता परीक्षा के आधार पर पदोन्नत करके भरा जाता था। चयन करते समय अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों के लिए कुछ पद आरक्षित किए जाते थे। मद्रास सर्किल में रेल-डाक सेवा में निरीक्षक के पद भरने के लिए दिसम्बर 1965 में विभागीय प्रतियोगिता परीक्षा ली गई जिसमें प्रार्थी भी एक उम्मीदवार था। उसकी शाखा में केवल तीन रिक्तियां थीं जब दूसरी शाखा में 29 रिक्तियां थीं। दोनों शाखाओं में कुल मिलाकर 32 रिक्तियां थीं जिनमें से चार पद अनुसूचित जातियों के लिए आरक्षित थे। आरक्षण करने के लिए प्रतिवादी नं० I ने सेवा की दोनों शाखाओं को एक यूनिट मान लिया। इसके परिणामस्वरूप रेल-डाक-सेवा अनुभाग में प्रथम आने वाला उम्मीदवार ही अन्य समुदायों में से चुना जाने वाला एकमात्र उम्मीदवार था। शेष दो पदों के लिए अनुसूचित जाति के उम्मीदवारों का चयन किया गया। इस प्रकार अन्य समुदायों से जो उम्मीदवार परीक्षा में दूसरे स्थान पर आया उसका नाम निकाल दिया गया। इसलिए उसने दूसरे प्रतिवादी के चयन का अभिखण्डन करने और प्रतिवादी नं० I को उसके स्थान पर अपना चयन करने का निदेश देने के लिए सरशियोरेदाई और मैन्डेमस के लिए ये दो रिट याचिकाएं दायर कीं।

वाद विषय

क्या मात्र अनुसूचित जाति के उम्मीदवार के चयन के लिए सेवा की दोनों शाखाओं को संयुक्त कर देना अवैध था और क्या इससे अनुच्छेद 16(4) का उल्लंघन हुआ है ?

निर्णय

न्यायमूर्ति सदाशिवम् ने बालाजी और देवदासन के मामले को आधार बनाते हुए इसे अवैध माना। उन्होंने कहा कि बालाजी के मामले में निर्धारित किया गया था कि अनुच्छेद 16(4) के अधीन अनुसूचित जातियों के लिए आरक्षण करते समय यह ध्यान रखना चाहिए कि अनुचित, अत्यधिक या बेतुका आरक्षण न किया जाए क्योंकि इस प्रकार एक बड़े क्षेत्र में आम प्रतियोगिता समाप्त करने से कर्मचारियों में बहुत असंतोष पैदा होगा और इससे उनकी कार्य दक्षता पर प्रभाव पड़ेगा। देवदासन के मामले में यह कहा गया कि आरक्षण इतना अधिक नहीं होना चाहिए कि अन्य कर्मचारियों को नियुक्ति का उचित अवसर ही न मिले। 50 प्रतिशत से अधिक आरक्ष० को अनुच्छेद 16(4) का उल्लंघन माना गया।

मौजूदा मामले में निरीक्षकों के दोनों काडर अलग-अलग थे। अनुसूचित जाति के उम्मीदवार का चयन करने के लिए प्रशासनिक परिपत्र या आदेश द्वारा दोनों यूनिटों को मिलाकर एक बना देने से न केवल असुविधा ही होती है परन्तु किसी न किसी समुदाय के व्यक्तियों के मूल अधिकारों का हनन भी होता है। 3 पदों में से 2 पद चूंकि अनुसूचित जाति के उम्मीदवारों के लिए आरक्षित किए गए थे इसलिए इसका अर्थ यह हुआ कि अनुसूचित जाति के उम्मीदवारों के लिए 66-2/3 प्रतिशत आरक्षण किया गया। 50 प्रतिशत से अधिक अनुरक्षण अनुचित है और इससे अनुच्छेद 16(4) का उल्लंघन होता है जैसा कि देवदासन के मामले में स्पष्ट किया गया था। अतः उन्होंने निष्कर्ष निकाला कि :—

> "इसमें कोई संदेह नहीं कि इस मामले में प्रार्थी के समान अवसर के मूल अधिकार का उल्लंघन हुआ है।"

तदनुसार रिट याचिकाओं की अनुमति दी गई।

महानिदेशक डाक-तार बनाम एम० नटराजन् और अन्य

ए०आई०आर० 1970, मद्रास 458 से (1971) 2 मद्रास एल०जे० 79

तथ्य

न्यायमूर्ति सदाशिवम् के, जिन्होंने प्रतिवादी की याचिका की अनुमति दे दी थी, सामान्य आदेश पर ये अपीलें की गईं। उन्होंने निर्धारित किया कि जिन परिस्थितियों में दोनों अनुभागों को मिलाकर रेल डाक सेवा में अनुसूचित जाति के उम्मीदवारों का इतना अधिक प्रतिनिधित्व हुआ वह अवैध था।

न्यायालय (मुख्य न्यायमूर्ति के० वीरस्वामी और न्यायमूर्ति पी० आर० गोकुलकृष्णन) ने न्यायमूर्ति सदाशिवम् के निर्णय से सहमत होकर अपील रद्द कर दी। न्यायालय ने निर्धारित किया कि अनुच्छेद 16(4) में दिए अनुसार संघ सरकार को अनुसूचित जाति को समुचित प्रतिनिधित्व देने के लिए सेवा के काडर के ग्रुप बनाने का अधिकार था किन्तु यह इस सीमा के अधीन है कि यह प्रतिनिधित्व अत्यधिक नहीं होना चाहिए क्योंकि ऐसा करना अनुचित होगा।

इन निष्कर्ष पर पहुंचने के लिए न्यायालय ने **एम०आर० बालाजी, बनाम मैसूर राज्य और देवदासन बनाम भारत संघ** को आधार मान, जिसमें उच्चतम न्यायालय ने निर्धारित किया कि किसी एक समय में भरी जाने वाली रिक्तियों पर 50 प्रतिशत से अधिक आरक्षण ठीक नहीं है।

श्री जी० एम० गुड्डीमर बनाम मैसूर राज्य और अन्य

1972 मैसूर एल० जे० 202

तथ्य

मैसूर राज्य सिविल सेवा (चयन द्वारा सीधी भर्ती) नियमावली 1967 के अधीन स्वास्थ्य अधिकारी श्रेणी II व सहायक सर्जन श्रेणी II और सहायक दन्त-चिकित्सक भर्ती के संबंध में पिछड़े वर्गों के लिए तारीख 16-9-63 की अधिसूचना जी०ओ० संख्या जी ए डी 177 एस०एस०आर० 62 के अनुसार आरक्षण किया गया। पिछड़ेपन का मानदण्ड आय और व्यवसाय को माना गया। अधिसूचना में यह व्यवस्था थी कि यदि कोई व्यक्ति निम्नलिखित में से किसी भी श्रेणी में आता है तो वह पिछड़ा हुआ माना जाएगा। माता-पिता और अभिभावक की आय यदि 1,200 रु० वार्षिक से कम हो और माता-पिता/अभिभावक निम्नलिखित व्यवसायों में से कोई व्यवसाय कर रहे हों (क) वास्तव में खेतिहर, (ख) कारीगर, (ग) खुदरा व्यापारी, (घ) नैमित्तिक श्रमिक सहित, निम्न सेवाओं में (सरकारी सेवा में चतुर्थ श्रेणी पद पर और प्राइवेट नौकरी में तद्रूपी श्रेणी के किसी पद पर) कार्य तथा (ङ) कोई अन्य व्यवसाय जिसमें शारीरिक श्रम करना पड़ता है।

वाद-विषय

क्या 1963 की अधिसूचना के अधीन "पिछड़े वर्ग" निर्धारित करने के लिए मानदण्ड रखा गया वह असंवैधानिक था क्या उससे अनुच्छेद 15(4) और अनुच्छेद (16)(4) का उल्लंघन हुआ है?

निर्णय

मैसूर उच्च न्यायालय (मुख्य न्यायमूर्ति नारायण पई और न्यायमूर्ति मालीमथ) ने निर्धारित किया कि पिछड़ापन निर्धारित करने के लिए गरीबी और व्यवसाय के स्वरूप का जो मानदण्ड रखा गया था वह संगत है इसलिए असंवैधानिक नहीं था।

न्यायालय ने कहा कि केवल इस तथ्य के आधार पर कि अनुच्छेद 16(4) के अधीन पिछड़े वर्गों का वर्गीकरण करने के लिए 16-9-1963 की अधिसूचना में आय को मानदण्ड मानकर केवल माता-पिता या अभिभावक की आय को ही देखा गया था जबकि अनुच्छेद 15(4) के अधीन उसी प्रयोजन के लिए तारीख 26-7-1963 की अधिसूचना में पूरे परिवार की आय देखी गई थी, आरोपित अधिसूचना अवैध नहीं हो जाएगी।

न्यायालय ने त्रिलोकीनाथ के मामले (ए आई आर 1967) का हवाला दिया जिसमें यह निर्दिष्ट किया गया था कि कोई वर्ग पिछड़ा हुआ है या नहीं इसका निर्धारण सामाजिक और शैक्षिक दृष्टि से उसके पिछड़ेपन को देखकर किया जाएगा जैसा कि बालाजी के मामले में स्पष्ट किया गया था। न्यायालय का विचार था कि सामाजिक और शैक्षिक दृष्टि से पिछड़े हुए लोग अन्ततः गरीब और उपर्युक्त में से किसी व्यवसाय में लगे हुए ही पाए जायेंगे जैसा कि बालाजी के माममले में स्पष्ट किया गया था। न्यायालय ने कहा—

"भिन्न-भिन्न आय को या छोटे या बड़े व्यवसायों का मानदण्ड निश्चित करने की मनाही नहीं है, किन्तु आय इतनी होनी चाहिए जिससे व्यक्ति को गरीब वर्गीकृत किया जा सके और व्यवसाय भी ऐसा हो जिससे उसका पिछड़ापन प्रकट होता हो।"

(श्रीमती) प्रावतनलिनी मलिक बनाम उड़ीसा राज्य और अन्य

आई० एल० आर० (1973) कटक 372

तथ्य

प्रार्थी ने संविधान के अनुच्छेद 226 और 227 के अधीन अनुतोष (रिलीफ) के लिए आवेदन किया था। उड़ीसा लोक सेवा आयोग ने राज्य सरकार के अनुरोध पर 1969-70 में राजनीति शास्त्र के प्राध्यापकों के 18 पद विज्ञापित किए। 16 प्रतिशत पद अनुसूचित जातियों के लिए तथा 24 प्रतिशत पद अनुसूचित जन-जातियों के लिए आरक्षित किए गए किन्तु शर्त यह थी कि "वे पद के लिए उपयुक्तता का न्यूनतम स्तर" पूरा करते हों। पद के लिए आवेदन भेजने के लिए कुछ न्यूनतम योग्यताएं निर्धारित की गई। प्रार्थी, अनुसूचित जाति की थी और यद्यपि न्यूनतम योग्यताएं पूरी करती थीं किन्तु उनकी नियुक्ति नहीं हुई क्योंकि आयोग ने साक्षात्कार में उन्हें उपयुक्त नहीं पाया। "उपयुक्त" उम्मीदवार न मिलने पर आरक्षित पदों में से एक को छोड़ कर शेष पदों को अनारक्षित श्रेणी के उपयुक्त उम्मीदवारों की नियुक्ति द्वारा भर लिया गया।

वाद-विषय

क्या प्रार्थी का, जो कि न्यूनतम शैक्षिक योग्यताएं पूरी करती थीं, आयोग द्वारा साक्षात्कार के बाद अनुपयुक्त पाए जाने पर भी, पद पर नियुक्ति का हकदार थी ?

निर्णय

न्यायालय (कार्यकारी मुख्य न्यायमूर्ति एस० के० राय और न्यायमूर्ति बी० के० पात्रा) ने प्रार्थी के पक्ष में निर्णय नहीं लिया। उसने निर्धारित किया कि प्रार्थी नियुक्ति की हकदार तभी हो सकती थीं यदि लोक सेवा आयोग द्वारा उनका चयन कर लिया जाता।

इस निष्कर्ष पर पहुंचने के लिए न्यायालय ने टी० देवदासन बनाम भारत संघ और महाप्रबन्धक दक्षिण रेलवे बनाम रंगाचारी के मामलों का अनुसरण किया। इस प्रकार यह देखने में आया कि अनुच्छेद 16(4) की व्यवस्था संविधान के अनुच्छेद 335 के संदर्भ में की जानी चाहिए। (रंगाचारी का मामला देखें) इसके अतिरिक्त यह कहा गया कि अनुच्छेद 16 का खण्ड 4, खण्ड I का अपवाद है और उस खण्ड के अधीन किए गए आरक्षण को अनुच्छेद 14 का उल्लंघन नहीं माना जा सकता।

अनुच्छेद 16(4) के अधीन राज्य अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों के लिए पदों की उचित प्रतिशत मात्रा आरक्षित कर सकता है। यह प्रतिशत मात्रा कितनी होगी इसका निर्धारण तो समय-समय पर परिस्थितियां देखकर ही किया जा सकता है। (देवदासन का मामला देखें) तथापि वर्तमान मामले में आरक्षण की प्रतिशतता के बारे में कोई शिकायत नहीं है।

यह भी कहा गया कि अनुच्छेद 16(4) की भाषा से यह स्पष्ट है कि अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों के लिए आरक्षण करने के संबंध में सरकार संवैधानिक रूप से बाध्य नहीं है। यह सरकार के विवेक पर है और यदि उसका प्रयोग करते हुए वह पद के लिए उपयुक्तता के न्यूनतम स्तर की शर्त रखते हुए आरक्षण करती है तो उसकी वैधता के संबंध में कोई प्रश्न नहीं किया जा सकता।

अतः याचिका को रद्द कर दिया गया।

राजैय्या और अन्य बनाम आंध्र प्रदेश राज्य

ए० आई० आर० (1973) आंध्र प्रदेश 516

तथ्य

छः प्रार्थियों ने जो कि पारंगत समाहर्तालय में चतुर्थ श्रेणी पद पर अस्थायीरूप से कार्य कर रहे थे, अनुच्छेद 226 के अधीन इस आशय की एक रिट दायर की कि प्रतिवादियों को सरकारी आदेश सं०. 686, कार्यान्वित करने से मना किया जाए। उक्त आदेश में यह व्यवस्था थी कि जब कभी छंटाई की जानी हो तो अनुसूचित जाति और अनुसूचित जनजाति का प्रतिनिधित्व किसी खास प्रतिशत से कम होने पर उनके कनिष्ठतम कर्मचारी से पहले गैर-अनुसूचित जाति और गैर-अनुसूचित जनजाति के वरिष्ठ अस्थायी कर्मचारियों, परिवीक्षाधीन कर्मचारियों और यहां तक कि परिवीक्षाधीन अनुमोदित कर्मचारियों की छंटाई की जाएगी। प्रार्थी अनुसूचित जाति और अनुसूचित जनजाति के नहीं थे इसलिए उनकी छंटनी कर दी गई हालांकि वे अनुसूचित जाति और अनुसूचित जनजाति के उसी श्रेणी के अस्थायी कर्मचारियों से काफी वरिष्ठ थे।

वाद-विषय

1. क्या सरकारी आदेश (जी० ओ०) अवैध और शून्य था और उसने संविधान के अनुच्छेद 16(1) तथा (2) का उल्लंघन हुआ था।
2. क्या नौकरी से छंटनी का मामला अनुच्छेद 16(4) की परिधि में आता है।

निर्णय

न्यायमूर्ति—चिन्नपा रेड्डी ने **महाप्रबंधक, दक्षिण रेलवे बनाम रंगाचारी** के मामले को आधार मान कर निर्धारित किया कि उक्त सरकारी आदेश से अनुच्छेद 16(1) तथा (2) का उल्लंघन हुआ है। न्यायालय ने इस प्रश्न पर विचार किया कि क्या संविधान के अनुच्छेद 16(4) के अधीन उक्त नियम का औचित्य सिद्ध किया जा सकता है। रंगाचारी ने निर्धारित किया था कि अनुच्छेद 16(4) के अधीन राज्य को प्रदत्त आरक्षण की शक्ति का प्रयोग नियुक्तियों में और प्रवरण-पदों में आरक्षण करके किया जा सकता है। परन्तु यह बात मान ली गई थी कि अनुच्छेद 16(4) के अधीन वे सभी विषय नहीं आते जो अनुच्छेद 16(1) के अन्तर्गत आते हैं। नौकरी से संबंधित कुछ मामलों में, जैसे कि सेवा की शर्तें, वेतन, वेतनवृद्धि, उपदान पेंशन, निवर्तन की आयु, जिनमें अनुच्छेद 16(1) तथा (2) द्वारा समानता का गारंटी की गयी थी, अनुच्छेद 16(4) के अन्तर्गत नहीं आते।

प्रार्थियों की ओर से यह तर्क दिया गया नौकरी से छंटनी का मामला अनुच्छेद 16(4) के अधीन नहीं आता। इस प्रश्न को वैसा ही छोड़ दिया गया हालांकि न्यायमूर्ति रेड्डी यह जान कर चले कि अनुच्छेद 16(4) के अधीन छंटाई के मामले को लाया जा सकता है।

इस पर विचार करते समय कि अनुच्छेद 16(4) के अधीन आरक्षण किस सीमा तक किया जा सकता है, उच्चतम न्यायालय द्वारा **महाप्रबन्धक, दक्षिण रेलवे** बनाम रंगाचारी, **देवदासन** बनाम **भारत संघ** तथा **बालाजी** बनाम **मैसूर राज्य** के मामलों में की गई व्याख्या पर विचार किया गया। उक्त मामलों में यह निर्धारित किया गया कि पिछड़े वर्गों के लिए अत्यधिक आरक्षण करने से अन्य समुदायों के व्यक्तियों के वैध दावों का हनन हुआ है जो कि अनुच्छेद 16(4) का उल्लंघन है। न्यायालय ने कहा कि पिछड़े वर्गों के व्यक्तियों के दावों तथा अन्य कर्मचारियों के दावों के बीच उचित संतुलन होना चाहिए। नियुक्ति के प्रत्येक वर्ष को अलग-अलग हिसाब में लिया जाना चाहिए और "पिछड़े वर्गों के लिए आरक्षण इतना अधिक नहीं होना चाहिए कि उनका एकाधिकार हो जाए या अन्य समुदायों के व्यक्तियों के वैध दावों का हनन हो"।

अतः न्यायालय ने उक्त सरकारी आदेश को अवैध और शून्य ठहराते हुए रिट याचिका की अनुमति दे दी।

के० एस० नायर बनाम तेल और प्राकृतिक गैस आयोग तथा अन्य

1974 गुजरात लॉ रिपोर्ट (एल० आर०) 7

तथ्य

प्रार्थी ने, जो अस्थायी मुख्य भंडारी था, प्रथम याचिका में प्रतिवादी-I, प्राकृतिक तेल और गैस कमीशन द्वारा की गई कार्रवाई की विधि मान्यता को चुनौती दी जिसके द्वारा आयोग ने उसकी और प्रतिवादी नं० 2 और 3 की वरिष्ठता पुनर्निर्धारित की थी और पिछड़े वर्ग के वे प्रतिवादी उससे वरिष्ठ माने गए थे। दूसरी याचिका में कमीशन द्वारा प्रतिवादी नं० 4 ज्ञान सिंह को पिछड़े वर्ग का व्यक्ति होने के कारण कार्यपालक इंजीनियर के पद के लिए साक्षात्कार देने की बात को चुनौती दी गई और तीसरी याचिका में कमीशन द्वारा उसे स्थायी करने और अन्य व्यक्तियों की अपेक्षा उसके साथ अधिक बेहतर व्यवहार करने को चुनौती दी।

वाद-विषय

क्या 26 मई 1970 का आरोपित परिपत्र अनुच्छेद 16(4) के अर्थों के अनुसार विधिवत् आरक्षण आदेश माना जा सकता है।

निर्णय

न्यायालय (न्यायमूर्ति जे० बी० मेहता और न्यायमूर्ति, एस० एच० सेठ) ने निर्णय किया कि आरोपित परिपत्र का वह अर्थ नहीं लिया जा सकता जो लिया गया था इसलिए तीनों याचिकाएं मंजूर कर लीं।

त्रिलोकीनाथ, ए० आई० आर० 1969, उच्चतम न्यायालय I का हवाला दिया गया जिसमें यह निर्दिष्ट किया गया था कि अनुच्छेद 16(4) के अधीन आरक्षण सांविधिक रूप से अधिनियमित करना आवश्यक नहीं है। यह कार्यकारी आदेश या निदेश द्वारा किया जा सकता है। तथापि यह आवश्यक है कि ऐसा आदेश या निदेश प्रकाशित किया जाए। "जब कर्मचारियों के प्राधिकारों पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ रहा हो और अनुच्छेद 16(4) के अधीन लेखे असाधारण आदेश द्वारा हितों पर प्रतिकूल प्रभाव डालने वाले व्यवहार का समर्थन किया जा रहा हो तब यह स्पष्ट है कि यह कार्य, कार्यालय फाइल पर केवल एक कार्यकारी अनुदेश से नहीं हो सकता।

अनुच्छेद 16(4) के अधीन यह व्यवस्था है कि आदेश चाहे किसी किस्म का क्यों न हो, अवश्य ही प्रकाशित किया जाए ताकि सभी संबंधित कर्मचारियों को सूचित किया जा सके।

सर्मदा बनाम भारत संघ

ए० आई० आर० 1975, दिल्ली 115

तथ्य

प्रार्थी ने, जो सवर्ण जाति के परिवार (पंजाब के मसहोत्रा) की थीं, यह रिट याचिका दायर की। उसका दावा यह था चूंकि उसका विवाह फ्लाइट लेफ्टिनेन्ट सी० डी० निदा० (जो अनुसूचित जाति के थे) से हुआ था इसलिए वह उस सरकारी पद के लिए, जो पिछड़े समुदायों अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों के लिए आरक्षित था, अनुसूचित जाति की उम्मीदवार माने जाने की हकदार थीं। उसने रक्षा मंत्रालय में रूसी-अंग्रेजी के वरिष्ठ अनुवादक के पद के लिए आवेदन किया। परन्तु उसका चयन रूसी-अंग्रेजी के कनिष्ठ अनुवादक पद के लिए किया गया। उसका नाम क्रम संख्या दो पर रखा गया। क्रम संख्या I पर किसी अन्य व्यक्ति को इस आधार पर नियुक्ति कर ली गई कि उक्त पद अनुसूचित जाति के उम्मीदवार के लिए आरक्षित था। वह स्वयं चूंकि सवर्ण जाति की थी इसलिए केवल इस आधार पर कि उसका विवाह अनुसूचित जाति के व्यक्ति के साथ हुआ था उस पर विचार नहीं किया जा सकता था।

वाद-विषय

किसी अनुसूचित जाति के व्यक्ति से विवाह हो जाने पर क्या कोई सवर्ण जाति वाली महिला अनुच्छेद 16(4) के अधीन पिछड़े हुए समुदायों के लिए आरक्षित किसी सरकारी पद के संबंध में अनुसूचित जाति की उम्मीदवार होने का दावा कर सकती है?

निर्णय

न्यायमूर्ति एस० रंगराजन के माध्यम से न्यायालय ने यह अभिनिर्धारित किया कि वह उक्त पद की दावेदार नहीं हो सकती। उन्होंने इस बात की ओर ध्यान दिलाया कि यदि प्रार्थी जैसी महिला को, जो सवर्ण जाति की थी, "सामाजिक और शैक्षिक दृष्टि से पिछड़े हुए वर्गों के लिए आरक्षित पदों के संबंध में प्रतियोगिता में भाग लेने की अनुमति केवल मात्र इस कारणवश दी जाए कि उसने ऐसी जाति के व्यक्ति से विवाह किया है तो राज्य द्वारा उक्त वर्गों में लिए कुछ पद आरक्षित करने के उपबंध बेकार सिद्ध होंगे"।

तदनुसार याचिका खारिज कर दी गई।

हरिपद राय बनाम भारत संघ और अन्य

(1975) 79 सी० डब्ल्यू० एन० 834

तथ्य

प्रार्थी ने यह अपील न्यायमूर्ति एम० एम० दत्त द्वारा 1974 में दिए गए आदेश के विरुद्ध दायर की जिसमें उन्होंने एक नियम को हटा दिया था। प्रार्थी ने इस नियम द्वारा अपने नियोक्ता, कलकत्ता पत्तन आयुक्त, द्वारा किए गए आदेश को चनौती दी थी। कलकत्ता पत्तन आयुक्त ने प्रतिवादी संख्या 4 से 30 तक की सहायक चिकित्सा अधिकारी के पद से, वरिष्ठ सहायक चिकित्सा अधिकारी के पद पर पदोन्नति कर दी थी। प्रार्थी ने यह दावा किया था कि अनुसूचित जाति का सदस्य होने के नाते वह 1958 में किए गए संकल्प के आधार पर प्रतिवादी नं० 2 की सेवा में पदों के आरक्षण का लाभ पाने का हकदार था।

वाद-विषय

1. क्या अनुच्छेद 16(4) के अधीन पिछड़े वर्गों के लिए पदों का आरक्षण नियुक्ति के शुरू-शुरू में ही किया जा सकता है या पदोन्नति द्वारा भरे जाने वाले पदों पर भी किया जा सकता है।

2. अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों के लिए "उनकी सभी सेवाओं में" कुछ प्रतिशत पदों का आरक्षण करने वाले प्राधिकार के संकल्प में क्या पदोन्नति द्वारा भरे जाने वाले पदों में भी आरक्षण करने का विचार किया गया था।

निर्णय

न्यायमूर्ति एस० के० मुखर्जी और न्यायमूर्ति सुधामय बसु, कलकत्ता उच्च न्यायालय ने यह अभिनिर्धारित किया :—

1. अनुच्छेद 16(4) में "नियुक्तियों या पद" शब्दों के प्रयोग से यह स्पष्ट होता है कि उक्त अनुछेद में न केवल नियुक्तियों के लुए में ही बल्कि सेवाओं या पदों को भी ध्यान में रखा गया है जिन्हें पदोन्नति द्वारा भरा जाएगा।

2. कलकत्ता के पत्तन प्राधिकारियों द्वारा अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों के लिए कुछ प्रतिशत रिक्तियों का आरक्षण करते समय पारित संकल्प में प्रयुक्त "उनकी सभी सेवाओं में" शब्दों को अनुच्छेद 16(4) में विचारित "सभी नियुक्तियां या पद" शब्दों के बराबर माना जाए। अतः इसमें केवल प्रारम्भिक नियुक्ति ही नहीं बल्कि किसी पद का पदोन्नति द्वारा भरा जाना भी शामिल होगा।

इस निष्कर्ष पर पहुंचने के लिए न्यायालय ने **महाप्रबंधक, दक्षिण रेलवे बनाम रंगाचारी** मामले को आधार माना। उच्चतम न्यायालय ने उस मामले में निर्दिष्ट किया कि "अनुच्छेद 16(4) के अधीन राज्य को प्रदत्त आरक्षण की शक्तियों का प्रयोग राज्य द्वारा किसी उपयुक्त मामले में केवल नियुक्तियों में आरक्षण की व्यवस्था करने में ही नहीं बल्कि चयन पदों (सेलेक्शन पोस्ट) में भी आरक्षण की व्यवस्था करने में भी किया जा सकता है"। इसलिए न्यायालय ने अपील मंजूर कर ली।

जे० सी० मलिक तथा अन्य बनाम भारत संघ और अन्य

1978(1) एस० एस० आर० 844

तथ्य

अनुच्छेद 226 के अधीन एक याचिका दायर की गई । प्रार्थी सं० 1 से 6 ने, जो उत्तर रेलवे की सेवा में ग्रेड "बी" और "सी" गार्डों के पद पर थे, प्रतिवादी सं० 4 से 8, जो "सी" ग्रेड के गार्ड थे और प्रार्थियों से कनिष्ठ थे, की ग्रेड "ए" पद पर नियुक्ति को चनौती दी थी । प्रार्थियों ने इन प्रतिवादियों के चयन को मंसूख करने के लिए अनुतोष (रिलीफ) का दावा किया । रेलवे बोर्ड ने तृतीय और चतुर्थ श्रेणी कर्मचारियों के लिए 15 प्रतिशत आरक्षण निश्चित किया था । प्रार्थियों ने दावा किया कि रेलवे बोर्ड ने सेवानिवृत्ति या पद त्याग करने के कारण होने वाली रिक्तियों के संबंध में भी 15 प्रतिशत आरक्षण का सिद्धान्त लागू करने का प्रयास किया था इसलिए इसके परिणामस्वरूप अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों के लिए 15% से अधिक आरक्षण हो गया था ।

वाद-विषय

1. अनुच्छेद 16(4) के अधीन किए गए आरक्षण की प्रतिशतता रिक्तियों के संबंध में है या कुल पदों के संबंध में ।

2. क्या आरक्षण निर्धारित आरक्षण से अधिक था और क्या इससे अनुच्छेद 16(1) का उल्लंघन हुआ था ।

निर्णय

न्यायालय (न्यायमूर्ति के० एन० सिंह और न्यायमूर्ति एस० डी० अग्रवाल) ने प्रार्थियों की धारणा का समर्थन किया कि आरक्षण के प्रतिशतता का संबंध रिक्तियों से है न कि पदों से । न्यायमूर्ति के० एन० सिंह ने निर्णय देते हुए इस बात की ओर ध्यान दिलाया कि प्रतिवादी की इसके विपरीत धारणा को स्वीकार करने का अर्थ होगा, गैर-अनुसूचित जातियों के कर्मचारियों के प्रति भेद-भाव रखना । वर्तमान मामले में ग्रेड "ए" गार्डों के कुल 37 पद थे ।

यदि किसी वर्ष विशेष में होने वाली रिक्तियों की 15 प्रतिशत रिक्तियां अनुसूचित जाति के उम्मीदवारों को पदोन्नति द्वारा भरी जाएं तो इसके परिणामस्वरूप उस ग्रेड में अनुसूचित जाति के उम्मीदवारों की संख्या 60 प्रतिशत तक हो जाएगी । यह उन अन्य व्यक्तियों के हितों के प्रतिकूल होगा जो वरिष्ठ हैं या जिनका कार्य सराहनीय है । परन्तु अनुसूचित जाति के लिए आरक्षण होने के कारण उनकी पदोन्नति नहीं की जा सकी । न्यायालय ने इस बात की ओर भी ध्यान दिलाया कि 1970 के परिपत्र से अनुसूचित वर्गों के निम्नतम ग्रेड "सी" के गार्डों को ग्रेड "बी" के गार्डों के ऊपर कर दिया गया जो निःसंदेह उनसे वरिष्ठ थे । ग्रेड "ए" गार्डों की सेवानिवृत्ति के कारण 1984 तक उपलब्ध होने वाली रिक्तियों को दर्शाने वाले प्रार्थियों द्वारा तैयार किए गए चार्ट से पता चला है कि उपलब्ध रिक्तियों में से 15% कोटे के परिणामस्वरूप ग्रेड "ए" गार्ड पदों पर अनुसूचित जातियों के 56 प्रतिशत व्यक्ति होंगे । न्यायालय ने देवदासन के मामले में यथानिर्धारित कानून को लागू करते हुए यह निर्धारित किया कि इससे अनुच्छेद 16(1) का उल्लंघन होगा । अनुच्छेद 16(4) अनुच्छेद 16(1) का अपवाद है । तथापि खण्ड (4) के अधीन प्रदत्त शक्ति का प्रयोग इस प्रकार नहीं किया जा सकता कि उससे अत्यधिक आरक्षण हो जाए और अन्य समुदायों के सदस्यों को रोजगार का उचित अवसर देने से वंचित कर दिया जाए ।

अतः न्यायालय ने याचिका मंजूर कर ली ।

छोटे लाल तथा अन्य बनाम उत्तर प्रदेश राज्य

ए० आई० आर० 1979 इलाहाबाद 135

तथ्य

यह याचिका अनुच्छेद 226 के अधीन राज्य न्यायिक सेवा में पिछड़े वर्गों, स्वतंत्रता सेनानियों के आश्रितों, मिसा (आन्तरिक सुरक्षा नियम) डी० आई० एस० आई० आर० में भूतपूर्व बन्दियों और उनके आश्रितों के लिए राज्य न्यायिक सेवा में पदों के आरक्षण के विरुद्ध चुनौती देने के लिए दायर की गई थी।

प्रार्थी वकील थे और वे राज्य न्यायिक सेवा परीक्षा में बैठे थे। यह परीक्षा 150 अस्थायी पद भरने के लिए अप्रैल 1978 में हुई थी। कुल पदों में से 27 पद अनुसूचित जातियों के लिए 3 पद अनुसूचित जन-जातियों के लिए, 8 पद स्वतंत्रता सेनानियों के आश्रितों के लिए, 12 पद सैनिक सेवाओं के अशक्त अफसरों के लिए और 23 पद पिछड़े वर्गों के लिए आरक्षित थे।

यहां हमें केवल तथाकथित "पिछड़े वर्गों" के लिए आरक्षण पर प्रार्थियों की आपत्ति पर विचार करना है।

उत्तर प्रदेश सरकार के एक आदेश में पिछड़े वर्गों में अहीरों, कुर्मियों और कुछ अन्य जातियों को शामिल किया गया था। प्रार्थियों का कहना था कि इन जातियों के बहुत से व्यक्ति आर्थिक और सामाजिक दृष्टि से पिछड़े हुए नहीं थे। बहुत से व्यक्ति सम्पन्न थे, बहुत से उच्च शिक्षा प्राप्त थे और उच्च पदों पर थे जबकि अन्य व्यक्ति वकील, डाक्टर आदि के व्यवसाय में थे। अतः सरकारी आदेश में उल्लिखित सभी जातियों को अनुच्छेद 16(4) के विषय क्षेत्र के अनुसार "पिछड़ा वर्ग" नहीं माना जा सकता। अतः उनके लिए आरक्षण करने का कोई युक्ति-युक्त आधार नहीं है।

वाद-विषय

1. "नागरिकों का पिछड़ा वर्ग" पद का विषय क्षेत्र और विस्तार क्या था। कोई जनसमूह 'नागरिकों के पिछड़े वर्ग' में आता है या नहीं यह निर्धारित करने का मानदण्ड क्या है?

2. क्या उत्तर-प्रदेश सरकार ने ठीक-ठीक निर्धारण किया था कि कौन-कौन पिछड़े वर्गों में शामिल किए जाएं? यदि नहीं, तो क्या 1955, 1958 और 1977 में जारी किए गए जी० ओ० एस० अनुच्छेद 15(4) के अर्थ में, 16(4) द्वारा राज्य को प्रदत्त संवैधानिक शक्तियों का दुरुपयोग थे और इसलिये वे शून्य थे।

निर्णय

न्यायालय (न्यायमूर्ति टी० एस० मिश्र और के० एन० गोयल) की यह मान्यता थी कि इन सरकारी आदेशों के अधीन पिछड़े वर्गों के लिए आरक्षण शून्य (व्यर्थ) था।

न्यायालय के विचार में राज्य सेवाओं में भर्ती के लिए डी० एन० चंचल बनाम मैसूर राज्य, ए० आई० आर० 1971, उच्चतम न्यायालय 1962 के मामले में तीन मूलभूत सिद्धान्त स्पष्ट होते हैं अर्थात् (i) राज्य को व्यक्तियों के वर्गीकरण, या श्रेणीकरण का निर्धारण करने की शक्ति है जिनसे राज्य सेवाओं में भर्ती की जा सकती है, (ii) अनुच्छेद 15(4) तथा 16(4) में अन्तर्निहित सिद्धान्त यह था कि तरजीह व्यवहार वैध रूप से किया जा सकता है क्योंकि सामाजिक और शैक्षिक दृष्टि से पिछड़े हुए वर्गों के लिए आवश्यक है कि कालान्तर में वे लोग अधिक उन्नत वर्गों के साथ बराबरी का स्थान ले सकें, और (iii) यह सिद्धान्त उन व्यक्तियों पर लागू किया जा सके जो विकलांग थे परन्तु उन पर नहीं जो अनुच्छेद 15(4) के अन्तर्गत आते हैं।

इन सिद्धान्तों के आधार पर रक्षा कार्मिकों तथा भूतपूर्व रक्षा कार्मिकों के बच्चों के लिए वैध रूप से आरक्षण किए जा सकते थे। इन सिद्धान्तों को मिसा और डी० आई० एस० आई० आर० के अधीन भूतपूर्व बन्दियों तथा उनके आश्रितों पर भी लागू करना अनुमत समझा जा सकता था। तथापि जहां तक सरकारी आदेश में विभिन्न जातियों के "पिछड़ेपन" की जांच-पड़ताल किए बिना ही केवल जाति के आधार पर "पिछड़े वर्गों" के लिए आरक्षण की व्यवस्था थी। इसकी अनुच्छेद 15(4) और अनुच्छेद 16(4) के अधीन पुष्टि नहीं की जा सकी।

जहां तक अनुच्छेद 15(4) तथा 16(4) में उल्लिखित "नागरिकों का पिछड़ा वर्ग" अभिव्यक्ति के विषय क्षेत्र और विस्तार का संबंध है, न्यायालय ने इस विषय पर संबंधित संवैधायिक उपबंधों और मुकदमों (केस लॉ) पर विचार किया। अनुच्छेद 366(24) तथा (25) में क्रमशः अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों की परिभाषा तो दी गई है परन्तु "नागरिकों के पिछड़े वर्ग" की परिभाषा करने वाला कोई खण्ड नहीं है। वस्तुतः अनुच्छेद 15(4) में पिछड़े वर्ग के लिए विशेष उपबंध थे जिनके अनुसार उन्हें अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों जैसा ही माना गया है। यह सोचा गया कि नागरिकों के कुछ अन्य वर्गों के लिए जो अनुसूचित जातियों और जन-जातियों जैसे ही या उनसे कुछ कम पिछड़े हुए हैं, उपबंध बनाए जाएं। संविधान के अनुच्छेद 15(4) तथा अनुच्छेद 16(4) का यही प्रयोजन था।

तथापि अनुच्छेद 15(4) तथा 16(4) के अधीन अत्यधिक आरक्षण नहीं हो सकते थे। उच्चतम न्यायालय ने देवदासन के मामले में, पिछड़े वर्गों के पक्ष में "50 प्रतिशत से कम" आरक्षण का अनुमोदन किया था। पिछड़े वर्ग के निर्धारण में जाति का मानदण्ड एक आधार तो हो सकता था परन्तु इसे ही एकमात्र मानदण्ड नहीं माना जा सकता। न्यायालय ने बालाजी के मामले में उच्चतम न्यायालय द्वारा की गई टिप्पणियों का भी उल्लेख किया जिसमें 68 प्रतिशत आरक्षण के आदेश अमान्य ठहरा दिए गए थे। न्यायालय ने कहा कि उत्तर प्रदेश राज्य की ओर से पेश होने वाले महासालिसिटर ने यह स्वीकार किया कि सभी श्रेणियों के लिए आरक्षण 50 प्रतिशत से कम हों।

ऐसे आरक्षण करने वाली कार्यपालिका को चाहिए कि संविधान द्वारा उसे प्रदत्त प्राधिकार का वह प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से अतिक्रमण न करे अन्यथा जैसे कि एम० आर० बालाजी के मामले में निर्धारित किया गया था संविधान द्वारा प्रदत्त शक्तियों के कपटपूर्ण ढंग से प्रयोग के लिए उक्त कार्रवाई को अमान्य ठहरा दिया जाएगा।

मुकदमें की समीक्षा करने के बाद न्यायालय ने "पिछड़े वर्गों" के निर्धारण संबंधी कानून का निम्नलिखित सार निकाला :—

(i) अनुच्छेद 15(4) में सामाजिक और शैक्षिक दृष्टि से पिछड़े वर्गों को अनुसूचित जातियों और जनजातियों के समान समझने और 338(3) के उपबंध के अनुसार यह अर्थ लगाने से कि उनमें वे पिछड़े वर्ग भी शामिल हैं जिन्हें राष्ट्रपति अनुच्छेद 340(1) के अधीन नियुक्त आयोग की रिपोर्ट प्राप्त होने पर आदेश द्वारा विनिर्दिष्ट करे, यह प्रकट होता है कि उनके पिछड़ेपन के मामले में उनकी तुलना अनुसूचित जातियों और जनजातियों से की जा सकती है।

(ii) पिछड़े वर्गों की संकल्पना इस अर्थ में सापेक्ष नहीं है कि समुदाय में सबसे उन्नत वर्ग की तुलना में जो वर्ग पिछड़ा हुआ है उसे पिछड़े वर्ग में अवश्य शामिल किया जाए।

(iii) पिछड़ापन केवल सामाजिक या केवल शैक्षिक दृष्टि से नहीं बल्कि दोनों दृष्टियों से होना चाहिए।

(iv) अनुच्छेद 15(4) में पिछड़ी जातियों का नहीं बल्कि "पिछड़े वर्गों" का निर्देश है। यदि जाति को ही पिछड़ेपन का मानदण्ड बनाया जाए तो बहुत से समुदायों के मामले में, जिनकी कोई जाति नहीं है, यह मानदण्ड भंग हो जाएगा।

(v) सामाजिक दृष्टि से पिछड़ापन निर्धारित करने के लिए जाति को एक संगत कारक माना जा सकता है किन्तु यह एकमात्र या प्रमुख मानदण्ड नहीं हो सकता।

(vi) अन्ततः विश्लेषण करने पर पता चलता है कि सामाजिक दृष्टि से पिछड़ापन अत्यधिक गरीबी का परिणाम है। पिछड़ापन चूंकि गरीबी के कारण होता है इसलिए जाति की दृष्टि से विचार करने से ऐसे लोगों की गरीबी के बढ़ जाने की संभावना है जो उस जाति विशेष के होंगे। लेकिन इससे तो पिछड़ापन निर्धारित करने के लिए जाति और गरीबी दोनों की संबद्धता और भी स्पष्ट हो जाती है।

(vii) अन्य संगत कारणों को ध्यान में रखे बिना केवल जाति पर आधारित वर्गीकरण अनुच्छेद 15(4) के अधीन अनुमत नहीं है तथापि कुछ जातियां समग्र रूप से सामाजिक और शैक्षिक दृष्टि से पिछड़ी हुई हैं।

(viii) कुछ वर्गों द्वारा किए जा रहे व्यवसाय (जो निम्नकोटि के समझे जाते हैं) पिछड़ेपन का कारण हो सकते हैं, लोगों का स्थान विशेष में निवास करना भी पिछड़ेपन का कारण हो सकता है क्योंकि एक तरह से सामाजिक दृष्टि से पिछड़ेपन की समस्या ग्रामीण भारत की समस्या है।

(ix) पिछड़े और अत्यन्त पिछड़े वर्गों में विभाजन वास्तव में आबादी का सबसे सम्पन्न व्यक्तियों और शेष व्यक्तियों के बीच विभाजन है। शेष व्यक्तियों को पिछड़े और सबसे पिछड़े वर्गों में विभाजित कर दिया गया है परन्तु अनुच्छेद 15(4) में इसका समर्थन नहीं किया गया है।

(x) अनुच्छेद 16(4) के अधीन किसी व्यक्ति को यह अपेक्षा करने का अधिकार नहीं है कि आरक्षण किया जाना चाहिए। यदि राज्य की राय में नागरिकों के किसी वर्ग का राज्य सेवाओं में समुचित प्रतिनिधित्व नहीं है तो राज्य को इस अनुच्छेद द्वारा इस प्रकार का आरक्षण करने का विवेकाधिकार प्रदान किया गया है। किसी जाति या वर्ग का राज्य सेवाओं में अपर्याप्त प्रतिनिधित्व होने मात्र से ही अनुच्छेद 16(4) लागू नहीं किया जा सकता जब तक वह वर्ग (कुल मिलाकर किसी जाति सहित) सामाजिक और आर्थिक दृष्टि से भी पिछड़ा हुआ न हो।

(xi) किसी वर्ग को पिछड़े वर्गों की सूची में शामिल कर लेने के बाद यदि वह वर्ग भविष्य में हमेशा के लिए ही पिछड़ा हुआ माना जाता रहे तो आरक्षण का उद्देश्य ही विफल हो जाएगा। अतः राज्य को किसी निश्चित समय पर पिछड़े वर्गों की सूची और पिछड़े हुए निर्धारित कर दिए गए वर्गों के लिए आरक्षण की मात्रा की लगातार आवधिक समीक्षा करते रहना चाहिए।

(xii) विभिन्न श्रेणियों के लिए (पिछड़े वर्गों समेत) कुल मिलाकर आरक्षण 50 प्रतिशत से कम होना चाहिए, और

(xiii) न्यायालय को केवल इतना निश्चित करने का अधिकार है कि नागरिकों के पिछड़े वर्ग निर्धारित करने के लिए राज्य द्वारा अपनाए गए मानदण्ड विधिमान्य है या नहीं। यदि राज्य द्वारा सुसंगत मानदण्ड न अपनाए गए हों तो न्यायालय राज्य द्वारा तैयार की गई "पिछड़े वर्गों" की सूची में संशोधन नहीं कर सकता और न ही आरक्षण की मात्रा में संशोधन कर सकता है परन्तु यह बात राज्य के ऊपर छोड़ते हुए कि वह सही मानदण्ड अपनाते हुए नए सिरे से उचित निर्णय ले, न्यायालय को आपत्तिजनक भाग अवश्य अमान्य ठहरा देना चाहिए।

न्यायालय ने इस बात की जांच की कि जहां राज्य द्वारा पिछड़े वर्गों के विनिर्धारण के विरुद्ध चुनौती दी जाए वहां सबूत पेश करने का उत्तरदायित्व किस पर डाला जाए। उसने उच्चतम न्यायालय के निम्नलिखित दो निर्णयों का हवाला दिया—पंजाब राज्य बनाम हीरा लाल, ए० आई० आर० 1971 उच्चतम न्यायालय 1977 जिसमें न्यायालय की मान्यता थी कि आरक्षण से अनुच्छेद 16(1) का उल्लंघन हुआ है और इसे सिद्ध करने का दायित्व दलील देने वाले व्यक्ति पर है। उत्तर प्रदेश बनाम प्रदीप टंडन ए० आई० आर० 1975, उच्चतम न्यायालय 563 के मामले में सबूत पेश करने का दायित्व दलील देने वाले व्यक्ति पर नहीं डाला गया। (यह सबूत पेश करने का भार राज्य पर है कि आरक्षण सामाजिक और शैक्षिक दृष्टि से पिछड़े हुए वर्गों के नागरिकों के लिए है)।

न्यायालय का विचार था कि हीरालाल और प्रदीप टंडन के मामलों में सबूत पेश करने के भार संबंधी परस्पर विरोधी विचारों का समाधान किया जा सकता है। न्यायालय ने कहा कि जिन मामलों में किसी वर्ग के पिछड़ेपन के बारे में सरकार द्वारा उचित जांच-पड़ताल नहीं की गई है उनमें सरकारी आदेश अमान्य ठहरा दिए गए हैं जैसे कि त्रिलोकी नाथ (ए० आई० आर० 1969, उच्चतम न्यायालय 1); जानकी प्रसाद बनाम जम्मू और कश्मीर राज्य (ए आई आर 1973, उच्चतम न्यायालय 930), एम० आर० बालाजी (ए आई आर 1963, उच्चतम न्यायालय 649) और आंध्रप्रदेश राज्य बनाम पी० सागर ए० आई० आर० 1968 उच्चतम न्यायालय 1379 के मामलों में किया गया है। दूसरी ओर जहां प्रार्थियों ने चुनौती के लिए कोई आधार नहीं बनाया तथा यह बताने में असफल रहे कि कोई वर्ग पिछड़े वर्गों में गलत शामिल कर लिया गया है, ऐसी चुनौती रद्द कर दी गई है जैसा कि पी० राजेन्द्रन बनाम मद्रास राज्य (ए आई आर 1968, उच्चतम न्यायालय 1012) तथा पंजाब राज्य बनाम हीरा लाल (ए आई आर 1971 उच्चतम न्यायालय 1777) में किया गया है। अतः सबूत पेश करने का दायित्व मिला जुला है। जैसा कि हीरालाल के मामले में न्यायालय की मान्यता थी, नियुक्तियों

का आरक्षण काल्पनिक आधार पर प्रमान्य नहीं ठहराया जा सकता। किन्तु जैसा कि पी० सागर के मामले में निर्धारित किया गया यह सरकार का कर्त्तव्य था कि "साक्ष्य और तर्क द्वारा न्यायालय के समक्ष यह प्रदर्शित करे कि गारंटी किए गए अधिकार का उल्लंघन नहीं हुआ है"।

प्रार्थी के शपथ-पत्र और राज्य के प्रति शपथ-पत्र तथा उसमें उल्लिखित कामकाज आदि (जैसे कि छेदी लाल सेठी आयोग की रिपोर्ट तथा काका कालेलकर आयोग की रिपोर्ट) की जांच करने के बाद न्यायालय ने निष्कर्ष निकाला कि "न तो आरोपित सरकारी आदेश से और न ही राज्य की ओर से दायर किए गए प्रति शपथ-पत्र से पता चलता है कि राज्य सरकार ने कोई अन्य सर्वेक्षण या किसी अन्य प्रकार से आंकड़े एकत्रित करने का कार्य किया था। उसी प्रकार से जहां तक शिक्षा विभाग द्वारा तैयार की गई सूची का संबंध है, प्रति शपथ-पत्र में इस बात का भी उल्लेख नहीं है कि उस समय इन जातियों को किस आधार पर शिक्षा के क्षेत्र में भी पिछड़े हुए नागरिकों की श्रेणी में पाया गया था। इस प्रकार कोई जांच-पड़ताल नहीं की गई"। संक्षेप में, न्यायालय का विचार था कि राज्य द्वारा इस निष्कर्ष पर पहुंचने का आधार कि उल्लिखित जातियां पिछड़ी हुई थीं, पहले नष्ट नहीं किया गया था। न्यायालय ने इस बात पर भी बल दिया कि यद्यपि उच्चतम न्यायालय ने अनेक मामलों में जातियों के आधार पर पिछड़े वर्गों की गणना करने की बात का समर्थन किया है परन्तु इन सभी मामलों में जाति विशेष समग्र रूप से सामाजिक और शिक्षा के क्षेत्र में पिछड़ी हुई थी। "उच्चतम न्यायालय ने अनुच्छेद 16(4) के अनुसार केवल ऐसी ही जातियों को वैध रूप से सामाजिक और शैक्षिक दृष्टि से पिछड़ी हुई जातियां मानना स्वीकार किया है"।

जहां तक इस बात को सिद्ध करने के दायित्व का संबंध है, न्यायालय का विचार था कि प्रार्थियों ने विशिष्ट रूप से इस अभिकथन द्वारा अपना दायित्व पूरा कर लिया था कि कम से कम दो जातियां ऐसी थीं जो आर्थिक और सामाजिक दृष्टि से पिछड़ी हुई नहीं थीं। राज्य ने इसका खंडन करने के लिए कोई कागजात पेश नहीं किए हैं। "मौजूदा हालात में किसी नागरिक का अपनी निजी हैसियत से विस्तृत जांच पड़ताल करना और पूरे राज्य में सर्वेक्षण करना या संबंधित आंकड़े जुटाना सम्भव नहीं है। केवल सरकारी साधनों का प्रयोग करके ही ऐसे आंकड़े एकत्रित किए जा सकते हैं और न्यायालय को दिए जा सकते हैं"।

भाग IV

अनुच्छेद 16 (4) के अधीन मामलों का विश्लेषण

I. पिछड़ी जातियां क्या हैं

अनुच्छेद 16(4) में "पिछड़े वर्ग" शब्दों का प्रयोग किया गया है जब कि अनुच्छेद 15(4) में "सामाजिक और शैक्षिक दृष्टि से पिछड़े हुए वर्गों के नागरिक या अनुसूचित जातियां और अनुसूचित जनजातियां" शब्दों का प्रयोग किया गया है। शब्दावली के इस अन्तर के कारण दो प्रश्न उठते हैं ; पहला यह कि क्या अनुच्छेद 16(4) में अनुसूचित जातियां और अनुसूचित जनजातियां शामिल हैं और दूसरा यह कि क्या "पिछड़े वर्ग" शब्द का वही अर्थ लिया जाए जो अनुच्छेद 15(4) में अभिप्रेत है अर्थात् सामाजिक और शैक्षिक दृष्टि से पिछड़े वर्ग। अनेक मामलों में इस बात की पुष्टि की गई है कि अनुच्छेद [illegible] में उल्लिखित "पिछड़े वर्ग" शब्दों में अनुसूचित जातियां और अनुसूचित जनजातियां शामिल हैं। इसके साथ-साथ ये शब्द "सामाजिक और शैक्षिक दृष्टि से पिछड़ा कोई भी वर्ग" शब्दों के समान हैं अर्थात् जहां तक पिछड़े वर्गों की परिभाषा का संबंध है, अनुच्छेद 15(4) और 16(4) में कोई अन्तर नहीं है[2]।

पिछड़े वर्गों के लिए आरक्षण करते समय अन्य दो बातों की ओर ध्यान दिया जाना चाहिए वे हैं—उन पिछड़ी जातियों के लिए आरक्षण किए जा सकते हैं जिन्हें राज्य[3] के अधीन सेवाओं में पर्याप्त प्रतिनिधित्व नहीं मिला और उनके लिए किए जाने वाले किसी भी आरक्षण से प्रशासनिकदक्षता[4] पर कोई खास प्रभाव न पड़ता हो।

उच्चतम न्यायालय में पेश हुए ऐसे केवल चार ही मामले हैं जिनमें जिन्हें वर्गों के वर्गीकरण की वैधता का मुद्दा उठाया गया था और जम्मू तथा कश्मीर राज्य में आरक्षण संबंधी अनेक मामले हुए हैं। पिछड़े वर्गों की परिभाषा के प्रश्न पर मैसूर, केरल, आंध्र प्रदेश और उत्तर प्रदेश राज्यों से उच्च न्यायालय में अनेक मामले पेश हुए हैं।

इस संबंध में उच्चतम न्यायालय में सबसे पहला मामला **त्रिलोकीनाथ** बनाम **जम्मू और कश्मीर राज्य**[5] का था। यह मामला अनुच्छेद 15(4) के अधीन **बालाजी** बनाम **मैसूर राज्य** तथा **चित्रलेखा** बनाम **मैसूर राज्य**, मामलों में उच्चतम न्यायालय के निर्णयों के बाद उठा था। उपर्युक्त दोनों मामलों के बारे में हमने उस अनुच्छेद की धारा में चर्चा कर ली है। त्रिलोकीनाथ वाले मामले में तथ्य यह था कि सरकार ने कुछ पदों पर पदोन्नति के मामले में आरक्षण की निम्नलिखित नीति बिना किसी औपचारिक नियम या घोषणा के अपना ली थी। (1) मुसलमानों के लिए 50 प्रतिशत पद, (2) शेष 50 प्रतिशत पदों का 60 प्रतिशत जामवी हिन्दुओं के लिए, और (3) उक्त 50 प्रतिशत का शेष 40 प्रतिशत कश्मीरी पण्डितों के लिए और कभी-कभी एक या दो पद सिक्खों की बिना पारी पदोन्नति के लिए।

न्यायालय ने कहा कि पिछड़ेपन की कसौटी मात्र यही नहीं है कि कुछ वर्गों को राज्य की सेवाओं में पर्याप्त प्रतिनिधित्व नहीं मिला है जैसा कि राज्य ने दावा किया था क्योंकि इस तर्क से तो अनुच्छेद 16(4) के उपबंधों के अधीन वास्तव में पिछड़े वर्गों को मिलने वाले लाभ नहीं मिल पाएंगे और इसका लाभ केवल उस तबके के नागरिकों को मिल पाएगा जो किसी अन्य व्यवसाय में लगे हैं चाहे वे कितने धनवान और पढ़े-लिखे क्यों न हों। न्यायालय ने कहा कि किसी भी वर्ग को पिछड़ा हुआ तभी माना जाएगा जब वह सामाजिक और शैक्षिक दृष्टि से उसी प्रकार से पिछड़ा हुआ हो जैसा कि **बालाजी** के मामले में स्पष्ट किया गया था और इसके साथ यह भी है कि उस वर्ग को राज्य की सेवाओं में पर्याप्त प्रतिनिधित्व न मिला हो। **बालाजी** और **चित्रलेखा** के मामलों का अनुगमन करते हुए न्यायालय ने कहा कि किसी भी वर्ग को निम्नलिखित दो शर्तें पूरी होने पर "पिछड़ा वर्ग" वर्गीकृत किया जाए (i) आर्थिक स्थिति कमजोर हो और (ii) व्यवसाय को देखकर उक्त वर्गीकरण के लिए जाति को भी आधार माना जाए परन्तु इसे ही एक मात्र आधार या प्रमुख कसौटी न माना जाए। न्यायालय का विचार था कि सामाजिक और शैक्षिक दृष्टि से पिछड़ेपन का कारण गरीबी है। इसके अतिरिक्त एक और राज्य को जहां यह अनिवार्य रूप से सुनिश्चित करना होता है कि नागरिकों का एक वर्ग विशेष पिछड़ा हुआ है अथवा नहीं वहां इस मामले को न्यायालय में भी उठाया जा सकता है और न्यायालय इस बात की जांच कर सकता है कि राज्य ने इस शक्ति का दुरुपयोग किया है अथवा नहीं। इस मामले में न्यायालय ने राज्य की नीति पर प्रहार किया क्योंकि राज्य अपनी इस नीति का औचित्य सिद्ध करने के लिए न्यायालय के सामने पर्याप्त कागजात पेश नहीं कर सका कि उसने जिन श्रेणियों को पिछड़े हुए वर्ग माना है वे वास्तव में पिछड़े हुए थे। उसने उच्च न्यायालय से रिपोर्ट देने के लिए कहा जिसमें सम्पूर्ण राज्य की कुल आबादी, दोनों प्रान्तों के अलग-अलग आंकड़े, विभिन्न समुदायों का सामाजिक और आर्थिक दृष्टि से पिछड़ापन आदि की बाबत जानकारी हो।

उच्च न्यायालय द्वारा रिपोर्ट प्रस्तुत किए जाने के बाद दूसरा मामला अर्थात् **त्रिलोकीनाथ**[6] का मामला उच्चतम न्यायालय के सामने पेश हुआ। उच्चतम न्यायालय के देखने में आया कि उच्च न्यायालय की रिपोर्ट में ऐसा कोई औपचारिक आदेश शामिल नहीं था जिसमें नागरिकों के किसी पिछड़े वर्ग के लिए पदों पर आरक्षण या नियुक्तियां करने संबंधी कोई उपबंध हो। साक्ष्य देखकर न्यायालय को पता चला कि विभिन्न समुदायों को प्रतिनिधित्व देने की नीति इस तथ्य पर आधारित थी कि उन्हें सेवाओं में पर्याप्त प्रतिनिधित्व नहीं मिला था और प्रान्त के आधार पर समुचित प्रतिनिधित्व दिए जाने की बात थी। यह अनुच्छेद 16(4) के उपबन्धों के विपरीत है और अनुच्छेद 16(1) तथा (2) के अधीन अवैध हैं। न्यायालय ने कहा कि केवल जाति, समुदाय, प्रजाति, धर्म, पुरुष/

---

1 **महाप्रबंधक, दक्षिण रेलवे** बनाम **बी० रंगचारी**, ए० आई० आर०, 1962 उच्चतम न्यायालय 36, **देसू राजूडू** बनाम **आंध्र प्रदेश लोक सेवा आयोग** ए० आई० आर० 1967, आंध्र प्रदेश 353, **टी० देवदासन** बनाम **भारत संघ**, अखिल भारतीय रिपोर्टर 1961, उच्चतम न्यायालय 179.

2. **त्रिलोकी नाथ** बनाम **जम्मू और कश्मीर राज्य**, ए० आई० आर० 1967, उच्चतम न्यायालय 1283, **जानकी प्रसाद** बनाम **जम्मू और कश्मीर राज्य** ए० आई० आर० 1973, उच्चतम न्यायालय, 1930.

3. **रंगचारी का मामला**, ऊपर, त्रिलोकीनाथ का मामला वही—

4 रंगचारी का मामला वहीं, **टी० देवदासन्** बनाम **भारत संघ**, ए० आई० आर० 1964, उच्चतम न्यायालय, 179.

5. ए० आई० आर० 1967 उच्चतम न्यायालय 1283.

6 **त्रिलोकीनाथ** बनाम **जम्मू और कश्मीर राज्य**, ए० आई० आर० 1969 उच्चतम न्यायालय।

महिला, वंश जन्मस्थान या निवास्थान को मानदण्ड बना कर इस आधार पर ही किसी वर्ग को पिछड़ा हुआ नहीं माना जा सकता। "पिछड़ा वर्ग" अभिव्यक्ति का अर्थ वही नहीं है जो "पिछड़ी जाति" या "पिछड़ा समुदाय" है। सम्पूर्ण जाति या समुदाय को भी पिछड़ा हुआ घोषित किया जा सकता है किन्तु यह इसलिए नहीं होगा कि किसी जाति या समुदाय के रूप में उसकी कुछ विशिष्टताएं हैं परन्तु इसलिए कि एक विशेष समय में वह वर्ग निर्धारित सामाजिक, आर्थिक और शैक्षिक मूल्यों की दृष्टि से पिछड़ा हुआ है। अन्तिम आदेश देते समय न्यायालय ने कहा कि न्यायालय द्वारा दिए गए आदेश के कारण राज्य पर एक उचित योजना तैयार करने पर कोई रोक नहीं लगी हुई है।

त्रिलोकीनाथ के दूसरे मामले के बाद **माखनलाल बनाम जम्मू और कश्मीर राज्य**[7] का मामला सामने आया। यह मामला त्रिलोकीनाथ मामले के तथ्यों पर आधारित था। संविधान की व्याख्या की दृष्टि से माखनलाल का मामला कोई विशेष महत्व नहीं रखता। त्रिलोकीनाथ के मामले में यद्यपि न्यायालय ने यह कहा था कि राज्य को अनुच्छेद 16 के अनुरूप आरक्षण की योजना तैयार करनी चाहिए परन्तु ऐसी कोई योजना तैयार नहीं की गई थी। हालांकि राज्य ने एक उदार तरीका अपना लिया जिसके अनुसार त्रिलोकीनाथ के मामले में न्यायालय के निर्णय को प्रकट रूप से प्रभावी माना परन्तु वास्तव में प्रतिवादी शिक्षकों को उनके उन्हीं उच्च हैसियत वाले पदों पर जारी रखा जिनकी पदोन्नतियां त्रिलोकीनाथ के मामले में हुए निर्णय की दृष्टि में अवैध हो गई थीं। चूंकि इससे अनुच्छेद 16 का उल्लंघन हुआ था इसलिए न्यायालय ने इन पदोन्नतियों को अमान्य ठहरा दिया।

अन्त में उपर्युक्त तीनों मामलों के तथ्यों के आधार पर **बालकी प्रसाद बनाम जम्मू और कश्मीर राज्य**[8] का मामला पेश हुआ। **माखनलाल बनाम जम्मू और कश्मीर राज्य** के मामले में हुए निर्णय के परिणाम-स्वरूप जम्मू और कश्मीर राज्य ने जम्मू और कश्मीर अनुसूचित जाति और अनुसूचित जनजाति आरक्षण नियमावली, 1970 को लागू किया। प्रार्थियों ने कहा कि पहले की तरह सांप्रदायिक आधार पर प्रतिनिधित्व किया जाता है और इस बात का दावा किया कि नियमों के अधीन कुछ पद यद्यपि पिछड़े वर्गों के लिए आरक्षित थे किन्तु यह मुसलमानों के लिए लगभग 90 प्रतिशत पद आरक्षित करने का बहाना मात्र था।

सरकार ने राज्य सरकार द्वारा नियुक्त पिछड़ा वर्ग समिति की सिफारिशों के आधार पर नियम बनाए थे। जम्मू और कश्मीर उच्च न्यायालय सेवा निवृत्त मुख्य न्यायमूर्ति जे० एन० वजीर उक्त समिति के अध्यक्ष थे। इस समिति ने अपनी रिपोर्ट नवम्बर 1969 में पेश की। नियमों के अनुसार पिछड़े वर्गों को नीचे दिए अनुसार 6 श्रेणियों में वर्गीकृत किया गया था:—

1. कुछ विशिष्ट पारम्परिक व्यवसाय।
2. 23 विशिष्ट सामाजिक जातियां।
3. छोटे कृषक।
4. अल्प राशि पाने वाले पेंशनर।
5. युद्धविराम रेखा के निकटवर्ती क्षेत्र के निवासी।
6. राज्य के कुछ क्षेत्र "खराब बस्तियां" मानी जाती है उनका प्रत्येक व्यक्ति पिछड़ा हुआ माना जाए।

---

[7]. ए० आई० आर० 1971 उच्चतम न्यायालय 2207.

[8]. ए० आई० आर० 1973 उच्चतम न्यायालय 930.

इस मामले में न्यायालय ने इस बात पर जोर दिया कि पिछड़े वर्ग को सामाजिक और शैक्षिक दोनों दृष्टियों से पिछड़ा हुआ होना चाहिए। केवल शैक्षिक दृष्टि से या केवल सामाजिक दृष्टि से पिछड़ा हुआ होना पर्याप्त नहीं होगा।

उच्चतम न्यायालय ने नियमों में विनिर्दिष्ट लगभग सभी श्रेणियों के संबंध में आंशिक रूप से या पूर्ण रूप से आपत्ति उठाई।

इन श्रेणियों के संबंध में न्यायालय के मुख्य विचार इस प्रकार थे :—

जहां तक पारम्परिक व्यवसाय करने वाले व्यक्तियों को पिछड़े वर्ग के व्यक्ति मानने का प्रश्न है, न्यायालय इस बात से सहमत था कि कोई भी राज्य पारम्परिक व्यवसाय कर रहे निम्न आय वाले परिवार के व्यक्ति को पिछड़े वर्ग का व्यक्ति घोषित करने के लिए स्वतंत्र है यदि वह वर्ग समग्र रूप से सामाजिक और शैक्षिक दृष्टि से पिछड़ा हुआ हो। परन्तु सरकार द्वारा किए गए वर्गीकरण में यह दोष है कि यदि किसी व्यक्ति का दादा पारम्परिक व्यवसाय करता रहा हो वह भी पिछड़ा हुआ माना जाता था चाहे उसका पिता उस व्यवसाय को छोड़ चुका हो। इस प्रकार इसका लाभ संबंधित व्यक्ति को नहीं पहुंच रहा था।

नियमों में 23 जातियों को पिछड़ी हुई जातियां अधिसूचित किया गया था लेकिन पिछड़े वर्ग समिति ने ऐसी केवल 19 जातियों को पिछड़ा हुआ माना है। कागजात आदि के अभाव में न्यायालय शेष चार जातियों को भी पिछड़ी हुई जातियां मानने के लिए तैयार नहीं था।

नियमों में छोटी जोत के खेतिहरों को "पिछड़े वर्ग" का मानने की बात कही गयी थी।

खेती की जमीन और जिस क्षेत्र में यह जमीन स्थित है उसे देखते हुए जोत की सीमाएं अलग-अलग हो सकती थीं। इस वर्गीकरण के कारण आर्थिक थे। न्यायालय ने इस प्रस्ताव पर कोई ध्यान नहीं दिया क्योंकि उसका विचार था कि एक वर्ग सामाजिक दृष्टि से सदृश लोगों का वर्ग होना चाहिए जिनकी विशेषताएं समान होनी चाहिए और उन्हें समान गुणों के कारण पहचाना जा सकता हो। उपर्युक्त वर्गीकरण करते समय सामाजिक और शैक्षिक दृष्टि से पिछड़ेपन की संगति के प्रश्न को अधिक महत्व नहीं दिया गया था। उदाहरण के तौर पर न्यायालय का कहना था कि 10 कनाल या इससे कम जोत के मालिक को पिछड़ा हुआ अर्थात् सामाजिक और शैक्षिक दृष्टि से पिछड़ा हुआ माना जाए परन्तु यदि उसके भाई के पास आधा कनाल जमीन अधिक हो तो उसे पिछड़ा हुआ न माना जाए। उक्त वर्गीकरण में इसी प्रकार का एक अन्य दोष न्यायालय के देखने में आया और वह यह था कि पेंशनभोगी के पद का अधिकतम वेतनमान 100 रु० से अधिक न होने पर पेंशनभोगी पर आश्रित व्यक्तियों को पिछड़ा हुआ मान लिया जाना।

अन्ततः न्यायालय ने उस नियम की भी जांच की जिसके अनुसार युद्ध विराम रेखा कि पांच मील के भीतर कुछ गांवों में और "खराब बस्तियों" वाले अन्य क्षेत्रों के भीतर रहने वाले व्यक्तियों को पिछड़े हुए व्यक्ति माना गया था। न्यायालय अपने समक्ष प्रस्तुत कागजात आदि से आश्वस्त हो गया था कि उक्त गांवों और क्षेत्रों को सामाजिक तथा शैक्षिक दृष्टि से पिछड़े हुए माना जा सकता है। यद्यपि नियमों में यह व्यवस्था थी कि आरक्षण का लाभ प्राप्त करने के इच्छुक व्यक्ति को उस क्षेत्र का तभी माना जा सकता है यदि उसका पिता पिछड़ेपन का प्रमाणपत्र प्राप्त करने के लिए वर्ष से पहले के 20 वर्षों में से कम से कम 10 वर्ष तक उस क्षेत्र में रह चुका हो या रह रहा हो। इस नियम में यह दोष था कि जिस समय लाभ का दावा किया जा रहा है उस समय पिता या पुत्र का उस क्षेत्र में रहना जरूरी नहीं था। इसके अतिरिक्त इन नियमों के अनुसार यह भी अपेक्षित नहीं था कि लड़के की

प्रारम्भिक शिक्षा इन क्षेत्रों में हुई हो ताकि यह सुनिश्चित हो सके कि लड़का और उसका पिता उस क्षेत्र के स्थायी निवासी हैं। इस नियम के अधीन आरक्षण का लाभ न केवल वास्तविक निवासी बल्कि अन्य व्यक्ति भी उठा सकते थे जो इन क्षेत्रों में व्यापारी या सरकारी सेवा आदि के प्रयोजन से गए हों। इस प्रकार बाहर के व्यक्ति भी इस लाभ का दावा कर सकते थे। इसलिए इस कमी को दूर करना जरूरी था।

मैसूर उच्च न्यायालय ने एक पहले के निर्णय[9] में ब्राह्मण समुदाय को छोड़कर अन्य सभी समुदायों को पिछड़े हुए विनिर्दिष्ट किया था। उच्च न्यायालय ने इस वर्गीकरण का समर्थन किया था। सरकार ने मिलर्स समिति नाम से ज्ञात समिति की सिफारिशों पर ऐसा किया था। न्यायालय के इस निर्णय की वैधता संदिग्ध है। इस बारे में न्यायालय के समक्ष कोई कागजात प्रस्तुत नहीं किए गए कि ब्राह्मणों को छोड़कर अन्य सभी समुदायों को पिछड़े हुए मानने का सामूहिक वर्गीकरण किस आधार पर किया गया था। इस मामले में न्यायालय ने इस आधार पर आने की कार्रवाई आरम्भ कर दी कि न्यायालयों को इस मामले में न्यायिक समीक्षा करने की कोई शक्ति प्राप्त नहीं है।

मैसूर[10] के एक अन्य मामले में राज्य ने आय-सीमा और व्यवसाय के प्रकार को पिछड़ापन निर्धारित करने का मानदण्ड बनाया।

यदि किसी व्यक्ति के माता-पिता और अभिभावक की वार्षिक आय 1200 रुपए से कम हो और वह निम्नलिखित में से किसी व्यवसाय में लगा हो तो उसे पिछड़ा हुआ माना जाता था:—(क) वास्तविक कृषक (ख) शिल्पी, (ग) खुदरा व्यापारी (घ) नैमित्तिक श्रमिक और कुछ घटिया किस्म की सेवाएं और (ङ) शारीरिक श्रम वाले कोई अन्य व्यवसाय। उच्च न्यायालय ने सरकार के पिछड़े वर्गों के इस वर्गीकरण के आदेश का समर्थन किया। यह विनिर्णय उच्चतम न्यायालय द्वारा जानकी प्रसाद के मामले में दिए गए निर्णय के अनुसार नहीं है क्योंकि उस मामले में उच्चतम न्यायालय ने कहा था कि समूह को सामाजिक दृष्टि से सदृश होना चाहिए और यदि आय को मानदण्ड बनाया गया तो इससे सीमांत कठिनाइयां सामने आ सकती हैं। किन्तु जानकी प्रसाद के मामले के बाद अनुच्छेद 15(4) के अधीन न्यायालय के सामने पेश हुए एक अन्य मामले में न्यायालय ने आय की सीमा के अधीन जाति के मानदण्ड का समर्थन किया[11]।

यहां यह टिप्पणी की जा सकती है कि पूर्णतया दोषरहित वर्गीकरण अपनाना कठिन है और न्यायालय ने जानकी प्रसाद के मामले में जिन सीमांत कठिनाइयों की ओर संकेत किया है वे प्रत्येक वर्गीकरण में पेश आएंगी। हमें दोनों में से एक को चुनना होगा अर्थात् या तो बिल्कुल भी कोई वर्गीकरण न किया जाए अथवा "कुछ सीमान्त कठिनाइयों वाला वर्गीकरण" अपना लें।

बेसु रायडु बनाम आंध्र प्रदेश लोक सेवा आयोग[12] के मामले में सरकार ने पिछड़े वर्गों के संबंध में अपना पहले का आदेश रद्द कर दिया क्योंकि यह पूर्णतया जातियों के मानदण्ड पर आधारित था। प्रार्थी ने सरकार द्वारा उक्त आदेश को रद्द करने को चुनौती दी। उच्च न्यायालय की मान्यता थी कि सरकार द्वारा उक्त आदेश को रद्द किए जाने का औचित्य इस कारण से है कि जाति को वर्गीकरण का एकमात्र या मुख्य आधार नहीं बनाया जा सकता।

हरिहरण पिल्ले, बनाम राज्य[13] केरल के एक मामले में सरकार ने जाति को पिछड़ेपन का मानदण्ड माना था। जिन आंकड़ों के आधार पर यह वर्गीकरण किया गया था वे दो से तीन दशक तक पुराने थे। उच्च न्यायालय ने 3 के मुकाबले दो के निर्णय के आधार पर सरकार के आदेश का समर्थन किया। न्यायालय ने कहा कि जाति को एकमात्र मानदण्ड नहीं माना जा सकता परन्तु यहां यह वर्गीकरण मोटे तौर पर उस जाति के सदस्यों के पिछड़ेपन के आधार पर किया गया हो वहीं वर्गीकरण का मुख्य मानदण्ड जाति नहीं बल्कि पिछड़ापन माना जाएगा। बिसमत न्यायाधीश का विचार था कि लगभग दो या तीन दशक पूर्व राज्य द्वारा कायम की गई राय को वर्गीकरण का उचित आधार नहीं बनाया जा सकता। इसके अतिरिक्त यदि जाति के अधिकांश भाग को पिछड़े हुए भी मान लिया जाए तब भी पूरी जाति को इसलिए पिछड़ी हुई नहीं माना जा सकता क्योंकि उस जाति के कुछ व्यक्ति ऐसे भी हो सकते हैं जो पिछड़े हुए न हों। जहां तक अल्पसंख्यक वर्ग द्वारा जाति के मानदण्ड के अनुमोदन का प्रश्न है ऊपर चर्चित त्रिलोकीनाथ के दूसरे मामलों में उच्चतम न्यायालय द्वारा प्रकट किए गए विचारों के अनुरूप है। हरिहरन पिल्ले के मामले में बिसमत न्यायाधीश ने पूरी जाति के समग्र रूप से शैक्षिक और सामाजिक दृष्टि से पिछड़े हुए होने पर भी जाति को मानदण्ड बनाने के बारे में इस कठिनाई का उल्लेख किया था कि उस जाति में ऐसे भी व्यक्ति हो सकते हैं जो पिछड़े हुए न हों, परन्तु लाभ का दावा करें। परन्तु यह एक प्रकार की सीमान्त कठिनाई है और यदि हमें पिछड़े वर्गों के लिए आरक्षण की व्यवस्था करनी है तो इस प्रकार की सीमान्त कठिनाइयों को सहन करना ही पड़ेगा।

उत्तर प्रदेश सरकार के एक आदेश में अहीरों, कुर्मियों और अन्य जातियों को पिछड़े हुए वर्ग गिनाया गया है। छोटे लाल बनाम उत्तर प्रदेश राज्य[13क] के मामले में प्रार्थियों का कहना था कि अहीरों और कुर्मियों की जातियों के बहुत से व्यक्ति सामाजिक और शैक्षिक दृष्टि से पिछड़े हुए नहीं है। उनमें से अधिकांश सम्पन्न थे, कुछ उच्च शिक्षा प्राप्त थे और उच्च पदों पर कार्य कर रहे थे, यहां तक कि कुछ वकील तथा डाक्टर आदि भी थे। न्यायालय ने कहा कि यदि कोई जाति समग्र रूप से सामाजिक और शैक्षिक दृष्टि से पिछड़ी हुई हो तो उसे पिछड़ी हुई माना जा सकता है। तथापि उच्च न्यायालय ने सरकार के आदेश का खण्डन कर दिया। प्रार्थियों के शपथ-पत्र तथा राज्य के प्रति शपथ-पत्र और उनमें उल्लिखित कागजात आदि (जैसे छेदी लाल आयोग की रिपोर्ट तथा काका कालेलकर आयोग की रिपोर्ट) की जांच करने के बाद न्यायालय ने निष्कर्ष निकाला कि "न तो आरोपित सरकारी आदेश से और न ही राज्य की ओर से दायर किए गए प्रति शपथ-पत्र से यह पता चलता है कि राज्य सरकार ने न तो कोई और सर्वेक्षण किया और न ही किसी अन्य प्रकार से कोई आंकड़े इकट्ठे किए थे। उसी प्रकार से जहां तक शिक्षा विभाग द्वारा तैयार की गई सूची का संबंध है, प्रति शपथ-पत्र में इस बात का कोई उल्लेख नहीं है कि उस समय नागरिकों के इस वर्ग को किस आधार पर शैक्षिक दृष्टि से पिछड़े हुए पाया गया था। इस प्रकार की जांच करने की दृष्टि से कोई पूछताछ नहीं की गई"। संक्षेप में न्यायालय का विचार था कि राज्य के इस निष्कर्ष पर पहुंचने का आधार प्रकट नहीं किया गया कि गिनाई गई जातियां किस प्रकार से पिछड़ी हुई थीं।

---

[9] केशव बनाम मैसूर राज्य, ए० आई० आर० 1956 मैसूर 20.

[10] जी० एन० गुडीगर बनाम मैसूर राज्य (1972) 2 मैसूर एल० जे० 202.

[11] के० एस० अयप्पी बनाम केरल राज्य, ए० आई० आर० 1976 उच्चतम न्यायालय, 2381.

[12] ए० आई० आर० 1967, आंध्र प्रदेश 353.

[13] ए० आई० आर० 1968, केरल 42.

[13क] ए० आई० आर० 1979, इलाहाबाद 135

इस मामले में साक्ष्य प्रस्तुत करने के दायित्व का प्रश्न भी विवादास्पद था कि राज्य द्वारा पिछड़ी मानी गई जातियों को, राज्य पिछड़ा हुआ साबित करेगा या इसको चुनौती देने वाले व्यक्ति यह साबित करेंगे कि उक्त जातियां पिछड़ी हुई नहीं थीं। न्यायालय का विचार था कि यह साबित करना विशेष रूप से व्यक्ति की जिम्मेदारी थी कि सरकार द्वारा किया गया वर्गीकरण अनुचित था। एक बार यह सिद्ध हो जाने के बाद इसका दायित्व सरकार पर आ जाता है। न्यायालय का विचार था कि प्राधियों ने विशिष्ट रूप से यह दलील देकर कि कम से कम दो जातियां आर्थिक और सामाजिक दृष्टि से पिछड़ी हुई नहीं थीं, अपना दायित्व पूरा कर दिया था। राज्य ने इस बात का खण्डन करने के लिए कोई कागजात आदि पेश नहीं किए। अतः "मौजूदा हालात में किसी नागरिक का अपनी निजी हैसियत से विस्तृत जांच-पड़ताल करना और पूरे राज्य में सर्वेक्षण करना या संबंधित आंकड़े जुटाना सम्भव नहीं है। केवल सरकारी साधनों का इस्तेमाल करके ही ऐसे आंकड़े एकत्रित किए जा सकते हैं और न्यायालय को दिए जा सकते हैं"। न्यायालय ने **छोटे लाल** के मामले में भी इस बात पर बल दिया कि यदि किसी जाति के पिछड़े वर्ग की सूची में शामिल कर लिए जाने के बाद उसे हमेशा के लिए पिछड़ा हुआ माना जाता रहा तो आरक्षण का उद्देश्य ही समाप्त हो जायेगा। अतः राज्य के पिछड़े वर्गों की सूची की सदैव आवधिक समीक्षा करनी चाहिए और किसी खास समय में पिछड़े हुए निर्धारित किए गए वर्गों के लिए सीटों के आरक्षण की मात्रा की भी आवधिक समीक्षा करते रहना चाहिए।

उर्मिला मिश्रा बनाम भारत संघ[14] के मामले में दिल्ली उच्च न्यायालय के समक्ष यह प्रश्न था कि यदि कोई सवर्ण जाति की महिला पिछड़े वर्ग के किसी व्यक्ति से विवाह कर ले तो क्या वह भी "पिछड़े वर्ग" की मानी जाएगी। उस पर न्यायालय ने निर्धारित किया कि वह पिछड़े वर्ग की नहीं मानी जाएगी, अतः वह लाभ का दावा नहीं कर सकती।

II अत्यधिक आरक्षण

कुछ मामलों में अत्यधिक आरक्षण का प्रश्न उठाया गया। **टी० देवदासन बनाम भारत**[15] के मामले में उच्चतम न्यायालय ने **बालाजी** के मामले [अनुच्छेद 15(5) के अधीन चर्चित] का अनुसरण करते हुए निर्धारित किया कि अनुच्छेद 16(4), अनुच्छेद 16(1) का केवल अपवाद मात्र है इस लिए अत्यधिक आरक्षण की व्यवस्था नहीं की जा सकती। अत्यधिक या फिजूल आरक्षण से बहुत बड़े क्षेत्र में सामान्य प्रतियोगिता समाप्त होने से तथा कर्मचारियों में व्यापक असंतोष की भावना पैदा होने से प्रशासनिक दक्षता पर बहुत बुरा प्रभाव पड़ेगा। न्यायालय बालाजी से सहमत था कि 50 प्रतिशत से अधिक रिक्तियों के आरक्षण से अनुच्छेद 15(1) का उल्लंघन होगा। इस मामले में अनुसूचित जातियों के लि 12½ प्रतिशत और अनुसूचित जनजातियों के लिए 5 प्रतिशत रिक्तियों का आरक्षण किया गया था। इतना आरक्षण तो उचित था किन्तु आरक्षण आगे ले जाने के नियम के अनुसार भर्ती वर्ष के पूर्ववर्ती दो वर्षों में भरी न गई आरक्षित रिक्तियों को उक्त प्रतिशतता में जोड़ दिया गया। रिक्तियां आगे ले जाने के नियमानुसार एक वर्ष विशेष में आरक्षण कोटा भरी गई रिक्तियों का 64.4 प्रतिशत हो गया। चूंकि यह आरक्षण 50 प्रतिशत से अधिक था इसलिए न्यायालय ने इसे अत्यधिक मान कर रिक्तियां आगे ले जाने के नियम को वैध[16] ठहरा दिया।

इस प्रकार चाहे आरक्षण की प्रतिशत मात्रा अपने आप में अत्यधिक न भी हो तब भी यदि इन प्रतिशतताओं को लागू करने के लिए अपनाए गए किसी खास तरीके से किसी वर्ष विशेष में अत्यधिक आरक्षण हो जाता है तो यह बुरी बात है। निम्नलिखित मामले से यह बात और भी स्पष्ट हो जाती है। उच्च न्यायालय के एक मामले में तथ्य इस प्रकार थे कि रेलवे निरीक्षकों के दो संवर्ग (काडर) थे, रेल-डाक-सेवा निरीक्षक और डाक-घर निरीक्षक ये दोनों संवर्ग अलग-अलग थे। एक वर्ष विशेष में रेल डाक सेवा निरीक्षकों के तीन पद रिक्त थे और डाक-घर निरीक्षकों के 29 पद रिक्त थे। इस प्रकार दोनों काडरों को मिलाकर कुल 32 रिक्तियां थी। दोनों काडरों को एक यूनिट मानने पर अनुसूचित जातियों के लिए कुल चार रिक्तियां आरक्षित थीं। ऐसा करने से रेल डाक-सेवा सेक्शन में रेल डाक सेवा निरीक्षक का एक पद पहले उम्मीदवार (सामान्य वर्ग के) को मिला और दो पद अनुसूचित जातियों के उम्मीदवारों को।

प्रार्थी, जो सामान्य सीट से दूसरे स्थान पर आया था, रेल डाक सेवा के निरीक्षक पद पर नियुक्त नहीं किया गया। उच्च न्यायालय की मान्यता थी कि दो अलग-अलग काडरों को मिलाकर एक कर देने से तीन सीटों में से दो सीटें अनुसूचित जाति के उम्मीदवारों को प्राप्त हुई थीं इसलिए उनके लिए 66⅔ प्रतिशत आरक्षण हो गया जो कि अत्यधिक आरक्षण था। दोनों शाखाएं अलग-अलग थीं अतः आरक्षण[17] के प्रयोजनार्थ उन्हें मिला कर एक नहीं किया जाना चाहिए था।

राजय्या बनाम आन्ध्र प्रदेश राज्य[18] के मामले में 6 प्रार्थी चतुर्थ श्रेणी के अस्थायी सरकारी कर्मचारी थे। वे अनुसूचित जाति या अनुसूचित जनजाति के नहीं थे। सरकार ने इन कर्मचारियों की इस नीति के अन्तर्गत छंटनी का आदेश किया कि जब कभी कर्मचारियों की छंटनी की जानी होती अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों के कर्मचारियों का कुल प्रतिनिधित्व एक निर्धारित प्रतिशतता से कम होने पर इन जातियों के कनिष्ठतम कर्मचारियों की छंटनी करने से पहले गैर अनुसूचित जाति के वरिष्ठ अस्थायी कर्मचारियों, परिवीक्षाधीन कर्मचारियों और यहां तक के परिवीक्षाधीन अनुमोदित कर्मचारियों की छंटनी की जाए। न्यायालय के समक्ष पहला प्रश्न यह था कि क्या नौकरी से छंटनी अनुच्छेद 16(4) के अधीन की गई है क्योंकि यह तर्क दिया गया था कि पिछड़े वर्गों के कर्मचारियों की प्रतिशतता बनाए रखने के प्रयोजन के लिए भी पिछड़े वर्गों और गैर-पिछड़े वर्गों के व्यक्तियों के लिए निवर्तन की अलग-अलग आयु निश्चित नहीं की जा सकती अतः छंटनी के मामले में अलग-अलग मानदण्ड लागू नहीं करना चाहिए। न्यायालय ने इस प्रश्न पर कोई निर्णय नहीं दिया और इस आधार पर कार्रवाई की कि अनुच्छेद 16(4)

---

[14]. ए० आई० आर० 1975 दिल्ली 115

[15]. ए० आई० आर० 1964 उच्चतम न्यायालय, 179.

[16] **केरल राज्य बनाम थामस**, ए०आई० आर० 1976 उच्चतम न्यायालय 490 के मामले में न्यायमूर्ति फजल अली का विचार था कि रिक्तियां आगे ले जाने के नियम के अनुसार यदि 50 प्रतिशत से अधिक पद पिछड़े वर्गों के उम्मीदवारों से भरे जाएं तब भी कोई बुराई नहीं है। दरअसल यदि रिक्तियां आगे ले जाने का नियम अपनाने की अनुमति न दी जाए तो इससे पिछड़े वर्गों के नागरिकों के प्रति असमानता का व्यवहार हो सकता है और सरकार ने उनके लिए जो पूरा कोटा आरक्षित किया है उसके अनुसार सरकारी नौकरियों में उनको खपाया नहीं जा सकेगा।

[17] **एम० सदराजन बनाम महानिदेशक, डाक-तार**। ए०आई०आर०, 1970 मद्रास 459. डिवीजन न्यायपीठ द्वारा संदर्भित (1971) 2 मद्रास एल० जे० 79.

[18] आई० एल० आर० (1973) आंध्र प्रदेश 516।

में छंटनी के संबंध में भी प्रावधान है। न्यायालय ने सरकार द्वारा प्रार्थी की छंटनी का आदेश रद्द कर दिया क्योंकि एक वर्ष विशेष में सरकार की छंटनी संबंधी नीति के कारण पिछडे वर्गों के लिए "अत्यधिक आरक्षण" हो गया था।

एक अन्य मामले में[19] रेलवे बोर्ड ने तृतीय और चतुर्थ श्रेणी के कर्मचारियों के लिए 15 प्रतिशत आरक्षण की नीति का अनुसरण किया परन्तु व्यावहारिक तौर पर 15% आरक्षण का यह नियम केवल सेवा निवृत्त या त्यागपत्र देने आदि के कारण होने वाली रिक्तियों पर ही लागू किया गया। कुल पदों पर लागू नहीं किया गया। न्यायालय ने देखा कि यदि 15 प्रतिशत आरक्षण की नीति पदों के संबंध में लागू न करके रिक्तियों पर लागू की जाती है तो इससे उस ग्रेड में अनुसूचित जाति व अनुसूचित जनजाति के उम्मीदवारों की संख्या 60 प्रतिशत तक हो जाएगी। अतः न्यायालय ने अत्याधिक आरक्षण के कारण सरकारी नीति का खण्डन कर दिया।

III आरक्षण सम्बन्धी आदेश का प्रकाशन

सरकार पिछड़े वर्गों के लिए अनुच्छेद 16(4) के अधीन कार्यकारी आदेश द्वारा आरक्षण कर सकती है। इसके लिए कोई कानून बनाना आवश्यक नहीं है।

मंगल सिंह बनाम पंजाब राज्य[20] के मामले में यह निर्धारित किया गया कि सरकार द्वारा अनुच्छेद (16)(4) के अधीन जारी किए गए कार्यकारी आदेश के परिणामस्वरूप संबंधित सेवा नियमों में संशोधन हो गया था। **श्री के० एस० नायर बनाम तेल और प्राकृतिक गैस आयोग**[21] के मामले में गुजरात उच्च न्यायालय की मान्यता थी कि यद्यपि अनुच्छेद 16(4) के अधीन एक कार्यकारी आदेश द्वारा आरक्षण किया जा सकता है परन्तु ऐसा आदेश या निदेश प्रकाशित अवश्य किया जाना चाहिए। "जब कर्मचारियों के अधिकारों पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ रहा हो और अनुच्छेद 16(4) के अधीन ऐसे प्रतिकूल प्रभाव डालने वाले व्यवहार का समर्थन किया जा रहा हो, तब यह स्पष्ट है कि यह कार्य कार्यालय फाइल पर मात्र एक कार्यकारी अनुदेश से नहीं हो सकता"। अनुच्छेद 16(4) के अधीन यह व्यवस्था है कि आदेश चाहे किसी किस्म का हो, अवश्य प्रकाशित किया जाए ताकि सभी संबंधित कर्मचारियों के ध्यान में लाया जा सके।

IV प्रतिवर्ती आरक्षण

अनुच्छेद 16(4) के अधीन, राज्य, दोनों भूतलक्षी और भविष्यलक्षी प्रभाव से आरक्षण कर सकता है। **महाप्रबंधक, पश्चिम रेलवे बनाम रंगाचारी**[22] के मामले में उच्चतम न्यायालय की यही धारणा है। किन्तु यदि एक बार किसी व्यक्ति की सम्यक् रूप से नियुक्ति हो जाय और उसका प्रतिपक्षी इस बात का विरोध न करे कि वह आरक्षित वर्ग का है तो बाद में इस आशय का प्रमाणपत्र प्रस्तुत करना व्यर्थ होगा। किसी व्यक्ति की विधिपूर्वक नियुक्ति[23] के बाद उसकी अवनति के लिए अनुच्छेद 16(4) का प्रयोग नहीं किया जा सकता।

V आरक्षण की व्यवस्था करने के लिए सरकार की वैवेकिक शक्ति

पिछड़े वर्गों की प्रारंभिक नियुक्तियों या पदोन्नतियों में आरक्षण की व्यवस्था करने के लिए सरकार के पास वैवेकिक शक्ति है। आरक्षण की मांग करना किसी व्यक्ति का मूल अधिकार नहीं है। यह बात कई मामलों में स्पष्ट की गई है। **सी० ए० राजेन्द्रन बनाम भारत संघ**[24] के मामले में उच्चतम न्यायालय ने यह कहा कि अनुच्छेद 16(4), पिछड़े वर्गों को पदों के आरक्षण के संबंध में मूल अधिकार प्रदान नहीं करता चाहे वह आरक्षण, भर्ती की अवस्था में हो या पदोन्नति की अवस्था में। यह केवल समर्थकारी व्यवस्था है जिसके अन्तर्गत "राज्य को पिछड़े वर्गों के लिए नियुक्तियों में आरक्षण करने की वैवेकिक शक्ति प्रदान की गई थी क्योंकि उनके विचार में पिछड़े वर्गों को राज्य की सेवाओं में पर्याप्त प्रतिनिधित्व नहीं दिया गया था।" आरक्षण करते समय सरकार को केवल पिछड़े वर्गों के सदस्यों की मांगों पर ही ध्यान नहीं देना होता बल्कि प्रशासन की कुशलता के अनुरक्षण का भी ध्यान रखना पड़ता है जो सर्वोपरि महत्वपूर्ण है। इस मामले में सरकार ने श्रेणी II और I के पदों पर पदोन्नतियों में आरक्षण किया था जिसे बाद में समाप्त कर दिया गया। न्यायालय ने सरकार के आरक्षण समाप्त करने के निर्णय को बहाल रखा।

आर० एन० प्रोमानिक बनाम भारत संघ के मामले में[25] अर्जीदार को अनुसूचित जातियों के लिए आरक्षित कोटे में टाइपिस्ट नियुक्त किया गया था। उसकी शिकायत थी कि यद्यपि सरकार द्वारा तैयार की गई वरिष्ठता सूची में उसे 75वां स्थान दिया गया था (उसे यह स्थान, उसके अनुसूचित जाति के सदस्य होने के कारण, उसकी पूर्वतर पुष्टि किये जाने से प्राप्त वरिष्ठता के आधार पर दिया गया था) परन्तु सरकार ने अपने निर्णय का पुनर्रीक्षण करके उसका नाम क्रम संख्या 194-क (योग्यता के आधार पर) रख दिया था। इसके परिणामस्वरूप उसे पदोन्नति का अवसर नहीं मिला। सरकार ने यह निर्णय लिया था कि पदोन्नतियों के मामले में आरक्षण नहीं होगा। न्यायालय ने सरकारी फैसला बहाल रखा। यह विनिश्चय करना सरकार के अधिकार में था कि पदोन्नतियां योग्यता के आधार पर की जायेंगी और आरक्षण पर आधारित वरिष्ठता के आधार पर नहीं की जाएंगी।

इसी प्रकार यह भी निर्णय दिया गया है कि सरकार आरक्षण करते समय आवेदन पत्र देने के प्रयोजन के लिए न केवल पात्रता की न्यूनतम अपेक्षाएं निर्धारित करे बल्कि लोक सेवा आयोग द्वारा साक्षात्कार के बाद उपयुक्तता का न्यूनतम स्तर भी निश्चित किया जाए। अनुसूचित जाति से संबंधित किसी व्यक्ति को यह शिकायत करने का अधिकार नहीं है कि उसकी नियुक्ति उस पद पर की जानी चाहिए जिसका उसने एक बार "पात्रता परीक्षण" पास कर लिया है यद्यपि "उपयुक्तता परीक्षण"[26] पास नहीं किया।

पिछड़े वर्गों के आरक्षण और अन्य रियायतों का विस्तार

महाप्रबंधक, दक्षिण रेलवे बनाम रंगाचारी[27] के मामले में न्यायालय ने यह प्रतिपादित किया कि अनुच्छेद 16(1) के अनुसार रोजगार के मामलों की परिधि के अन्तर्गत केवल प्रारंभिक नियुक्तियां ही नहीं आतीं बल्कि पदोन्नतियां और वेतन, आवधिक वेतन वृद्धि, सेवा की शर्तें, उपदान, पेंशन तथा अधिवर्षिता की आयु जैसे अन्य मामले भी आते हैं। अनुच्छेद 16(4) अनुच्छेद 16(1) का अपवाद है और उसमें अनुच्छेद

---

[19] **जे० सी० मलिक बनाम भारत संघ**, 1978 (1) एस० एल० आर० 844।

[20] ए० आई० आर 1968 पंजाब 306 तथा **विलोकीनाथ बनाम जम्मू और काश्मीर राज्य**, ए० आई० आर० 1969, उच्चतम न्यायालय 1

[21] (1974) गुजरात एल० आर० 7.

[22] ए० आई० आर० 1962 एस० सी० 36.

[23] **सुदामा प्रसाद बनाम अधीक्षक पश्चिम रेलवे** ए० आई० आर० 1965 राजस्थान 109

[24] आई० आर० 1968 एस० सी० 507.

[25] ए० आई० आर० 1969 कलकत्ता 576

[26] प्रावतनलिनी मलिक बनाम उड़ीसा राज्य आई० एल० आर० (1972) कटक 1372.

[27] ए० आई० आर० 1962 एस० सी० 36.

16(1) के सम्पूर्ण विषय समाविष्ट नहीं हैं। अतः पिछड़े वर्गों की प्रारंभिक नियुक्तियों और पदोन्नतियों के अलावा अन्य मामलों के बारे में भी कोई अपवाद या भिन्न नियम नहीं हो सकते। अनुच्छेद 16(4) के अन्तर्गत प्रारंभिक नियुक्तियां और पदोन्नतियां दोनों ही आती हैं। राज्य, पिछड़े वर्गों की प्रारंभिक नियुक्तियों और पदोन्नतियों, दोनों के लिए आरक्षण कर सकता है।

सरकारी नियुक्ति में आरक्षण के अलावा अन्य तरीकों से रियायत देने का मुख्य मामला केरल राज्य बनाम थामस का मामला है[28]। इस मामले में, सेवा नियमों में यह व्यवस्था की गई थी कि किसी एक विशेष संवर्ग से दूसरे उच्चतर संवर्ग में पदोन्नति, वरिष्ठता के आधार पर की जाए परन्तु उसमें दो वर्षों के भीतर निर्धारित परीक्षण पास करने की भी शर्त थी। तथापि इन नियमों में अनुसूचित जाति और अनुसूचित जनजाति से सम्बद्ध उम्मीदवारों को परीक्षण पास करने के लिए दो अतिरिक्त वर्षों की अधिक अवधि देने की भी व्यवस्था की गई थी। यह निर्णय दिया गया कि पिछड़े वर्गों को दी गई रियायत विधिमान्य थी। यद्यपि यह रियायत अनुच्छेद 16(4) के अन्तर्गत नहीं आती फिर भी यह अनुच्छेद 16(1) का अतिक्रमण नहीं करती जिसमें उचित वर्गीकरण की अनुमति दी गई है। न्यायालय के विचार में मौजूदा रियायत "उचित वर्गीकरण" की व्यवस्था के अन्तर्गत आती है। अनुच्छेद 335 में विशेष रूप से यह आदेश दिया गया है कि अनुसूचित जाति और अनुसूचित जनजाति के सदस्यों के दावों पर, प्रशासनिक कुशलता के अनुरक्षण का ध्यान रखते हुए विचार किया जाए। अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों के मामले में निर्धारित परीक्षा पास करने के नियम में अस्थायी रियायत उनके पिछड़ेपन और राज्य की सेवाओं में उनके अपर्याप्त प्रतिनिधित्व के कारण दी गई थी और इससे प्रशासनिक कुशलता पर अनुचित प्रभाव नहीं पड़ता। इन वर्गों के सदस्यों को अत्यधिक तरजीह और असीमित रियायतें नहीं दी जा सकतीं। राज्य को इन वर्गों को प्रशासनिक दक्षता की आवश्यकताओं के अनुरूप तरजीह देनी होगी। दूसरे शब्दों में, उपरोक्त वर्गों के लिए नियम में युक्तियुक्त छूट दी जा सकती है लेकिन "अनुचित" छूट नहीं दी जा सकती।

के० एन० चन्द्रा बनाम मैसूर राज्य[29] के मामले में, राज्य लोक सेवा संघ द्वारा आयोजित प्रतियोगिता परीक्षा में सफलता के लिए अर्हक अंकों के दो सैट बनाए गए थे—45 प्रतिशत अनुसूचित जाति और अनुसूचित जनजाति के सदस्यों के लिए और 55 प्रतिशत अन्य व्यक्तियों के लिए। मैसूर उच्च न्यायालय ने इतरोक्ति के रूप में यह राय दी थी कि प्रतियोगिता परीक्षा में सफलता के लिए अंकों की कम प्रतिशतता निर्धारित करना अनुच्छेद 16(4) के अधीन विहित अर्थों के अन्तर्गत किसी भी प्रकार का आरक्षण नहीं है।

पिछड़े वर्गों की श्रेणी के अन्तर्गत न आने वाले समुदायों के बीच कोई आरक्षण नहीं होगा

1951 में वैंकटरमन बनाम मद्रास राज्य[30] का एक मामला था जिसके लक्ष्य ये थे कि एक सरकारी आदेश में, जिसे साम्प्रदायिक सरकारी आदेश नाम दिया गया, यह अधिसूचित किया गया था कि कुछ पदों के लिए उम्मीदवारों का चयन विभिन्न जातियों और धार्मिक समुदायों से इस प्रकार किया जाएगा : हरिजन 19, मुस्लिम 5, ईसाई 6, पिछड़े वर्ग के हिन्दू 10, अब्राह्मण 32, और ब्राह्मण 11। यह निर्णय दिया गया कि अनुच्छेद 16(1) और (2) के अन्तर्गत उपरोक्त आदेश दोषपूर्ण था क्योंकि इस अनुच्छेद के अनुसार सरकार को विनिर्दिष्ट रूप से सरकारी रोजगार के मामले में धर्म, मूल वंश या जाति आदि के आधार पर लोगों से भेदभाव करना प्रतिषिद्ध किया गया था। विचाराधीन सरकारी आदेश में पद के लिए पात्रता का आधार यह रखा था कि व्यक्ति किसी विशेष जाति या धर्म आदि से संबंधित हो। अनुच्छेद 16(4) के अनुसार केवल "पिछड़े वर्गों" के लिए आरक्षण करने की अनुमति दी गई थी और अन्य वर्गों के लिए नहीं।

VIII. विविध

यह निर्णय दिया गया है कि केवल इस तथ्य से कि जो आरक्षण किया गया है उससे कुछ व्यक्तियों को व्यापक लाभ मिलते हैं जिन्हें पहले भी आरक्षण के लाभ मिले हुए हैं, आरक्षण दोषपूर्ण नहीं बन जाता। इसी प्रकार अन्तर कितना अधिक है, इसका कोई महत्व नहीं। यह इस पर निर्भर करता है कि कितना अन्तर पाया जाना है (जैसे, पदोन्नति के लिए तैयार की गई सूची में 73वें स्थान वाला, आरक्षित वर्ग का कोई व्यक्ति अन्य 72 व्यक्तियों पर तभी अग्रता प्राप्त कर सकता है यदि खाली पद केवल एक हो और वह पद आरक्षित वर्ग के सदस्य के लिए हो[31] तथापि यह समीक्षा की जा सकती है कि राज्य को अनुच्छेद 16(4) के अधीन इस बारे में असीमित शक्ति प्राप्त नहीं है क्योंकि उच्चतम न्यायालय ने कई अन्य मामलों में यह निर्णय दिया है (जैसे रंगाचारी और देवादासन) कि पिछड़े वर्गों के पक्ष में आरक्षण करने से प्रशासनिक दक्षता पर कोई महत्वपूर्ण प्रभाव नहीं पड़ना चाहिए।

---

28. ए० आई० आर० 1976, एस० सी० 490.

29. ए० आई० आर० 1963, मैसूर 293.

30. ए० आई० आर० 1951, एस० सी० 229.

31. पंजाब राज्य बनाम हीरालाल ए० आई० आर० 1971, एस० सी० 1777.

अनुच्छेद 15(4) के अधीन संरक्षा भेदभाव उच्चतम न्यायालय और उच्च न्यायालय के विनिश्चयों का विश्लेषण

समता की भावना भारत के संविधान के उपबंधों में ओतप्रोत है क्योंकि संविधान के संप्रवर्तकों का मुख्य उद्देश्य एक ऐसे समतावादी समाज का निर्माण करना था जहां सामाजिक, आर्थिक और राजनैतिक न्याय अभिभावी हो तथा सभी को प्रतिष्ठा और उन्नति के समान अवसर सुलभ हों। किन्तु ऐतिहासिक और परंपरागत कारणों से भारतीय नागरिकों के कुछ वर्ग, गंभीर रूप से सामाजिक और आर्थिक नियोग्यताओं से ग्रस्त हैं और वे प्रतिष्ठा और उन्नति के समान अवसर प्राप्त नहीं कर सकते। इसलिए समाज के इन कमजोर वर्गों के लिए संविधान के विभिन्न अनुच्छेदों और विशेषतः अनुच्छेद 15(4) में संरक्षण दिया गया। इस खंड में राज्य को अनुच्छेद 15(1) और 29(2) में किसी बात के प्रतिकूल होते हुए भी, सामाजिक और शैक्षिक रूप से पिछड़े वर्गों और अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों की उन्नति के लिए विशेष आरक्षण करने के अधिकार दिए गए हैं। उदाहरण के रूप में, हरिजनों के आवास हेतु भूमि अधिग्रहण की अधिसूचना को, अनुच्छेद 15(4)[1] के सन्दर्भ में भेद भाव के आधार पर चुनौती नहीं दी जा सकती। परन्तु संविधान में न तो उन नागरिकों के वर्ग का प्रगणन किया गया जो पिछड़े हुए हैं, और न ही राज्य के लिए, नागरिकों[2] के पिछड़े वर्गों के वर्गीकरण के लिए कोई मापदंड निर्धारित किया गया है।

नीति निर्माताओं का काम, चाहे वह केन्द्र के स्तर पर हो या राज्य स्तर पर, जटिल बन जाता है क्योंकि उन्हें अनुच्छेद 15(1) और 29(2) में वर्णित प्रतिषेधों का ध्यान रखना पड़ता है। भारतीय समाज में पिछड़े वर्गों का निर्धारण कोई आसान कार्य नहीं है। भारतीय समाज में पिछड़े वर्गों के लोगों के सामाजिक, शैक्षणिक और आर्थिक पिछड़ेपन पर "जाति" का प्रभाव समाज शास्त्रियों के वाद-विवाद और अनुसंधान का विषय रहा है। क्या सामाजिक और शैक्षणिक पिछड़ापन बनाने में केवल "जाति" का पहलू ही महत्वपूर्ण है या कोई अन्य कारण भी है? जाति और अन्य ऐसे पहलुओं तथा विभिन्न समुदायों और क्षेत्रों के संदर्भ में उपरोक्त पहलुओं (जाति सहित) को महत्व दिए जाने के बीच परस्पर संबंध क्या है? इन प्रश्नों के निर्धारण में कई अनेक परिवर्ती और संगत कारण हैं।

अनुच्छेद 15(4) में मोटे तौर से यह पता चलता है कि "संविधान निर्माताओं ने जातपात तथा धार्मिक और अन्य भेदभावों को मिटाने की संविधान की समग्र योजना के अनुरूप, अधिमान के सिद्धांत को सीमाओं के भीतर रखने के लिए न्यायालयों की बजाए मुख्यतः राजनीतिज्ञों और भावी प्रशासकों के विवेक का आश्रय लिया है। ये व्यवस्थाएं समीचीन हैं और संभवतः अस्थायी उनके प्रयोग में कार्यपालिकाओं और विधानमंडलों को व्यापक विवेकाधिकार दिए गए हैं परंतु यह विवेकाधिकार इतना व्यापक नहीं है कि पिछड़ेपन के निर्धारण के न्यायिक पुनर्विलोकन की पूर्णतः उपेक्षा कर दी जाए"[3], विधायी और कार्यपालक विवेकाधिकारों के मूर्त और प्रमुख क्षेत्र हैं शिक्षा तथा आवास, भूमि आदि का आबंटन और लोक सेवा जैसी कल्याणकारी और आर्थिक गतिविधियां।

I. पिछड़े वर्ग कौन हैं?

अनुच्छेद 15(4) की परिधि के बारे में उच्चतम न्यायालय का पहला विनिश्चय बालाजी बनाम मैसूर राज्य[4] था। कर्नाटक राज्य (उस समय मैसूर) 1958 से अनुच्छेद 15(4) के अधीन, अपने नागरिकों के सामाजिक और शैक्षणिक रूप से पिछड़े वर्गों की उन्नति के लिए प्रयास कर रहा था और जब कभी कोई आदेश पारित होता था, उसकी विधिमान्यता को उच्च न्यायालय में चुनौती दी जाती थी जो उन्हें मंसूख कर देता था। इस मामले में 1962 में मैसूर सरकार के आदेश की विधिमान्यता को चुनौती देने के लिए अनुच्छेद 32 के अधीन अर्जियां फाइल की गई। इस आदेश का कार्य पिछड़े वर्गों को दो वर्गों में विभाजित करना था (1) पिछड़े वर्ग और (2) अधिक पिछड़े वर्ग। पिछड़े वर्गों के लिए 50 प्रतिशत कोटे में से तकनीकी और व्यावसायिक संस्थाओं में 28 प्रतिशत स्थान पिछड़े वर्गों, 22 प्रतिशत अधिक पिछड़े वर्गों, 15 प्रति० अनुसूचित जातियों और 3 प्रतिशत अनुसूचित जनजातियों के लिए आरक्षित किए गए थे। इससे पता चलता है कि आरक्षण की कुल मात्रा 68 प्रतिशत थी। केवल 32 प्रतिशत स्थान "योग्य उम्मीदवारों का पूल" के लिए रखे गये थे। मैसूर सरकार का यह आदेश, राज्य सरकार द्वारा गठित विशेषज्ञ समिति जिसे नेगेन गौडा समिति कहा गया, की सिफारिशों के परिणामस्वरूप पारित किया गया था। इस समिति ने राज्य में पिछड़े वर्गों का वर्गीकरण करने के लिए निर्धारक मापदंडों की समस्या की जांच-पड़ताल की थी। इस समिति ने यह महसूस किया कि भारत में उच्च सामाजिक स्तर, सामान्यतया जाति के आधार पर निर्धारित किया जाता है और किसी वर्ग या समुदाय का निम्न सामाजिक स्तर केवल जाति व्यवस्था के कारण माना जाता है। सामाजिक पिछड़ापन, मुख्यतः जातीय, जनजातीय और जातपात की असमानताओं पर आधारित माना गया, यद्यपि इसका कुछ कारण आर्थिक पिछड़ापन भी हो सकता है। समिति ने यह महसूस किया कि विद्यमान परिस्थितियों में राज्य में पिछड़े वर्गों के वर्गीकरण का व्यवहार्य तरीका केवल यही था कि जाति और समुदायों के आधार पर ही वर्गीकरण किया जाए। समिति के अनुसार संपूर्ण लिंगायत समुदाय, सामाजिक दृष्टि से उन्नत था और भट को छोड़कर वोकालिगा के अन्य सभी वर्ग सामाजिक दृष्टि से पिछड़े हुए थे। मुसलमानों के बारे में समिति के अधिकांश सदस्यों का यह मत था कि उन्हें पिछड़े वर्ग में वर्गीकृत किया जाए। समिति का यह भी विचार था कि वर्गीकृत समुदायों को दो श्रेणियों में विभाजित किया जाए—पिछड़े और अधिक पिछड़े वर्ग। इस श्रेणीकरण के लिए यह मापदंड अपनाया गया: क्या विचाराधीन समुदाय में शिक्षा का स्तर राज्य की औसत के 50 प्रतिशत से कम है या अधिक। यदि कम है, तो वह समुदाय अधिक पिछड़ा है, यदि कम नहीं है तो वह समुदाय पिछड़ा समुदाय है।

नागरिकों के समुदायों के शैक्षणिक पिछड़ेपन का निर्धारण करने के लिए सरकार ने राज्य में सभी हाई स्कूलों की आखिरी तीन हाई

---

1. मूसा बनाम केरल राज्य ए० आई० आर० 1960, केरल 355.

2. अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों के मामले में राष्ट्रपति क्रमशः अनुच्छेद 341(1) और 342(1) के अधीन उन्हें सार्वजनिक अधिसूचना द्वारा विनिर्दिष्ट करता है। केवल संसद को ही सूची में शामिल करने और सूची से निकालने का अधिकार है। इसके अलावा, अनुच्छेद 366(24) और (25) में इन ग्रुपों की परिभाषा दी गई है।

3. मार्क गैलेन्टर "भारत में पिछड़े वर्गों के लिए संरक्षा भेदभाव" 3 जर्नल आफ दि इंडियन ला इंस्टीट्यूट 39 66(1961) पर।

4. ए० आई० आर० 1963 एस० सी० 649

स्कूल श्रेणियों में संबंधित समुदाय के 1,000 व्यक्तियों के संदर्भ में विद्यार्थियों की संख्या की औसत के आधार पर कार्रवाई की। प्राप्त आंकड़ों के आधार पर यह पता चला कि हाई स्कूल की आखिरी तीन श्रेणियों में राज्य की विद्यार्थी संख्या का औसत प्रति हजार 6.9 था। सरकार ने यह विनिश्चय किया कि जिन जातियों को औसत, राज्य की प्रति हजार के पीछे 6.9 की औसत की तुलना में थोड़ी सी भी कम थी, उन्हें पिछड़े वर्गों में माना जाए और यदि किसी समुदाय की औसत, राज्य की औसत के 50 प्रतिशत से कम थी तो उनके बारे में यह माना जाए कि उस समुदाय में पिछड़े वर्ग अधिक थे। इस सरकारी आदेश को असंवैधानिक आदेश के रूप में चुनौती दी गई।

उच्चतम न्यायालय ने सर्वसम्मति से न्यायमूर्ति गजेन्द्रगडकर द्वारा यह निर्णय दिया कि राज्य सरकार का आदेश असंवैधानिक है। पिछड़े वर्गों के वर्गीकरण की विधीमान्यता का विनिश्चय करते समय न्यायालय ने सामाजिक एवं शैक्षणिक पिछड़ेपन के कारणों का निर्धारण करना था। सामाजिक पिछड़ेपन के प्रश्न पर न्यायालय ने कहा कि हिन्दू सामाजिक व्यवस्था में नागरिकों के स्तर का निर्धारण करने में दुर्भाग्यवश जाति की महत्वपूर्ण भूमिका होती है। इस पर भी नागरिकों के वर्गों के लिए विशेष व्यवस्थाओं पर विचार किया गया व्यष्टिक नागरिक पर नहीं। यद्यपि किसी ग्रुप की जाति पर विचार करना विसंगत नहीं होगा परंतु उसे मुख्य बात मानकर उस पर अधिक जोर नहीं देना चाहिए। जाति-प्रथा समतावादी समाज का लक्ष्य प्राप्त करने में सबसे बड़ी रुकावट रही है और निर्दिष्ट जातियों को पिछड़ी जातियों के रूप में मान्यता देने से जातियों के आधार पर मौजूदा भेदभाव संभवतः सदा के लिए बने रहेंगे। इसके अलावा भारतीय समाज के कई वर्गों के संदर्भ में जाति का एकमेव मापदंड समाप्त हो जाएगा, उदाहरण के लिए, मुसलमान और ईसाई समाज, जो हिन्दुओं में प्रचलित रूढ़ अर्थों में "जाति" को मान्यता नहीं देते। "अन्तिम विश्लेषण के अनुसार सामाजिक पिछड़ापन बड़ी सीमा[5] तक निर्धनता के परिणामस्वरूप है। नागरिकों के जो वर्ग अत्यधिक निर्धन होते हैं वे स्वतः सामाजिक रूप से पिछड़ जाते है।" न्यायालय ने यह भी कहा कि सामाजिक पिछड़ापन व्यवसाय और निवास स्थान के कारण भी हो सकता है। पिछड़े वर्गों की, उनके पिछड़ेपन के मामले में अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों के साथ तुलना की जा सकती है। पिछड़ेपन की धारणा इस भावना की सूचक नहीं है जो वर्ग अत्यधिक उन्नत वर्गों की तुलना में पिछड़े हुए हैं उन्हें भी पिछड़ा मान लिया जाए। यदि ऐसे सापेक्षिक परीक्षण अत्यधिक उन्नत वर्गों के बारे में प्रयोग में लाए जाते हैं तो पिछड़े वर्गों के कई उप-वर्ग बन जाएंगे और उनमें से प्रत्येक वर्ग अपने-आप को अपवाद वाले खंडों में शामिल किए जाने की मांग करेगा। यह महत्वपूर्ण बात है कि न्यायालय ने पिछड़ा वर्ग आयोग, 1955 (जिसे केन्द्रीय सरकार ने 1953 में नियुक्त किया था और जिसे काका कालेलकर आयोग भी कहा जाता है), उस पर[6] सरकार के ज्ञापन, अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों के लिए आयुक्त की रिपोर्ट, 1959[7] और महाराष्ट्र में अपनाई गई पद्धति का हवाला दिया है। महाराष्ट्र सरकार ने पिछड़े वर्गों की परिभाषा, परिवार की वार्षिक आय के आधार पर की थी। उच्च शिक्षा प्राप्त करने वाले उन विद्यार्थियों को अनुदान दिए गए थे जिनके बारे में यह दिखाया गया था कि उनके परिवारों की वार्षिक आय न्यूनतम निर्धारित आय से भी कम थी। यद्यपि न्यायालय ने इस बारे में कोई अन्तिम राय नहीं दी, किन्तु उसका यह विचार था कि ऐसी योजना प्रारम्भ की जा सकती है और अधिक तकनीकी तथा व्यावसायिक संस्थानों की स्थापना करके उनमें स्थानों का आरक्षण किया जा सकता है।

जहां तक शैक्षणिक पिछड़ेपन का संबन्ध है, न्यायालय ने यह कहा कि (क) इसमें संदेह है कि क्या हाई स्कूल की अंतिम तीन श्रेणियों में विद्यार्थियों की संख्या की औसत का मापदंड (जिसको नागेन गौडा समिति ने सिफारिश की थी और सरकार ने उसका अनुमोदन किया था) समुचित था, (ख) समिति द्वारा इतना ऊंचा मापदंड निर्धारित करना संभवतः न तो आवश्यक है और न ही उचित, और (ग) यदि मापदंड विधिमान्य थे और राज्य की औसत, प्रति हजार 6.9 थी तो जो समुदाय इस मापदंड पर लगभग पूरे उतरते हैं या इस मापदंड पर कुछ कम उतरते हैं उन्हें पिछड़े वर्ग नहीं माना जा सकता। वे राज्य की औसत से काफी नीचे होंगी। इस मामले में न्यायालय ने इस मुद्दे पर किसी निश्चित नियम का स्पष्ट उल्लेख नहीं किया, लेकिन इस बात का अनुमोदन किया कि राज्य की औसत के 50 प्रतिशत से नीचे का वर्ग स्पष्टतः पिछड़ा वर्ग होगा। प्रति हजार 7.1 की औसत वाले लिंगायत की औसत वाले गांगिया और 5 की औसत वाले मुसलमानों (जबकि राज्य की औसत प्रति हजार 6.9 थी) को पिछड़े नहीं माना जा सकता। अतः उच्चतम न्यायालय के अनुसार किसी वर्ग के लिए शैक्षणिक रूप से पिछड़ा वर्ग होने के लिए उसकी औसत राज्य की औसत से काफी नीची होनी चाहिए।

तथापि उच्चतम न्यायालय ने यह स्पष्ट किया कि पिछड़ापन, सामाजिक और शैक्षणिक दोनों होना चाहिए तथा सामाजिक और शैक्षणिक में से कोई एक नहीं होना चाहिए। यदि ऐसा हो तो सामाजिक पिछड़ेपन और शैक्षणिक पिछड़ेपन का निर्धारण करने के लिए एक ही मापदंड बनाया जाना चाहिए। यदि दोनों के लिए अलग-अलग मानक लागू किए जाएं तो यह संभव है कि शैक्षणिक रूप से पिछड़े वर्ग की सूची में दर्ज

---

5. 658 पर पूर्वोक्त

6. आयोग की रिपोर्ट पर भारत सरकार के ज्ञापन में इस बात की ओर संकेत किया गया कि (क) निर्दिष्ट जातियों को पिछड़ी जातियों के रूप में मान्यता देने से जाति के आधार पर मौजूदा विभेद कायम रहेंगे बल्कि और भी बढ़ जाएंगे; (ख) आयोग द्वारा अपनाए गए कुछ मापदंड लगभग व्यक्तिगत किस्म के हैं और चाहे वे स्वीकार भी कर लिए जाएं तो इससे देश की जनसंख्या में से अधिकांश भाग इनमें शामिल हो जाएगा। आयोग द्वारा पिछड़े ठहराए गए 2399 समुदायों की सूची में से केवल 930 समुदायों की जनसंख्या 1150 लाख या भारत की उस समय की जनसंख्या के लगभग 33 प्रतिशत के बराबर थी जिसमें अनुसूचित जातियां और अनुसूचित जनजातियां शामिल नहीं थी। यदि कुछ अपवादों को छोड़कर समूचे समुदाय को पिछड़ा हुआ मान लिया गया तो वास्तव में जरूरतमंद लोग इतनी बड़ी संख्या में उपेक्षित रह जाएंगे और उन्हें पर्याप्त सहायता और विशेष ध्यान नहीं मिल पाएगा। जब आयोग कोई उद्देश्यपूर्ण मापदंड निर्धारित करने में असफल रहा तो भारत सरकार ने कुछ और उद्देश्यपूर्ण और व्यावहारिक मापदंड तैयार करने का प्रयास किया। कोई स्वीकार्य निष्कर्ष न निकल पाने पर भारत सरकार ने अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों के अतिरिक्त पिछड़े वर्गों की कोई भी सूची जारी न करने का निर्णय किया। उन्होंने यह भी संकेत दिया कि राज्य सरकारों को तो पिछड़ापन निर्धारित करने के लिए अपना मापदंड चुनने का विवेकाधिकार है परन्तु भारत सरकार के विचार से बेहतर यही होगा कि जाति की बजाए आर्थिक मापदंड अपनाया जाए।

7. इस रिपोर्ट में भारत के उप महा रजिस्ट्रार के इस निष्कर्ष का उल्लेख किया गया है कि व्यवसायों के आधार पर सामाजिक और शैक्षणिक पिछड़ेपन का निर्धारण करना संभव है। वह आधार यह है (क) भारत के किसी राज्य में कृषीतर व्यवसाय जिनमें 50 प्रतिशत या उनसे अधिक व्यक्ति अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों के हों या (ख) कोई ऐसे कृषीतर व्यवसाय जिनमें इन व्यवसायों पर आश्रित पढ़े-लिखे व्यक्तियों का प्रतिशत, राज्य में सामान्य साक्षरता के 50 प्रतिशत से कम हो।

वर्ग, सामाजिक रूप से पिछड़ा हुआ न हो और इसी प्रकार सामाजिक रूप से पिछड़ा वर्ग, शैक्षणिक रूप से पिछड़ा न हो । वास्तव में, उच्चतम न्यायालय ने बालाजी के मामले में वस्तुतः सामाजिक और शैक्षणिक पिछड़ेपन का निर्धारण करने के लिए विभिन्न मापदंडों पर चर्चा करते हुए दोनों पर अलग-अलग विचार किया ।

आरक्षण की मात्रा के बारे में न्यायालय ने कहा कि समाज के कमजोर वर्गों के हितों का समग्र समुदाय के हितों से समंजन किया जाना चाहिए । इन प्रतियोगी दावों को समंजन निस्संदेह कठिन कार्य है लेकिन विशेष व्यवस्था करने के नाम पर राज्य सभी उपलब्ध स्थानों का आरक्षण नहीं कर सकता । न्यायालय ने कोई निश्चित सीमा निर्धारित करने की इच्छा प्रकट नहीं की । तथापि नीति निर्माताओं के लिए इन शब्दों में एक व्यापक मार्गदर्शक सिद्धान्त निर्धारित किया गया ।

सामान्य और व्यापक रूप में, विशेष व्यवस्था 50 प्रतिशत से कम होनी चाहिए । 50 प्रतिशत से कितनी कम, यह प्रत्येक मामले[8] में संगत विद्यमान परिस्थितियों पर निर्भर करेगा ।

उपर्युक्त मार्गदर्शक सिद्धान्त का अनुसरण करते हुए न्यायालय ने यह अनुभव किया कि पिछड़े वर्गों, अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों के लिए 68 प्रतिशत आरक्षण अत्यधिक है और उसे असंदैधानिक घोषित किया ।

बालाजी के मामले के बाद ही एक अन्य "जनार्द्दन सुब्बाराया बनाम मैसूर[9]" मामले में उच्चतम न्यायालय ने यह स्पष्ट किया कि बालाजी के मामले में किए गए विनिश्चय से अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों के पक्ष में किए गए आरक्षण की विधिमान्यता पर कोई प्रभाव नहीं पड़ता । पूर्वोक्त आरक्षण जारी रहा (अनुसूचित जातियों के लिए 15 प्रतिशत और अनुसूचित जनजातियों के लिए 3 प्रतिशत) । मैसूर राज्य का 1962 का आदेश केवल सामाजिक और शैक्षणिक रूप से पिछड़े वर्गों के बारे में किए गए आरक्षण के संदर्भ में मंसूख किया गया था । दूसरे शब्दों में, अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों के लिए आरक्षणों को अलग प्रतिशतता की व्यवस्था की जा सकती है ।

बालाजी के मामले में न्यायालय के संप्रेक्षणों को ध्यान में रख कर मैसूर सरकार के जुलाई 1963 के आदेश में सामाजिक और शैक्षणिक पिछड़ेपन का निर्धारण करने के लिए "व्यवसाय एवं साधन" मापदंड निर्धारित किया गया :

(i) जिस परिवार की आय 1,200 रु० प्रति वर्ष या उससे कम हो और जो व्यक्ति या वर्ग, कृषि, छोटा-मोटा व्यवसाय, घटिया सेवा, दस्तकारी का कोई अन्य ऐसा व्यवसाय करते हों जिसमें शारीरिक श्रम करना पड़ता हो, वे सामान्यतया सामाजिक और शैक्षणिक रूप से पिछड़े हुए हैं । सरकार ने निम्नलिखित व्यवसायों को सामाजिक पिछड़ेपन की सूची में दर्ज किया :

(ii) वास्तविक खेतिहर,

(iii) कारीगर,

(iv) छोटा मोटा व्यवसायी,

(v) घटिया सेवा (जैसे सरकारी सेवाओं में चतुर्थ श्रेणी कर्मचारी और तदनुरूपी वर्ग), या

(vi) कोई अन्य व्यवसाय जिसमें शारीरिक श्रम करना पड़ता हो ।

उपरोक्त वर्गों में साक्षरता का स्तर, राज्य में सामान्य साक्षरता स्तर से कम था ।

जहां तक आरक्षण की मात्रा का संबन्ध है, इस आदेश में पिछड़े वर्गों के लिए 30 प्रतिशत, अनुसूचित जातियों के लिए 15 प्रतिशत और अनुसूचित जनजातियों के लिए 3 प्रतिशत आरक्षण की व्यवस्था की गई थी ।

यहां यह प्रतीत होता है कि सरकार ने परिवार की आर्थिक स्थिति और व्यवसाय को ध्यान में रखा । डी०जी० विश्वनाथ बनाम मैसूर सरकार[10] के मामले में मैसूर सरकार के उपरोक्त आदेश को चुनौती दी गई ।

इस आदेश के अधीन चिकित्सा और इंजीनियरी के व्यावसायिक कालेजों में प्रवेश हेतु पिछड़े वर्गों के विद्यार्थियों के लिए 30 प्रतिशत स्थानों के आरक्षण की व्यवस्था की गई थी । चुनौती इस आधार पर दी गई थी कि यद्यपि सामाजिक और शैक्षणिक रूप से पिछड़े वर्गों का निर्धारण करने के लिए हिन्दुओं के मामले में व्यवसाय, आय, आवास और जाति के चार मापदंड निर्धारित किए गए थे लेकिन सरकार ने जाति के आधार की सर्वथा उपेक्षा की थी और इसलिए आदेश में उल्लिखित योजना अविधिमान्य थी । इस मामले में सामाजिक और शैक्षणिक पिछड़ापन निर्धारित करते समय राज्य ने केवल "व्यवसाय" और "निर्धनता" का मापदंड निर्धारित किया था और "जाति" तथा "आवास" के आधार का सर्वथा उपेक्षा की थी । अर्जीदार के प्रतिविरोध को स्वीकार करते हुए न्यायमूर्ति हेगड़े ने कहा कि उच्चतम न्यायालय ने बालाजी के मामले में यह स्पष्ट उल्लेख किया था कि हिन्दुओं के संबन्ध में, नागरिकों के समुदायों या वर्गों के सामाजिक पिछड़ेपन के निर्धारण में जाति को सुसंगत पहलू मान पर विचार किया जाना चाहिए । यह कहीं भी नहीं कहा गया कि सामाजिक और शैक्षणिक रूप से पिछड़े वर्गों का निर्धारण करने के लिए जाति का आधार नहीं अपनाना चाहिए । तदनुसार पिछड़े हिन्दुओं के वर्गों का निर्धारण करने में जाति एक संगत आधार है लेकिन उसे एकमात्र आधार नहीं बनाया जाना चाहिए । इसे व्यवसाय निर्धनता और आवास आदि जैसे अन्य मापदंडों के साथ अपनाया जाना चाहिए । क्योंकि सरकार ने मौजूदा मामले में जाति और आवास के आधार की सर्वथा उपेक्षा कर दी थी इसलिए न्यायालय ने यह महसूस किया कि पिछड़े वर्गों के निर्धारण किए जाने से हिन्दुओं के वस्तुतः पिछड़े वर्गों को कोई सहायता नहीं मिली । न्यायालय ने यह स्पष्ट किया कि कुरबों और बेदरों ने, जो कि वस्तुतः पिछड़े हुए थे, पिछड़े वर्गों से इंजीनियरी कालेजों में बहुत कम स्थान प्राप्त किए जबकि ब्राह्मणों, लिंगायतों और वोकालिगों को अधिक स्थान प्राप्त हुए ।

जहां तक आरक्षण की मात्रा का संबन्ध है, न्यायालय को पेश की गई सामग्री को ध्यान में रखकर 30 प्रतिशत आरक्षण अधिक नहीं माना गया ।

आर० चित्रलेखा बनाम मैसूर राज्य[11] के मामले में उपर्युक्त निर्णय पर की गई अपील में मैसूर उच्च न्यायालय द्वारा की गई बालाजी मामले की व्याख्या की शुद्धता पर निर्णय देने के लिए मामला उच्चतम न्यायालय में पेश किया गया । उच्चतम न्यायालय ने इस बात पर फिर विचार किया कि क्या जाति भी नागरिकों का एक वर्ग है और क्या जाति समग्र रूप से पिछड़े वर्ग के रूप में वर्गीकृत की जा सकती है । न्यायमूर्ति सुब्बाराव (उस समय के न्यायमूर्ति) ने अधिकांश सदस्यों की ओर से यह कहा :

---

[8] 663 पर उपरोक्त.

[9] ए०आई०आर० 1963 एस०सी० 1702.

[10] ए०आई०आर० 1964 मैसूर 132.

[11] ए० आई० आर० 1964 एस०सी० 1823.

अनुच्छेद 15(4) जातियों के बारे में कुछ नहीं कहता बल्कि केवल वर्गों की बात करता है। यदि संविधान के निर्माताओं का जाति को भी सामाजिक और शैक्षणिक पिछड़ेपन के यूनिटों के रूप में लेने का आशय होता तो उन्होंने वैसा कहा होता जैसा कि उन्होंने अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों के मामले में कहा है। यद्यपि यह सुझाव दिया जा सकता है कि "वर्ग" शब्द का प्रयोग अनुच्छेद 15 के खंड (4) में व्यापक रूप से किया गया है क्योंकि जाति के बिना भी समुदाय होते हैं। यदि वर्गों को जातियों के साथ एक रूप करने का आशय था तो किसी ने संविधान के निर्माताओं को "वर्ग या जाति" का शब्द प्रयोग करने से नहीं रोका था। अनुच्छेद 15(4) में "पिछड़े वर्ग" और "अनुसूचित जातियां" शब्दों का सान्निध्य से यह उचित निष्कर्ष निकाला जा सकता है कि "वर्ग" शब्द जाति शब्द का पर्यायवाची नहीं है।

संवैधानिक उपबन्धों के सिद्धान्तों के अनुसार "जाति" और "वर्ग" शब्द एक दूसरे के पर्यायवाची नहीं कहे जा सकते।

न्यायाधीश ने कहा :

यदि हम "वर्ग" शब्द की व्याख्या "जाति" के रूप में करते हैं तो संविधान का उद्देश्य विफल हो जाएगा और जो व्यक्ति सहायता के पात्र नहीं हैं वे इसे प्राप्त कर सकते हैं और इसके परिणामस्वरूप वे व्यक्ति छूट जाएंगे जो इसके वस्तुतः पात्र हैं[12]।

यह विसंगति तब उत्पन्न नहीं होगी यदि जाति शब्द को "वर्ग" शब्द की बराबरी दिए बगैर जाति को उन कारणों में से एक कारण मान लिया जाए जिसके आधार पर यह निर्धारित किया जाता है कि कोई व्यक्ति पिछड़े वर्ग का है अथवा नहीं। अधिकांश सदस्यों ने यह निर्णय दिया कि "वर्ग" को किसी भी परिस्थिति में "जाति" की बराबरी नहीं दी जा सकती जबकि किसी व्यक्ति या व्यक्तियों के समूह की जाति पर उसे किसी वर्ग विशेष में रखने के लिए अन्य संगत कारणों के साथ-साथ विचार किया जा सकता है। तदनुसार मैसूर सरकार के जुलाई 1963 के आदेश को यथावत् रखा गया।

चित्रलेखा मामले के अन्य पहलुओं पर जिन अल्पमत सदस्यों ने राय दी उनमें से न्यायमूर्ति मुधोलकर का विचार था कि "सामाजिक और शैक्षणिक रूप से पिछड़े समुदायों का निर्धारण करने में जातियों की कोई प्रासंगिकता नहीं" क्योंकि ऐसा करना अनुच्छेद 15 के खंड (1) या अनुच्छेद 29 के खंड (2) के विपरीत होगा। अनुच्छेद 15 के खंड (4) में सर्वोपरि खंड के बावजूद ऐसा होगा।

बालाजी और चित्रलेखा के मामले में न्यायालय ने किसी जाति का समग्र रूप से पिछड़ा होने के वर्गीकरण का अनुमोदन नहीं किया। न्यायमूर्ति सुब्बाराव ने चित्रलेखा मामले में यह सुझाव दिया था कि यदि कोई "उपजाति" पूर्णतया पिछड़ी हो तो उसे संविधान[13] के अनुच्छेद 341 (2) में दी गई कार्यविधि को अपनाते हुए अनुसूचित जातियों में शामिल कर लेना चाहिए।

मैसूर सरकार के जुलाई 1963 के आदेश की परिधि की व्याख्या को अनेक मामलों में प्रस्तुत किया गया। रत्नाकर शैट्टी बनाम मैसूर राज्य[14] के मामले में जिसमें प्रि-मेडिकल पाठ्यक्रम में प्रवेश के लिए 30 प्रतिशत आरक्षण की व्यवस्था की गई थी, मैसूर उच्च न्यायालय ने यह निर्णय दिया कि कोई आवेदक सामाजिक और शैक्षणिक रूप से पिछड़े वर्ग से तभी संबन्धित माना जा सकता है यदि:—

(i) वह और/या उसके माता-पिता या उनमें से कोई एक या उसके अनाथ होने की स्थिति में उसका संरक्षक, सरकारी आदेश में उल्लिखित कोई व्यवसाय करता है/करते हैं, और

(ii) आवेदक के माता-पिता (या दोनों की मृत्यु हो जाने की स्थिति में, संरक्षक) की यदि कोई सम्पत्ति हो तो उसकी आय तथा आवेदक उसके भाइयों या बहिनों या परिवार में उसके साथ रहने वाले अन्य संबन्धियों की सम्पत्तियों, यदि कोई हो, की आय तथा उन सभी की अन्य आमदनियों को मिला कर कुल आमदनी 1200 रु० से अधिक न हो।

यदि आवेदक का कोई संबन्धी परिवार की आय में योगदान न करता हो तो उसकी आय की संगणना नहीं की जाएगी। इस आदेश में परिवार का अर्थ प्रकृत परिवार से लगाया गया था और अविभाजित हिन्दू परिवार से नहीं, क्योंकि देश में उन लोगों के परिवार हैं जो हिन्दू नहीं हैं बल्कि इस्लाम और ईसाई आदि जैसे अन्य धर्मों से संबन्ध रखते हैं।

न्यायालय ने यह कहा :

"सरकारी आदेश में प्रयोग किया गया "परिवार" शब्द एक ऐसी अभिव्यक्ति है जो सभी व्यक्तियों पर लागू होती है चाहे उन पर परिवार संबन्धी कानून के कोई भी नियम लागू होते हों। यदि ऐसा है, तो इसका बिल्कुल स्पष्ट निष्कर्ष यह है कि इसका अर्थ सामान्य या प्रकृत परिवार से है जिसके अन्तर्गत इकट्ठे रहने वाले पति, पत्नी और उसके बच्चे तथा अन्य ऐसे संबन्धी आते हैं जो उनके साथ[15] रहते हों"। बी० सईद अहमद बनाम मैसूर राज्य[16] के मामले में प्रश्न यह था कि क्या किसी ऐसे मैकेनिक का पुत्र, जिसकी वार्षिक आय 624 रु० थी, सामाजिक और शैक्षणिक रूप से पिछड़े वर्गों से सम्बद्ध होने के आधार पर एम०बी०बी०एस० डिग्री लेने के लिए आवश्यक "प्रि-प्रोफैशनल" पाठ्यक्रम में प्रवेश के लिए विचार किए जाने का हकदार था या नहीं। न्यायालय ने मैसूर सरकार के जुलाई 1963 के आदेश की व्याख्या करते हुए निर्णय दिया कि मैकेनिक शब्द एक ऐसा शब्द है जिसमें "कारीगर" शब्द की स्पष्ट व्याख्या हो जाती है और इसलिए प्रवेश के लिए अर्जीदार के मामले पर विचार किया जाना चाहिए क्योंकि वह ऐसे पिछड़े वर्ग से संबन्धित था।

जैसा कि मानव हर बात को गहराई से सोचता है, मैसूर सरकार के जुलाई 1963 के आदेश में पिछड़े वर्गों के पक्ष में आरक्षण संबन्धी व्यवस्थाओं का लाभ उठाने के लिए इस आदेश में दत्तक ग्रहण की विधिक युक्ति का सहारा लिया गया। शान्ताकुमार बनाम मैसूर राज्य[17] के मामले में अर्जीदार को उसके नैसर्गिक पिता ने 16 वर्ष की आयु में अपने उस चाचा को गोद दे दिया था जो उसके पिता की तुलना में सामाजिक और आर्थिक दृष्टि से कमजोर था। मैसूर उच्च न्यायालय ने यह निर्णय दिया :

---

12. 1833 पर पूर्वोक्त।

13. संसद कानून द्वारा खंड (1) के अधीन जारी की गई अधिसूचना में विनिर्दिष्ट अनुसूचित जातियों की सूची में/सूची से किसी जाति, मूल वंश या जनजाति या उसके किसी भाग या किसी जाति, मूल वंश या जनजाति के भीतर किसी ग्रुप को शामिल कर सकती है। निकाल सकती है, किन्तु यथा पूर्वोक्त के सिवाय उपरोक्त खंड के अधीन जारी की गई अधिसूचना बाद की किसी अधिसूचना द्वारा परिवर्तित नहीं की जाएगी।

14. (1969)1 मैसूर ले०जे० 149.

15. 155 पर उपरोक्त।

16. 1969 (1) मैसूर एल० जे० 79.

17. 1971 (1) मैसूर एल०जे० 21.

अपेक्षाकृत चार या पांच वर्ष की आयु में गोद दिए गए लड़के के संबन्ध में चाहे स्थिति कुछ भी हो परन्तु अर्जीदार के मामले में, जिसे 16 वर्ष की आयु में गोद दिया गया बताया जाता है और जिसे हर समय अपने नैसर्गिक पिता की आय और व्यवसाय से बेहतर लाभ प्राप्त थे, यह मानना उचित नहीं है कि उसका सामाजिक और शैक्षणिक रूप से पिछड़े वर्गों में निर्धारित करने के लिए उसे गोद लेने वाले पिता की आयु और व्यवसाय को मापदंड माना जाए, न कि उसके नैसर्गिक पिता को[18]।

कोई भी अन्य विचार ऐसे पिछड़े वर्गों के आरक्षण के उद्देश्य को विफल कर देगा और उन वर्गों को दिए जाने वाले आरक्षण को कम कर देगा जो पर्यावरणीय असुविधाओं के कारण नुकसान उठाते हैं।

सुधा बनाम चिकित्सा कॉलेज[19] के मामले में मैसूर सरकार के जुलाई 1963 के आदेश की परिधि की संवीक्षा के लिए उसे प्रस्तुत किया गया। यह आदेश चिकित्सा कालेजों में प्रवेश से संबन्धित था।

अर्जीदार का यह दावा, कि वह सामाजिक और शैक्षणिक रूप से पिछड़े वर्गों से संबंधित थी, स्वीकार नहीं किया गया और उसे आरक्षण की सुविधा देने से इनकार कर दिया गया। उसने यह विवाद किया कि पुरोहित के रूप में उसके पिता का व्यवसाय किसी ऐसे अन्य व्यवसाय की श्रेणी के अन्तर्गत आता था जिसमें शारीरिक श्रम करना पड़ता था और सह परिचारिका करने वाला एक छोटा मोटा पुरोहित था जिसे एक सहायक ने करना होता है। न्यायमूर्ति चन्द्रशेखर ने यह विनिश्चय करने के लिए कि किसी व्यवसाय में शारीरिक श्रम करना पड़ता था या बौद्धिक श्रम "अधिष्ठायी स्वरूप" का मापदण्ड लागू किया। बौद्धिक श्रम करने के प्रत्येक व्यवसाय में कुछ शारीरिक श्रम भी करना पड़ता है। यद्यपि पुरोहित कुछ धार्मिक कृत्य और कर्म करने के लिए हाथों का प्रयोग करेगा लेकिन अधिष्ठायी प्रकार के उसके व्यवसाय में धर्मग्रंथों और वेदों के अध्ययन और ज्ञान की आवश्यकता होती है। न्यायालय ने चयन समिति के इस विचार का समर्थन किया कि पुरोहित के व्यवसाय में शारीरिक परिश्रम नहीं होता। तदनुसार अर्जीदार पिछड़े वर्गों के लिए रखे गए आरक्षण का हकदार नहीं था।

सुभाषिनी बनाम राज्य[20] के मामले में मैसूर सरकार के जुलाई 1963 के आदेश को, जिसमें चिकित्सा कालेजों में प्रवेश के लिए आरक्षण किया गया था, चुनौती दी गई। आदेश के विरुद्ध आक्षेप का एक आधार यह था कि इस आदेश के अनुसार उपलब्ध स्थानों के 50 प्रतिशत से अधिक स्थानों का आरक्षण किया गया था और इसलिए आरक्षण की मात्रा में बालाजी सीमा से बढ़ गई थी। वस्तुतः चिकित्सा कालेजों में उपलब्ध स्थानों की कुल संख्या 750 थी। इन स्थानों में से 3 स्थान विदेश अधिवासी भारतीय मूल के सांस्कृतिक छात्रों के लिए, 2 स्थान कोलंबो योजना छात्रों के लिए, 4 स्थान बर्मा से प्रवास करने वाले भारतीय मूल के विद्यार्थियों के लिए, 4 स्थान एशिया और अफ्रीका के देशों के विद्यार्थियों के लिए, 2 स्थान एल०ए०एम०एस० और एल०यू०एम०एस० के लिए, 5 स्थान गोवा से आने वाले विद्यार्थियों के लिए, 2½ प्रतिशत स्थान रक्षा कर्मचारियों के बच्चों के लिए, 1 प्रतिशत स्थान उन व्यक्तियों के लिए जिन्होंने खेलकूद में असाधारण कुशलता और रुझान का परिचय दिया हो और 75 स्थान अन्य राज्यों के विद्यार्थियों के लिए केन्द्रीय कोटा के रूप में थे। यदि उपरोक्त स्थानों में से कोई स्थान न भरे जा सकें, तो न भरे गए स्थान सामान्य पूल में अन्तरित किए जाएंगे। बाकी स्थानों में से 18 प्रतिशत स्थान अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों तथा 30 प्रतिशत स्थान सामाजिक और शैक्षणिक रूप से पिछड़े वर्गों के लिए आरक्षित किए गए थे।

यह दलील दी गई कि सभी ग्रुपों के लिए कुल आरक्षण बालाजी की 50 प्रतिशत सीमा से बढ़ गया था। इस दलील को नामंजूर करते हुए, मैसूर उच्च न्यायालय ने निर्णय दिया कि सामाजिक और शैक्षणिक रूप से पिछड़े हुए वर्गों के स्थानों के आरक्षण की विधिमान्यता का निर्णय अनुच्छेद 15(4) में उल्लिखित शर्तों के अनुसार करना होगा। सामाजिक और शैक्षणिक रूप से पिछड़े वर्गों, अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों के अलावा अन्य वर्गों के आरक्षण की विधिमान्यता का मापदंड अनुच्छेद 14 की अपेक्षाओं के आधार पर निर्धारित करना होगा। ऐसे आरक्षण को अनुच्छेद 15(4) के अधीन विशेष आरक्षणों के साथ नहीं मिला देना चाहिए। बालाजी के मामले में निर्धारित उच्च सीमा केवल अनुच्छेद 15(4) के अधीन किए जाने वाले आरक्षणों पर लागू होती है। अन्यथा किया गया आरक्षण इसमें शामिल नहीं है।

गुरिन्दर पाल सिंह बनाम पंजाब राज्य[21] के मामले में चिकित्सा कालेजों में 50 प्रतिशत स्थानों पर अनुसूचित जातियों, अनुसूचित जनजातियों, पिछड़े वर्गों, पिछड़े क्षेत्रों के निवासियों और अन्य वर्गीकृत श्रेणियों के पक्ष में आरक्षण करने के सरकार के आदेशों को चुनौती दी गई थी। आरक्षणों की मात्रा इस प्रकार थी :

(i) अनुसूचित जातियां/जनजातियां	20 प्रति०
(ii) पिछड़े वर्ग	2 प्रति०
(iii) पिछड़े क्षेत्र	10 प्रति०
(iv) पुरुष खिलाड़ी/महिला खिलाड़ी	2 प्रति०
(v) जम्मू और काश्मीर सहित केन्द्रीय सरकार द्वारा नामित व्यक्ति	6 प्रति०
(vi) महिला उम्मीदवार	1 प्रति०
(vii) पंजाब के सीमा क्षेत्रों से उम्मीदवार	5 प्रति०
(viii) पंजाब अनिवासी स्वतंत्रता संग्राम के राजनैतिक पीड़ितों के बच्चे	2 प्रति०
(ix) (क) मृत रक्षा कर्मचारियों के बच्चे।	
(ख) निःशक्त रक्षा कर्मचारियों के बच्चे।	
(ग) सीमा सुरक्षा बल के मारे गए/निःशक्त हो गए कर्मचारियों के बच्चे।	2 प्रति०
(घ) भारतीय सशस्त्र सेना के भूतपूर्व सैनिकों के बच्चे।	

पिछड़े वर्गों के बारे में यह दलील दी गई कि आरक्षण किसी विशेष जाति या समुदाय के लिए नहीं किया जा सकता क्योंकि पिछड़ापन प्रायः परिवार की आर्थिक स्थिति पर निर्भर करता है। पंजाब राज्य ने अपने उत्तर में राज्य सरकार द्वारा जारी किए गए तारीख 20 अप्रैल, 1963 के परिपत्र संख्या 2662-5 डब्लेयू-जी॥—63/6934 का अस्तित्व बताया जिसमें व्यवस्था थी कि 1,000 रु० से कम वार्षिक आय वाले परिवार को पिछड़ा परिवार माना जाना चाहिए और कुछ समुदाय जिन्हें राज्य के लोगों द्वारा सामाजिक दृष्टि से हीन समझा जाता है और जिनकी आय 1,800 रु० से अधिक नहीं है और जिन्हें राज्य सरकार ने ऐसा

[18] 23 पर उपरोक्त।

[19] ए० आई० आर० 1967 मैसूर 21

[20] ए० आई० आर० 1966 मैसूर 40.

[21] ए०आई०आर० 1974 पंजाब 125.

घोषित किया था, उन्हें भी पिछडे समुदाय माना जाए। पंजाब उच्च न्यायालय ने निर्णय दिया कि किसी परिवार के पिछड़े वर्ग से संबंधित होने की घोषणा करने से पहले उपरोक्त परिपत्र केवल परिवार के पिछड़ेपन के पहलू को उजागर करता था। इस प्रकार का वर्गीकरण संविधान के अन्तर्गत किया जा सकता था और उसे आघात नहीं पहुंचाया जा सकता था।

तथापि पिछड़े क्षेत्रों के निवासियों के लिए आरक्षण असंवैधानिक घोषित किया गया।

पिछड़े क्षेत्रों में आने वाले उम्मीदवारों से अपने आवेदन पत्रों के साथ उप आयुक्त या किसी अन्य अभिहित अधिकारी से इस आशय का प्रमाणपत्र भेजने के लिए कहा गया कि वे (उम्मीदवार) पंजाब सरकार के आदेश में निर्धारित निम्नलिखित श्रेणियों में से किसी एक के अन्तर्गत आते थे :

(क) ऐसा व्यक्ति जो परिवार के सदस्यों के साथ किसी ग्राम या नगर में 10 वर्षों से रह रहा हो और वहां रहता रहेगा।

(ख) ऐसा व्यक्ति जो किसी ग्राम या नगर में 10 वर्षों से कम समय से रह रहा हो लेकिन लाभदायक रोजगार के कारण वहां रहता रहेगा या सेवा-निवृत के बाद वहां बस जाएगा लेकिन उसका वहां पांच वर्षों से कम न हो।

(ग) जो व्यक्ति उपरोक्त क्षेत्र में किसी ग्राम या नगर में रह रहा हो, उसके मामले मे दोनों स्थानों पर उसके वास की कुल अवधि उस क्षेत्र में उसके निवास स्थान के रूप में गिनी जाएगी।

न्यायालय ने पिछड़े क्षेत्रों के लिए वर्गीकरण जो असंवैधानिक बताते हुए कहा कि आदेश उम्मीदवारों की आर्थिक स्थिति को विचार में लाए बिना केवल निवास स्थान के आधार पर आधारित था। न्यायालय ने यह भी कहा कि ऐसे क्षेत्रों में रहने वाले लखपति और निर्धन व्यक्ति को बराबर माना गया है। पंजाब सरकार के आदेश में पिछड़े क्षेत्रों के निवासियों की तुलनात्मक सम्पन्नता निर्धारण करने के लिए कोई मापदंड निश्चित नहीं किया गया था। अतः ऐसा वर्गीकरण अनुच्छेद 15(1) का अतिक्रमण करने वाला माना गया और अनुच्छेद 15(4) द्वारा उसका बचाव नहीं किया जा सका।

पी० राजेन्दरन बनाम मद्रास राज्य[22] के मामले में, उच्चतम न्यायालय के बाद के विनिश्चय में चित्रलेखा के मामले में दिए गए मार्गदर्शक सिद्धांत का अनुसरण नहीं किया गया। न्यायालय ने समेकित एम० बी० बी० एस० पाठ्यक्रम के प्रथम वर्ष में प्रवेश हेतु उम्मीदवारों के चयन के लिए मद्रास राज्य द्वारा बनाए गए नियमों की अधिमान्यता पर विचार करना था। नियम संख्या 5 में मद्रास शिक्षा नियमावली के संशोधित परिशिष्ट 17-क के ग्रुप III में विनिर्दिष्ट वर्गों के लिए सामाजिक और शैक्षणिक रूप से पिछड़े और आरक्षित स्थानों का वर्गीकरण किया गया था। इस मामले में अर्जीदारों ने अन्य बातों के अलावा पिछड़े वर्गों के लिए स्थान आरक्षित करने संबंधी नियम 5 को अनुच्छेद 15(1) का अतिक्रमण करने वाले नियम के रूप में उसकी अधिमान्यता को चुनौती दी क्योंकि राज्य द्वारा तैयार की गई सूची केवल जाति के आधार पर थी। राज्य की ओर से विवाद किया गया कि पिछड़े वर्गों की सूची 1906 से आरम्भ करके तैयार की गई थी और उसे अद्यतन बनाया गया था और इस सूची में शामिल करने के लिए मुख्य मापदंड इन वर्गों द्वारा अपनाए गए व्यवसायों पर आधारित जाति का सामाजिक और शैक्षणिक रूप से पिछड़ापन था। क्योंकि जाति के सदस्य समग्र रूप में सामाजिक और शैक्षणिक रूप से पिछड़े पाए गए थे, इसलिए उन्हें सूची में दर्ज किया गया था। न्यायालय को यह भी पता चला कि नियम 5 में उल्लिखित व्यक्तियों के वर्ग केवल जातियों के आधार पर सामाजिक और शैक्षणिक रूप से पिछड़े वर्ग निर्धारित किए गए थे। तथापि न्यायालय ने राज्य का यह विवाद स्वीकार कर लिया कि उन जातियों में से प्रत्येक जाति समग्र रूप में सामाजिक और शैक्षणिक रूप से पिछड़ी हुई थी और क्योंकि अर्जीदार न तो राज्य के अभिवचन का खंडन कर सका और न ही उपरोक्त जातियों में से किसी एक जाति के भी समग्र रूप से पिछड़ी जाति न होने का प्रमाण दे सका इसलिए न्यायालय ने नियम 5 के विधिमान्य और संवैधानिक होने का निर्णय दिया। न्यायालय ने आगे यह निर्णय दिया कि (क) जाति भी नागरिकों का वर्ग है और यदि कोई जाति समग्र रूप में सामाजिक और शैक्षणिक रूप से पिछड़ी हुई है तो उस जाति के पक्ष में इस आधार पर आरक्षण किया जा सकता है कि वह अनुच्छेद 15(4)[23] के अर्थों के अन्तर्गत नागरिकों का सामाजिक और शैक्षणिक रूप से पिछड़ा हुआ वर्ग है।

राजेन्दरन के मामले में राज्य ने स्वीकार किया और न्यायालय को यह पता चला कि नियम 5 में कुछ जातियों को सामाजिक और शैक्षणिक रूप से पिछड़ी जातियों के रूप में वर्गीकृत किया गया था और उनके लिए स्थान आरक्षित किए गए थे। यह प्रत्यक्षतः अनुच्छेद 15(1) का अतिक्रमण था और यदि नियम 5 को अनुच्छेद 15(4) का संरक्षण न दिया जाए तो वह शून्य था। यह प्रमाणित करने का भार राज्य पर डाला जाना चाहिए था कि वह स्पष्ट करे कि नियम 5 अनुच्छेद 15(4) की परिधि के अन्तर्गत आता है। राज्य ने इसे प्रमाणित करने के कार्य का संतोषजनक ढंग से पालन नहीं किया। उसने केवल यह बताया कि सूची में शामिल करने का मुख्य मापदंड उपरोक्त जातियों द्वारा अपनाए गए व्यवसायों पर आधारित जाति का सामाजिक और शैक्षणिक रूप से पिछड़ापन था, उपरोक्त जातियां पिछड़ी नहीं हैं; इसे सिद्ध करने का भी अर्जीदार पर डालना एक अत्याधिक कठिन भार डालना था क्योंकि राज्य ने पिछड़े रूप से जातियों का वर्गीकरण करने के लिए कोई मापदंड विनिर्दिष्ट नहीं किया था।

राजेन्दरन के मामले का निष्कर्ष था कि सामाजिक और शैक्षणिक रूप से पिछड़ापन निर्धारित करने के लिए जातिवार वर्गीकरण को विधिमान्य माना गया। बालाजी और चित्रलेखा के मामले में वर्गीकरण के एकमात्र आधार के रूप में जाति के मापदंड को नामंजूर कर दिया गया। लेकिन राजेन्दरन के मामले में इन मामलों (इसमें चित्रलेखा का बिल्कुल संदर्भ नहीं है) के विरुद्ध निर्णय दिए बिना, इस आधार पर जातिवार वर्गीकरण का अनुमोदित किया गया कि कोई भी जाति नागरिकों की ही एक जाति है[24] यद्यपि न्यायालय इस बात की पुष्टि करता है कि जाति, वर्गीकरण का आधार है बशर्ते कि समग्र जाति सामाजिक और शैक्षणिक रूप से पिछड़ी हो, किन्तु न्यायालय ने उन व्यक्तियों से सम्बद्ध प्रश्न के बारे में उत्तर नहीं दिया है जो उपरोक्त जाति में पिछड़े हुए नहीं हैं। जाति को एकमात्र मापदंड (समग्र रूप से यह धारणा करना कि कोई जाति सामाजिक और शैक्षणिक रूप से पिछड़ी है) के रूप में अंगीकार करने में कठिनाई यह है कि उक्त जाति में कुछ ऐसे व्यक्ति पिछड़ेपन का लाभ उठाएंगे जो सामाजिक और शैक्षणिक रूप से उन्नत हैं।

हृदय नारायण बनाम मोहम्मद शरीफ के मामले में[25] बिहार अभिधृति अधिनियम की धारा 49 एम की विधिमान्यता से संबंधित मुख्य

[22] ए० आई० आर० 1968 एस० सी० 1012

[23] 1014-15 पर पूर्वोक्त

[24] उच्च न्यायालय के मामलों में "जाति" को "जाति" के पर्यायवाची शब्द के रूप में माना गया। देखें—केरल राज्य बनाम आर० जेकब ए० आई० आर० 1964 केरल 316

[25] ए० आई० आर० 1968 पटना 296

संवैधानिक प्रश्नों और हरिजनों को पिछड़े समुदाय के रूप में वर्णन करने वाली बिहार सरकार की तारीख 7 फरवरी, 1956 की अधिसूचना संख्या ए/टी-1015/55—1091 आर० पर विचार किया गया।

पटना उच्च न्यायालय ने यह निर्णय दिया कि अपीलार्थी का कौंसेल इस बात के प्रमाण में कोई सामग्री प्रस्तुत नहीं कर सका कि हज्जाम (हिन्दू और मुस्लिम) सामाजिक और शैक्षणिक रूप से पिछड़े नहीं थे। दूसरी ओर न्यायालय ने पृष्ठ 36 पर दरभंगा जिला के श्री पी० सी० चौधरी के गजेटियर पर निर्भर किया जिसमें यह बताया गया था

> "उनमें साक्षरता का बहुत कम प्रभाव दिखाई पड़ता है परन्तु उनमें से जो चन्द शिक्षित व्यक्ति हैं उन्होंने अन्य व्यवसाय भी अपनाए हुए हैं।"

अतः उनका शैक्षणिक पिछड़ापन प्रश्न से परे है। दूसरे, वहां यह दिखाने के लिए कोई आधार सामग्री नहीं थी कि वे पिछड़े नहीं थे। इसलिए अधिसूचना को केवल इस कारण रद्द करने का कोई आधार नहीं था कि वर्गों का वर्णन उनके जाति के नाम के माध्यम से किया गया था।

बी० सी० स्वेन बनाम डब्ल्यू एण्ड टी० विभाग[26] के सचिव के मामले में एक्सप्रेस हाईवे नं० 1 को सड़क के किनारे पर स्थित भूमि, कृषि और मत्स्य पालन के प्रयोजन से भूमिहीन हरिजनों को अस्थायी रूप में वार्षिक पट्टे के आधार पर देने के आदेश को चुनौती दी गई थी। पट्टे पर भूमि देने में भूमिहीन हरिजनों की मत्स्य सहकारी समितियों को तरजीह दी गई थी।

यह दलील दी गई कि हरिजन संविधान के अधीन उल्लिखित अनुसूचित जातियों की परिधि के अन्तर्गत नहीं आते थे। जब तक हरिजन "नागरिकों के सामाजिक और शैक्षणिक रूप से पिछड़े वर्गों के किसी वर्ग" की किसी श्रेणी के अन्तर्गत नहीं आते, इस आदेश का अर्थ जाति पर आधारित भेदभाव के आधार पर अनुच्छेद 15 का अतिक्रमण करना होगा। इसके अतिरिक्त ऐसा कोई साक्ष्य या उपधारणा नहीं थी कि हरिजन "जाति" के रूप में सामाजिक और शैक्षणिक तौर पर पिछड़े हुए हैं।

न्यायालय ने यह निर्णय दिया कि हरिजनों के रूप में कोई जाति नहीं थी। किसी स्थान पर "हरिजन" की परिभाषा नहीं दी गई है। इस शब्द का सृजन हाल ही में 1920 ईस्वी के मध्य में हुआ है जिसके प्रणेता महात्मा गांधी थे (शब्द संग्रह) (भाषा कोश) के अनुसार सवर्ण जाति के हिन्दुओं ने जो असवर्ण जाति के हिन्दुओं के बारे में हीन भावना रखते थे, कुछ जातियों को अछूत मान लिया और उसमें हरिजनों की श्रेणी भी शामिल थी। अतः हरिजन उन जातियों के लोग हैं जिन्हें गैर-हरिजन या सवर्ण हिन्दू अछूत समझते थे। इसलिए कहा जा सकता है कि हरिजन कोई जाति नहीं है बल्कि विभिन्न जातियों के लोगों का समूह है जिन्हें सवर्ण हिन्दुओं द्वारा अछूत मान लिया गया। इसलिए हरिजन जैसे वर्गीकरण के जाति पर आधारित होने की दलील सही नहीं थी। हरिजन शब्द में जाति की संकल्पना की अपेक्षा कुछ और संकल्पना अधिक थी। वर्तमान रिट याचिका में उजरदारों ने अपने शपथपत्र में यह कहा था कि हरिजन भूमिहीन श्रमिक थे जो अन्यों की भूमि पर खेती करते थे और उन्होंने अपने रोजगार हेतु उपाय और साधन प्राप्त करने के लिए एक सोसाइटी बना ली थी। न्यायालय ने यह महसूस किया कि यह अनुमान करने के लिए पर्याप्त प्रमाण थे कि हरिजन पिछड़े वर्गों से संबंधित हैं। न्यायालय ने एक कदम और आगे यह कहा कि वह इस तथ्य की न्यायिक अवेक्षा ले सकता है कि वे सामाजिक और शैक्षणिक रूप से पिछड़े थे। न्यायालय ने सरकारी आदेश को बहाल रखा।

[26]ए० आई० आर० 1974 उड़ीसा 115

आन्ध्र प्रदेश राज्य बनाम पी० सागर[27] के मामले में उच्चतम न्यायालय ने राज्य द्वारा किए गए जातिवार आरक्षण को इस आधार पर अविधिमान्य कर दिया क्योंकि राज्य ऐसा मापदंड विनिर्दिष्ट नहीं कर सका था जिसके आधार पर उसने वर्गीकरण किया था। चिकित्सा कालेजों में प्रवेश विनियमित करने और सामाजिक और शैक्षणिक रूप से पिछड़े वर्गों का आरक्षण करने के लिए आंध्र प्रदेश के सरकारी आदेशों को चुनौती दी गई। इस तात्कालिक मामले में न्यायमूर्ति शाह ने उच्चतम न्यायालय की ओर से शपथपत्र में राज्य के प्रकथन को अन्तिम प्रकथन के रूप में स्वीकार करने से इन्कार कर दिया और कहा :—

> जब न्यायालय के समक्ष यह विवाद खड़ा किया जाए कि भेदभाव के विरुद्ध दी गई किसी गारंटी के विपरीत कोई विधि विशेष इस तर्क के आधार पर विधिमान्य है कि अनुच्छेद 15 के खंड (4) के अधीन इसकी अनुमति है तो राज्य का यह कथन कि अधिकारियों या राज्य ने न्यायालयों द्वारा अपनाए गए मापदंड को ध्यान में रखा था ..... या प्राधिकारियों ने नागरिकों के सामाजिक और शैक्षणिक रूप से पिछड़े वर्गों का निर्धारण करने के लिए सद्भावना से काम लिया था, ऐसे दावे को सिद्ध करने के लिए पर्याप्त नहीं होगा ..... केवल इस बात पर जोर देने से कि कानून उस संगत साक्ष्य और मापदंड पर पूरी तरह विचार करने के बाद बनाया गया था जो उससे सम्बन्धित था और अपवाद के अन्तर्गत आता था, तो न्यायालयों की यह निर्धारित करने की अधिकारिता समाप्त नहीं हो जाती कि कोई कानून बनाने से किसी मौलिक अधिकार का अतिलंघन हुआ है।[28]

उच्चतम न्यायालय ने इस विषय में आंध्र प्रदेश उच्च न्यायालय के पी० सागर बनाम आंध्र प्रदेश राज्य के मामले में किए गए विनिश्चय को बहाल रखा[29] और आंध्र प्रदेश उच्च न्यायालय के इस विचार से सहमति प्रकट की कि सरकारी आदेश में उल्लिखित पिछड़े वर्गों की सूची तैयार करने से पहले राज्य सरकार द्वारा कोई पूछ-ताछ या जांच नहीं की गई थी और राज्य ने सूची तैयार करने के आधार के बारे में कोई सामग्री न्यायालय को प्रस्तुत नहीं की थी।

न्यायमूर्ति शाह ने आगे यह बताया कि "जाति" से अभिप्राय उन लोगों के एक ऐसे सजातीय उप वर्ग से है जिन्होंने कुछ समानताओं या समान विशेषताओं के कारण आपस में मिलकर समूह बना लिया हो और जो अपने स्तर, रैंक व्यवसाय किसी इलाके में निवास स्थान, वंश, धर्म और अन्य समान विशेषताओं जैसे कुछ सामान्य लक्षणों से पहचाने जा सकते हों। इस बात का निर्धारण करने के लिए कि क्या किसी उप वर्ग विशेष वर्ग बन सकता है या नहीं, जाति को बिल्कुल अपवर्जित नहीं किया जा सकता है। लेकिन किसी वर्ग का निर्धारण करने में जाति या समुदाय पर आधारित एक मात्र मापदंड भी स्वीकार नहीं किया जाएगा। संसद् ने संविधान का संशोधन करके तथा खंड 4 को अधिनियमित करके कमजोर वर्ग के लोगों की उन्नति की व्यवस्था करके नागरिक को समानता के अधिकार के मुकाबले उनकी विशेष आवश्यकताओं को संतुलित करने का प्रयास किया। बालाजी सिद्धान्तों को दोहराते हुए न्यायाधीश ने कहा कि मापदंड धर्म, वंश, जाति, लिंग या जन्म के स्थान पर पूर्णतया आधारित नहीं होना चाहिए। पिछड़ापन सामाजिक और शैक्षणिक होने से उस पिछड़ेपन की तरह होना चाहिए जिससे अनुसूचित जातियां और अनुसूचित जनजतियां दुःख उठाती है। सागर के मामले में उच्चतम न्यायालय को, राजेन्दरन से

[27]ए० आई० आर० 1968 एस० सी० 1379

[28]1384 पर पूर्वोक्त

[29]ए० आई० आर० 1968 आंध्र प्रदेश 165

संबंधित विनिश्चय द्वारा बालाजी और चित्रलेखा मामलों पर की गई गलत व्याख्या का निराकरण करने का सुअवसर मिला। लेकिन सागर के मामले में न्यायालय ने राजेन्दरन के मामले में विभेद किए बगैर इस मामले में पिछड़े नागरिकों के जातिवार वर्गीकरण को अविधिमान्य ठहराया। इसके अलावा न्यायालय की कुछ टीका टिप्पणियों ने क्रमशः चित्रलेखा और राजेन्दरन से दो परस्पर विरोधी विवरण उद्धृत करके उलझन को और उलझा दिया।

चित्रलेखा से :

अनुच्छेद 15(4) में पिछड़े वर्ग और अनुसूचित जाति के शब्दों की निकटता से भी हम उचित निष्कर्ष निकालते हैं कि वर्ग शब्द जाति[30] शब्द का पर्यायवाची नहीं है।

राजेन्दरन से :

लेकिन यह बात नहीं भुलनी चाहिए कि जाति भी नागरिकों[31] का एक वर्ग है।

उपरोक्त दो विवरणों को उद्धृत करने के बाद न्यायालय ने यह निष्कर्ष निकाला कि राजेन्दरन के मामले में पहले के मामलों[32] से हट कर कोई नई बात नहीं कही गई है। राजेन्दरन और सागर के दो मामलों में सामंजस्य लाने का तरीका यह है कि राजेन्दरन के मामले में पिछड़े रूप में वर्गीकृत जातियों का वर्गीकरण उनके पिछड़ेपन के आधार पर किया गया था और इसलिए नहीं कि वे इस प्रकार की जातियां थीं और राज्य ने अपने द्वारा किए गए वर्गीकरण के समर्थन में साक्ष्य प्रस्तुत किया था लेकिन सागर के मामले में राज्य अपने आदेश के समर्थन में साक्ष्य नहीं जुटा सका था।

इसके बाद पैरियाकरुप्पन बनाम तमिलनाडु राज्य[33] के मामले में उच्चतम न्यायालय का विनिश्चय आया। इस विनिश्चय में चिकित्सा कालेजों में स्थानों के यूनिटवार वितरण को अनुच्छेद 14 और 15 का अतिक्रमण मानते हुए अविधिमान्य कर दिया गया। ऐसा होने पर भी तमिल नाडु राज्य के चिकित्सा कालेजों में पिछड़े वर्गों के लिए स्थानों का 41 प्रतिशत आरक्षण विधिमान्य किया गया और जाति के आधार पर तैयार की गई पिछड़े वर्गों की सूची राजेन्दरन के मामले में किए गए विनिश्चय के प्राधिकार पर विधिमान्य के रूप में अनुमोदित की गई। न्यायमूर्ति हेगड़े ने यद्यपि न्यायालय की ओर से बालाजी और चित्रलेखा के मामले को इस आशय से उद्धृत किया कि पिछड़े वर्गों का निर्धारण करने में जाति को एक संगत कारक माना जा सकता है किन्तु यह भी कहा कि "जाति को हमेशा वर्ग के रूप में मान्यता दी गई है।" इस तर्क के लिए उसने राजेन्दरन के प्राधिकार पर निर्भर किया कि जाति के आधार पर पिछड़े वर्गों का वर्गीकरण अनुच्छेद 15(4) की परिधि के अन्तर्गत है बशर्तेकि इन जातियों को सामाजिक और शैक्षणिक रूप से पिछड़ा दिखाया जाए। उसने भारतीय समाज में प्रचलित पिछड़ापन निर्धारित करने में "जाति" की प्रधानता पर संविधान के अनुच्छेद 340 के अन्तर्गत राष्ट्रपति द्वारा नियुक्त किया गया पिछड़ा वर्ग आयोग (काका कालेलकर आयोग) की रिपोर्ट का भी हवाला दिया। इस मामले में पिछड़े वर्गों की जिस सूची पर आक्षेप किया गया था वह राजेन्दरन के मामले में उल्लिखित सूची ही थी जहां कुछ जातियों का सामाजिक और शैक्षणिक रूप से पिछड़ापन होने का वर्गीकरण उनके द्वारा अपनाए गए व्यावसाय के आधार पर किया गया था। जैसा कि पहले कहा गया है राजेन्दरन का मामला इस मामले में विनिश्चय के लिए प्राधिकार के रूप में प्रस्तुत किया गया। न्यायालय ने आगे यह भी कहा कि अर्जीदारों ने यह प्रमाणित करने के अपने दायित्व का निर्वाह नहीं किया कि पिछड़े वर्गों के लिए आरक्षण अनुच्छेद 15(4) के अनुसार नहीं था।

वर्तमान मामले में पिछड़े वर्गों के उम्मीदवारों को सामान्य पूल में से लगभग 50 प्रतिशत स्थान दिए गए थे। इसलिए न्यायाधीश ने भी पिछड़े वर्गों की सामाजिक और शैक्षणिक[34] रूप से हुई प्रगति को ध्यान में रखते हुए उनकी सूची संशोधित करने की जरूरत पर जोर दिया।

पिछड़े वर्गों, अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जन जातियों के लिए 41 प्रतिशत आरक्षण अधिक नहीं माना गया।

सरदूल सिंह बनाम चिकित्सा कालेज[35] के मामले में अर्जीदारों ने जो उम्मीदवार थे और जिन्हें जम्मू तथा कश्मीर राज्य में चिकित्सा कॉलेजों में प्रवेश देने से इन्कार कर दिया गया था, कुछ प्रत्यर्थी उम्मीदवारों के प्रवेश को इस आधार पर चुनौती दी कि ऐसे प्रवेश संविधान के अनुच्छेद 14, 15 और 29 के अधीन अनुज्ञेय नहीं थे।

अनुसूचित जातियों और अन्य पिछड़े वर्गों का आरक्षण निम्न प्रकार से किया गया था :

(क) स्थायी निवासी अनुसूचित जातियां 5 प्रतिशत

(ख) लद्दाख जिले के स्थायी निवासी 2 प्रतिशत।

दूसरी बातों के अलावा इस पर विवाद किया गया कि लद्दाख से संबंधित व्यक्तियों या अनुसूचित जातियों के लिए किया गया आरक्षण भी उचित नहीं था। यह दलील नामंजूर कर दी गई क्योंकि अनुच्छेद 15(4) के अधीन राज्य को नागरिकों के सामाजिक और शैक्षणिक रूप से पिछड़े वर्गों या अनुसूचित जातियों के सदस्यों की प्रगति हेतु विशेष व्यवस्था करने के लिए स्पष्ट रूप से प्राधिकार दिए गए हैं। वर्तमान मामले में सरकार ने उस आधार सामग्री का उल्लेख किया था जिसके आधार पर वे निष्कर्ष पर पहुंचे कि लद्दाख जिले और अनुसूचित जातियों से संबंधित सदस्य नागरिकों के पिछड़े वर्ग थे। जिस सामग्री के आधार पर सरकारी अधिसूचना पारित की गई थी उसे चुनौती नहीं दी गई और न ही उस सामग्री को न्यायालय को संतोषजनक रूप में दिखाया गया था कि लद्दाख से आने वाले व्यक्ति पिछड़े नहीं थे। उच्च न्यायालय ने पी० राजेन्दरन बनाम मद्रास राज्य के मामले का आश्रय लिया जिसमें आरक्षण को इस आधार पर बहाल रखा गया क्योंकि कुछ उम्मीदवार उस विशेष जिले से संबंधित थे जो पिछड़ा हुआ था बशर्तेकि आरक्षण केवल जन्म स्थान के आधार पर न किया गया हो। इस संबंध में न्यायाधीश ने कहा कि लद्दाख, राज्य के जिलों में से केवल एक जिला था और उस क्षेत्र से संबंधित नागरिक सरकार द्वारा सामाजिक और शैक्षणिक रूप से पिछड़े घोषित किए गए थे और इसलिए वे भारत के संविधान के अनुच्छेद 15(4) द्वारा दिए गए संरक्षण के अन्तर्गत आते थे। इसलिए लद्दाख जिले के उम्मीदवारों और अनुसूचित जातियों के सदस्यों के लिए सरकार द्वारा किया गया आरक्षण विधिमान्य माना गया और उसे संविधान के अनुच्छेद 14, 15 या 29 का अतिक्रमण मान कर रद्द नहीं किया गया।

सागर के मामले में उच्चतम न्यायालय के विनिश्चय के परिणामस्वरूप आन्ध्र प्रदेश सरकार ने आंध्र प्रदेश राज्य में पिछड़े वर्गों के वर्गीकरण में अपनाए जाने वाले मापदंड का निर्धारण करने के लिए एक पिछड़े वर्ग आयोग का गठन किया। आयोग को पिछड़े वर्गों की सूची

---

[30] चित्रलेखा 1839 पर, सागर में 1383 पर उद्धृत।

[31] राजेन्दरन 1014 पर, सागर में 1383 पर उद्धृत।

[32] 1383 पर सागर।

[33] ए०आई०आर० 1971 एस०सी० 2303।

[34] 2310–11 पर पूर्वोक्त।

[35] ए०आई०आर० 1970 जम्मू तथा कश्मीर 45.

तैयार करने के बारे में विभिन्न मामलों का अन्वेषण और निर्धारण करने के लिए कहा गया ताकि पिछड़े वर्गों के लिए शिक्षा संस्थाओं में आरक्षण की व्यवस्था की जा सके और सरकारी सेवाओं के पदों पर भी उनकी नियुक्ति की जा सके। आयोग ने 1970 में सरकार को अपनी रिपोर्ट प्रस्तुत की और 92 वर्गों की सूची की सिफारिश की जो उनकी राय में सामाजिक और शैक्षणिक रूप से पिछड़े हुए थे और जिनके लिए आरक्षण किया जाना था। जहां तक सामाजिक पिछड़ेपन का संबंध है आयोग ने संबंधित व्यक्तियों द्वारा चलाए जा रहे व्यापार या अपनाए गए व्यवसाय और अन्य सहवद्ध मामलों के बारे में प्रश्नावली और व्यक्तिगत निरीक्षणों के माध्यम से व्यापक अध्ययन करने के बाद यह बताया कि जिस जाति या समुदाय ने परम्परागत रूप से गंदे या प्रतिष्ठाहीन व्यवसाय अपनाए हुए हैं केवल उस जाति या समुदाय से संबंधित व्यक्ति पिछड़े वर्गों के वर्गीकरण के अधीन लाए जा सकते हैं। आयोग ने विशेष रूप से वर्ग की सामान्य निर्धनता और उसके उन व्यवसायों का हवाला दिया है जिन व्यवसायों का स्वरूप घटिया या गंदा या प्रतिष्ठाहीन या अलाभकर माना जाता है और जिसमें कोई प्रभाव या अधिकार नहीं होता।

जहां तक शैक्षणिक पिछड़ेपन का संबंध है आयोग ने यह तथ्य ध्यान में रखा कि राज्य में X और XI श्रेणियों में औसत विद्यार्थी संख्या लगभग प्रति हजार 4.55 बनती थी। इस आधार पर आयोग ने यह निष्कर्ष निकाला कि उपरोक्त श्रेणियों में जिन समुदायों की विद्यार्थी संख्या राज्य की औसत से काफी नीचे थी उन्हें शैक्षणिक रूप से पिछड़ा माना जाएगा। आयोग ने पिछड़े वर्गों के लोगों के लिए 30 प्रतिशत स्थानों की सिफारिश की। आयोग की रिपोर्ट के आधार पर आन्ध्र प्रदेश सरकार ने आयोग द्वारा सुझाए गए निम्नलिखित मापदंड को स्वीकार किया:

(i) समग्र रूप से किसी वर्ग या समुदाय की सामान्य निर्धनता।

(ii) वर्ग के लोगों का व्यवसाय जिसका स्वरूप घटिया या गंदा या प्रतिष्ठाहीन और अलाभकर हो और जिसमें कोई प्रभाव या अधिकार न हो।

(iii) हिन्दुओं के संदर्भ में जाति।

(iv) शैक्षणिक पिछड़ापन।

राज्य सरकार ने सितम्बर, 1970 के अपने सरकारी आदेश संख्या 1793 शिक्षा द्वारा "पिछड़ा वर्ग आयोग" की रिपोर्ट के आधार पर, उसमें उल्लिखित पिछड़े वर्गों के लिए चिकित्सा कॉलेजों में 25 प्रतिशत स्थानों का आरक्षण किया। अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों के लिए क्रमशः 14 प्रतिशत और 4 प्रतिशत आरक्षण किया गया। अतः कुल आरक्षण 43 प्रतिशत था।

इस आदेश को आन्ध्र प्रदेश[36] के उच्च न्यायालय में चुनौती दी गई और उच्च न्यायालय ने उसे इस आधार पर अविधिमान्य कर दिया कि आयोग ने पिछड़े वर्गों के रूप में ग्रुपों का वर्गीकरण मुख्य रूप से जाति के आधार पर किया था जो कि उच्चतम न्यायालय द्वारा बालाजी के मामले में अपनाए गए सिद्धांत के विपरीत था। अपील करने पर उच्चतम न्यायालय ने न्यायमूर्ति वैधलिंगम के माध्यम से आन्ध्र प्रदेश राज्य बनाम बलराम[37] के मामले में किए गए उच्च न्यायालय के विनिश्चय को उलट दिया और आन्ध्र प्रदेश पिछड़ा वर्ग आयोग के सामाजिक और शैक्षणिक पिछड़ेपन के निर्धारण को बहाल रखा। उसने आयोग की मुख्य सिफारिशों का सर्वेक्षण किया और निर्णय दिया कि यदि कोई जाति सामाजिक और शैक्षणिक दृष्टि से पूर्णतया पिछड़ी हुई हो तो उस नाम विशेष की जाति को पिछड़े वर्गों में शामिल करना अनुच्छेद 15(4) का अतिक्रमण नहीं है। उसने यह भी कहा:

> यह भी नहीं भूलना चाहिए कि कोई जाति नागरिकों का एक वर्ग भी है और ऐसी जाति सामाजिक और शैक्षणिक दृष्टि से पिछड़ी हो सकती है। यदि आवश्यक आंकड़े इकट्ठे करने के बाद यह पता चले कि जाति समग्र रूप से सामाजिक और शैक्षणिक दृष्टि से पिछड़ी है तो हमारी राय में, इस प्रतिकूल तथ्य के होते हुए भी कि उपरोक्त ग्रुप में कुछ थोड़े से व्यक्ति सामाजिक और शैक्षणिक दोनों दृष्टियों से सामान्य औसत से ऊपर हैं, ऐसे व्यक्तियों के लिए किया गया आरक्षण बहाल रखा जाएगा।

इस तथ्य का खंडन नहीं किया जा सकता कि देश में ऐसी अनेक जातियां हैं जो सामाजिक और शैक्षणिक रूप से पिछड़ी हैं और इसलिए उनके हितों की सुरक्षा के लिए राज्य सरकार द्वारा अनुच्छेद 15(4) में उल्लिखित उचित व्यवस्था करनी होगी।[38] (जोर दिया गया)

न्यायालय ने सरकारी रोजगार में पिछड़े वर्गों के आरक्षण से संबंधित अनुच्छेद 16(4) की परिधि के बारे में विनोकी नाथ बनाम जम्मू और कश्मीर राज्य के पहले वाले मामले में दिए गए अपने विचार का अनुमोदन के साथ हवाला दिया।[39] उस मामले में न्यायालय ने यह निर्णय दिया कि किसी सम्पूर्ण जाति या समुदाय के सदस्य किसी निश्चित समय में महत्वपूर्ण सामाजिक, आर्थिक और शैक्षणिक मापदंडों के अनुसार पिछड़े हों और इस कारण से पिछड़े वर्गों के रूप में माने जा सकते हैं, लेकिन यह इसलिए नहीं होगा कि वे किसी जाति या समुदाय के सदस्य हैं बल्कि उनसे एक वर्ग बनता है। इसलिए यह मानते हुए कि पिछड़े वर्गों की सूची पूर्णतया जाति पर आधारित है यदि राज्य द्वारा प्रस्तुत की गई सामग्री और दिए गए कारणों से स्पष्ट हो कि सम्पूर्ण जाति सामाजिक और शैक्षणिक दृष्टि से पिछड़ी है, उसे पिछड़े वर्गों की सूची में शामिल करना असंवैधानिक नहीं है।

तथापि उत्तर प्रदेश के चिकित्सा कॉलेजों में पहाड़ी क्षेत्रों, उत्तराखंड और ग्रामीण क्षेत्रों के लिए आरक्षण से संबंधित उत्तर प्रदेश सरकार बनाम प्रदीप टंडन के मामले में[40] उच्चतम न्यायालय की ओर से मुख्य न्यायमूर्ति रे ने इस बात पर बल दिया कि सामाजिक और शैक्षणिक पिछड़ेपन का निर्धारण करने के प्रयोजन से वंश, धर्म या जाति जैसे भेदभाव के प्रतिषिद्ध आधारों का प्रयोग, अनुच्छेद 15(1) में उल्लिखित आधारों पर भेदभाव के प्रतिषेद्ध को प्रभावहीन कर देगा। अनुच्छेद 15(1) में इस प्रतिषेद्ध और अनुच्छेद 15(4) में वर्गों पर दिए गए जोर को देखते हुए "नागरिकों के सामाजिक और शैक्षणिक दृष्टि से पिछड़े वर्ग, जाति पर आधारित ग्रुपों से भिन्न ग्रुप हैं।" उन्होंने आगे यह भी कहा कि नागरिकों के वर्गों से अभिप्राय समान लक्षण वाले सजातीय लोगों के ग्रुप से है और जो कुछ समान ग्रुपों से पहचाने जा सकते हैं। नागरिकों के वर्ग की सजातीयता, सामाजिक और शैक्षणिक पिछड़ापन है। उन्होंने पिछड़ेपन में आर्थिक पहलू पर जोर दिया:—

> "पिछड़ेपन का अनुमान आर्थिक आधार पर किया जा सकता है क्योंकि प्रत्येक क्षेत्र की जनसंख्या जीवन के मानकों और अचल सम्पत्ति के बारे में अपनी-अपनी निर्धार्य संभावनाएं हैं। आर्थिक दृष्टि से नागरिकों के वही वर्ग पिछड़े हैं जो साधनों का प्रभावी उपयोग नहीं करते हैं।[41]"

---

36. डब्ल्यू० पी० संख्या 1970 का 6090, 1971 का 221 और 1971 का 543 तारीख 13-5-71 (आन्ध्र प्रदेश)।

37. ए०आई०आर० 1972 एस०सी० 1375।

38. 1395-1396 पर पूर्वोक्त।

39. ए०आई०आर० 1969 एस०सी०।

40. ए०आई०आर० 1975 एस०सी० 563।

41. 567 पर पूर्वोक्त।

इसके तथ्य ये थे: उत्तर प्रदेश के 6 चिकित्सा कॉलिजों में कुल मिला कर 758 स्थान थे। इनमें से 26 स्थान संघ सरकार के नामितों के लिए आवंटित किए गए थे। बकाया 732 स्थान सम्पूर्ण प्रि-मैडिकल सूची से भरे जाने थे। राज्य सरकार द्वारा जारी किए गए विभिन्न आदेशों के अनुसार कई स्थान विभिन्न वर्गों के लिए आरक्षित किए गए थे:

(i) महिला उम्मीदवार	20 प्रतिशत
(ii) ग्रामीण क्षेत्रों के उम्मीदवार	12 प्रतिशत
(iii) पहाड़ी क्षेत्रों के उम्मीदवार	3 प्रतिशत
(iv) उत्तराखंड मंडल के उम्मीदवार	3 प्रतिशत
(v) अनुसूचित जातियों के उम्मीदवार	7 प्रतिशत
(vi) ग्रामीण क्षेत्रों से अनुसूचित जातियों के उम्मीदवार और	3 प्रतिशत
(vii) अनुसूचित जन जातियों के उम्मीदवार	1 प्रतिशत
जोड़	49 प्रतिशत

परिणामस्वरूप, 368 स्थान सामान्य रहे जो कुल स्थानों का 51 प्रतिशत बनते हैं और वे खुले परीक्षण द्वारा भरे जाने थे।

इलाहाबाद उच्च न्यायालय में चुनौती देने पर, सुभाष चन्द्र बनाम उत्तर प्रदेश राज्य के मामले[42] में न्यायालय ने आरक्षणों को बहाल रखा।

ग्रामीण क्षेत्रों, पहाड़ी क्षेत्रों और उत्तराखंड मंडल के उम्मीदवारों के लिए आरक्षण के बारे में न्यायालय ने कहा कि इन क्षेत्रों के नागरिक, सामाजिक और शैक्षणिक दृष्टि से पिछड़े वर्ग से संबंधित है। 49 प्रतिशत आरक्षण अधिक नहीं माना गया। प्रदीप टंडन[43] के मामले में उच्चतम न्यायालय को अपील करने पर मुख्य न्यायमूर्ति रे ने उत्तर प्रदेश में पहाड़ी और उत्तराखंड क्षेत्रों के व्यक्तियों के लिए चिकित्सा कॉलेजों में आरक्षण को बहाल रखा। उन्होंने कहा कि संचार साधनों, तकनीकी विकास और शैक्षणिक सुविधाओं के अभाव के कारण इन दूरदराज और बिखरी हुई आबादी वाले क्षेत्रों में रहने वाले निर्धन और निरक्षर लोग पिछड़ गए हैं।

42. ए० आई० आर० 1973 इलाहाबाद 295 जिसका 27-10-1972 को फैसला हुआ। परन्तु ए० आई० आर० 1973 इलाहाबाद 592 (31-1-1973 को निर्णीत) में दलीप कुमार बनाम उत्तर प्रदेश सरकार के मामले में इलाहाबाद उच्च न्यायालय ने पहाड़ी क्षेत्रों और ग्रामीण क्षेत्रों के उम्मीदवारों के पक्ष में किए गए आरक्षण को मंसूख कर दिया। यद्यपि उत्तराखंड के उम्मीदवारों के पक्ष में आरक्षण करने में औचित्य था लेकिन यह बात उत्तराखंड और ग्रामीण क्षेत्रों के अलावा पहाड़ी क्षेत्रों के आरक्षण के बारे में नहीं कही जा सकती। स्पष्टतः, न्यायालय ने दलीप कुमार के मामले में, मलीश चन्दर के मामले में किए गए विनिश्चय का हवाला भी नहीं दिया जिसके कारण उच्चतम न्यायालय ने प्रदीप टंडन के मामले में निम्नलिखित कटु टिप्पणी की :

"न्यायिक औचित्य की दृष्टि से उसी उच्च न्यायालय के पहले विनिश्चय का हवाला देना वांछनीय है" 565 पर ए० आई० आर० 1975 एस० सी० 563।

43 उपर टिप्पणी 40।

तथापि मुख्य न्यायमूर्ति रे ने ग्रामीण क्षेत्रों के लिए चिकित्सा कॉलिजों में स्थानों का आरक्षण अविधिमान्य कर दिया। उसने अटार्नी जनरल की इस दलील का निराकरण किया कि निर्धनता सामाजिक पिछड़ेपन का निर्धारण करने में कई तत्वों में से एक तत्व है। उनका यह कथन कि ग्रामीण जनसंख्या निर्धन थी और शहरी जनसंख्या निर्धन नहीं थी, तथ्यों से सिद्ध नहीं किया गया था। उन्होंने कहा कि उत्तर प्रदेश की कुल जनसंख्या में 80 प्रतिशत ग्रामीण जनसंख्या थी जो स्वरूप में विभिन्न जातियों की थी और उनमें से सभी सामाजिक और शैक्षणिक दृष्टि से पिछड़े हुए नहीं थे। "जनसंख्या अपने आप में एक वर्ग नहीं हो सकती। ग्रामीण तत्व उसे एक वर्ग नहीं बनाता है[44]"। चूंकि ग्रामीण उम्मीदवारों ने कम अंक प्राप्त किए थे इसलिए यह तथ्य सामाजिक और शैक्षणिक दृष्टि से पिछड़ेपन का निर्धारण करने का विधिमान्य मापदंड हो सकता था। वर्तमान मामले में ग्रामीण क्षेत्रों से चिकित्सा कालेजों में 85 उम्मीदवारों का प्रवेश ग्रामीण क्षेत्रों में शिक्षा के उच्च स्तर का परिसाक्ष्य था। ग्रामीण क्षेत्रों में डाक्टरों की विशेष आवश्यकता भी इस बात की द्योतक नहीं थी कि ग्रामों में सभी व्यक्ति पिछड़े थे।

चूंकि ग्रामीण क्षेत्रों में जन्म स्थान का मापदंड, "मूल अहेना" बना दी गई थी इसलिए यह निर्णय दिया गया कि वर्गीकरण से अनुच्छेद 15(1) का अतिक्रमण हुआ है।

मुख्य न्यायमूर्ति रे ने यह भी निर्णय दिया कि यह प्रमाणित करने का दायित्व सरकार का था कि आरक्षण सामाजिक और शैक्षणिक रूप से पिछड़े वर्गों के लिए है। इससे राजेन्दरन और बलराम के मामलों में इस नियम का निराकरण था जिसमें अर्जीदारों को यह प्रमाणित करने के लिए कहा गया था कि पिछड़े ग्रुप के रूप में वर्गीकृत सम्पूर्ण जाति का ग्रुप पिछड़ा नहीं था, विशेषकर इन परिस्थितियों में यह प्रमाणित करना दुष्कर कार्य था जबकि राज्य ने उस मापदंड का उल्लेख नहीं किया था जो उसने सामाजिक और शैक्षणिक रूप से पिछड़े वर्गों के वर्गीकरण के लिए अपनाया था।

इस मामले में उच्चतम न्यायालय ने सुभाष चन्दर बनाम उत्तर प्रदेश राज्य[45] के मामले में उच्च न्यायालय के पहाड़ी क्षेत्रों और उत्तराखंड क्षेत्रों में आरक्षण संबंधी निर्णय को अंशतः बहाल रखा और ग्रामीण क्षेत्रों के संबंध में आरक्षण संबंधी निर्णय को अंशतः उलट दिया।

के० एस० जयश्री बनाम केरल राज्य[46] के मामले में उच्चतम न्यायालय का एक और निर्णय सामने आया है। यह मामला केरल सरकार द्वारा केरल पिछड़े वर्ग आयोग (कुमार पिल्लै आयोग) की सिफारिशें स्वीकार किए जाने से उत्पन्न हुआ था। यह आयोग 1964 में स्थापित किया गया था और इसने 1965 में अपनी रिपोर्ट प्रस्तुत कर दी थी। आयोग ने साधन एवं जाति/समुदाय की कसौटी (पिछड़े वर्गों में आय का मापदंड अपनाया जाना) को अपनाया और सिफारिश की कि केरल के जो लोग ऐसे परिवारों के सदस्य हैं जिनकी सभी स्रोतों से वार्षिक आय 42000/- रुपये से कम है और जो परिशिष्ट VIII में दी गई जाति या समुदायों से संबंधित हैं, वे पिछड़े वर्गों के अन्तर्गत आते हैं। केरल सरकार ने आयोग की सिफारिशें मान ली परन्तु वित्तीय सीमा को शुरू में 6000/- रु० और बाद में 10,000 रु० तक बढ़ा दिया। सरकार के इन आदेशों को केरल उच्च न्यायालय में चुनौती दी गई। शमीम बनाम मैडिकल कॉलेज,

44. ए०आई०आर० 1975 एस०सी० 563—568 पर।

45. ए०आई०आर० 1973 इलाहाबाद 295।

46. ए०आई०आर० 1976 एस०सी० 2381।

विवेनम्[47] के मामले में एकल न्यायाधीश ने यह निर्णय देते हुए सरकार के आदेश को रद्द कर दिया कि परिवारों का आर्थिक दर्जा चाहे कुछ भी हो पिछड़े वर्गों के सभी परिवार भेदभाव से संरक्षण प्राप्त करने के पात्र थे। क्योंकि "सामाजिक पिछड़ेपन का निर्धारण करने के लिए निर्धनता को मापदंड नहीं बनाया जा सकता"। 6,000 रु० की सीमा को भी मनमानी सीमा ठहराया गया। परन्तु अपील किए जाने पर उसी उच्च न्यायालय के खंड न्यायपीठ ने केरल राज्य बनाम कुष्णा कुमारी[48] के मामले में एकल न्यायपीठ के इस निर्णय को उलट दिया और सरकार के आदेश को बहाल रखा। उच्च न्यायालय ने यह निर्णय दिया कि आर्थिक पिछड़ापन सामाजिक तथा शैक्षणिक पिछड़ेपन में काफी भूमिका निभाता है। इसलिए निर्धनता या आर्थिक स्तर एक संगत कारण है। मुख्य न्यायमूर्ति नायर के विचार से

> वास्तविक प्रश्न यह है कि क्या ऐतिहासिक कारणों के परिणामस्वरूप उत्पन्न जातियों का शैक्षणिक पिछड़ापन शाश्वत रहना चाहिए और जातियों को समग्र रूप में सामाजिक और शैक्षणिक दृष्टि से पिछड़ा हुआ मान लिया जाए भले ही इन जातियों में एक समूह ऐसे लोगों का भी हो जो सामाजिक और शैक्षणिक दृष्टि से पिछड़ा न हो। क्या ऐसे समुदाय के सभी सदस्य हमेशा के लिए पिछड़े हुए रहने चाहिए ·····इसलिए रिपोर्ट के परिशिष्ट VIII में वर्णित समुदायों से सरकार के आदेश के कारण उन स्थानों में से ऐसा एक भी स्थान नहीं छिनता जो आयोग की इस रिपोर्ट को स्वीकार किए जाने से पहले उनके लिए आरक्षित किए गए थे। प्रतियोगिता तो जातियों के अपेक्षाकृत अधिक उन्नत और कम उन्नत वर्गों में है।

न्यायालय ने यह महसूस किया कि आयोग के पास यह निष्कर्ष निकालने के लिए सामग्री थी कि जातियों में जो लोग आर्थिक रूप से सम्पन्न थे वे सामाजिक दृष्टि से पिछड़े हुए नहीं थे। न्यायालय ने यह भी महसूस किया कि आयोग के पास मौजूद साक्ष्य की मात्रा पर गौर करना या इस विषय में आयोग के विचारों के स्थान पर अपने विचार रखना उस का काम नहीं है।

उच्चतम न्यायालय ने जयश्री बनाम केरल राज्य के मामले में[49] केरल उच्च न्यायालय के विनिश्चय को बहाल रखा। मुख्य न्यायमूर्ति ऐ ने यह निर्णय दिया कि न तो जाति और न ही निर्धनता सामाजिक पिछड़ेपन का एकमात्र निर्धारक कारण है। उन्होंने आदेश की विधिमान्यता को इस आधार पर बहाल रखा कि उसके द्वारा किया गया वर्गीकरण आय पर आधारित नहीं था बल्कि सामाजिक और शैक्षणिक पिछड़ेपन पर आधारित था। उन्होंने यह भी घोषित किया कि केवल निर्धनता पर आधारित वर्गीकरण तर्कसम्मत नहीं था।

वास्तव में वर्तमान मामले में वर्गीकरण, निर्धनता के आधार पर किया गया था। निर्धनता का मापदंड आय पर आधारित था। इस वर्गीकरण का प्रयोजन आयोग द्वारा सूची में दर्ज की गई पिछड़ी जातियों के विशेष आय सीमा के आधार पर अधिक समृद्ध और कम समृद्ध लोगों के समूह बनाना और अधिक समृद्ध ग्रुप को भेदभाव के प्रति संरक्षण देने से इंकार करना था। मुख्य न्यायमूर्ति नायर ने कुष्णा कुमारी के मामले में इस बात को स्पष्ट किया है:

> परिक्षण करने का प्रयोजन ऐसी जाति या समुदाय के सदस्यों को उन लोगों के साथ समान अवसर प्रदान करना है जो सामाजिक और आर्थिक दृष्टि से सोसायटी के उन्नत वर्ग माने जाते हैं। यदि इन जातियों/समुदायों में कोई ग्रुप सामाजिक, शैक्षणिक और आर्थिक दृष्टि से उन्नति कर सकता हो तो उनके लिए आरक्षण करना वस्तुतः उन जातियों/समुदायों में सामाजिक और शैक्षणिक दृष्टि से पिछड़े वर्गों के लोगों को समान अवसर प्राप्त करने से वंचित करना होगा।[50]

महाराष्ट्र राज्य में कुल जनसंख्या की तुलना में पिछड़े वर्गों, अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों की जनसंख्या के अनुपात के आधार पर चिकित्सा कॉलेजों में प्रवेश के लिए आरक्षण की मात्रा निर्धारित करने और एक उपग्रुप के रिक्त आरक्षित स्थानों को दूसरे ग्रुप के लिए अग्रेणीत करने के बारे में आदेशों को एस० जी० पंडित बनाम राज्य के मामले में चुनौती दी गई।[51]

महाराष्ट्र सरकार द्वारा राज्य के सरकारी चिकित्सा कॉलेजों में प्रवेश के लिए बनाए गए नियमों को अर्जीदार ने चुनौती दी। अर्जीदार ने पूना में बी० जे० मैडिकल कॉलेज में प्रवेश के लिए आवेदन किया और उसे नियमों के अनुसार प्रवेश देने से इन्कार कर दिया गया।

इस विषय में नियम ये थे :

मैडिकल कॉलिजों में प्रवेश, वर्ष में केवल एक बार, शैक्षिक-वर्ष के प्रारम्भ में दिया जाता है। भारत सरकार द्वारा नामित व्यक्तियों, तथा बी० जे० मैडिकल कालेज, पुणे और मिराज मैडिकल कालिज, मिराज, के स्थानों को छोड़कर, प्रत्येक मैडिकल कालिज में सभी स्थान उन विश्व विद्यालयों के विद्यार्थियों के लिए नियत होते हैं जिसके साथ मैडिकल कालेज-विशेष सम्बद्ध होता है।

नियम 4 (घ) में निम्नलिखित व्यवस्था है :—

प्रत्येक मैडिकल कालिज में आरक्षित स्थानों की प्रतिशतता नीचे लिखे अनुसार होगी :—

वर्ग	आरक्षण की प्रतिशतता
1. अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों से परिणत नव बौद्ध	13 प्रतिशत
2. अनुसूचित जन-जातियों, इनमें विनिर्दिष्ट क्षेत्रों के बाहर के व्यक्ति भी शामिल हैं	7 प्रतिशत
3. डिनोटीफाइड और खाना बदोश जन-जातियां	4 प्रतिशत
4. अन्य पिछड़े वर्ग	10 प्रतिशत

---

47 ए०आई०आर० 1976 केरल 54 परन्तु लैला चाके बनाम राज्य सरकार ए०आई०आर० 1967 केरल 124 का मामला भी देखें जिसमें कुमार पिल्लै आयोग द्वारा तैयार किए गए साधन एवं जाति के मापदंड को चुनौती दी गई थी। इस मामले में अर्जीदार एक नायर लड़का था जिसके पिता की आय 6,000 रु० प्रति वर्ष से कम थी। उसने आरक्षण को इस आधार पर चुनौती दी थी कि एझावा समुदाय के सदस्यों को, जिनके परिवारों की आय 6,000 रु० से कम थी, एक पिछड़ा वर्ग माना गया है। यदि पिछड़े वर्गों का वर्गीकरण करने के लिए आय ही मापदंड था तो वह आरक्षण के लिए हकदार था। उसका दावा अस्वीकार करते हुए न्यायमूर्ति मैथ्यू ने (जैसा कि वह उस समय था) निर्णय दिया कि पिछड़े वर्गों की पहचान करना जटिल कार्य है। इसके लिए बहुत से कारण होते हैं। आय ही केवल ऐसा आधार नहीं था जिसके कारण मामले पर निर्णय दिया गया था।

48. ए०आई०आर० 1976 केरल 54।

49. ए०आई०आर० 1976 एस०सी० 2381।

50. ए०आई०आर० 1976 केरल 60 पर 54।

51. ए०आई०आर० 1972 बंबई 243।

उपर्युक्त वर्गों में से किसी वर्ग के विद्यार्थियों के अभाव में, उस वर्ग के रिक्त स्थान, अन्य वर्गों को दे दिए जाने चाहिए, भले ही किसी एक वर्ग विशेष में विद्यार्थियों की प्रतिशतता, उस वर्ग-विशेष के लिए निर्धारित प्रतिशतता से बढ़ जाए—बशर्ते कि स्थानों की कुल प्रतिशतता, पिछड़े वर्गों के लिए कुल स्थानों के 34 प्रतिशत से अधिक न हो जाए ये स्थान आम जनता को केवल तभी दिए जाने चाहिए जबकि इन स्थानों को भरने के लिए उपर्युक्त वर्गों में से किसी भी वर्ग के विद्यार्थी उपलब्ध न हों। इस प्रतिशतता में इन विद्यार्थियों को भी शामिल किया जाना चाहिए जिन्हें मेरिट के आधार पर प्रवेश दिया गया हो। इन्हें इस प्रतिशतता के अतिरिक्त नहीं माना जाना चाहिए।

प्रार्थी द्वारा बताया गया एक आधार यह था कि राज्य की जनसंख्या की तुलना में इन जातियों के अनुपात के आधार पर, अनुसूचित जातियों तथा अनुसूचित जनजातियों तथा पिछड़े वर्गों के लिए किया गया आरक्षण, जैसा कि राज्य द्वारा प्रस्तुत किए गए शपथ-पत्र में बताया गया है, तर्क संगत नहीं था और, यह कि, जातियों के आधार पर अन्य पिछड़े वर्गों का वर्गीकरण अवैध था। उसने यह प्रतिविरोध भी किया कि नियम 4 (घ) का यह उपबन्ध, कि किसी वर्ग विशेष के विद्यार्थी उपलब्ध न होने की स्थिति में आरक्षण वाले वर्गों में से ही अन्य किसी भी वर्ग में रिक्त रहे स्थान, अनुसूचित जातियों, अनुसूचित जनजातियों और पिछड़े वर्गों को ही दिए जाने चाहिए, भी व्यवहार्य और तर्क-संगत नहीं था।

उच्च न्यायालय ने इनमें से किसी भी विचार को उचित नहीं माना। यह तो सम्भव हो सकता था कि स्थान आरक्षित करने के लिए कोई अन्य तरीका अपनाया जाता, लेकिन इससे यह नहीं कहा जा सकता कि अनुसूचित जातियों, अनुसूचित जनजातियों तथा अन्य पिछड़े वर्गों के स्थान आरक्षित करने के लिए, महाराष्ट्र सरकार द्वारा अपनाया गया, पिछली जनगणना पर आधारित जनसंख्या के अनुपात का आधार किसी भी प्रकार से तर्क-संगत नहीं था। अतः बालाजी के मामले पर निर्भर करते हुए न्यायालय ने, उस मामले के सिद्धान्तों की इस मामले पर लागू करते हुए, यह निर्णय लिया कि, मेडिकल कालिज में आरक्षित स्थानों का अनुपात निर्धारित करने में सरकार ने एक निष्पक्ष और न्यायोचित मान दण्ड अपनाया था।

प्रार्थी ने यह भी निवेदन किया कि राज्य की शेष आबादी का शिवाजी और पूना विश्वविद्यालय से कोई सम्बन्ध नहीं था, अतः शिवाजी और पूना विश्वविद्यालय के क्षेत्रों के मेडिकल कालिजों में स्थानों के आरक्षण का अनुपात निर्धारित करने के लिए, पूरे राज्य की कुल आबादी में इन जातियों के अनुपात को आधार मानना तर्क-संगत नहीं था। न्यायालय को इसमें कुछ भी गैर-तर्क-संगत नहीं लगा। पिछड़े वर्गों के लिए आरक्षण अनुच्छेद 15 (4) के अधीन स्वीकार किया गया था और शायद इस प्रकार के आरक्षण के लिए राज्य की कुल आबादी में पिछड़े वर्गों की आबादी के अनुपात से अच्छा कोई और आधार नहीं था। यह आशा करना तो बिलकुल ही गैर-तर्क-संगत होगा कि राज्य, इन दोनों विश्वविद्यालयों के क्षेत्रों में अथवा सारे राज्य के सभी विश्वविद्यालयों के क्षेत्रों में, केवल पिछड़े वर्गों की जनगणना अलग से करवाए। प्रार्थी का यह तर्क कि, राज्य की शेष आबादी को इन दोनों विश्वविद्यालयों के मेडिकल कालेजों के प्रवेशों के विषय में कोई रुचि नहीं थी, अस्वीकार करना पड़ा क्योंकि राज्य के सभी भागों में आरक्षण के विषय में एक समान नीति का अनुसरण करके महाराष्ट्र सरकार ने न्यायोचित कार्य ही किया है, और यदि सरकार ने आबादी के आधार पर एक ही नियम का पालन किया है तो उसने कोई ऐसा कार्य नहीं किया है जो तर्कहीन हो अथवा जो अनुच्छेद 14 या 15 से प्रभावित होता हो।

एक तर्क यह भी दिया गया कि इन जातियों के विद्यार्थियों के लिए स्थान आरक्षण इस लिए भी अनुपयोगी हो रहा था कि वे 40 प्रतिशत अंक प्राप्त करके भी प्रवेश के लिए आवेदन दे सकते थे जबकि अन्य विद्यार्थियों के लिए न्यूनतम 45 प्रतिशत अंक निर्धारित थे। इस प्रकार पिछड़े वर्गों के उन्नत करने के बजाए सरकार अन्य लोगों की अपेक्षा उन्हें कम उन्नत कर रही थी। इस तर्क में इस प्रयोजन पर ध्यान नहीं दिया गया जिसके लिए अनुच्छेद 15 (4) अधिनियमित किया गया था। पिछड़े वर्गों की दशा सुधारने का एक तरीका यह भी है कि जिन विद्यार्थियों के अंक कुछ कम भी आते हैं उन्हें भी मेडिकल कलिज में प्रवेश का पात्र मान लिया जाए और इसे इन जातियों की उन्नति का एक उपाय ही माना जाना चाहिए।

इसी प्रकार, प्रार्थी का यह तर्क भी कि किसी वर्ग विशेष के रिक्त स्थान, पिछड़े वर्गों के अन्य वर्गों को दे देना भी अव्यवहार्य है, उपयुक्त नहीं है क्योंकि नियम 4 (घ) बहुत व्यवहार्य, तर्क-सम्मत है और सहज लागू किया जा सकता है। इस नियम में उल्लिखित चार वर्ग, "नागरिकों में सामाजिक और शैक्षिक दृष्टि से पिछड़े हुए वर्ग" और "अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों हैं"। नियमानुसार इन चारों वर्गों के लिए एक-साथ, 34 प्रतिशत स्थान आरक्षित किए गए थे और इन्हीं 34 प्रतिशत स्थानों में से, चारों वर्गों में से किसी एक या अधिक वर्गों के लिए आरक्षित रिक्त स्थान भरने की ऐसी विशेष व्यवस्था की गई थी कि रिक्त रहे स्थान इन्हीं शेष वर्गों द्वारा भरे जाएं। ये चारों वर्ग ही, नागरिकों के सामाजिक और शैक्षिक दृष्टि से पिछड़े वर्ग है और इन्हें रही प्राथमिकता दी जानी थी। अतः यह व्यवस्था की गई कि रिक्त स्थानों को, इनके लिए आरक्षित स्थान से ही भरा जाए। इन चार वर्गों का उप-विभाजन स्पष्टतया इसीलिए ही किया गया था कि सामाजिक और शैक्षिक दृष्टि से पिछड़े हुए नागरिकों की एक-ही श्रेणी में आने वाले इन चारों वर्गों में आरक्षण आवंटित कर दिया जाए, ताकि एक वर्ग के अपेक्षाकृत प्रतिभावान विद्यार्थी अन्य वर्गों के विद्यार्थियों से विलग न रहें। यह संविधान के अनुच्छेद 15 (4) के अनुसार अनुमत था और अनुच्छेद 46 के अनुसार था जिसमें कि "राज्य से अपेक्षा की गई है कि वह जनता के कमजोर वर्गों, और खासतौर से अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों के शैक्षिक तथा आर्थिक हितों का संवर्द्धन विशेष सावधानी से करेगा"। अतः प्रार्थी इस आधार पर नियम 4 (घ) को चुनौती न दे सका कि प्रत्येक वर्ग के लिए स्थान आरक्षित करने के बाद, इन वर्गों के लाभ के लिए यह विशेष व्यवस्था और कर दी गई कि एक वर्ग के रिक्त स्थान दूसरे वर्ग को दे दिए जाए, या इस आधार पर कि इन चार वर्गों में से किसी एक के रिक्त स्थान मेरिट के आधार पर सभी विद्यार्थियों के लिए उपलब्ध हो जाएं और उन्हें पुनः उन्हीं वर्गों के विद्यार्थियों के लिए सुरक्षित न रखा जाए।

II आरक्षण की मात्रा कब अत्यधिक हो जाएगी

यह निश्चित करना मूलतः राज्य का कार्य है कि आरक्षण की मात्रा कितनी हो ? तथापि, यह अत्यधिक नहीं होनी चाहिए। तो फिर, इसकी सीमा क्या है ? बालाजी के मामले[52] में उच्चतम न्यायालय ने पिछड़े वर्गों, अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों के पक्ष में कुल 68 प्रतिशत आरक्षण को अस्वीकार करते हुए उचित ही कहा कि अनुच्छेद 15 (4) में परिकल्पित विशेष व्यवस्था युक्ति संगत सीमाओं के भीतर होनी चाहिए। समाज के कमजोर वर्गों के जिन हितों की रक्षा राज्य द्वारा की जानी है, उनका समन्जन सम्पूर्ण समाज के हितों के साथ किया जाना चाहिए। यद्यपि इन प्रतियोगी दावों का समन्जन करना जटिल कार्य है, लेकिन, यदि विशेष व्यवस्था करने के बहाने कोई राज्य वास्तव में सभी

[52] ए आई आर 1963 एस सी 649

उपलब्ध स्थान आरक्षित कर दे तो ·····इससे स्पष्टतः ही अनुच्छेद 15 (4) के उद्देश्य का हनन होगा। तो फिर, हम मामले में भी, हम निश्चित रूप से यह नहीं कह सकते कि उपयुक्त व्यवस्था का क्या हो सकता है। आमतौर पर और मोटे तौर पर यह कहा जा सकता है कि विशेष व्यवस्था 50 प्रतिशत से कम ही होनी चाहिए। पचास प्रतिशत से कम कितनी हो, यह प्रत्येक मामले में तत्सम्बन्धी मौजूद परिस्थितियों पर निर्भर होगा।

अतएव, न्यायालय ने यह निर्णय किया कि मैसूर सरकार के, रद्द किए गए आदेश में 68 प्रतिशत आरक्षण की व्यवस्था से अनुच्छेद 15 (4) का उल्लंघन होता है और—इसलिए यह "राज्य के प्रदत्त संवैधानिक शक्तियों के प्रति धोखा था"।

दया भाई चतुर भाई बनाम राज्य[54] के मामले में एक ऐसी योजना को चुनौती दी गई जिसके अनुसार नदी-तल भूमि की बिक्री के विषय में हरिजनों, आदिवासियों तथा पिछड़े वर्गों को अत्यधिक आरक्षण दिया गया था। इस प्रकार की भूमि की बिक्री सार्वजनिक नीलाम द्वारा किए जाने सम्बन्धी मौजूद आदेश को रद्द करते हुए एक सरकारी परिपत्र द्वारा अन्य लोगों को छोड़ कर, कुछ विशेष वर्गों के लोगों को नदी-तल भूमि की बिक्री को विनियमित किया गया था। इस भूमि की बिक्री में वरीयता क्रम नीचे लिखे अनुसार था :—

(i) इस गांव के ऐसे मूल कृषिकार जिनके पास 5 एकड़ से कम भूमि थी, इसमें हरिजनों, आदिवासियों तथा पिछड़े वर्ग के लोगों को प्राथमिकता दी गई थी।

(ii) बेट-भाथा भूमि के पास की भूमि के स्वामी जिनके पास 16 एकड़ से कम भूमि थी और कलैक्टर के विचार से उन्हें अपने परिवार के पालन पोषण के लिए अतिरिक्त भूमि की वस्तुतः आवश्यकता थी, परन्तु प्राथमिकता उपर्युक्त (1) में उल्लिखित अनुसार दी जानी थी।

(iii) हरिजनों, आदिवासियों और पिछड़े वर्गों के लोगों की सहकारी कृषि समितियां।

(iv) भूमि-हीन मजदूरों तथा छोटे-मोटे भू-स्वामियों की सहकारी कृषि समितियां।

(v) जल-भूमि नियमावली के अधीन प्राथमिकता वाले अन्य व्यक्ति।

गुजरात उच्च न्यायालय का मत था कि उपर्युक्त व्यवस्था का प्रभाव यह नहीं था कि उन सभी भूमिहीनों या कम-भूमिधारियों के भरण-पोषण के लिए आवश्यक भूमि की विशेष व्यवस्था की जाए जो कि सार्वजनिक नीलाम में धनी लोगों के मुकाबले बोली नहीं बोल सकते थे। यह पूरा वर्गीकरण दो मूल सिद्धांतों पर आधारित था—व्यक्ति की सहकारी समितियों द्वारा और हरिजन आदिवासियों तथा पिछड़े वर्ग के लोगों द्वारा विलग कर दिया जाएगा। यद्यपि राज्य को उपयुक्त अवसर दिया गया कि वह उन लोगों का अतिरिक्त हलफ़नामा प्रस्तुत करे जो पिछड़े वर्ग के लोग माने गए थे और जिनके हित के लिए यह आरक्षण करने की व्यवस्था की गई थी, लेकिन फिर भी राज्य ऐसी कोई सूची प्रस्तुत नहीं कर सका। अतः ऐसी कोई सामग्री न थी जिससे सरकार के सम्बद्ध संकल्प में माने गए "पिछड़े वर्ग के लोगों का" पता चलता। इसके अलावा हरिजनों, आदिवासियों तथा अन्य पिछड़े वर्ग के लोगों के लिए आरक्षण इतना अधिक था कि उससे वे मूल कृषिकार पृथक कर दिए जाते थे जिनके पास या तो कोई भूमि न थी अथवा 5 एकड़ से कम भूमि थी और जो अन्यथा पहले प्राथमिकता वर्ग में आ जाते लगभग कुल शत-प्रतिशत भूमि उन हरिजनों आदिवासियों और पिछड़े वर्ग के लोगों को मिल जाती। इस प्रकार यह आरक्षण, अनुच्छेद 15(4) को मानना परे हो जाता। यह सरकारी आदेश असंवैधानिक करार दिया गया।

अब्दुल लतीफ बनाम राज्य[55], के मामले में पटना उच्च न्यायालय ने गांजा-दुकानों के बन्दोबस्त में अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जन-जातियों के पक्ष में अत्यधिक आरक्षण को रद्द कर दिया था। तारीख 20 अगस्त, 1958 के आदेश द्वारा बिहार सरकार ने अनुसूचित जातियों तथा अनुसूचित जन जातियों के आवेदकों के पक्ष में गांजा-दुकानों से बन्दोबस्त के लिए निम्नलिखित मार्ग-दर्शक सिद्धांत जारी किए थे।

(i) समाज कल्याण विभाग को सूचना दी जाए कि वह अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जन-जातियों में इसका पर्याप्त प्रचार करे।

(ii) जब आबकारी-दुकान के लिए कई उम्मीदवार हों और उनमें से एक व्यक्ति अनुसूचित जाति या अनुसूचित जन जाति का हो जो कि उपयुक्त हो, तो बन्दोबस्त लाट द्वारा नहीं किया जाना चाहिए बल्कि उस आवेदक को ही दुकान दे दी जानी चाहिए।

(iii) यदि अनुसूचित जाति या अनुसूचित जन जाति के एक से अधिक उपयुक्त उम्मीदवार हों तो लाट उन्हीं उपयुक्त उम्मीदवारों में की जानी चाहिए और उनमें सफल व्यक्ति को दुकान दे दी जानी चाहिए।

(iv) इस विषय में बहुत सावधानी पूर्वक विचार किए बैगर, अनुसूचित जाति और अनुसूचित जन-जाति के उम्मीदवार को रद्द नहीं किया जाना चाहिए।

प्रार्थी, जो कि कुल 39 आवेदकों में से एक था, का आवेदन रद्द कर दिया गया था और उसने इन मार्ग-दर्शन सिद्धांतों के आदेश को रद्द करने के लिए पटना उच्च न्यायालय में याचिका के लिए आवेदन किया था।

न्यायालय का मत था कि अनुच्छेद 15(4) कोई स्वतंत्र या मूल अधिनियमन न होकर अनुच्छेद 15(1) के अधीन मुख्य गारंटी के लिए अपवाद या योग्यता थी। अतः अनुच्छेद 15(4) की व्याख्या इस प्रकार करना संभव न था कि अनुच्छेद 15(1) के अंतर्गत दी गई गारंटी नष्ट हो जाय या समाप्त हो जाय। अनुच्छेद 15(4) में विशेष व्यवस्था करने के लिए इसलिए प्राधिकृत किया गया था कि ऐसा करने से समूचे समाज के कमजोर वर्गों की उन्नति में वृद्धि करने से उस समूचे समाज का ही हित साधन होता है।

सरकार के इस आदेश का निबल परिणाम यह था कि अनुसूचित जाति या अनुसूचित जन जाति का एक भी उम्मीदवार होने की स्थिति में अन्य सभी जातियों के उम्मीदवार हटा दिए जाते थे। इसका आशय था शत-प्रतिशत आरक्षण जो कि अनुच्छेद 15(4) के अनुरूप न था।

III पिछड़े वर्गों में पिछड़ेपन की कोई श्रेणी नहीं

बालाजी[56] के मामले में यह प्रश्न निर्णय के लिए उपस्थित हुआ कि क्या संवैधानिक रूप से यह अनुमत है कि पारस्परिक पिछड़ेपन के आधार पर पिछड़े वर्गों को उप-वर्गों में वर्गीकृत किया जाए। उस मामले में मैसूर सरकार के 1962 के आदेश द्वारा पिछड़े वर्गों को दो उप वर्गों में विभाजित कर दिया गया था, ये थे :

(i) पिछड़े वर्ग, तथा

53. 66 ज. क अनुसार

54. 11 गुजरात एल० आर० 386 (1970)

55. ए० आई० आर० 1964, पटना 393.

56 ए० आई० आर० 1963 एस सी 649.

(ii) अधिक पिछड़े वर्गों। पिछड़े वर्गों के लिए निश्चित 50 प्रतिशत कोटे में से पिछड़े वर्गों के लिए 28 प्रतिशत और अधिक पिछड़े वर्गों के लिए 22 प्रतिशत निश्चित किया गया था। उच्चतम न्यायालय ने यह निर्णय लिया कि पिछड़े वर्गों में इस प्रकार का उप-वर्गीकरण अनुच्छेद 15(4) के अंतर्गत गैर सांविधानिक था। वस्तुतः अनुच्छेद 15(4) में वास्तव में पिछड़े वर्गों के लिए ही व्यवस्था की गई है। पिछड़े वर्गों के भी दो वर्ग बना कर उस आदेश में वस्तुतः ऐसी युक्ति निकाली गई थी जिसके अनुसार उन सभी वर्गों का लाभ हो जो राज्य के सबसे अधिक उन्नत वर्गों की अपेक्षा कम उन्नत थे। इस आदेश के अनुसार जो तरीका अपनाया गया उसका परिणाम यह हुआ कि राज्य की लगभग 90 प्रतिशत जनता पिछड़ा वर्गमान मान ली गई। यह मामला इस तर्क के लिए प्रधिकार है कि पिछड़ेपन का संकल्पना इस अर्थ में सापेक्ष नहीं है कि सबसे अधिक उन्नत वर्गों की तुलना में जो वर्ग पिछड़े हैं उन्हें इसमें शामिल कर लिया जाय।

रामकृष्ण सिंह बनाम मैसूर राज्य[57] (बालाजी-पूर्व निर्णय) के मामले में मैसूर उच्च न्यायालय ने यह निर्णय लिया कि राज्य की 95 प्रतिशत जनता को पिछड़े वर्ग में शामिल करने संबंधी सूची संविधान के प्रति "छोटा" थी क्योंकि इसमें उन जातियों को छोड़ दिया गया था जो आबादी का 5 प्रतिशत थी। यह पिछड़े वर्गों के लिए व्यवस्था की बजाय आबादी की छोड़ दी गई जातियों के प्रति भेद भाव था। इसके अलावा, यह एक ऐसी व्यवस्था थी जो कि सामाजिक और शैक्षिक दृष्टि से पिछड़े वर्गों के लिए नहीं, बल्कि सबसे अधिक उन्नत वर्गों की तुलना में जो वर्ग पिछड़े हुए थे उनके लिए थी। अनुच्छेद 15(4) के अंतर्गत यह वांछनीय नहीं था।

पिछड़े वर्ग अन्य लोगों के साथ प्रतियोगी हों इसमें मनाही नहीं

बी० रघुरमुलु बनाम आन्ध्र प्रदेश राज्य[58] के मामले में (बालाजी-पूर्व निर्णय) पिछड़े वर्ग के आवेदकों ने मेडिकल कालेज में प्रवेश के लिए आवेदन किया था। उनका साक्षात्कार हुआ था किन्तु उन्हें इस आधार पर चयन नहीं किया था कि पिछड़े वर्गों के लिए कुल आवंटित अधिकतम 15 स्थान, पिछड़े वर्ग के उन अन्य आवेदकों द्वारा पूरे हो चुके थे जिन्हें प्रार्थियों में से अधिक अंक प्राप्त हुए थे, हांलकि इन दोनों आवेदकों को, आम प्रतियोगियों में से चुने गए दो उम्मीदवारों से भी अधिक अंक प्राप्त हुए थे। इन दो उम्मीदवारों ने उनके चयन को इसलिए चुनौती दी कि उससे अनुच्छेद 15 और 29 (2) का उल्लंघन होता है।

मुख्य न्यायमूर्ति के० सुब्बाराव (उस समय वही थे) ने पिछड़े वर्गों के लिए अधिकतम प्रतिशतता के आधार पर आरक्षण इस कारण अवि-धिमान्य घोषित कर दिया कि इस प्रकार की व्यवस्था पिछड़े वर्गों की उन्नति में सहायक नहीं होगी। दूसरी ओर, ऊपर, उल्लिखित स्थिति के अनुसार यदि अधिकतम कोटा निश्चित कर दिया गया तो इससे उनकी उन्नति में बाधा पड़ेगी क्योंकि उन वर्गों के जो विद्यार्थी आम स्थानों के लिए प्रतियोगी विद्यार्थियों से अधिक प्राप्त कर लेते हैं और अपने के वर्गों के विद्यार्थियों से कम अंक प्राप्त करते हैं, उन्हें स्थान प्राप्त नहीं होंगे। इस सीमा तक यह सरकारी आदेश, सरकार को खंड (4) के अधीन प्रदत्त शक्तियों से अधिक हो जाएगा और इसीलिए नागरिकों के मूल अधिकारों को नहीं दिया जाएगा, चाहे वे पिछड़े वर्ग के हों अथवा नहीं।

न्यायालय ने सुझाव दिया कि "अधिकतम 15 प्रतिशत" शब्दों के स्थान पर "न्यूनतम 15 प्रतिशत" करके, इस नियम को अभिशोधित कर दिया जाए।

पी० सुधर्शन बनाम आन्ध्र प्रदेश राज्य[59] (बालाजी-पूर्व निर्णय) के मामले में, जिसमें कि रघुरमुलु के मामले जैसे ही तथ्य थे, मुख्य न्यायमूर्ति सुब्बा राव ने, इस प्रकार के सरकारी आदेश को अनुच्छेद 29(2) का उल्लंघनकारी होने के कारण अविधिमान्य करार देते हुए बताया कि नियम इस प्रकार का होना चाहिए कि उससे पिछड़े वर्ग के विद्यार्थियों के हितों की रक्षा की जा सके और साथ-ही साथ, अन्य जातियों के विद्यार्थियों के हितों की हानि भी न हो। न्यायाधीश ने सुझाव दिया कि इस उद्देश्य की प्राप्ति, सभी उम्मीदवारों को एक साथ मिला कर और पिछड़े वर्गों के विद्यार्थियों के लिए न्यूनतम स्थानों की गारंटी देकर, की जा सकती है। उदाहरणार्थ, यदि किसी मेडिकल कालेज में 100 आवेदकों को प्रवेश दिया जाना है तो उन्हें मेरिट के क्रम में व्यवस्थित कर लिया जाएगा और फिर, अगर पिछड़े वर्गों के 15 प्रतिशत से भी अधिक उम्मी-दवार केवल मेरिट के ही आधार पर चयन कर लिए जाते हैं तो उन्हें चयन कर लिया जाएगा। यदि उनकी संख्या इससे कम हो तो उनका चयन, उनमें ही परस्पर मेरिट के आधार पर चयन करके उनकी संख्या पूरी कर ली जाएगी, भले ही उन्होंने अन्य जातियों के विद्यार्थियों से कम अंक प्राप्त किए हों। इस प्रक्रिया से पिछड़े वर्ग के विद्यार्थियों को बचाया जा सकेगा और उन्नत विद्यार्थियों के प्रति कोई अन्याय भी न होगा।

रामकृष्ण सिंह बनाम मैसूर राज्य[60] (बालाजी-पूर्व निर्णय) के मामले में, मैसूर सरकार के, ता० 14 मई, 1959 और 22 जुलाई, 1959 के दो आदेशों की चुनौती दी गई थी जिनमें कि पिछड़े वर्गों की सूची और व्यावसायिक कालेजों में प्रवेश के लिए उनके आरक्षण का उल्लेख किया गया था। पिछड़े वर्गों की सूची में राज्य की आबादी के 95 प्रतिशत भाग को शामिल किया गया था और ब्राह्मण, बनियों, कायस्थों के अलावा सभी हिन्दू समुदायों तथा जातियों और एंग्लो-इंडियनों तथा पारसियों के अलावा राज्य की सभी जातियों को इस सूची में शामिल किया गया था।

इन दो आदेशों के अनुसार 20 प्रतिशत स्थान अनुसूचित जाति तथा अनुसूचित जन-जातियों के लिए, 45 प्रतिशत सामाजिक तथा शैक्षिक दृष्टि से पिछड़े वर्गों के लिए आरक्षित थे और शेष 35 प्रतिशत स्थान मेरिट के आधार पर भरे जाने थे।

तारीख, 15 जुलाई, 1959 के आदेश में, सूचीकृत पिछड़े वर्गों को कुछ वर्गों में पुनः उप-विभाजित किया गया था और स्थान आरक्षण के लिए अलग-अलग प्रतिशतताएं निश्चित कर दी गई थीं। इसका निबल प्रभाव यह हुआ कि प्रत्येक उप-वर्ग के व्यक्ति केवल अपने वर्ग के लिए आरक्षित स्थानों के लिए ही प्रतियोगी हो सकते और पिछड़े वर्गों के लिए आरक्षित शेष स्थानों के लिए पात्र नहीं थे। दूसरे शब्दों में, उन्हें इस बात से रोक दिया था कि वे शेष स्थानों के लिए, आदेश में सूचीकृत पिछड़े वर्गों के सदस्यों के साथ खुली प्रतियोगिता में भाग ले सकें।

न्यायमूर्ति एस० आर० गुहा के माध्यम से मैसूर उच्च न्यायालय (अब कर्नाटक उच्च न्यायालय) ने निर्णय लिया कि सामाजिक और शैक्षिक दृष्टि से पिछड़े वर्गों का निर्धारण जाति के आधार पर किया जा सकता है। अन्य आधार, जैसे, भौगोलिक या व्यावसायिक सामाजिक और शैक्षिक रूप से पिछड़े वर्गों के निर्धारण के लिए अपनाए जा सकते हैं।

न्यायालय का मत था कि, इससे जैसा कि अनुच्छेद 15(4) में व्यवस्था की गई है कि राज्य के नागरिकों को अनुच्छेद 15(1) तथा 29 (2) द्वारा प्रदत्त मूल अधिकारों का न्यूनन किया जा सकता है। यदि विचारा-धीन, आरक्षण, अनुच्छेद 15(4) में दिए गए उपबन्धों द्वारा न्यायोचित नहीं ठहराया जा सकता, तो उसे नागरिकों के मूल-अधिकारों के उल्लंघन के रूप में समाप्त किया जा सकता था। न्यायालय ने, अनुमोदन द्वारा, रघुर-

57 ए० आई० आर० 1960 मैसूर 338—इस मामले पर विस्तृत रूप से विचार किया गया है—नीचे देखिए

58. ए० आई० आर० 1958 आन्ध्र प्रदेश 129

59. ए० आई० आर० 1968, आन्ध्र प्रदेश 569

60. ए० आई० आर० 1960, मैसूर 338

मूल, बनाम आन्ध्र प्रदेश राज्य[91] तथा सुदर्शन बनाम आन्ध्र प्रदेश राज्य[92] के मामलों के निर्णयों का उदाहरण दिया।

न्यायालय ने इस मामले में सामाजिक और शैक्षिक दृष्टि से पिछड़े वर्गों का वर्गीकरण करने के लिए अपनाए गए सिद्धांतों को भी अस्वीकार किया। वस्तुतः 1969 में पिछड़े वर्गों का निर्धारण करते समय, 1941 की जनगणना को आधार माना गया था। न्यायालय की राय में, 1941 से हुए बहुत से परिवर्तनों को ध्यान में रखते हुए, इसे न्यायोचित नहीं माना गया। शैक्षिक पिछड़ेपन के वर्गीकरण के लिए पुराने मैसूर राज्य के अन्तर्गत आने वाले क्षेत्र के लिए राज्य द्वारा अपनाया गया अंग्रेजी-साक्षरता के मानदण्ड को, न्यायालय ने अमान्य कर दिया क्योंकि यह पूरे नए मैसूर राज्य के लिए स्वीकार्य नहीं था। इसके अलावा राज्य द्वारा उस आधार का कोई संकेत नहीं दिया गया था जिसके अनुसार जातियों के सामाजिक पिछड़ेपन का निर्धारण किया गया था। आदेशों के अधीन वर्गीकृत वर्गों को सामाजिक और शैक्षिक दोनों ही, दृष्टि से पिछड़ा हुआ होना चाहिए इसके अलावा, सूचीकृत पिछड़े वर्गों का जाति की जन-संख्या के आधार उप-वर्गों में विभाजन, और प्रत्येक वर्ग के लिए स्थानों के आरक्षण की प्रतिशतता विनिर्दिष्ट किया जाना, इसलिए असांवैधानिक माना गया क्योंकि प्रत्येक उप-वर्ग के व्यक्ति केवल अपने ही वर्ग के लिए आरक्षित स्थानों के लिए प्रतियोगी हो सकता था और पिछड़े वर्गों के लिए शेष आरक्षित स्थानों के लिए पात्र नहीं हो सकता था। इस प्रकार, इस अधिसूचना द्वारा पिछड़े वर्गों का हित-साधन करने के बजाए उनके मूल अधिकारों का हनन किया गया जो कि अनुच्छेद 15(4) के अधीन मान्य नहीं था।

एस० ए० पार्थ बनाम मैसूर राज्य[93] के मामले में मैसूर सरकार के उस आदेश को चुनौती दी गई जिसमें राज्य में सामाजिक और शैक्षिक दृष्टि से पिछड़े वर्गों के निर्धारण के आधार के विषय में डा० नागेन गौडा समिति की अन्तरिम रिपोर्ट के आधार पर तकनीकी और व्यावसायिक संस्थानों में प्रवेश के लिए आरक्षण व्यवस्था की गई थी। सरकार ने पिछड़े वर्गों के लिए 22 प्रतिशत, अनुसूचित जातियों के लिए 15 प्रतिशत, अनुसूचित जनजातियों के लिए 3 प्रतिशत आरक्षण निश्चित किया था। शेष 60 प्रतिशत का चयन खुली प्रतियोगिता पर केवल मेरिट के अधार पर लिया जाना था। यदि अनुसूचित जाति या अनुजनजाति के लिए आरक्षित स्थान रिक्त रह जाता तो उसे अन्य पिछड़े वर्ग के उम्मीदवार द्वारा भरा जाना था।

जहां तक अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जन-जातियों के लिए किए गए आरक्षण में से रिक्त स्थानों को पिछड़े वर्गों के हित में अन्तरित करने का प्रश्न है, इसको वैधता के विषय में न्यायालय ने कहा कि इसकी जांच संविधान के अनुच्छेद 15(1) और 29(2) के मूल अधिकारों को ध्यान में रखते हुए की जाएगी।

न्यायालय का विचार था कि जब अनुसूचित जाति या अनुसूचित जन जातियों या अन्य पिछड़े वर्गों के पक्ष में एक निश्चित, प्रतिशतता का आरक्षण कर दिया गया है तो, फिर वे अपने पिछड़ेपन के आधार पर आरक्षण प्रतिशतता में शामिल स्थानों से अधिक की मांग नहीं कर सकते। उप-विभाजन के विषय में, दोनों वर्गों, अर्थात्, पिछड़े वर्ग और उन्नत वर्ग के मूल अधिकारों की दृष्टि से आपत्ति की जा सकती थी। आरक्षण के हकदार वर्ग के व्यक्ति को आम-वर्ग में प्रतियोगिता से रोकने से उसके मूल अधिकार का हनन होता है। उसे आरक्षित वर्ग और आम-वर्ग दोनों में अलग-अलग प्रतियोगी होने की अनुमति देने से, आरक्षित वर्ग की सुरक्षा के लिए अनुमत सांवधानिक सीमाओं से बाहर, आय वर्ग के मूल अधिकारों का उल्लंघन होता है। अतएव, सांवैधानिक रूप से सही अथवा उपयुक्त स्थानों की प्रतिशतता की निश्चित संख्या में आरक्षण उप-विभाजन के रूप में नहीं होना चाहिए बल्कि नागरिकों के सभी वर्गों में आम-प्रतियोगिता के दौरान गारंटीकृत न्यूनतम के स्वरूप में होना चाहिए।

अनुसूचित जाति और अनुसूचित जन जातियों के रिक्त स्थानों को अन्य पिछड़े वर्गों को अन्तरित करने के विषय में न्यायालय ने कहा कि ये तीनों श्रेणियां अलग-अलग वर्गों की हैं जिनका वर्गीकरण विभिन्न आधारों पर आधारित है और अन्य पिछड़े वर्गों का वर्गीकरण समय-समय पर और उनके पिछड़ेपन के प्रकार के आधार पर बदल सकता है। अतएव, यह निर्णय किया गया कि प्रतिवादित आदेश के अधीन, अन्य पिछड़े वर्गों के लिए 22 प्रतिशत निर्धारित सुरक्षित स्थानों से अधिक संख्या में, खुली प्रतियोगिता के अलावा, रिक्त स्थान नियत करना, अन्य नागरिकों के मूल अधिकारों पर गैर-तर्क संगत दबाव था और इसलिए संविधान के विरुद्ध था।

निष्कर्ष

न्यायिक निर्णयों के विश्लेषण के आधार पर प्राप्त निष्कर्ष

1. अनुच्छेद 15(4) में, अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जन जातियों के साथ सामाजिक और शैक्षिक दृष्टि से पिछड़े वर्गों के सान्निध्य से तथा अनुच्छेद 338(3) के इस उपबन्ध के कारण कि अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जन-जातियों के संदर्भ अर्थ में उन पिछड़े वर्गों को शामिल माना जाना चाहिए जिन्हें कि राष्ट्रपति अनुच्छेद 340 (1) के अधीन नियुक्त किए गए आयोग की रिपोर्ट प्राप्त करने पर, आदेश द्वारा विनिर्दिष्ट करे, इससे यह पता चलता है कि अपने पिछड़े पन के मामले में ये जातियां अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जन जातियों के तुल्य हैं।

2. पिछड़े वर्गों की संकल्पना इस अर्थ में तापेक्ष नहीं है कि ऐसा कोई भी वर्ग, जो कि सबसे अधिक उन्नत वर्ग से पिछड़ा हुआ है, उसे इस वर्ग में शामिल कर लिया जाना चाहिए अतः पिछड़ा वर्ग और "अधिक पिछड़ा वर्ग" के रूप में पिछड़े वर्ग का विभाजन असांवैधानिक है।

3. पिछड़ापन, सामाजिक और शैक्षिक दोनों दृष्टि से होना चाहिए न कि सिर्फ सामाजिक या शैक्षिक में से किसी एक दृष्टि से।

4. अनुच्छेद 15(4) में पिछड़ा वर्ग का सन्दर्भ दिया गया है, न कि पिछड़ी जाति का। जिन समुदायों की कोई जाति नहीं है, उनके विषय में जाति का मान-दण्ड टूट जाएगा। इसमें सन्देह नहीं कि वर्तमान भारतीय समाज में, सामाजिक पिछड़ेपन का निर्धारण करने के विषय में जाति एक सम्बद्ध तथ्य है, लेकिन केवल यही पूर्ण या सर्वोच्च मान-दण्ड नहीं है। उच्चतम न्यायालय के अन्तिम निर्णय (उत्तर प्रदेश राज्य बनाम प्रदीप टन्डन) की दृष्टि से जाति, वर्ग का समानार्थी नहीं है। इस मामले में बालाजी वाले मामले की पुष्टि की गई है। नागरिकों के सामाजिक और शैक्षिक दृष्टि से पिछड़े वर्ग वे नहीं है जो जाति पर आधारित हैं। जिन नागरिक श्रेणियों को लोगों का समान-वर्गी वर्ग माना जाता है उनके कुछ एक जैसी विशेषताएं हैं जिन्हें कि एक जैसे गुणों के आधार पर पहचाना जा सकता है। इस वर्ग के नागरिकों की समानता सामाजिक और शैक्षिक पिछड़ापन है।

अन्य सम्बद्ध तथ्यों पर ध्यान दिए बगैर, केवल जाति के आधार पर वर्गीकरण, अनुच्छेद 15(4) के अधीन अनुमत नहीं है। तथापि यदि कोई जाति पूरे तौर से सामाजिक और शैक्षिक दृष्टि से पिछड़ी है तो उसके जाति-नाम से उसे पिछड़े वर्गों में शामिल करने में अनुच्छेद 15(4) का उल्लंघन नहीं होता [देखिए राजेन्द्रन बनाम बलराम का मामला] इस तथ्य को प्रकट करने के लिए राज्य के पास पर्याप्त आंकड़े होने चाहिए। वस्तुतः यह सिद्ध करना राज्य का दायित्व है कि पिछड़े वर्गों के वर्गीकरण के लिए जो आधार उसने अपनाया है, वह सांवैधानिक रूप से अनुमत है।

---

91. उपर्युक्त टिप्पणी 3
92. उपर्युक्त टिप्पणी 4
93. ए० आई० आर० 1961 मैसूर 220

5. सामाजिक पिछड़ेपन अन्तिम विश्लेषण पर काफी हद तक गरीबी का ही परिणाम होता है सामाजिक पिछड़ापन, जो कि गरीबी का परिणाम है, गरीबों के जाति-पाति के भेद-भाव के कारण और भी अधिक विरूपित हो जाएगा। इससे केवल यही तथ्य निकलता है कि पिछड़ेपन के निर्धारण में जाति और गरीबी दोनों का ही औचित्य है।

6. कुछ वर्गों द्वारा अपनाए गए व्यवसाय, जिन्हें हेय या गंदा समझा जाता है, तथा रहने की जगह, भी सामाजिक पिछड़ेपन का कारण हो सकती है।

7. जनता के सामाजिक और शैक्षिक दृष्टि से पिछड़े वर्गों में वास्तव में जरूरत मंद लोगों को ही आरक्षण का लाभ मिल सके, इसके लिए परिवार (अर्थात् नैसर्गिक परिवार) की आय-सीमा निर्धारित करना वैध है। साधन तथा जाति/समुदाय का मानदण्ड वैध है।

8. पूरी ग्राम्य आबादी, सामाजिक तथा शैक्षिक दृष्टि से पिछड़ी नहीं मानी जा सकती। लेकिन पिछड़े पहाड़ी इलाकों की आबादी पिछड़े वर्ग में आ जाती है।

9. सामाजिक और शैक्षिक दृष्टि से पिछड़े वर्ग के वर्गीकरण के लिए राज्य के बहुत पुराने सामाजिक आर्थिक आंकड़ों पर निर्भर करना न्यायालयों द्वारा स्वीकार नहीं किया गया है।

10. व्यावसायिक संस्थानों में प्रवेश के लिए आरक्षण के प्रयोजन से राज्य की कुल आबादी की तुलना में पिछड़े वर्ग की आबादी का अनुपात वैध माना गया है।

11. किसी वर्ग का पिछड़े वर्ग में शामिल किया जाना, अनंत काल तक के लिए नहीं होना चाहिए, अन्यथा आरक्षण का प्रयोजन ही समाप्त हो जाएगा अतः इस सूची की समीक्षा राज्य द्वारा समय-समय पर की जानी चाहिए।

12. आरक्षण कितनी मात्रा में हो, यह निर्धारित करना मूलतः राज्य का कार्य है। तथापि, यह बहुत अधिक मात्रा में नहीं होना चाहिए। बालाजी के मामले में 68 प्रतिशत आरक्षण अभिनय कर दिया गया था क्योंकि वह अनुच्छेद 15(4) के विशेष उपबन्ध की संकल्पना के विपरीत था। बालाजी के मामले में यह कहा गया था कि "मोटे तौर पर विशेष व्यवस्था 50 प्रतिशत से कम होनी चाहिए। पचास प्रतिशत से कितनी कम हो, यह उस राज्य में मौजूद सम्बद्ध परिस्थितियों पर निर्भर होगा।"

13. समुदाय के प्रति 1,000 व्यक्तियों में हाई स्कूल की अंतिम दो तीन कक्षाओं में विद्यार्थियों की संख्या के राज्य औसत के आधार पर निर्धारित शैक्षिक पिछड़ापन वैध माना गया है। तथापि, शैक्षिक दृष्टि से पिछड़ा माना जाने वाला वर्ग, राज्य के औसत से काफी या बहुत अधिक नीचे होना चाहिए, उदाहरणार्थ, राज्य के औसत से 50 प्रतिशत से कम को स्पष्टतया पिछड़ा माना जाएगा।

14. पिछड़े इलाकों के लिए आरक्षण वैध माना जा सकता है, जिन मामलों पर ऊपर विचार किया गया है, उनके अलावा, अनुच्छेद 16(4) के अधीन विचार किए गए जानकी प्रसाद के मामले पर भी ध्यान दिया जा सकता है। इसके परिणाम स्वरूप गुरिंदर पाल सिंह के मामले में पंजाब उच्च न्यायालय का निर्णय (ए० आई० आर० 1974, पंजाब, 125) अब वैध कानून नहीं रह गया है।

खण्ड IV

अन्य पिछड़े वर्गों के लिए किये गये आरक्षणों पर प्रतिक्रियाएं

चार राज्यों का तुलनात्मक अध्ययन

भारत सरकार के गृह मंत्रालय के अधीन पिछड़े वर्ग आयोग को प्रस्तुत की गई रिपोर्ट

आर० के० हेनसुर

सामाजिक विज्ञानों का टाटा संस्थान
बम्बई—400088

मई, 1980

अन्य पिछड़े वर्गों के लिए आरक्षण योजनाओं पर प्रतिक्रियाओं के बारे में यह रिपोर्ट भारत सरकार द्वारा गठित पिछड़े वर्गों के आयोग के कहने पर तैयार की गई है। इसमें यह स्पष्ट करने का प्रयास किया गया है कि तमिलनाडु तथा कर्नाटक के लोगों ने इस प्रकार का आरक्षण लागू किया जाना क्यों स्वीकार कर लिया हालांकि उन पर इसका प्रतिकूल प्रभाव पड़ा था और बिहार तथा उत्तर प्रदेश में इसी प्रकार के उपायों का हिंसात्मक विरोध क्यों हुआ। इस प्रकार के अन्वेषण में आकस्मिक कारणों का निश्चयपूर्वक पता नहीं लगाया जा सकता। इसमें परिस्थितिक साक्ष्य पर निर्भर करना पड़ता है और मोटे निष्कर्ष निकालने होते हैं।

सामाजिक विज्ञानों का टाटा संस्थान यह अनुभव करता है कि इसे यह कठिन कार्य सौंपा गया है। मैं अपने निदेशक प्रो० एम० गोरे के प्रति आभार व्यक्त करता हूं जिन्होंने मुझे यह कार्य सौंपा और मुझे इस प्रयास में प्रोत्साहित किया। मैं पिछड़े वर्ग आयोग के अध्यक्ष श्री बी०पी० मण्डल, सचिव श्री गिल निदेशक श्री घोष तथा संयुक्त निदेशक श्री पार्थसारथी का भी बहुत आभारी हूं जिन्होंने मुझे प्रोत्साहन दिया। इस रिपोर्ट को प्रस्तुत करने में जो विलम्ब हुआ है उसके प्रति उन्होंने काफी धैर्य रखा है।

विभिन्न दस्तावेज तथा रिपोर्ट उपलब्ध कराने के लिए मैं तमिलनाडु कर्नाटक, बिहार तथा उत्तर प्रदेश की सरकारों को भी धन्यवाद देता हूं। अपने लिए आंकड़े एकत्र करने के दौरान मेरी अनेक विद्वानों, सिविल कर्मचारियों, राजनीतिज्ञों, मंत्रियों, पत्रकारों तथा अन्य ज्ञानवान व्यक्तियों से भी मुलाकात हुई। इन सभी व्यक्तियों का मैं बहुत एहसानमन्द हूं जिन्होंने मेरे लिए अपना बहुमूल्य समय निकाला।

मैं संस्थान के श्री सिद्धरामप्पा, मिस लोबो तथा श्री पी०पी०पाटकर को भी धन्यवाद देता हूं जिन्होंने इस काम में मेरी सहायता की। टाइप का काम करने के लिए मैं श्री जयकुमार तथा श्री मोहनदास को भी धन्यवाद देता हूं।

निकाले गए निष्कर्षों के लिए पूर्णतया मैं स्वयं उत्तरदायी हूं।

ह०/—

29 मई, 1980
बम्बई।

आर०के० हेबसूर
सामाजिक विज्ञानों का टाटा संस्थान
पोस्ट बाक्स नं० 8313
देवनगर,
बम्बई- 400088

अध्याय 1

प्रस्तावना : समस्या और परिकल्पनाएं

भूमिका में यह कहा गया है कि इस रिपोर्ट का मुख्य उद्देश्य यह स्पष्ट करना है कि उत्तर प्रदेश तथा बिहार सरकार के 1977 तथा 1978 के उन आदेशों पर हिंसात्मक तथा विघातक प्रतिक्रिया क्यों हुई जिनमें अन्य पिछड़े वर्गों के लिए पद आरक्षित करने की व्यवस्था की गई थी और तमिलनाडु तथा कर्नाटक में इसी प्रकार के उपाय सामान्यतः क्यों स्वीकार कर लिए गए थे, और अधिक स्पष्ट रूप से हम इस प्रश्न पर विचार कर रहे हैं कि बिहार तथा उत्तर प्रदेश की उन्नत जातियों में इसका प्रतिरोध करने की इच्छा तथा आक्रोश ही नहीं था बल्कि उनमें ऐसा करने की क्षमता भी मौजूद थी और कर्नाटक तथा तमिलनाडु में उनके प्रतिपक्षियों में इसका हिंसात्मक विरोध करने की इच्छा क्यों नहीं थी और यदि उनकी इच्छा की भी तो उनमें हिंसात्मक विरोध करने की क्षमता क्यों नहीं थी। जाति संघर्ष की यह पद्धति उन जातिगत संघर्षों के सामान्य ढांचे का अंग मात्र है जो इस देश में लगातार बढ़ते चले जा रहे हैं। स्थानों तथा पदों के आरक्षण के अकेले मामले को लेकर विभिन्न जातियों तथा जाति समूह में चल रहें संघर्ष उस सामान्य संघर्ष तथा प्रतिस्पर्द्धा की एक विशेष प्रकार की अभिव्यक्ति है जो सामाजिक-राजनीतिक और आर्थिक क्षेत्रों में प्रभुत्व प्राप्त करने के लिए चल रहा है। ये संघर्ष तथा प्रतिस्पर्द्धाएं भारतीय राजनीति की व्यापक विशेषताए है हालांकि प्रान्तीय दृष्टि से इनमें काफी विभिन्नताएं है, गुजरात, मध्य प्रदेश जैसे कुछ राज्यों में ये बहुत कम हैं जब कि बिहार, कर्नाटक, उत्तर प्रदेश जैसे अन्य राज्यों में ये बहुत तीव्र हैं। महाराष्ट्र जैसे कुछ राज्यों में यह सम्भव है कि संघर्ष पदों तथा स्थानों के आरक्षण के मामले पर न हों बल्कि इनका रूप विद्वेष तथा अत्याचार में प्रकट हुआ हो। संघर्ष किसी राजनीतिक दल के नियंत्रण तक सीमित हो सकते हैं या फिर से अन्य क्षेत्रों में भी व्याप्त हो सकते हैं। इसके अतिरिक्त ये हिंसात्मक या अहिंसात्मक हो सकते हैं। किन्तु संविधान के अनुच्छेद 15(4) तथा 16(4) के अधीन जातियों को अन्य पिछड़े वर्गों में शामिल किये जाने के पक्ष या विरोध में किये जा रहे हिंसात्मक जातिगत संघर्षों को भी हरिजनों पर अत्याचारों के समान ही इस प्रकार के संघर्षों का ही एक भयंकर रूप मानना होगा।

जातिगत पद्धति पर आधारित हिन्दु समाज का पारम्परिक धर्म-तंत्रवाद आम तौर पर राजनीतिक तथा आर्थिक प्रणालियों के अनुरूप ही है। जिन समूहों को उच्चतर आरोप्य सामाजिक या कार्मिक दर्जा प्राप्त था उनका राजनीतिक सत्ता और आर्थिक सुदृढ़ता की दृष्टि से भी ऊंचा स्थान था और अंग्रेजी शासन से पूर्व के भारत में इनका अर्थ केवल जमीन था। इस प्रकार के सामाजिक गठन को डहल (1961) में संचित असमानताओं का गठन कहा है। स्वाभाविक रूप से भी यह एक स्थायी व्यवस्था थी क्योंकि विभिन्न प्रकार के लाभ तथा हानियां एक दूसरे से मेल खाते थे। गैलटंग (1972) द्वारा प्रस्तुत की गई परिकल्पना के अनुसार हम कह सकते है कि अंग्रेजी शासन से पूर्व के भारत में सामाजिक व्यवस्था में रैंक की दृष्टि से कोई असंतुलन नहीं था। इसका अर्थ यह है कि सामान्य दृष्टि से ऐसी कोई जाति नहीं थी जिसका सामाजिक शक्ति के आधार पर बहुत ऊंचा स्थान हो परन्तु आर्थिक शक्ति के आधार पर वह बहुत नीचे हो। या फिर वह आर्थिक शक्ति की दृष्टि से तो बहुत ऊंचा हो परन्तु उसका धार्मिक दर्जा बहुत नीचा हो। इस बात से इंकार नहीं किया जा सकता कि यह सहज स्थायी व्यवस्था अत्यधिक असमतावादी थी और नैतिक दृष्टि से निन्दनीय। इसके अलावा यह धर्मतंत्रवाद पूर्णतया कठोर और अनम्य भी नहीं था जैसा कि प्रायः प्रतिपादित किया जाता है। कोठारी (1970 बी) ने यह तर्क दिया है कि ब्रिटिश शासन पूर्व के भारत में भी अपेक्षाकृत निचले तथा आदिवासी वर्ग मध्यम व्यवस्था के जाति समूहों में प्रवेश कर सकते थे। कुछ जातियों में सैनिक पराक्रम होने के कारण वे उच्चतर जाति दर्जा प्राप्त कर लेती थीं। भारत के कई भागों में भक्ति आन्दोलन ने ब्राह्मणों तथा अन्य ऊंची जातियों की स्थिति को काफी कमजोर कर दिया था। परन्तु धर्म निरपेक्षता के इस प्रकार के उदाहरण बहुत कम थे और ये हिन्दु समाज की धर्मतंत्रवादी व्यवस्था को कभी नहीं बदल पाए।

अंग्रेजी शासन आने के साथ बहुत से परिवर्तनों के बीज बोए गए और इसके दूरगामी परिणाम हुए। अंग्रेजी शासन का प्रभाव, राजनीतिक शासन का दृढ़िकरण, पश्चिम की शिक्षा प्रणाली की शुरूआत तथा व्यवसाय तथा धंधों के कई मार्ग खुल जाना जैसे विषयों पर कोठारी (1970), श्रीनिवास (1966), बेटीले (1965), सिंह (1975), रूडल्फस (1967), राव (1979) आदि जैसे अनेक विद्वानों ने समुचित विश्लेषण किया है। अंग्रेजी शासन ने हिन्दु समाज के जातिगत ढांचे में कई संरचनात्मक विक्षोभ उत्पन्न किये और इनके स्वरूप तथा प्रभाव परस्पर विरोधी थे। सर्वप्रथम अंग्रेजी शासन ने आर्थिक तथा राजनीतिक सत्ता के वितरण में असमानताओं को बढ़ाया विशेष रूप से ऊंची तथा मध्यवर्ती जातियों के संदर्भ में। देश के अधिकांश भागों में शिक्षित जाति होने के कारण ब्राह्मणों ने पश्चिम की उदार शिक्षा के प्रति शीघ्र उत्साह दिखाया और बड़ी संख्या में सरकारी सेवा तथा अन्य धन्धों में प्रवेश कर गए। शताब्दी बदलने तक उन्होंने राष्ट्रीय आन्दोलन पर भी प्रभुत्व जमा लिया। भारत के उन प्रान्तों में जहां ऐतिहासिक कारणों से ब्राह्मणों को एकमात्र शिक्षित जाति होने का सौभाग्य प्राप्त नहीं था वहां कायस्थों जैसी अन्य जातियों ने पश्चिम की शिक्षा तथा आधुनिकता को अपनाया। मद्रास प्रेसीडेंसी और राजसी मैसूर राज्य में ब्राह्मणों के बाहुल्य और विशेष रूप से अंग्रेजी जानने वाले लोगों संबंधी तथ्य को इसचिक (1960) तथा मैनोर (1977) में समुचित प्रकार से सिद्ध किया है। इन प्रान्तों तथा अन्य क्षेत्रों के ब्राह्मणों को एक अन्य सुविधा प्राप्त थी। इसचिक ने यह तर्क दिया है कि मद्रास में ब्राह्मणों के पास काफी जमीन थी हालांकि जमींदार लोगों के कोई मुख्य घटक नहीं थे। ब्राह्मण विशेषकर दक्षिण भारत में अपनी जमीन के साधनों को सरकारी सेवा तथा अन्य अधिक लाभकारी स्रोतों में बदलने में सफल हुए थे। जमीन के साथ उनके संबंध उत्तरोतर हलके पड़ते गए क्योंकि वे अनुपस्थित जमींदार बन गए या अपने बच्चों को शिक्षित करने के लिए उन्होंने अपनी जमीन बेच दी। वे उत्तरोतर अधिक शहरी बनते गए।

इस प्रकार अंग्रेजी शासन तथा इसके द्वारा लाये गये आधुनिकीकरण ने विभिन्न जातियों, विशेषकर एक ओर ब्राह्मणों और कायस्थों तथा दूसरी ओर जमींदार वर्ग की जातियों में दर्जे संबंधी अन्तर को और बढ़ा दिया।

दूसरे अंग्रेजी शासन, न्याय की समतावादी प्रणाली और उदार शिक्षा ने इस व्यवस्था में समानता, अवसरों की समानता आदि जैसे नये विचार फूंक दिये। शुरू में विद्वन्मंडली जातियों ने अवसरों की समानता के विचारों या न्याय के योग्यतापरक सिद्धान्तों को तत्परता से स्वीकार कर लिया और पूर्ण तथा स्वतन्त्र प्रतिस्पर्द्धा के नाम पर सरकारी पदों तथा व्यावसायिक अवसरों पर लगभग अपना एकाधिकार जमा लिया। वे जानते थे उन्होंने बहुत पीछे रह गई वेल्लालस, वोक्कलीगास, लिंगायत, राजपूतों, भूमिहरों जैसी जातियों को छोड़ दिया है। परन्तु न्याय के योग्यता पर आधारित सिद्धांत को शीघ्र ही 'असमान व्यक्तियों के प्रति समान व्यवहार' के रूप में चुनौती दी गई। न्याय के वितरणात्मक पहलुओं से गैर-विद्वन्मंडली जातियों के नेता भी सहमत होने लगे। इसके अतिरिक्त समता की प्रदूषित संकल्पनाओं और विभिन्न जातियों की भिन्न-भिन्न मात्रा में सामाजिक असमर्थताओं की तीव्र आलोचना हुई। इस प्रकार सामाजिक समानता, अवसरों और व्यवहार की समानता और केवल आर्थिक दृष्टि से ही नहीं बल्कि अन्य सामाजिक मूल्यों की दृष्टि से अनुपाती न्याय के पश्चिम से आए विचारों ने अनेक जाति समूहों को संगठित होने तथा उचित वितरण की मांग करने के लिए जोरदार प्रोत्साहन दिया। ये मूल्य धर्मतन्त्रवाद पर गठित हिन्दू पद्धति के पूर्णतया विपरीत थे जिसमें कुछ ऊंची जातियों के बीच आपस की दूरी कम होने की बजाय बढ़ती ही जा रही थी। विरोधी प्रभावों के इस विस्फोटक मिश्रण के विभिन्न परिणाम निकले। इससे सुव्यवस्थित सामाजिक सुधार आन्दोलन चले जिनका लक्ष्य जातिगत असमर्थताओं को दूर करना, महिलाओं को शिक्षा देना, सती प्रथा को समाप्त करना, अनुसूचित जातियों का उत्थान आदि थे। इन आन्दोलनों का कम से कम शुरू में नेतृत्व स्वयं उन्नत जातियों के प्रबुद्ध सदस्यों ने किया। समय पा कर और अधिक आक्रामक तथा उग्र सुधार आन्दोलन शुरू हुए जिनका उद्देश्य ब्राह्मणवादी संस्कृति तथा प्रभुत्व को अस्वीकार करना था जैसा कि महाराष्ट्र के ज्योतिबा फूले के गैर-ब्राह्मण आन्दोलन और उसके बाद मद्रास में ई०वी० रामास्वामी नैकर के 'आत्मसम्मान आन्दोलन' के मामले में। केरल में इजवाओं का श्री नारायण धर्म्मा पैरीप्लाना योगम आन्दोलन कम आक्रामक तथा अधिक अन्तर्दर्शी था (राव 1979)। परन्तु समानता के लिए ललक की सबसे सशक्त अभिव्यक्ति उस शब्द में हुई जिसे श्रीनिवास ने संस्कृतिकरण कहा है। संस्कृतिकरण इस शताब्दी के प्रथम दो दशकों में अपनी चरम सीमा पर थी। संस्कृतिकरण में पिछड़ी जातियों की वे क्रियाएं शामिल हैं जिनमें उन्होंने उन्नत जातियों के रीति रिवाजों, प्रथाओं तथा कर्मकाण्ड की नकल की और उन्नत जाति होने का दावा किया। जब यह प्रक्रिया अपनी चरम सीमा पर थी तो ब्रिटिश भारतीय प्रान्तों के जनगणना आयोगों को उच्चतर जाति के दर्जों के लिए किये गये असंख्य दावों के कारण भारी परेशानी उठानी पड़ी।

तीसरा, अंग्रेजी शासन के दौरान डाक-तार, रेलवे तथा भारी संख्या में समाचार पत्रों के परिचालन के रूप में समूचे देश में संचार व्यवस्था स्थापित हो गई। इन सुविधाओं की वजह से अलग-अलग पड़े जाति वर्गों को भी लाभ हुआ और इनके कारण जाति या एक समान जाति वर्ग एक दूसरे के करीब आ सके और जाति संस्थाएं स्थापित कर सके। इससे काफी हद तक उप-जातिगत भेदभाव समाप्त हो गए या कम हो गए और जातियों को एक ऐसी भूमिका मिली जिसकी हिन्दू नीतिशास्त्र में कल्पना नहीं की गई थी। आधुनिक संचार साधनों के कारण संस्कृतिकरण, आक्रामक सुधार या अस्वीकरण आन्दोलनों का काम भी आसान हो गया।

इस प्रकार हिन्दू जाति प्रथा पर अंग्रेजी शासन के विभिन्न प्रभावों ने आधुनिक भारत में जातिगत संघर्षों के लिए एक मंच प्रस्तुत कर दिया---ये प्रभाव थे पदों, शिक्षा तथा व्यवसायों पर विद्वन्मंडली जातियों का लगभग एकाधिकार, हिन्दू धर्मतांत्रिक व्यवस्था के महत्व को कम करने वाली समानता तथा न्याय की पश्चिमी संकल्पनाएं, संस्कृतिकरण की क्रिया, ऊपरी वर्गों में चले सुव्यवस्थित सुधार आन्दोलन तथा नीचे के वर्गों द्वारा चलाए गए आक्रामक सुधार आन्दोलन और एक नई भूमिका को लेकर स्थापित की गई जाति संस्थाएं। दो अन्य संघटक अर्थात् जन साधारण का राजनीतिकरण तथा सार्वभौमिक वयस्क मताधिकार जो अंग्रेजी शासन काल के दौरान बहुत कमजोर थे स्वतन्त्रता के बाद शक्तिशाली सक्रिय शक्तियां बन गई।

श्री राव (1979) ने यादव आन्दोलन (जो दक्षिण की अपेक्षा उत्तरी भारत में अधिक प्रबल था) और केरल के इज्ञावा आन्दोलन के तुलनात्मक विश्लेषण में यह प्रदर्शित किया है कि पिछड़े वर्गों के आन्दोलनों में अपने समर्थक आधारों, सापेक्षिक वंचन की सीमा, उनके द्वारा इच्छित लक्ष्यों और उनके द्वारा अपनाए गए साधनों को लेकर काफी अंतर रहा है। ये परिवर्तन महज सामाजिक संरचना और अंग्रेजी शासन के प्रभाव से उत्पन्न विभिन्न प्रकार के मतभेदों द्वारा पक्की तरह से निर्धारित किये गये। मद्रास, कर्नाटक और महाराष्ट्र में ब्राह्मणों तथा गैर-ब्राह्मणों में मतभेद दिखाई दिये और आन्दोलनों का लक्ष्य राजनीति तथा व्यवसायों में ब्राह्मणों का प्रभुत्व कम करना था। दूसरा पैटर्न उत्तरी भारत में दिखाई दिया जहां एक ओर सामान्यतः उन्नत तथा दो बार जन्मी ब्राह्मण भूमिहर, कायस्थ तथा राजपूत जातियों और दूसरी ओर अहीर, कूर्मी आदि जैसी मध्यवर्ती जातियों में मतभेद उत्पन्न हो गये। राव द्वारा गिनाए तीसरा पैटर्न दलित जातियों और उन्नत जातियों के बीच संघर्ष से संबंधित है। केरल में इज्ञावा आन्दोलन और मद्रास में नादारों का ओजस्वी आन्दोलन, डा० अम्बेदकर के नेतृत्व में चले आन्दोलन और हाल के महाराष्ट्र में दलितों का आन्दोलन इसके उदाहरण हैं। आदिवासियों के आन्दोलन चौथी श्रेणी के अन्तर्गत आते हैं। राव द्वारा प्रतिपादित अन्यथा शक्तिशाली इस संकल्पना में पिछड़ी जातियों के उत्थान के लिए एक तंत्र के रूप में राजनीति की पूर्ण भूमिका कालांतर में इन आन्दोलनों के स्वरूप में होने वाले परिवर्तन विशेषकर विरोधी संदर्भ ग्रुपों के के संबंध में और प्रत्येक शिविर में आंतरिक तनावों को स्वीकार नहीं किया गया है। जैसा कि हम बाद में देखेंगे 1925 में ई० वी० रामास्वामी नैकर द्वारा शुरू किये गये आत्मसम्मान आन्दोलन ने मृतप्राय न्याय आन्दोलन में नई विचारधारा के रूप में फिर से प्राण डाल दिये। 1970 तक कर्नाटक में गैर-ब्राह्मण जातियों का गठबंधन टूट गया और लिंगायतों तथा वोक्कालीगास नाम की जमींदार वर्ग की जातियों के विरुद्ध अपेक्षाकृत छोटी पिछड़ी जातियों के आन्दोलन का दूसरा चरण आरम्भ हुआ। हाल तक बिहार की राजनीति की विशेषता भूमिहरों तथा राजपूतों के बीच चल रहे संघर्ष ही थे और वहां पिछड़ी जातियों को राजनीति में प्रवेश करने में सफलता नहीं मिली है।

यह तर्क दिया गया है कि भारतीय समाज तथा राज्यतन्त्र का विकास बिलकुल अलग-अलग हुआ था और इन दोनों का आपस में परिचय केवल स्वतन्त्रता मिलने के पश्चात् सार्वभौमिक वयस्क मताधिकार दिये जाने के साथ हुआ। परन्तु हिन्दू सामाजिक संरचना तथा नये राजनीतिक शासन का आपस में मिलने का यह चमत्कार अचानक स्वतन्त्रता के बाद ही शुरू नहीं हुआ। राजनीति, वयस्क मताधिकार और जन सहयोग के संघटक तो स्वतन्त्रता के पहले भी उपस्थित थे। हुआ यह कि स्वतन्त्रता के बाद ये संघटक जबरदस्त जोर पकड़ गये। मद्रास, राजसी मैसूर राज्य और बम्बई जैसे भारत के कुछ हिस्सों में कई पिछड़ी जातियों के लिए संस्कृतिकरण का महत्व और आकर्षण समाप्त हो गया। आखिर यह प्रक्रिया इन जाति समूहों के लोगों को केवल प्रतीकात्मक उपहार और संतोष ही तो दे पाई थी। पदों, व्यावसायिक और शैक्षणिक अवसरों के क्षेत्र में आपक्षित वंचन को कम करने के लिए इसने लगभग कोई कार्य नहीं किया था। ब्रिटिश जनगणना आयुक्तों द्वारा अनिच्छा से दिये गये उच्चतर जाति दर्जे या स्वयं जातियों द्वारा आडंबरपूर्ण तरीके से ऐसा दर्जा अपनाए जाने से पिछड़ी जातियां सरकारी पदों, शिक्षा, व्यवसायों

और राष्ट्रीय आन्दोलन में प्रवेश पाने में सफल नहीं हो पाई थीं। पिछड़ी जातियों को भी अपने मौजूदा स्रोतों जो पदों के अवसर प्राप्त करने में बदलने या इस प्रयोजन के लिए नये स्रोत उत्पन्न करने के लिए प्रयत्न करना पड़ा था। ऊपर से चलाए गये शानदार सुधार आन्दोलन उनकी आशाएं पूरी करने के लिए कुछ नहीं कर पाए थे। इसलिए बहुत सी पिछड़ी जातियों ने उपलब्ध उस सरकार, वयस्क मताधिकार संबंधी प्रतिबन्धों और सरकारी निर्णय लेने वाले केन्द्रों तक पहुंच संबंधी सीमाओं के भीतर पदों के अवसरों तथा शैक्षिक सुविधाओं में हिस्से की मांग करने का प्रयत्न किया। इस प्रयास में नवगठित जाति संस्थाओं या उनके संगठनों ने महत्वपूर्ण भूमिका निभाई। यह प्रक्रिया कम से कम भारत के कुछ भागों में स्वतन्त्रता से बहुत पहले शुरू हो गई थी।

इस क्षेत्र में सबसे उल्लेखनीय सफलता मद्रास प्रजीडेंसी की जस्टिस पार्टी को मिली थी। 1916 में गठित इस दल का नेतृत्व मुख्यतः तमिल क्षेत्रके वेल्लालों, तेलगु क्षेत्रों के कम्मावों अर्थात नायडु, रेड्डी, वेलमा जातियां तथा मालाबार जिले के मलयालम बोलने वाली नायर जातियों ने किया था। ये सभी जातियां ब्राह्मणों से केवल एक सोपान नीचे हैं और जमीन के स्रोतों पर इनका नियन्त्रण था। (तमिल ईसाइयों ने भी भूमिका निभाई जो कि अधिक महत्वपूर्ण नहीं थी)। इसी प्रकार मैसूर के राजसी राज्य में दोक्कालीगास तथा लिंगायत जैसे शिष्ट वर्ग की गैर-ब्राह्मण शिष्ट जातियों के नेतृत्व में प्रजा मित्र मण्डली ने 1921 के बाद पदों तथा शिक्षा के क्षेत्र में आरक्षण प्राप्त कर लिया। बम्बई में भी मराठाओं जैसी कुछ मध्यवर्ती जातियों के लिए सरकार ने कुछ आरक्षण उपलब्ध किए। ये सभी सफलताएं सहानुभूतिपूर्ण ब्रिटिश सरकारों (या मैसूर के राजकुमार) की वजह से प्राप्त नहीं हुई थीं बल्कि इसका श्रेय इन जातियों द्वारा विकसित की गई नई संगठनात्मक क्षमताओं को भी है।

परन्तु राष्ट्रीय आन्दोलन के बढ़ते हुए प्रभाव और इसके व्यापक जन-आधार के साथ इन जाति समूहों ने यह महसूस किया कि यदि वे इनसे दूर रहे तो वे अलग-थलग पड़ जाएंगे। इस शताब्दी के तीसरे तथा चौथे दशक में मध्यवर्ती जाति समूह भी राष्ट्रीय आन्दोलन और कांग्रेस दल में शामिल हो गए। वास्तव में विकास के कारण कांग्रेस दल के ग्राम्य क्षेत्र में प्रवेश को एक नई गति मिली। जैसी कि राय (एम० डी०) ने तर्क दिया है। जब ऊपर चढ़ने के मार्ग तथा अवसर सीमित थे तो राजनीति ने आवश्यक सीढ़ी उपलब्ध करने का वचन दिया। "दूसरे शब्दों में राजनीतिक तंत्र को केवल राजनीतिक कार्य ही नहीं करने पड़ते बल्कि उसे सामाजिक कार्य भी करने पड़ते हैं। इस प्रकार राजनीतिक प्रणाली सामाजिक प्रणाली का एक विस्तारित क्षेत्र बन गया जहां ऊपर चिमकने की लड़ाई लड़ी जाती है। (इसी का पृष्ठ 63)

मध्यवर्ती तथा पिछड़ी जाति समूहों के राजनीति में प्रवेश करने और कांग्रेस दल पर प्रभुत्व जमाने के या कम से कम दम और सरकार के संगठन में उचित हिस्सा प्राप्त करने के संघर्ष की गति स्वतंत्रता मिलने तथा सार्वभौमिक वयस्क मताधिकार स्थापित होने के साथ और बढ़ गई। डाहल के शब्दों में असमानताओं का स्वरूप एक बार फिर छिन्न-भिन्न होने लगा परन्तु यह एक निश्चित सीमा तक ही हुआ। जो जाति समूह धार्मिक तथा सामाजिक दर्जे और पदों और व्यवसायों में विकास करने की दृष्टि से नीचे थे कम से कम उन्होंने राजनीतिक पैबन्द और उत्तोलक शक्ति प्राप्त करना शुरू कर दिया। वे बाद वाले तत्व को पहले तत्व में बदलना चाहते थे। जातिगत संघर्ष की वस्तुतः यही संरचना है। ऊपर वर्णित गैलटंग की संकल्पनाओं के अनुसार बढ़ते हुए रैंक असंतुलन के कारण स्थिति स्वाभाविक तौर पर ही अस्थिर हो जाती है। ये संघर्ष राजनीतिक लाभ और संरक्षण तथा संविधान के अनुच्छेद 15(4) और 16(4) के कार्यान्वियन पर केंद्रित होने लगे जिनमें सामाजिक तथा शैक्षिक दृष्टि से पिछड़े वर्गों तथा अनुसूचित जातियों तथा जन जातियों के प्रति किए जाने वाले भेदभाव से उन्हें संरक्षण देने की व्यवस्था है।

अनुसूचित जातियों और जन जातियों के लिए रक्षात्मक पक्षपात सम्बन्धी संवैधानिक उपबंधों का मूल आधार स्वतंत्रता संग्राम के वर्षों में देखा जा सकता है। वास्तव में स्वतंत्रता आन्दोलन को राष्ट्रीय विशिष्ट वर्ग की इसी वचनबद्धता से सुदृढ़ता प्राप्त हुई थी जो उन्होंने इन जातियों और जन जातियों के कल्याण के प्रति की थी। संविधान के अनुच्छेद 15(4) और 16(4) के आधार पर, संघीय क्षेत्रों और राज्यों ने इन समूहों के लिए आमतौर पर उनकी जनसंख्या के अनुपात में सरकारी पदों तथा शैक्षणिक संस्थानों में स्थान आरक्षित किए हैं। इस सम्बन्ध में समसामयिक विशिष्ट वर्गों और राजनीतिक दलों में राष्ट्रीय मतैक्य इतना प्रबल है कि वे कम से कम प्रकट रूप में इन उपायों का समर्थन करने में एक दूसरे से होड़ लगाए हुए हैं। मूलतः बहुत से वर्ग इन उपबन्धों से नाराज हैं। इस नाराजगी के कई रूप हो जाते हैं। अनुसूचित जातियों और जनजातियों के लिए आरक्षण की व्यवस्था केवल इसलिए नहीं की गई थी क्योंकि ये जातियां तथा जन जातियां शक्तिशाली या हठधर्मी थीं और इनमें सौदेबाजी करने की शक्ति थी अपितु इनके लिए यह व्यवस्था राष्ट्रीय मतैक्य के कारण करनी पड़ी जो गांधी जी तथा डा० अम्बेदकर के कारण सम्भव हुआ।

परन्तु संविधान में तो रक्षात्मक पक्षपात की व्यवस्था "सामाजिक तथा शैक्षिक दृष्टि से पिछड़े वर्गों के नागरिकों या अनुसूचित जातियों तथा अनुसूचित जनजातियों" के लिए की गई है। "सामाजिक और शैक्षिक दृष्टि से पिछड़े वर्ग" शब्दांश को लेकर तीव्र राजनीतिक विवाद और संघर्ष हुए हैं और इस सम्बन्ध में संवैधानिक उपबन्धों को लेकर काफी मुकद्दमेबाजी हुई है। इस वाक्यांश से संविधान निर्माताओं का जो आशय था वह काफी स्पष्ट है। भारतीय समाज में ऐसे बहुत से वर्ग हैं जिनकी आर्थिक स्थिति तथा सामाजिक दर्जा लगभग अनुसूचित जातियों और जनजातियों के दर्जे के समान है जबकि यह सम्भव है कि उन पर इतनी कठोरता से अछूत होने का कलंक न लगाया जाता हो। इसलिए 'अन्य पिछड़े वर्ग' कहा गया है। इन्हें भी उसी प्रकार के संरक्षण की जरूरत है जो अनुसूचित जातियों तथा जनजातियों को दिया जाता है। "सामाजिक तथा शैक्षिक दृष्टि से पिछड़े वर्ग" वाक्यांश के अर्थ के सम्बन्ध में कई न्यायिक निर्णयों के बावजूद भारत के राज्यों ने इस पिछड़ेपन के लिए कोई सामान्य मानदण्ड नहीं अपनाया है। एक ही राज्य में समय-समय पर यह मानदण्ड बदलता रहा है। पिछड़े वर्गों की सूचियों में शामिल किए जाने के लिए विभिन्न मध्यम वर्ग की जातियों में हो रही होड़ उन पूरे राजनीतिक संघर्षों तथा प्रतिद्वन्द्वों का एक महत्वपूर्ण अंग है जो आज समूचे देश में हो रहे हैं।

जब हम तमिलनाडु, कर्नाटक, बिहार तथा उत्तर प्रदेश के चार विचाराधीन राज्यों की तरफ देखते हैं तो हमें अन्य पिछड़े वर्गों के लिए आरक्षण और विभिन्न जातियों को अन्य पिछड़े वर्गों की सूची में शामिल किए जाने में आश्चर्यजनक विभिन्नताएं देखने को मिलती हैं। जैसा कि बाद में देखेंगे तमिलनाडु की सूची में भी कई परिवर्तन हुए हैं परन्तु इससे उन्नत श्रेणी के रूप में वर्गीकृत जातियों में कोई विरोध या प्रत्यक्ष अप्रसन्नता जाहिर नहीं हुई। इन उन्नत जातियों में केवल ब्राह्मण ही नहीं अपितु अन्य मध्यवर्ती जातियां भी शामिल हैं। गड़बड़ केवल तभी हुई एम० जी० रामचन्द्रन की सरकार ने अन्य पिछड़े वर्गों की सूची पर 1,000 रुपए वार्षिक की मानदण्ड मध्यारोपित कर दिया। इसका जोरदार विरोध हुआ जिसका नेतृत्व मुख्यतः डी० एम० के० ने किया। अन्ततः यह आदेश रद्द कर दिया गया है। कर्नाटक में आरक्षण सम्बन्धी सरकारी आदेशों पर दुखद मुकदमेबाजी तथा विरोध हुए हैं। जब तक लिंगायतों को पिछड़े वर्गों की श्रेणी में वर्गीकृत किया गया था तब तक जनता में कोई उत्तेजना नहीं थी। परन्तु पहले उन्हें हवानूर आयोग की रिपोर्ट (1975) में इस श्रेणी से निकाल देने तथा बाद में इस रिपोर्ट पर आधारित सरकारी आदेश को देखकर इस समुदाय का क्रोध उमड़ पड़ा। परन्तु उनका यह आक्रोश किसी हिंसात्मक आन्दोलन के रूप में सामने नहीं आया है। उनमें इसका जवाब देने की इच्छा तो है किन्तु सामर्थ्य नहीं है। उत्तर प्रदेश तथा बिहार में आरक्षण सम्बन्धी सरकारी आदेश पहले अगस्त 1977 तथा नवम्बर 1978 में

क्रमशः यादव और ठाकुर सरकारों द्वारा जारी किए गए थे। इन दो सरकारों ने मैसूर (कर्नाटक) के 1936 तथा 1960 का आदर्श नहीं अपनाया जिसमें कुछ जातियों को छोड़ अन्य सभी जातियों को पिछड़ी जातियों के रूप में वर्गीकृत कर दिया गया था बल्कि इन्होंने देवराज अर्स का 1977 का आदर्श अपनाया जिसमें बहुत बड़ी संख्या में तथा प्रमुख जातियों को इस वर्गीकरण में शामिल नहीं किया गया था। मैट्रानिक संकल्पनाओं के खेल में ठाकुर तथा यादव सरकारें लाभ बढ़ाने के लिए जाति समूहों के अपेक्षाकृत छोटे गठन स्थापित करना चाहते थे। इससे बुरी तरह से प्रभावित ब्राह्मण, राजपूत, भूमिहर तथा, कायस्थ जाति समूहों ने इसका भरपूर विरोध किया और इसके विरुद्ध आन्दोलन किए। जलूस, बन्द, आन्दोलन, वर्गों का बहिष्कार, सार्वजनिक सम्पत्ति पर हमले एक आम बात हो गई। (परन्तु यह बात उल्लेखनीय है कि उन्नत जाति के आन्दोलनकारियों का मध्यवर्ती जातियों के लोगों पर हमला करने का हौसला नहीं हुआ)। अहीर, कुर्मी तथा कोइरी जाति के युवकों द्वारा आयोजित प्रति प्रदर्शन भी हुए।

उत्तर प्रदेश और बिहार में विरोध की इस अद्भुत घटना होने और तमिलनाडु तथा कर्नाटक में इसकी अनुपस्थिति निम्नलिखित परिकल्पनाएं तैयार की गई हैं। दस्तावेजों, प्रकाशित पुस्तकों तथा नेताओं मंत्रियों, विधायकों और अन्य राजनीतिज्ञों, परिषदसदस्यों, पत्रकारों, सिविल कर्मचारियों और इन राज्यों के अन्य जानकार व्यक्तियों से किए साक्षात्कार के दौरान एकत्र किये गये आंकड़ों और सामग्री की सहायता से इन परिकल्पनाओं की परख करने का प्रयास किया गया है। पुनरावृत्ति से बचने के लिए प्रत्येक कल्पना को अलग से प्रस्तुत नहीं किया गया है।

परिकल्पना 1

यदि सामुदायिक आरक्षण योजनाओं का इतना लम्बा इतिहास रहा हो तो उन्नत जातियों द्वारा प्रतिकार की सम्भावना नहीं रहती।

योजना को लागू करने के ऐतिहासिक समय का ऐसी योजना से दुष्प्रभावित वर्गों की प्रतिक्रिया पर बहुत प्रभाव पड़ता है। यदि आरक्षण योजनाएं ऐसे समय पर लागू की जाएं जब वर्गों का राजनीतिक संगठन और संग्रहण बहुत नीचे स्तर पर हो तो उन्हें सम्पन्न कार्य के रूप स्वीकार कर लिए जाने की सम्भावना रहती है। आरक्षण योजनाओं से बाहर रखे गए समूह कुछ हानि उठाकर जीना सीख सकते है तथा वे इस हानि को कई अन्य तरीकों से पूरा करने का प्रयत्न करेंगे। परन्तु यदि आरक्षण योजनाएं ऐसे समय पर लागू की जाएं जब राजनीतिक संगठन और संग्रहण के स्तर बहुत ऊँचे हो तो ऐसे समूह विरोध करने का प्रयत्न कर सकते हैं।

परिकल्पना 2

यदि उन्नत जातियां आपस में ही एक दूसरे के विरुद्ध बंटी हुई हो प्रतिकार के अवसर कम होते हैं।

यह बात तो स्पष्ट है कि आरक्षण योजनाओं से बाहर रखी गई जातियों में एकता या सम्बद्धता प्रतिकार के लिए उनकी क्षमता बढ़ा देती है। राजनीतिक दृष्टि से यों आरक्षण योजना को ही लेकर यदि उन्नत जातियों में आपसी मतभेद हों तो विरोध करने या बदला लेने के लिए उनकी क्षमता भी कम होगी। यदि कोई आरक्षण योजना उप जाति के आधार पर उन्नत जातियों में फूट डालकर कुछ जातियों को आरक्षण की परिधि में ले आए और अन्य जातियों को बाहर रहने दे तो इस जातियों की एकता पर बेहद प्रभाव पड़ेगा। दूसरे शब्दों में यह तथ्य एक निर्णायक तथ्य होता है कि क्या उन्नत पिछड़ेपन के वर्गीकरण के लिए जातियों के पूरे समूह पर विचार किया गया है या इस वर्गीकरण के लिए उनकी उप जातियों को ही ध्यान में रखा गया है।

परिकल्पना 3

यदि पिछड़ी तथा अनुसूचित जातियों की आपस में न बनती हो तो उन्नत जातियों में बदला लेने की सम्भावना बहुत अधिक रहेगी।

ऊपर चर्चा की गई है कि विभिन्न प्रकार के भेदभावों ने देश के विभिन्न भागों में पिछड़े वर्गों के आन्दोलन की शुरुआत और उनके स्वरूप को किस प्रकार प्रभावित किया है। यदि मध्यवर्ती जातियां किसी उद्देश्य के लिए अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों के साथ समझौता करके एक संगठित तथा साझा राजनीतिक व्यूह बना लें तो पिछड़े वर्गों का बहुत बड़ा आन्दोलन होने की सम्भावना रहेगी। यदि किन्हीं कारणों से अनुसूचित जातियों तथा जनजातियों और कुम्हार, बुनकर, बढ़ई आदि जैसे अन्य लघु शिल्पी जातियों को मध्यवर्ती जातियों से यह डर हो कि वे भी ऊंची जाति की तरह जमीन में साझेदार हैं तो पिछड़े वर्गों का आन्दोलन काफी कमजोर पड़ जाएगा। भारत में ऐसे कई राज्य है जहां कमजोर, भूमिहीन अल्पसंख्यक शिल्पी जातियां और अनुसूचित जातियां अपनी सुरक्षा के लिए मध्यवर्ती जातियों की तरफ नहीं बल्कि ऊंची जातियों की तरफ देखती है। इसके अतिरिक्त यदि शिल्पी जातियां और अनुसूचित जातियां यह अनुभव करें कि पिछले 30 वर्षों में गणतंत्रीय प्रक्रियाओं ने केवल मध्यवर्ती जातियों को लाभ पहुंचाया है तो उनमें आरक्षण योजनाओं के समर्थन के लिए पिछड़े वर्गों के आन्दोलन और प्रदर्शन में मध्यवर्ती जातियों का साथ देने के लिए कम उत्साह होने की सम्भावना रहेगी।

परिकल्पना 4

यदि पिछड़े वर्ग भी राजनीतिकृत और संगठित हों तो उन्नत जातियों में बदले की भावना कम होने की संभावना रहेगी।

किसी भी आरक्षण योजना की व्यवहारिता तथा सफलता के लिए निम्नलिखित दो शर्तों में से एक शर्त जरूरी है, सबसे पहले तो सरकार को इसे पूर्ण समर्थन देना होगा और अपनी वचनबद्धताओं पर दृढ़ रहना होगा। उदाहरण के लिए मद्रास प्रेजीडेन्सी और मैसूर राजसी राज्य में ऐसा ही हुआ। ब्रिटिश गवर्नरों, कार्यकारी पार्षदों और भारतीय सिविल सेवा के अधिकारियों को इस बात के लिए पूरी तरह से कायल किया गया कि सेवाओं और व्यवसायों में ब्राह्मणों के प्रभुत्व को अवश्य कम करना होगा। वे शुरू से ही जस्टिस पार्टी के उद्देश्य के प्रति सहानुभूति रखते थे। इसी प्रकार मैसूर के तत्कालीन महाराज भी गैर-ब्राह्मण जातियों को उचित हिस्सा देने के पक्ष में थे। यदि ऊपर से इस प्रकार का समर्थन न हो तो दूसरी शर्त पूरी होनी चाहिए। यदि पिछड़े वर्ग प्रधान दल और सत्ता के विभिन्न गलियारों में पूरी तरह से प्रवेश कर चुके हों और राजनीतिकृत तथा संगठित हो चुके हों तो वे आरक्षण योजना के विरुद्ध इससे प्रभावित उन्नत जातियों द्वारा आन्दोलन किये जाने पर जबाबी आन्दोलन करने की स्थिति में होते हैं या उनमें ऐसा करने की क्षमता होती है।

परिकल्पना 5

यदि ऊंची जातियों के समक्ष अचानक ये संभावनाएं उपस्थित हो जाएं कि उनकी राजनीतिक और आर्थिक प्रतिष्ठा छिनने वाली अर्थात् यदि किसी आरक्षण योजना से अचानक रैंक संबंधी असन्तुलन होने की सम्भावना है तो ऐसी जातियों में इसका विरोध करने की संभावना बहुत रहेगी।

अमरीका में काले लोगों को दिये गये रक्षात्मक पक्षपात और अन्य सुविधाओं के विरुद्ध श्वेत लोगों के विरोध का नेतृत्व उन श्वेत लोगों ने किया जिनका दर्जा और प्रतिष्ठा अचानक छिन जाने की संभावना थी। इसी प्रकार भारत में यदि ऊंची जातियों को अपनी प्रतिष्ठा छिन जाने की अचानक आशंका हो तो वे विरोध करने और बदला लेने का प्रयत्न करेंगे।

यदि किन्हीं कारणों से यदि ऊंची जातियां किसी अन्य तरीके और रास्तों से अपनी गतिशीलता और दर्जा कायम रखने में सफल रहे तो वे मध्यवर्ती और दर्जा कायम रखने में सफल रहें तो वे मध्यवर्ती और पिछड़े वर्गों की सहायक आरक्षण योजनाओं से कम डर महसूस करेंगे। यह बिल्कुल संभव है कि विचाराधीन दो राज्यों में उच्च जातियों ने यह अनुभव किया हो कि पिछड़े वर्गों की सूची में जिन मध्यवर्ती जातियों को शामिल किया गया है वे आर्थिक दृष्टि से समृद्ध हो रही है और उन्हें पदों तथा व्यावसायिक अवसरों में भी अतिरिक्त लाभ मिलेगा। ऐसी परिस्थिति में उनके द्वारा आरक्षण योजनाओं का विरोध किये जाने की संभावना रहेगी।

परिकल्पना 6

यदि उन्नत उप जातियों के लोग स्वयं को पिछड़ी जातियों के लोगों की तरह मान लें तो विरोध की संभावना कम रहेगी।

ऊपर से देखने से यह परिकल्पना अविश्वसनीय प्रतीत हो सकती है। चाहे कोई व्यक्ति कुछ भी करता हो परन्तु वह अपना जाति का लेबल नहीं उतार सकता। परन्तु यदि अन्य पिछड़ी जातियों के वर्गीकरण में विभिन्न मुख्य जाति-श्रेणियों को उप जातियों पर विचार करके उनमें से कुछ उप जातियों को उन्नत तथा कुछ को पिछड़ी जाति के रूप में वर्गीकृत कर दे तो किसी उन्नत उप जाति के लिए अपने आपको पिछड़ी उप जाति का व्यक्ति कहलाने में अपेक्षाकृत अधिक आसानी होगी। ग्रामीण क्षेत्रों में तो ग्राम अधिकारी या तहसीलदार किसी व्यक्ति की जाति का सही-सही पता लगा कर उसे उन्नत या पिछड़ी श्रेणी में रख सकते हैं परन्तु शहरी क्षेत्रों में सरकारी अधिकारियों के लिए इस बात को गलत सिद्ध करना कठिन कार्य है कि कोई व्यक्ति किसी उप जाति विशेष का नहीं है या यह सिद्ध करना भी कठिन है कि वह वस्तुतः किसी अन्य उप जाति का है। विशेष रूप से दक्षिण भारत के तमिलनाडु तथा कर्नाटक राज्यों में यह कहा जाता है कि पदों के लिए कई उम्मीदवार किसी भी प्रकार का प्रमाणपत्र प्राप्त कर सकते हैं।

परिकल्पना 7

यदि किसी राज्य में किसी प्रकार का पुनर्जागरणवाद आया हो या यदि वह किसी बाहरी प्रतीक के विरुद्ध संगठित हुआ हो तो उन्नत जातियों के विरुद्ध पिछड़े वर्गों का आन्दोलन का शक्तिशाली रहने की संभावना रहेगी।

जैसाकि इस अध्याय के सैद्धांतिक खण्डों में चर्चा की गई है किसी पिछड़े वर्गों के आंदोलन में निचली जातियों को शामिल करने के लिए यह पहली, जरूरी शर्त है कि ऊंची जातियों तथा निचली जातियों में पर्याप्त मतभेद हों। यह संभव है कि ऐतिहासिक दृष्टि से पहले ये मतभेद दिखाई दिये हों। परन्तु यदि उस क्षेत्र में कोई उप राष्ट्रीय पुनर्जागरणवादी आंदोलन चल पड़े तो ये मतभेद हल्के पड़ जाएंगे। यह जरूरी नहीं कि ऊंची तथा नीचे जातियों में ये मतभेद स्थायी हों। जैसे ही कुछ गैर-ब्राह्मण जातियों को आरक्षण का लाभ मिलता है तो वे अपनी सामाजिक और आर्थिक स्थिति में काफी सुधार कर सकते हैं। तब हमें एक नया मतभेद उत्पन्न होने की आशा करनी चाहिए अर्थात उन लोगों में मतभेद जिन्हें आरक्षण से लाभ मिला हो और जिन्हें ये लाभ प्राप्त न हुआ हों। परन्तु यदि कोई उप राष्ट्रीय या पुनर्जागरणवादी आंदोलन वस्तुतः अलाभकर स्थिति में पड़ी निचली जातियों के आपेक्षिक वंचन की भावना उनका ध्यान तथा शक्ति दूसरी तरफ खींच लें तो यह मतभेद प्रकट नहीं हो पायेंगे।

परिकल्पना 8

पिछड़ी जातियों की प्रतिकार करने की क्षमता इन तथ्यों पर निर्भर करती है:---(क) उनकी संख्या (ख) राजनीतिक चेतना (ग) प्रभुत्व तथा (घ) वैकल्पिक अवसरों की प्रत्याशित कमी।

यह बात तर्क संगत है कि उन्नत श्रेणी में वर्गीकृत जातियों का बहुत बड़ी संख्या में लोगों का समर्थन प्राप्त हो और उनमें उच्च वर्ग की राजनीतिक चेतना हो तो विरोध करने की उनकी क्षमता भी बहुत अधिक होगी। इसी प्रकार यदि आर्थिक तथा राजनीतिक दृष्टि से उनका प्रभुत्व हो और सत्ता के विभिन्न पदों संरक्षण तथा आर्थिक लाभ पर उनका नियंत्रण हो तो वे आरक्षण योजनाएं लागू किये जाने का विरोध करने के लिए बेहतर स्थिति में होंगे। इसके अतिरिक्त यदि इन जातियों के सदस्य यह अनुभव करें कि सरकारी पदों के सिवाय उनके पास कोई अन्य वैकल्पिक रोजगार तथा व्यावसायिक अवसर नहीं हैं तो मजबूर होकर वे विरोध में शामिल हो सकते हैं। परन्तु यदि वे यह समझे कि वे देश से बाहर जा सकते हैं या अन्य अवसरों की तलाश कर सकते हैं तो उनकी निराशा कम होगी उनकी विरोध करने की संभावना भी कम रहेगी।

परिकल्पना 9

यदि तीसरे गैर-सरकारी क्षेत्र का विस्तार हो रहा हो तो उन्नत द्वारा प्रतिकार किये जाने की सम्भावना कम होगी।

स्वाभाविक तौर पर यह परिकल्पना पिछली परिकल्पना से संबंधित है। यदि किसी राज्य में तीसरे गैर-सरकारी क्षेत्र का विस्तार हो रहा हो तो उन्नत श्रेणी में वर्गीकृत इन जातियों के लिए ऐसे क्षेत्रों में प्रवेश कर सकते हैं। यदि राज्य की अर्थव्यवस्था में धीरे-धीरे सुधार हो रहा हो और यदि सरकार ही युवा स्नातकों का मुख्य नियोक्ता हो तो उन्नत रूप में वर्गीकृत जातियों के लोग इसे जबरदस्त धमकी महसूस करेंगे और प्रतिकार करने पर विवश हो जायेंगे।

अध्याय 2

तमिलनाडु गैर-ब्राह्मण आन्दोलन से तमिल पुनर्जागरणवाद तक

भूतपूर्व मद्रास प्रेजीडेंसी में शिक्षा के क्षेत्र में तमिल तथा तेलगु ब्राह्मणों ने जो बढ़त प्राप्त कर ली थी उसके अच्छे प्रमाण मौजूद हैं (इसथिक 1969, ग्रारनाल्ड, 1977)। पिछली शताब्दी समाप्त होने तक तमिल ब्राह्मणों में पुरुषों की साक्षरता दर 7.6 प्रतिशत थी जबकि इसके मुकाबले वेल्ललाग्रों में यह दर 6.9 प्रतिशत थी। तमिल ब्राह्मणों में ग्रंग्रेजी पढ़े-लिखे पुरुष सदस्यों की दर 17.9 प्रतिशत थी जबकि वेल्ललाग्रों में यह दर केवल 9.19 प्रतिशत थी। ब्राह्मणों, सरकारी सेवाग्रों ग्रौर व्यवसायों में लगभग ग्रपना एकाधिकार स्थापित कर चुके थे। सबसे पहले 1851 में मद्रास रिवेन्यू बोर्ड ने जिला कलेक्टरों को हिदायत दी थी कि सेवाग्रों में प्रवेश पाने वाले ब्राह्मणों की संख्या को सीमित किया जाए। इसके बावजूद सरकारी सेवाग्रों ग्रौर व्यवसायों में ब्राह्मणों का प्रमुख ग्रक्षुण रूप से चलता रहा। प्रान्तीय कांग्रेस समिति पर इस जाति का प्रभुत्व ग्रच्छी तरह प्रमाणित हो चुका है। मोन्टेगु--चेल्मसफोर्ड सुधारों ग्रौर द्विशासन लागू किये जाने से सावधान होकर विशिष्ट गैर-ब्राह्मण जातियाँ ग्रागे बढ़ कर सबसे पहले तो साउथ इंडियन लिबरल फैडरेशन स्थापित की ग्रौर फिर 1916 में जसटिस पार्टी, 1920 में सत्ता में ग्राने के बाद इस दल ने 1921 में 1881 के ग्रादेश का विस्तार किया ग्रौर सभी विभागों के ग्रध्यक्षों से सभी ग्रेडों की नियुक्तियां विभिन्न समुदायों में वितरित करने के लिए कहा। परन्तु मद्रास में सामुदायिक सरकारी ग्रादेशों के इतिहास में पहली बार 1927 के ग्रादेश द्वारा स्पष्ट रूप में ग्रारक्षण प्रक्रिया निर्धारित की गई। पदों में निम्नलिखित विभागीय ग्रारक्षण की व्यवस्था की गई:

1. गैर-ब्राह्मण हिन्दू	12 पदों में से 5 ग्रर्थात	42 प्रतिशत
2. ब्राह्मण	,, ,, ,,	17 प्रतिशत
3. मुस्लिम	12 पदों में से 2 ग्रर्थात	17 प्रतिशत
4. ग्रंगल भारतीय	12 पदों में से 2 ग्रर्थात	17 प्रतिशत
5. दलित वर्ग	12 पदों में से 1 ग्रर्थात	8 प्रतिशत
		100 प्रतिशत (पूर्ण ग्रंकों तक)

ग्रारक्षण की यह योजना 1947 तक लागू रही। इससे बुरी तरह प्रभावित ब्राह्मण जाति के लोगों की संख्या इतनी कम थी कि वे इस योजना का विरोध नहीं कर सकते थे। कई ब्राह्मण नेताग्रों ने यह स्वीकार किया है कि उन्होंने पदों तथा शैक्षणिक सुविधाग्रों का बहुत बड़ा हिस्सा प्राप्त कर लिया था। ब्राह्मण समुदाय के युवा वर्ग ने 1927 का ग्रादेश लागू होने से दबाव महसूस किया वे भारत के ग्रन्य महानगरी शहरों विशेषकर बम्बई में जा कर बसना शुरू हो गये जो प्रक्रिया ग्राज भी जारी है। जैसा कि सरकारी ग्रादेश से देखा जा सकता है ग्रनुसूचित जातियों के लिए केवल 8 प्रतिशत पद ग्रावंटित किये गये थे जो कि देश की जनसंख्या में उनकी संख्या को देखते हुए बहुत कम थे। गैर-ब्राह्मणों के ग्रांदोलन की शक्ति को ध्यान में रखते हुए ग्रौर दल में ग्रधिक से ग्रधिक संख्या में गैर-ब्राह्मण विशिष्ट व्यक्तियों को शामिल करके कांग्रेस दल का ग्राधार व्यापक बनाने की ग्रावश्यकता को देखते हुए इस प्रांत में राजा जी की ग्रध्यक्षता में पहले कांग्रेस मंत्री मण्डले ने सरकारी ग्रादेश को बिल्कुल नहीं छूग्रा।

मद्रास के तमिल क्षेत्रों में 1927 का सरकारी ग्रादेश वेल्लला जातियों विशेषकर मोदालिग्रारों के लिए जीत थी। इन क्षेत्रों में उन्होंने जसटिस पार्टी का नेतृत्व किया था हालांकि इसमें ग्रन्य गैर-ब्राह्मण जातियों के नेता भी थे। जसटिस पार्टी के नेता जमीदार वर्गों के लिए गए थे ग्रौर वे ग्रपने रैंक में भूमिहीन जातियों को शामिल करके पार्टी का ग्राधार व्यापक बनाने के इच्छुक नहीं थे। वास्तव में उन्होंने सामाजिक सुधारों तथा ग्रन्य कमजोर वर्गों की हालत सुधारने के प्रति स्पष्ट ग्रनिच्छा जाहिर करना ग्रारम्भ कर दिया। पार्टी में रैंक टूटने ग्रौर कांग्रेस में शामिल होने की धीमी प्रक्रिया पहले ही शताब्दी के तीसरे दशक में शुरू हो चुकी थी ग्रौर गैर-ब्राह्मण जातियों की कार्यनीति कांग्रेस में घुस कर संगठन पर भीतर से कब्जा करने की थी। चौथे दशक तक जसटिस पार्टी ने जमीदार वर्गों विशेषकर सरकारी पदों तथा शिक्षा के क्षेत्र में वंचन की भावना को काफी हद तक कम करने का ग्रपना ऐतिहासकि उद्देश्य पूरा कर लिया था। जैसे ही ब्राह्मण युवा वर्ग ने बाहर जाना शुरू किया उनका स्थान ऊंची जाति के युवकों का स्थान ग्रहण करना शुरू कर दिया। ग्रारक्षण योजना के कदम तमिल लोगों की राजनीतिक चेतना के कारण जम पाए थे ग्रौर यह योजना सम्पन्न कार्य मान लिया गया। इसलिए पार्टी का उत्साह ग्रौर ग्राधर भी समाप्त होना शुरू हो गया। यह पार्टी ग्रंग्रेजी शासकों के साथ सहयोग करने के कारण इतनी ग्रधिक दूषित हो चुकी थी कि यह राष्ट्रीयता की उमड़ती हुई लहर के सामने न टिक सकी।

बालीजा नायडू श्री ई०बी० रामास्वामी नायकर ने ग्रपने राजनीतिक जीवन की शुरूग्रात कांग्रेस के साथ की थी। दल में ब्राह्मणों के प्रभुत्व से नाराज होकर तथा गांधी जी के परिशुद्ध वरण विचाराधारा का समर्थन से शुब्ध होकर दल से विद्रोह कर दिया उन्होंने ग्रात्म-सम्मान ग्रांदोलन शुरू करने के लिए 1925 में इस दल को छोड़ दिया। इस ग्रांदोलन का लक्ष्य हिन्दू धर्म तथा संस्कृति का बहिष्कार करने के ग्रलावा ग्रौर कुछ भी नहीं था जो नैकर के विकार से तमिल लोगों को दास बनाने का मुख्य साधन था। 1939 तक नैकर ग्रलग द्रविड़स्तान की मांग करने लगा (हाईग्रेव, 1965)। जैसा कि इसथिक ने कहा था, "ग्रात्म सम्भाव ग्रान्दोलन (सेल्फ रिस्पेक्ट मूवमेंट) लगभग तमिल जिलों तक ही केन्द्रित था ग्रौर वह भी मुख्यतया जाति तंत्र में निचले वर्गों तक ही सीमित था जिनमें ग्रछूत भी शामिल थे जिनमें सामाजिक सुधार मुच के मंच के प्रतिभारी ग्राकर्षण था" (1969, पृ० 334)। यदि ग्रात्म सम्मान ग्रांदोलन न होता तो मद्रास के विशिष्ट गैर-ब्राह्मण लोग समय पाकर निचले जाति समूहों से उतने ही ग्रलग पड़ गये होते जितना कि सातवें दशक के ग्रंत तक कर्नाटक में लिंगायत तथा वोक्कलीगा नेता बढ़ गये थे। 1944 में जस्टिस पार्टी का द्रविड कडगम दल के रूप में पुनर्गठन हुग्रा जिसमें न केवल ब्राह्मण विरोधी उत्तर विरोधी ग्रौर हिन्दी विरोधी विचारधारा थी बल्कि ग्रलग उपराष्ट्रीयवाद की विचारधारा भी थी।

नायकर ने द्रविड कडगम दल को बहुत तानाशाही तरीके से चलाया जिसे सी०एन० ग्रन्नादुरई के नेतृत्व में दल के युवा वर्ग ने पसन्द नहीं किया। जब नैकर ने 1949 में ग्रायु में ग्रपने से काफी छोटी लड़की से

विवाह कर लिया तो अन्नदुरई तथा उसके मित्रों ने दल को छोड़कर द्रविड़ मुनेत्र कड़गम दल गठित कर लिया जिसने द्रविड़ पड़कम विचार-धारा का समर्थन करते हुए संसदीय आकांक्षाएं विकसित हो गई।

1947 तक 1927 का सामुदायिक सरकारी आदेश लागू रहा जब इसका निम्नलिखित रूप में संशोधन किया गया :

गैर ब्राह्मण हिन्दू	14 में से 6 पद अर्थात		43 प्रतिशत
पिछड़े हुए हिन्दू	,,	2 ,,	14 प्रतिशत
पिछड़े हुए हिन्दू	,,	2 ,,	14 प्रतिशत
अनुसूचित जातियां	,,	2 ,,	14 प्रतिशत
अंग्ल भारतीय और भारतीय ईसाई	,,	1 ,,	7 प्रतिशत
मुस्लिम	,,	1 ,,	7 प्रतिशत
			100 प्रतिशत

(पूर्ण अंत तक पूरी की गई)

1947 का सरकारी आदेश इसलिए एक ऐतिहासिक आदेश है क्योंकि गैर-ब्राह्मण जातियों को पहली बार गैर-ब्राह्मण हिन्दुओं और गैर-ब्राह्मण पिछड़े हिन्दुओं में विभाजित किया गया। यह विभाजन शैक्षिक सुविधाओं के लिए उस समय मौजूद जाति सूचियों के आधार पर किया गया। स्पष्ट है कि वेल्लला नायडू, येतिहार, रेड्डी आदि जैसी उन्नत जातियों वाले गैर-ब्राह्मण हिन्दुओं ने इस विभाजन का विरोध नहीं किया क्योंकि उन्हें पदों में 43 प्रतिशत का उप खंडीय आरक्षण दे दिया गया। भारत का संविधान लागू होने के बाद उच्चतम न्यायालय ने इस उपखंडीय आरक्षण को रद्द कर दिया। तब 1947 की योजना को सितम्बर 1951 के एक आदेश द्वारा निम्नलिखित योजना में परिवर्तित कर दिया गया। इस आदेश में निम्नलिखित आरक्षण योजना की व्यवस्था की गई।

खुली प्रतियोगिता	20 में से 12 पद अर्थात		60 प्रतिशत
पिछड़े वर्ग	,,	5 ,,	25 प्रतिशत
अनुसूचित जातियां	,,	3 ,,	15 प्रतिशत
			100 प्रतिशत

1951 की जनगणना के अनुसार अनुसूचित जातियों तथा जनजातियों की जनसंख्या के आंकड़ों को देखते हुए और आन्ध्र प्रदेश के अलग हो जाने के बाद मद्रास सरकार ने 1954 में निम्नलिखित आरक्षण योजना उद्घोषित की :

खुली प्रतियोगिता	59 प्रतिशत
पिछड़े वर्ग	25 प्रतिशत
अनुसूचित जातियां तथा जनजातियां	16 प्रतिशत
	100 प्रतिशत

1954 के आदेश में केवल सीमित परिवर्तन किये गये। आदि शैव वेल्लालास, करघटा–वेल्लालास, मोदलयार, कम्भा नायडू जैसी जिन गैर-ब्राह्मण उन्नत जातियों ने बीस वर्ष पहले गैर-ब्राह्मण आंदोलन को नेतृत्व प्रदान किया था वे अब खुली प्रतियोगिता वाले पूल में पदों तथा स्थानों के लिए ब्राह्मणों के साथ प्रतियोगिता करने के लिए विवश हो गए। खुली प्रतियोगिता वाले पूल में डाल दिये जाने पर इन गैर ब्राह्मण उन्नत जातियों ने किसी प्रकार की धमकी महसूस नहीं की। उन्होंने अपनी राजनीतिक शक्ति समेकित करली थी और इन संसाधनों की सहायता से सेवाओं में समुचित प्रवेश कर चुके थे। वे खुली प्रतियोगिता वाले पूल में भी अपने हिस्से से अधिक स्थान प्राप्त कर सकते थे जहां ब्राह्मणों से भी कड़ी प्रतियोगिता संभावित नहीं थी। इसके अतिरिक्त, जैसा कि इसकी बाद में चर्चा की जाएगी, उप जातियों के आधार पर उन्नत पिछड़ेपन का वर्गीकरण करने की अनोखी प्रणाली के कारण वर्गीकरण का निरंकुश दुरुपयोग हो रहा था। संक्षेप में जब नये रूप में सामुदायिक आरक्षण योजना लागू की गई तब गैर ब्राह्मण उन्नत जातियां अपने लाभ बनाए रखने के लिए पर्याप्त शक्तिशाली हो चुकी थी और उन्हें किसी प्रकार का विरोध या प्रतिकार करने की आवश्यकता नहीं थी। तमिलनाडु पिछड़े वर्ग आयोग (1970) की सिफारिशों पर अमल करते हुए अनुच्छेद 15(4) तथा अनुच्छेद 16(4) के प्रयोजन के लिए 1971 में आरक्षण योजना निम्नलिखित रूप में संशोधित कर दी गई।

खुली प्रतियोगिता	51 प्रतिशत
पिछड़े वर्ग	31 प्रतिशत
अनुसूचित जातियां और जनजातियां	18 प्रतिशत
	100 प्रतिशत

खुली प्रतियोगिता वाले पूल के हिस्से में इस प्रकार कमी करने और पिछड़े वर्गों के लिए रखे गये आरक्षित पूल हिस्से में वृद्धि किये जाने पर भी गैर-ब्राह्मण उन्नत उप जाति समूहों में कोई क्षोभ उत्पन्न नहीं हुआ।

जैसा कि ऊपर संकेत किया गया है तमिलनाडु में लगभग प्रत्येक मुख्य समुदाय या समूह को उन्नत तथा पिछड़ी उपजाति वर्गों या ग्रुपों में विभाजित कर दिया गया है। अनुसूचित जातियों से बने ईसाई पिछड़े वर्ग में हैं, अन्य ईसाई उन्नत वर्ग में हैं। लब्बई तथा दकनी मुसलमान पिछड़े हुए माने गए हैं और उर्दू बोलने वाले मुसलमान उन्नत। आदि शैव, करघटा, कलावेली-वेल्लला जातियां उन्नत हैं और थुलुवा वेल्लला, सोझिआ वेल्लला जातियां पिछड़ी हुई मानी गई हैं। गंजम रेड्डी लोगों को छोड़कर इस जाति के अन्य सभी लोग उन्नत माने गये हैं। गवारा और वादुगार नायडू जाति पिछड़ी जातियां हैं परन्तु कम्भा नायडू उन्नत जाति मानी गयी है। इसी प्रकार चेन्तिआरों को भी उन्नत तथा पिछड़ी उप जाति ग्रुपों में विभाजित किया गया है। 1975 तक गोउंडर या कोंगु वेल्लला जाति को उन्नत जाति के रूप में वर्गीकृत किया गया था परन्तु करुणा-निधि सरकार ने उन्हें पिछड़ी जातियों की सूची में शामिल कर दिया। चाहे इन गैर-ब्राह्मण उन्नत जातियों में से कुछ जातियां खुली प्रतियोगिता वाले पूल में धकेल दिये जाने पर नाराज भी हुई तो परन्तु इसका विरोध या प्रतिकार करने के लिए उनकी क्षमता बहुत कम थी क्योंकि वे अपनी उस प्रतिपक्षी जाति का सहयोग नहीं प्राप्त कर सकते थे जोकि सीमा रेखा के दूसरी तरफ थी।

तमिलनाडु पिछड़े वर्ग आयोग ने निर्णायक रूप से यह सिद्ध किया है कि अन्य पिछड़े वर्गों की सूची में शामिल नौ जातियां, जिनकी पिछड़े वर्गों की कुल जन संख्या में केवल 11.7 प्रतिशत की, थी 37.3 प्रतिशत अराजपत्रित तथा 48.2 राजपत्रित पदों पर नियुक्त थी। अन्य अल्प-संख्यक और पिछड़े हुए कमजोर वर्ग आरक्षण योजना से लाभ उठाने में सफल नहीं हो पाए हैं। दूसरे शब्दों में सरकारी सेवाओं तथा शैक्षणिक स्थानों पर केवल उपर्युक्त उन्नत गैर ब्राह्मण उप जातियों का ही नहीं

बल्कि अन्य नौ पिछड़ी जातियों का भी प्रभुत्व है। ये नौ जातियां हैं - वादुगास, बीराकोरी, वेल वेल्लला, गवारा, सौराष्ट्र, युलुना वेल्लला, देवांगा, सोझिया वेल्लला, श्रागामुदियान तथा साधु चेट्टी। तमिलनाडु पिछड़े वर्ग आयोग ने अपनी इच्छा से रिपोर्ट (1979) के खंड 1 में इन जातियों के नाम नहीं बताये थे। परन्तु ये नाम निश्चित रूप से रिपोर्ट के अन्य खंडों से निकाले गये हैं। केवल थोड़ी से जातियों द्वारा लाभ उठाए जाने को ध्यान में रखते हुए आयोग ने सुझाव दिया कि अन्य विभिन्न प्रकार की पिछड़ी जातियों के लिए विभागीय आरक्षण लागू किया जाना चाहिए परन्तु करुणा निधि प्रशासन में इन सुझावों की ओर बिल्कुल ध्यान नहीं दिया। मिस्टर करुणा निधि ने लेखक के साथ 19-1-1979 को हुए साक्षात्कार में कहा कि रिपोर्ट में दिये गये स्पष्ट प्रमाण के बावजूद इस विषय पर विचार किया जाना चाहिए, पिछड़े वर्ग आयोग के अध्यक्ष मिस्टर ए० एन० सत्तनाथन में तत्कालीन राज्यपाल को लिखे गये अपने तारीख 2 मई, 1976 के पत्र में राज्यपाल से जोर देकर इस मामले पर विचार करने के लिए कहा था। मिस्टर सत्तनाथन ने कहा था "केंद्र सरकार या राज्य सरकार में से किसी की भी यह मंशा नहीं हो सकती कि एक बार तैयार की गई पिछड़े वर्गों की सूची हमेशा के लिए लागू रहनी चाहिए। न्यायिक निर्णय भी दिये गये हैं कि इन सूचियों का लगातार पुनरीक्षण किया जाना चाहिए और राज्य के सीमित संसाधनों का विस्तार करके सहायता केवल उन्हीं लोगों को दी जानी चाहिए जो सामाजिक तथा शैक्षणिक दृष्टि से वास्तव में पिछड़े हुए हों। मैं विनम्रतापूर्वक सिफारिश करता हूं ऐसे पुनरीक्षण के लिए यह उपयुक्त समय है।" लगता है कि इस पत्र का कोई प्रभाव नहीं हुआ। यहां मुख्य प्रश्न यह है कि पिछड़े वर्गों की जनसंख्या में कमजोर और अल्पसंख्यक पिछड़ी जातियों की जनसंख्या तो 88.7 प्रतिशत की परन्तु फिर भी उन्होंने आरक्षण का लाभ केवल कुछ ही जातियों को मिलने पर नाराजगी जाहिर क्यों नहीं की वे आसानी से अनुसूचित जातियों तथा जनजातियों के साथ मिल कर सरकार पर दबाव डाल सकते थे। जैसा कि हम कर्नाटक के अध्याय में देखेंगे, जब अनुसूचित जातियों, गैरब्राह्मणों, गैर-लिंगायतों और गैर-वोक्कलीगास जातियों को पता चला कि आरक्षण तथा राजनीतिक प्रणालियों के संचालन के लाभ केवल लिंगायत तथा वोक्कलीगास जातियों को ही मिले हैं तो उन्होंने भारी रोष अनुभव किया। इस रोष का लाभ उठाकर देवराज अर्स ने अपने लिए तथा इन जातियों के लिए एक नया राजनीतिक आधार तैयार किया। उसने कांग्रेस संगठन तथा सत्ता के स्थानों पर लिंगायतों तथा वोक्कलीगास लोगों की शक्ति कम कर दी। बाद में हवनूर आयोग ने अधिकांश लिंगायत जातियों का आरक्षण योजना से बाहर कर दिया और इस एक सरकारी आदेश द्वारा कार्यान्वित किया गया। कमजोर तथा अल्पसंख्यक पिछड़ी जातियों ने तमिलनाडु में इस प्रकार का राजनीतिक आंदोलन क्यों नहीं किया? इस प्रश्न का उत्तर विशिष्ट द्रविड़ कड़गम की संस्कृति में ढूंढना होगा जो जी० एम० के० तथा ए० आई० ए० डी० एम० के दलों को विरासत में मिली है। जब तक यह राज्य तमिल सांस्कृतिक पुनर्जागरणवाद की जकड़ में रहेगा और जब तक यहां के लोगों के मन में मुख्यतः हिन्दू विरोधी, उत्तर विरोधी, आर्य विरोधी विचार उभरे रहेंगे तब तक वस्तुतः पिछड़े हुए पिछड़े वर्गों की भलाई के लिए कोई वास्तविक पिछड़े वर्गों का आन्दोलन जन्म नहीं ले सकता। इन्हीं कारणों से विभिन्न गैर-ब्राह्मण जातियों में आपस में संयोग हो पाया है। डी० एम० के० नेताओं की विशेष रूप से ऐसी किसी बात में रुचि नहीं है तमिल आंदोलन की स्वाभाविक विशेषता में कमी आए।

जातियों का उन्नत तथा पिछड़ी श्रेणी में वर्गीकृत करने के तमिलनाडु तरीके के एक विशिष्ट पहलू का एक दो बार ऊपर उल्लेख किया गया है। वर्गीकरण के प्रयोजन के लिए कुछ प्रमुख हिन्दू गैर-ब्राह्मण जाति समूहों की उप जातियों से काम लिया गया है, इससे उन्नत श्रेणी में वर्गीकृत किये गये व्यक्तियों के लिए दुरुपयोग करने के द्वार खुल गये हैं; सत्तनाथन आयोग की रिपोर्ट में इस दुरुपयोग का व्यापक और निर्णायक रूप में उल्लेख किया गया है, किसी उपजाति मान लीजिए कर गवा वेल्लला उपजाति के व्यक्ति के लिए यह दावा करना और प्रमाण पत्र प्राप्त करना कठिन कार्य है कि वह कई कोलान जाति का है जोकि एक बिल्कुल भिन्न जाति है। परन्तु उसके लिए यह दम दावा करना और प्रमाण पत्र प्राप्त करना आसान है कि वह सोझिया वेल्लला जाति का है। ऐसा इसलिए है क्योंकि सोझिया वेल्लला जाति पुराने चोला प्रदेश से आई है। मिस्टर सत्तनाथन ने तमिलनाडु के राज्यपाल को लिखे गये अपने तारीख 2 मई, 1976 के पत्र में एक बार फिर अन्य पिछड़े वर्गों की सूची में अनिश्चित शब्दों और वर्गीकरण की ओर संकेत किया था और इसके परिणामस्वरूप इसका जो खुलेआम दुरुपयोग किया जा रहा था उसकी ओर भी संकेत किया गया था। मिस्टर सत्तनाथन ने लिखा था,

> अपने आपको "नैकर" या नायडु कहने वाले लगभग सभी लोगों ने स्कूलों तथा कालेजों में प्रवेश और "आरक्षित" नियुक्तियों के लिए "गवारा" और "वादुगान" शब्दों का खुल कर प्रयोग किया है जबकि वे वादुगान तथा गवारा लोगों के विशिष्ट वर्गों के अंतर्गत न आते हों।

इसके अतिरिक्त

> वास्तव में यह कहा जा सकता है कि ब्राह्मण समुदाय को छोड़कर बहुत से अन्य "गैर-पिछड़े" या उन्नत समुदाय सूची के बड़े आकार तथा इसमें बार बार प्रयोग की गई अनिश्चित शब्दावली की वजह से किसी न किसी तरह "पिछड़े" होने का दावा कर सकते हैं।

सत्तनाथन आयोग अन्य पिछड़े वर्गों की सूचियों किन्हीं जातियों को शामिल करने या उन्हें सूचियों से निकालने के सुझाव नहीं दे पाया था क्योंकि यह विषय उस के विचारार्थ विषयों में शामिल नहीं था। परन्तु रिपोर्ट में यह संकेत अवश्य दिया गया था कि पिछड़े वर्गों में विशेष रूप से आलसी लोगों के लिए कुछ किया जाना चाहिए। इसके बावजूद भाउडंर या कांगू वेल्लला, सोझिया वेल्लला और करुनीगार जैसी जातियों और दक्कनी मुस्लिम जैसे ग्रुप अन्य पिछड़े वर्गों की सूची में शामिल कर लिए गए जिसका अत्यन्त असुरक्षित पिछड़ी जातियों पर अवश्य बुरा असर पड़ा होगा।

कमजोर जातियों और विशेष रूप से वन्नियार कुला क्षत्रियों की जाति में (क) पोदलियार और नायडु लोगों के प्रमुख (ख) ऊपरी 9 पिछड़ी जातियों द्वारा समूचा लाभ प्राप्त कर लेने तथा (ग) अन्यथा शक्तिशाली जातियों को अन्य पिछड़े वर्गों की सूची में शामिल करने के विरुद्ध कुछ निराशा की अन्तर्धारा चल रही है। परन्तु इस निराशा ने आक्रोश और विरोध का रूप धारण नहीं किया है। राजनीतिक दृष्टि से भी इसे आगे नहीं बढ़ाया गया है और न ही ऐसा होने की संभावना है। किसी भी तमिलनाडु राजनीतिक दल का इस विषय को लेकर इन्हें अग्रसर करने का इरादा नहीं रहा है। अन्य पिछड़े वर्गों की सूची पर आय का मानदण्ड लगाने वाला एम० जी० रामचन्द्रण का सरकारी आदेश इस विषय के काफी नजदीक आया था परन्तु इन सिद्धांतों के आधार पर पिछड़े वर्गों को विभाजित करने में उसने भी संकोच किया। एक बार हमें फिर इस स्पष्टीकरण पर जोर देना होगा कि जब तक राज्य में तमिल उप राष्ट्रीय विचारधारा चलती रहेगी तब तक ये विषय कोई गंभीर रूप धारित नहीं करेंगे। गैर-ब्राह्मण उन्नत जातियों और पिछड़ी जातियों में से अपेक्षाकृत अधिक सफल जातियों के आधिपत्य को कोई चुनौती दिये जाने की संभावना

नहीं है। तब तक इन जातियों द्वारा विरोध या प्रतिकार करने का प्रश्न ही नहीं उठता।

तमिलनाडु की जनसंख्या में अनुसूचित जातियों और जनजातियों की जनसंख्या लगभग 18 प्रतिशत है, जैसाकि हम बाद में देखेंगे उत्तर प्रदेश तथा बिहार में एक ओर अनुसूचित जातियों तथा दूसरी ओर जाट, यादव, कूर्म, कोयरी आदि जैसी मध्यवर्ती जातियों के आपसी संबंध काफी खराब हैं। बेटीले (1970) ने चौथे दशक में कल्ला और आदि द्रविड के आपसी संघर्ष के बारे में हट्टन के वृतान्त का उल्लेख किया है। थेवरा तथा हरिजन लोगों में भी समय-समय पर आपस में संघर्ष होता रहा है। ब्राह्मणों, नैकरों और मुकुलथोरों द्वारा 1967 में हरिजनों पर किये गये क्लिबेमनी अत्याचारों की ओर समूचे राष्ट्र का ध्यान आकर्षित हुआ था। हालही में 1978 में थेवरों और हरिजनों के बीच झगड़े हुए। परन्तु कुल मिलाकर ये छुटपुट घटनाएं हैं। तमिलनाडु में ब्राह्मण, गैर ब्राह्मण मतभेदों का स्थान लेने के लिए गैर ब्राह्मणों और हरिजन के राष्ट्रव्यापी मतभेद संगठित नहीं हो पाए हैं। तमिलनाडु एक गैर-संस्कृत सांस्कृतिक क्षेत्र है। इसलिए चतुः वर्गीय वर्ण व्यवस्था वहां पर अधिक प्रचलित नहीं है हरिजनों ने रामास्वामी नैकर के आत्म सम्मान आंदोलन का तुरन्त उत्तर दिया। इसलिए पिछड़े हुए गैर-ब्राह्मणों और हरिजनों के संबंध न तो उन्नत गैर ब्राह्मणों को कोई धमकी देते हैं और न ही उनकी सहायता करते हैं। कर्मठ नादरों ने अपनी स्थिति में काफी सुधार कर लिया है। अन्य वर्गों को भी अपने रैंक तथा दर्जे के प्रति किसी धमकी की आशंका नहीं है।

यद्यपि कुछ गैर-ब्राह्मण जातियां आरक्षण योजनाओं का दबाव महसूस करती हैं, तथापि हो सकता है कि तमिलनाडु की अर्थव्यवस्था के विस्तार से उन्हें सहायता मिली हो। उन्नत नाडु युवकों ने उद्योग और व्यापार आदि में प्रवेश करना आरंभ कर दिया है। जैसाकि हमने देखा है ब्राह्मणों ने तमिलनाडु की सरकारी सेवाओं को लगभग त्याग दिया है, इससे इन समुदायों पर दबाव काफी हद तक हट गया है।

अध्याय 3

कर्नाटक : पिछड़े वर्गों का द्विचरणीय आन्दोलन

वर्तमान कर्नाटक राज्य निम्नलिखित भूतपूर्व क्षेत्रों में से 1956 में गठित किया गया था : (क) राजसी मैसूर के 9 जिले (1950 के बाद, भाग ख राज्य), (ख) बम्बई राज्य के 4 जिले, (ग) मद्रास राज्य के 2 जिले, (घ) भूतपूर्व भाग ख, मद्रास राज्य के 2 जिले, और (ङ) केंद्रशासित कुर्ग जिला । इन पांच क्षेत्रों में से केवल मैसूर तथा बम्बई क्षेत्रों में स्वतंत्रता पूर्व दशक में गैर-ब्राह्मण आंदोलन के रूप में पिछड़े वर्गों का आंदोलन विकसित हो पाया था । बैल्लरी तथा दक्षिणी कनारा जिलों ने, जो क्रमशः 1953 तथा 1956 तक मद्रास राज्य के अंग थे, राज्य में गैर-ब्राह्मण आंदोलन को कोई महत्वपूर्ण सहयोग नहीं दिया था । हैदराबाद के क्षेत्रों में निजाम सरकार के तानाशाही स्वरूप के कारण और अपेक्षाकृत मुसलमानों के प्रभुत्व के कारण ब्राह्मण—गैरब्राह्मण जातियों में पिछड़ेपन से संबंधित मतभेद उभर कर 1956 तक सामने नहीं आए अर्थात् जिस समय तक इन क्षेत्रों को मैसूर राज्य में शामिल किया गया था ।

लगभग 50 वर्ष के सीधे ब्रिटिश नियंत्रण के बाद राजसी मैसूर का प्रशासन 1881 में राजकुमार को वापस सौंप दिया गया । इस अवधि और अनुवर्ती दो दशकों के दौरान महत्वपूर्ण सरकारी पद मद्रास के ब्राह्मणों से भरे गये । इससे मैसूर के ब्राह्मण को काफी रोष हुआ जिन्होंने "मैसूर के मैसूरियों का है" नारा बुलंद किया (कुप्पुस्वामी, 1978), इस शताब्दी के पहले दो दशकों में मैसूर के ब्राह्मणों की स्थिति अपेक्षाकृत अच्छी होने लगी और उन्होंने अपना पूरा अधिपत्य जमा लिया । राजसी मैसूर राज्य में कुल जनसंख्या में ब्राह्मणों की संख्या 3.8 प्रतिशत, वोक्कलीगास लोगों की संख्या 20.4 प्रतिशत, लिंगायतों की 12.0 प्रतिशत तथा दलित वर्गों के लोगों की संख्या 15.1 प्रतिशत थी ।

नई शताब्दी के आरम्भ में 1901 की जगनणना से यह प्रकट हुआ कि मैसूर के 68 प्रतिशत ब्राह्मण पढ़े लिखे थे । जबकि लिंगायतों तथा वोक्कलीगास लोगों में पढ़े लिखे लोगों की प्रतिशतता क्रमशः 14.1 तथा 4 थी । इसी प्रकार लिंगायतों में 13 प्रतिशत तथा वोक्कलीगास लोगों में .07 प्रतिशत अंग्रेजी पढ़े लिखे लोगों की तुलना में ब्राह्मणों की प्रतिशतता 10.2 थी । मद्रास में अपने प्रतिपक्षियों की तरह ब्राह्मणों ने लिंगायत और वोक्कलीगास दो प्रमुख जमींदार वर्ग की जातियों पर बहुत अधिक बढ़त प्राप्त कर ली थी । अगले 40 वर्षों में अंग्रेजी जानने वाले ब्राह्मणों की संख्या 10.2 प्रतिशत से बढ़कर 36.2 प्रतिशत हो गई जबकि लिंगायतों में यही प्रतिशतता .13 से बढ़कर क 2.34 तथा वोक्कलीगास लोगों में 0.7 से बढ़कर 1.09 प्रतिशत हो गई । यद्यपि विभिन्न जातियों में साक्षरता का अन्तर तो किसी हद तक कम हो गया परन्तु अंग्रेजी साक्षरता का अंतर इसी सीमा तक कम नहीं हो पाया । शहर के क्षेत्रों में पढ़ाई लिखाई से संबंधित व्यवसायों में कुल कार्यकर्त्ताओं की संख्या में ब्राह्मणों की संख्या 38 प्रतिशत थी (मैनोर, 1977) । मद्रास में, शताब्दी के दूसरे दशक में न्याय आंदोलन शुरू होने के साथ-साथ मैसूर के राजसी राज्य में सरकारी सेवा तथा शिक्षा के क्षेत्र में ब्राह्मणों के प्रभुत्व पर लिंगायत तथा वोक्कलीगास जातियों के लोक आंदोलित हो उठे । मद्रास प्रेडीडेंट की वेल्लला तथा रेड्दी जातियों की तरह उनके पास भी भूमि जैसे महत्वपूर्ण साधन थे । ब्राह्मण लोग उत्तररोतर शाह रोल्युख होते चले गये । इस लिए लिंगायत तथा वोक्कलीगास जातियों ने उनकी जमीन खरीद ली । शताब्दी के पहले दस वर्षों में उनकी जाति संस्थाएं बन गए और गैर-ब्राह्मणों की मांग पर जोर देने के लिए वर्ष 1917 तक सी० आर० रेड्दी के नेतृत्व में प्रजा-मित्र मण्डली स्थापित हो गई । इसके अतिरिक्त जिस प्रकार मद्रास में ब्रिटिश सिविल कर्मचारी और गवर्नर जिस प्रकार जसटिस पार्टी के नेताओं की शिकायतों और दुखों को ध्यानपूर्वक सुनते थे उसी प्रकार मैसूर का राजकुमार तथा उसके दरबारी गैर-ब्राह्मणों के प्रति सहानुभूति रखते थे । ये विषय उभर कर उस समय सामने आये जब सर विश्वेश्वरय्या दीवान थे । उस समय 1918 में मैसूर मुख्य न्यायालय के मुख्य न्यायमूर्ति सर लेजले मिलर की अध्यक्षता में "सरकारी सेवा में विभिन्न समुदायों को पर्याप्त प्रतिनिधित्व देने के आवश्यक उपायों पर विचार करने के लिए "एक समिति गठित की गई । सरकारी सेवा के विभिन्न ग्रेडों में नियोजन संबंधी विस्तृत आंकड़े एकत्र करने के बाद मिलर समिति ने गैर ब्राह्मण लोगों की इस शिकायत को उचित ठहराया कि मैसूर में सिविल सेवा पर ब्राह्मणों का अधिपत्य है । समिति ने निम्नलिखित सिफारिश की :

> अधिक से अधिक सात वर्षों के दौरान प्रत्येक ग्रेड के उच्चतर पदों में से कम से कम डेढ गुणा पद और निचले पदों में 2/3 पद और यथा सम्भव प्रत्येक कार्यालय में ब्राह्मण समुदाय के अलावा अन्य संमुदायों के व्यक्तियों को दिये जाने चाहिए जिसमें वरीयता यथा उपलब्ध दलित वर्गों के विधिवत अर्हता प्राप्त उम्मीदवारों को दी जाएगी ।

मिलर समिति की रिपोर्ट को ध्यान में रखते हुए मैसूर सरकार ने पदों के लिए प्रतियोगी परीक्षाएं समाप्त कर दी और भर्ती विश्वविद्यालय परीक्षाओं के रैंकधार को नामित करके की जाने लगी इसमें गैर-ब्राह्मण लोगों को ऊपर उठाने के लक्ष्य को ध्यान में रखा गया। मद्रास की तरह विभागीय संरक्षण की व्यवस्था नहीं की गई । सभी नियुक्तियों की देख रेख एक सदस्य वाले लोक सेवा आयोग द्वारा की जाती थी ।

इस बीच प्रजा मित्र मण्डली टूट गई और 1928 में इसका स्थान प्रजापक्ष नाम की एक अन्य गैर-ब्राह्मण पार्टी ने ले लिया । इस पार्टी में मुख्यतः दो प्रमुख जातियों के युवावर्ग के लोग शामिल थे जिन्होंने पड़ोसी राज्यों में जातिगत संघर्षों का काफी भण्डाफोड़ किया था । वस्तुतः इनमें से कई नेताओं ने मद्रास में छात्रों के रूप में जसटिस पार्टी के आंदोलन में सक्रिय रूप से भाग लिया था । मिलर समिति की सिफारिशों को समझबूझ से लागू किये जाने के कारण सेवाओं में ब्राह्मणों की प्रतिशतता धीरे-धीरे कम हो गई । प्रजापक्ष को भी भारत में राष्ट्रीयवाद की उमड़ती हुई लहर का सामना करना पड़ा जिसका मैसूर के राजसी राज्य पर भी प्रभाव पड़ा । नेशनल कांग्रेस पार्टी ने भी गणतंत्रीय सुविधाएं प्राप्त करने के लिए राजसी राज्यों के लोगों को समान सिद्धांतों के आधार संगठित करना शरू कर दिया था । यद्यपि बहुत से निष्ठावन गैर-ब्राह्मण व्यक्तियों ने अपने आपसे कांग्रेस पार्टी से अलग रखा था परन्तु हालत ने उन्हें कांग्रेस आंदोलन में शामिल होने के लिए मजबूर कर दिया । इस प्रकार वोक्कलीग और लिंगायतों के जमींदार वर्ग के लोगों द्वारा कांग्रेस आंदोलन में शामिल हो जाने से यह आंदोलन इस राज्य में काफी जोर पकड़ गया । 1947

में मैसूर रियासत के भारतीय संघ में विलय और उत्तरदायी सरकार स्थापित होने के पश्चात् वोक्कलीगास जाति के लोगों की सरकारी तंत्र तथा कांग्रेस पार्टी पर नियंत्रण आरम्भ हो गया जबकि लिंगायत जाति के लोग उनके कनिष्ठ भागीदार थे। बम्बई-कर्नाटक क्षेत्र में भी छोटे-मोटे गैर-ब्राह्मण आंदोलन हुए परन्तु कई ऐतिहासिक कारणों की वजह से इन्हें मिश्रित बम्बई प्रेजीडेंसी में गति नहीं मिल पाई। बम्बई के 4 कन्नड जिलों की जनसंख्या में अधिकांश लोग लिंगायत थे और अपनी जाति में शिक्षा के विकास के लिए उन्होंने बहुत से शैक्षणिक संस्थान स्थापित किये बम्बई क्षेत्र के लिंगायतों को 1941 तक आरक्षण का लाभ प्राप्त नहीं था जिन्हें उस समय मराठाओं के साथ उस मध्यवर्ती ग्रुप में रखा गया जिसे पदों में कुछ सुविधाएं दी गई थी। लिंगायत जातियों के नेता भी कर्नाटक प्रदेश कांग्रेस समिति में ब्राह्मणों के प्रभुत्व से अप्रसन्न थे जिसके अधिकार क्षेत्र में मैसूर राजसी राज्य भी आता था। 1930 के बाद लिंगायत नेता भी कांग्रेस पार्टी में प्रवेश करने लगे और स्वतंत्रता के बाद कुछ ही वर्षों में उन्होंने बम्बई-कर्नाटक क्षेत्र में अपना पूर्ण अधिपत्य स्थापित कर लिया। बम्बई प्रशासन पर गुजरातियों और महाराष्ट्र के लोगों के नियंत्रण के कारण बम्बई क्षेत्र के नेताओं ने बहुत विवशता अनुभव की। इसके अतिरिक्त उन्हें बम्बई राज्य में शरू किये गये कुछ प्रगतिशील भूमि-सुधार भी पसन्द नहीं थे। उन्होंने संयुक्त कर्नाटक राज्य के गठन के लिए आंदोलन करने की जबरदस्त आवाज उठाई जबकि मैसूर के वोक्कलीगास नेताओं में इसके प्रति उत्साह कम था।

1956 में संयुक्त कर्नाटक राज्य बन जाने से जाति संतुलन में काफी परिवर्तन हो गया, समूचे राज्य में लिंगायतों की जनसंख्या 15 प्रतिशत तथा वोक्कलीगास लोगों की जनसंख्या लगभग 11 प्रतिशत थी। राजनीतिक गुरुत्व-केन्द्र पुराने मैसूर क्षेत्र से हट कर ये एकीकृत क्षेत्रों, विशेष रूप से बम्बई-कर्नाटक क्षेत्र, में आ गया। विस्तारित कर्नाटक राज्य के प्रथम चार मुख्य मंत्री लिंगायत जाति के थे। इस समुदाय का केवल भूमि पर ही नहीं बल्कि राजनीतिक संरक्षण के स्तोत्रों पर भी नियंत्रण था। नई कर्नाटक सरकार में 4 से 5 मंत्री इसी जाति के होते थे। दूसरे शब्दों में लिंगायतों तथा वोक्कलीगास लोगों के बीच और विभिन्न समुदायों के बीच शक्ति-संतुलन में स्पष्ट परिवर्तन हुआ था। 1956 में राज्य के पुनर्गठन के बाद नये नेताओं में सामुदायिक आरक्षण योजना को समूचे राज्य में लागू करना जरूरी समझा। 1 जुलाई, 1958 में पारित किये गये आदेश द्वारा ब्राह्मणों को छोड़कर अन्य सभी लोगों को पिछड़े हुए घोषित कर दिया गया और 57 प्रतिशत पद पिछड़े वर्गों के लिए आरक्षित कर दिये गये जिनके अतिरिक्त 18 प्रतिशत पद अनुसूचित जातियों तथा जनजातियों के लिए भी आरक्षित किये गये। केवल 25 प्रतिशत पद ही खुली प्रतियोगिता के लिए छोड़े गये। यद्यपि इस राज्य में 1947 तक मद्रास के गैर-ब्राह्मणों का गैर-ब्राह्मण उन्नत तथा गैर-ब्राह्मण पिछड़े वर्गों में विभाजन हो चुका था परन्तु कर्नाटक में 1960 तक इस प्रकार का विभाजन देखने में नहीं आया था। जब 1958 का आरक्षण आदेश रद्द कर दिया गया तो सरकार ने 1959 में एक अन्य आदेश जारी किया जिसमें ब्राह्मणों, बनियों और क्षत्रियों को छोड़ अन्य सभी जातियों को पिछड़ी जातियों के रूप में वर्गीकृत कर दिया गया। उच्च न्यायालय ने इसे भी रद्द कर दिया। इसी वर्ष सरकार ने एक अन्य आदेश जारी किया जिसके द्वारा कर्नाटक की जनसंख्या को 14 समूहों में विभाजित कर दिया गया और उनमें से प्रत्येक के लिए पदों तथा शिक्षा के स्थानों का उप खण्डीय आरक्षण कर दिया गया। न्यायपालिका ने इस आदेश के साथ भी वही व्यवहार किया। 1960 में सरकार ने राज्य में वर्गीकरण के लिए मानदण्ड निर्धारित करने के प्रयोजन से नग्न गौड़ा के अधीन एक समिति गठित की। समिति ने सामाजिक पिछड़ेपन के लिए साक्षरता और शैक्षिणिक पिछड़ेपन को निर्धारित करने के लिए तथा गत तीन वर्षों में हाई स्कूल की कक्षाओं में प्रति हजार की जन संख्याओं में छात्रों की संख्या को मानदण्ड बनाया। नग्न गौड़ा की अंतरिम रिपोर्ट पर अमल करते हुए 22 प्रतिशत पद और स्थान अन्य पिछड़े वर्गों के लिए तथा 18 प्रतिशत अनुसूचित जातियों और जनजातियों के लिए आरक्षित कर दिये गये जिसके परिणामस्वरूप 60 प्रतिशत स्थान खुल प्रतियोगिता के लिए बन गये। समिति की अंतिम रिपोर्ट पर विचार करने के बाद सरकार ने पिछड़े वर्गों के लिए आरक्षण की प्रतिशतता बढ़ा कर 30 कर दी और खुली प्रतियोगिता के लिए 52 प्रतिशत स्थान रह गये। यहां स्थिति है जिसने आरक्षण की सिफारिश की सरकार ने उससे बहुत कम आरक्षण निश्चित किया। समिति ने पिछड़े वर्गों तथा अधिक पिछड़े वर्गों के लिए उपखंडीय आरक्षण की सिफारिश भी की थी पर जिन्हें सरकारी आदेशों में कोई स्थान नहीं दिया गया।

नग्न गौड़ा की अंतिम रिपोर्ट ने बहुत से विवाद उत्पन्न कर दिये केवल इसी आधार पर कि तीन हाई स्कूल कक्षाओं में प्रतिहजार जन संख्या में लिंगायत छात्रों की संख्या राज्य की औसत 6.0 संख्या कुछ अधिक थी, समिति ने हाल में सत्ता में आए इस प्रमुख समुदाय को पिछड़े वर्गों की सूची में शामिल नहीं किया। लिंगायत जाति के राजनीतिक नेताओं ने भी सरकार पर दबाव डाला और सरकार को अंततः घुटने टेकने पड़े। इसने लिंगायतों को पिछड़े वर्गों की सूची में शामिल कर लिया और 1962 के आदेश में निम्नलिखित आरक्षण योजना की व्यवस्था की :

खुली प्रतियोगिता	32%
अन्य पिछड़े वर्ग	50%
अनुसूचित जातियों तथा अनुसूचित जन जातियां	18%

जानकार सूत्रों ने बताया कि जब तक आरक्षित पदों तथा स्थानों की प्रतिशतता बढ़ाई गई तब तक गैर-लिंगायत पिछड़े वर्गों ने प्रमुख लिंगायतों के पिछड़ी श्रेणी में वर्गीकृत किये जाने पर अधिक रोष प्रकट नहीं किया। वर्गीकरण की यह योजना बालाजी के प्रसिद्ध मामले में 1963 में उच्चतम न्यायालय द्वारा विखण्डित करदी गई। इस निर्णय के बाद मैसूर सरकार ने एक और आदेश जारी किया जिसके द्वारा 30% स्थान अन्य पिछड़े वर्गों के लिए तथा 18% स्थान अनुसूचित जातियों तथा जन जातियों के लिए आरक्षित कर दिये गये। इसमें जातियां नहीं बल्कि 1200 रुपये प्रतिवर्ष से कम आय वाले काश्तकार, कारीगर, छोटे व्यापारी घटिया व्यवसायों जैसे कुछ व्यवसायों के व्यक्ति आरक्षण के लिए पात्र समझे गये। आरक्षण की यह तथा कथित योजना 1963 में आरंभ हुई और 1977 तक जारी रही परन्तु वास्तव में पद तथा स्थान विभिन्न समुदायों और विशेषकर लिंगायत तथा वोक्कलीगास लोगों के राजनीतिक प्रभाव के अधार पर भरे जाते थे।

1960 के वर्षों में गैर लिंगायत और गैर वोक्कलिगास अल्पसंख्यक जातियों में इस संबंध में रोष उभड़ने लगा था कि समग्र राजनैतिक व्यवस्था को जिस प्रकार चलाया जा रहा है उसे और राज्यों के पुनर्गठन के बाद लिंगायतों को काफी और कुछ हद तक वोक्कालिगों को लाभ प्राप्त हुए हैं। राज्य की राजनीति में दूसरे स्थान पर परिणत हो जाने पर वोक्कलिग नेताओं को भी काफी निराशा हुई। मैसूर के एक महत्वपूर्ण राजनीतिज्ञ की यह बात लिखित रूप से दर्ज है कि भविष्य में लंबे समय तक कोई भी गैर लिंगायत राज्य का मुख्य मंत्री नहीं होगा। इस रोष के बढ़ने के साथ ही साथ भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस के टुकड़े हो गए और इसके बाद शीघ्र ही संसद और विधान सभा के चुनाव हुए। श्री देवराज अर्स ने जो कांग्रेस (ई) पार्टी के नेता के रूप में उभरे बड़ी सावधानी और सतत प्रयास से गैर-लिंगयात गैर वोक्कलिग समुदाय को बढ़ावा दिया। इन्दिरा लहर और अपने द्वारा स्थापित नए सहयोग दोनों के कारण श्री अर्स 1972 में उच्च सत्ता में आ गए और 1978 के कुछ महीनों के अंतराल को छोड़कर 1980 तक के वे इसी स्थिति में बने रहे। उन्होंने 1972 में श्री एल० जी० हवनूर की अध्यक्षता में

कर्नाटक पिछड़े वर्ग आयोग का गठन किया । इस समिति ने 1975 में अपनी रिपोर्ट प्रस्तुत की और मई 1976 में यह विधान मंडल के पटल पर रखी गई । मंत्रिमंडल ने इस रिपोर्ट का अनुमोदन किया और फरवरी 1977 में नई साम्प्रदायिक आरक्षण योजना की घोषणा की गई ।

हवनूर आयोग के गठन से ही लिंगायतों को संशय हो गया था । यहां तक कि श्री जे० बी० मल्लाराध्य जो अखिल भारतीय वीरशैव (लिंगायत) महासभा के प्रधान थे, हवनूर आयोग के सामने गवाही देने के लिए नहीं आए । लिंगायत नेताओं ने हवनार आयोग नियुक्त किए जाने को अपने समुदाय को अलग-थलग करने की एक कुटिल चाल समझा । यह उनके लिए श्री देवराज अर्स की उनकी शक्ति और प्रभाव को कम करने की एक और युक्ति थी । इस आयोग ने अपना सर्वेक्षण स्वयं किया और बहुविध परीक्षणों यथा आर्थिक, अवसिक और व्यावसायिक को ध्यान में रखते हुए कर्नाटक की पिछड़ी आबादी को इन तीन समूहों में विभाजित किया–(1) पिछड़े समुदाय (2) पिछड़ी जातियां (3) पिछड़ी-जन जातियां और इनमें से प्रत्येक पिछड़े वर्ग के लिए अलग-अलग आरक्षण की सिफारिश की। ऐसा प्रतीत होता है कि आयोग ने जान बूझ कर उच्चतम न्यायालय के इस समादेश की अपेक्षा की कि आरक्षण 50% से अधिक नहीं होना चाहिए । अपने परीक्षण और सर्वेक्षण के आधार पर आयोग ने ब्राह्मणों, बटो, लिंगायतों क्षत्रियों, जैनों को किसी भी पिछड़े वर्ग में शामिल नहीं किया । बाद में कार्नाटक उच्च न्यायालय ने संविधान के अनुच्छेद 15(4) और 16(4) दोनों के प्रयोजन के लिए आरासू जाति को सूची से निकाल देने का आदेश दिया । उसने अनुच्छेद 16(4) के अंतर्गत बी बलीजा, देव दिगा, गनिगा, राजपूत और सतानी को पिछड़े वर्ग में नहीं माना । फरवरी 1977 में सरकार ने आदेश जारी किए जिसमें निम्नलिखित आरक्षण की व्यवस्था की गई थी :

खुली प्रतियोगिता	42%
पिछड़े समुदाय	20%
पिछड़ी जातियां	10%
पिछड़ी जनजातियां	5%
विशेष समूह	5%
अनुसूचित जातियां और अनुसूचित जन जातियां	18%

विशेष समूहों में वे व्यक्ति शामिल थे जो स्वयं अपना रोजगार चला रहे थे या कारीगर थे या अन्य व्यवसायों में लगे थे और जिनकी आमदनी 8,000 रु० वार्षिक से अधिक नहीं थी । बाद के आदेशों में विशेष समूह के लिए नियत आरक्षण का प्रतिशत बढाकर 15% कर दिया गया और आमदनी की सीमा भी 10,000 तक बढ़ा दी गई ।

आरक्षण योजना को देखने से पता चलेगा कि लिंगायतों की कुछ उपजातियों को पिछड़े वर्ग में शामिल किया गया है जब कि इसकी अधिकांश उपजातियों को उन्नत वर्ग का माना गया है । इसी प्रकार वोक्कलियों की पिछड़े समुदाय में गणना की गई लेकिन कर्नाटक राज्य की राजनीति में उनके भूतपूर्व वरिष्ठ सहयोगियों लिंगायतों को अधिकांशतः उन्नत वर्ग में माना गया है । इन कारणों से लिंगायत समुदाय अपने को हवनूर आयोग की रिपोर्ट पर आधारित आरक्षण योजना के विषय में विभाजित पाता है । साथ ही इस मामले में वोक्कलिगों को लिंगायतों के साथ कोई मेल भी नहीं हो सकता है क्योंकि वे अपने को विभिन्न पिछड़े और उन्नत वर्ग में समझते है, यह परिस्थिति बिहार और उत्तर प्रदेश के बिल्कुल विपरीत है, वहां विभिन्न जाति-वर्गों अर्थात् ब्राह्मणों, क्षत्रियों, राजपूतों और भूमिहारों को उन्नत श्रेणी में रखा गया है और उनको संगठित होने का एक मंच मिल सकता है ।

लिंगायत समुदाय के लोगों को हवनूर रिपोर्ट और बाद में इस पर आधारित सरकारी आदेशों से बड़े विक्षुब्ध और क्रोधित हुए । उनके कुछ नेताओं ने तो यहां तक आरोप लगाया कि श्री हवनूर ने, जो 1978-80 के अर्स मंत्रिमंडल में समाजिक कल्याण और विधि मंत्री थे, सरकारी अधिकारियों को एक गुप्त परिपत्र जारी किया जिसमें उनको सलाह दी गई थी कि वे लिंगायतों को कहीं भी यहां तक कि खुली योग्यता प्रतियोगिता में भी उत्तीर्ण न होने दें । अगस्त 1978 में एक लिंगायत सदस्य ने विधान सभा के भीतर प्रतीकात्मक रूप से हवनूर रिपोर्ट को जलाने का प्रयत्न किया । इस समुदाय के लोगों ने विशेष कर युवकों ने कर्नाटक के विभिन्न शहरों में रिपोर्ट और आदेशों के विरोध में प्रदर्शन किए । लिंगायत मठ के काफी थोड़े स्वामियों ने इस विरोध में भाग लिया । (विस्तार के लिए देखें देसाई 1979) श्री मल्लाराध्य जो सेवानिवृत्त आई० ए० एस० अधिकारी और अखिल भारतीय वीरशैव (लिंगायत) महासभा के प्रधान थे इन आदेशों (1977 अधिनियम) के विरोध में आंदोलनों के नेतृत्व करते रहे । जुलाई 1979 में हवनूर रिपोर्ट से बुरी तरह प्रभावित होने वाली सभी जातियों का एक सम्मेलन हुआ । इस महासभा ने जिलों में संगठनों की नियुक्ति करके लिंगायत समुदाय को संघटित करना आरंभ किया । ऐसे भी समाचार मिले कि विधान मंडल के लिंगायत सदस्यों ने रिपोर्ट पर विचार विमर्श करने के लिए बैठकों की और अगले कार्यक्रम के संबंध में सोच विचार किया । लेकिन कुछ जानकारों ने बताया कि इस विषय पर सरकार में कोई मतभेद नहीं था । जैसे एक तत्कालीन मंत्रिमंडल स्तर के मंत्री ने बताया कि लिंगायतों को खुली योग्यता प्रतियोगिता में ब्राह्मणों से स्पर्धा करने की आशंका हो गई थी । ऐसा नहीं है कि रिपोर्ट और नई आरक्षण योजना के विरोध में लिंगायतों के आंदोलनों को अन्य अल्प संख्यक जातियों से कोई चुनौती नहीं दी गई है। जब टोरंटो स्थित मानवविज्ञानी प्रो० के० ईश्वरन ने इंडियन एक्सप्रेस) (1 मार्च 1979) के अपने लेख में हवनूर सर्वेक्षण के वर्गीकरण की आलोचना की तो अन्य अल्पसंख्यक जातियों के अध्यापकों और पत्रकारों ने इसकी प्रत्यालोचना की । (ईश्वरन और अन्य 1979) रिपोर्ट के समर्थन में भी प्रदर्शन किए गए । इससे पता चल जाता है कि अल्पसंख्यक जातियां इस विषय पर पिछले वर्षों में किस सीमा तक सफलता पूर्वक संघटित होती रही है । श्री देवराज अर्स ने अल्पसंख्यक पिछड़ी जातियों के जिस मेल की स्थापना की थी वह काफी शक्तिशाली और टिकाऊ रहा । श्री अर्स के जाने पर भी यह बना रहा । जैसे हम बाद में देखेंगे कि उत्तर प्रदेश और बिहार विधान मंडलों में पिछड़ी जातियों की राजनैतिक शक्ति घटती बढ़ती रही है। लेकिन इसके विपरीत कर्नाटक में 1972 के चुनावों में निश्चित विभाजक का कार्य किया । अल्पसंख्यक पिछड़ी जातियों की राजनैतिक शक्ति किसी प्रकार से कम नहीं हुई, ये अब साधारणतः कांग्रेस (इ) की अगुआई में अपनी एकता बनाए हुए हैं । अनुसूचित जातियां साधारणतः अल्पसंख्यक जातियों के साथ हैं ।

कर्नाटक का गैर ब्राह्मण आन्दोलन 1920 के वर्षों के बाद के दशकों में किसी भी उच्च पुनरूत्थानवादी कन्नड़ विचार धारा का निर्माण नहीं कर सका जो गैर ब्राह्मणों में को फूट पड़ने से रोक सकती । जैसे कि हमने हाल ही की फूट में देखा है कि इसने अपेक्षाकृत पुराने ब्राह्मण-अब्राह्मण की फूट का स्थान ले लिया है। कन्नड़ चलुवलिंगार आन्दोलन बहुत ही शक्तिहीन है और बंगलौर तक ही सीमित है और इसी कारण यह सभी लोगों को संगठित होने के लिए मंच प्रदान नहीं कर सका है।

इस बात के भी कुछ साक्ष्य हैं कि कर्नाटक में निजी क्षेत्र के उद्योगों में रोजगार के अवसर लगातार बढ़ते रहे हैं। आरम्भ में इस क्षेत्र में ब्राह्मणों ने प्रवेश किया। इनमें से कई राज्य के बाहर भी जाते रहे हैं। देखना तो यह है कि क्या निजी क्षेत्र के उद्योग लिंगायत युवकों को भी इसी प्रकार नौकरी दे सकेंगे ।

उत्तर प्रदेश और बिहार के ब्राह्मणों कायस्थों, भूमिहरों और राजपूतों की तरह कर्नाटक के लिंगायतों, ब्राह्मणों और बंटों को आरक्षण योजना से अलग रखा गया । कर्नाटक के ब्राह्मण इतने अशक्त हैं कि यदि वे लिंगायतों के साथ मिल भी जाएं तो इसे कोई अन्तर नहीं होगा । ब्राह्मण नेता यह महसूस करते हैं कि 1972 से नौकरी और स्थानों के संबंध में उनकी स्थिति कुछ अच्छी है । इन सभी कारणों से कर्नाटक में उन्नत जातियों का क्रोध शांत रहा और उसने कोई हिंसात्मक रूप नहीं लिया ।

अध्याय 4

बिहार : पिछड़े वर्गों का बिखरा और क्षीण आन्दोलन

बेटिल (1970) का विचार है कि तमिलनाडु में हिन्दुओं को ब्राह्मण, गैर-ब्राह्मण और हरिजन इन तीन जातियों में विभाजित किया जा सकता है। इस संस्कृत रहित क्षेत्र में ब्राह्मणों और गैर-ब्राह्मणों के बीच की फूट के सामने अन्य मतभेद कम महत्वपूर्ण बन कर रह गए हैं, साथ ही विशिष्ट द्रविड़ विचारधारा गैर-ब्राह्मणों में आपसी और गैर-ब्राह्मणों तथा हरिजनों में फूट पड़ने से बचाती रही है। कर्नाटक में जो तमिलनाडु के मुकाबले अधिक संस्कृत प्रभावित है गैर-ब्राह्मण आन्दोलन ने भेद उत्पन्न किया है और नई फूटों को जन्म दिया है, इसके विपरीत बिहार और उत्तर प्रदेश में जो संस्कृत-सांस्कृतिक क्षेत्र में दो राज्य हैं, गैर-ब्राह्मण जातियों को एक आन्दोलन के अन्तर्गत मिल जाने की कोई गुंजाइश नहीं रही। इन दोनों राज्यों में द्विज जातियां यानि ब्राह्मण, क्षत्रिय और वैश्य अपने को एक दूसरे से और पिछड़ी जातियों और हरिजनों से भी पूर्णतः अलग समझते हैं। द्विज वर्ग में कायस्थों का एक अलग स्थान है। ऐतिहासिक रूप से वे इन क्षेत्रों में शिक्षित वर्ग के रूप में उभरे, वे ब्राह्मणों के मुकाबले हर प्रकार की लेखनी के धनी ही नहीं रहे बल्कि उनको आधुनिक शिक्षा और व्यवसाय ग्रहण करने में भी पछाड़ दिया। वे राष्ट्रीय आन्दोलन में भी आगे रहे थे, बिहार में 1960 के बीच के वर्षों तक कांग्रेस के भीतर राजनैतिक संघर्ष का मुख्य लक्षण द्विज जातियों के लोगों में परस्पर टकराव और होड़ का होना है। 1960 के वर्षों के बाद इन फूटों में कोई महत्वपूर्ण कमी हुए बिना इन जाति वर्गों और निम्न खेतीहर जातियों और अनुसूचित जातियों के बीच भी टकराव होने लगे। इस समय की बिहार की राजनीति से दो स्तरों पर साथ-साथ टकराव होने का पता चलता है जो एक ओर उन्नत जातियों और उच्च खेतीहर जातियों के बीच और दूसरी ओर उच्च खेतीहर जातियों और अनुसूचित जातियों के बीच है।

बिहार की जाति और साम्प्रदायिक संरचना इस प्रकार है—ब्राह्मणों, भूमिहारों, राजपूतों और राजपूतों की उन्नत जातियां आबादी का 13 प्रतिशत, ऊंची जाति के पिछड़े ब्राह्मण, यादव, कुर्मी, कुरी 19.3 प्रतिशत, छोटे कारीगर और भूमिहीन जातियां जैसे धनुक, मल्लाह आदि 32 प्रतिशत मुस्लिम और अनुसूचित जातियां/जनजातियां क्रमशः 12.5 प्रतिशत और 23.5 प्रतिशत हैं। (बिहार 1980) बनियों ने बिहार की राजनीति में उत्तर प्रदेश की तरह महत्वपूर्ण स्थान नहीं बनाया है। बिहार में उनकी स्थिति और सामाजिक स्तर काफी नीचे है और अधिकांश को नवम्बर 1978 के सरकारी आदेश के अनुसार पिछड़े वर्ग में रखा गया है। बिहार में द्विज जातियों में कायस्थों को छोड़कर ब्राह्मणों, भूमिहारों और राजपूतों के पास काफी भूमि रही है। इन सभी जातियों में प्रत्येक के रजवाड़े रहे हैं और जमींदारी प्रथा के कारण इन जाति के जमींदारों ने ग्रामीण क्षेत्र पर स्थायी राजनैतिक और आर्थिक नियंत्रण स्थापित कर लिया था जो कर्नाटक और मद्रास के रैयतवारी क्षेत्रों से बिल्कुल भिन्न था। 1931 तक 38.8 प्रतिशत कायस्थ साक्षर थे। इसकी तुलना में 19.5 प्रतिशत ब्राह्मण, 13.6 प्रतिशत भूमिहार और 12.6 प्रतिशत राजपूत साक्षर थे। ऊंची पिछड़ी जातियों का साक्षरता का प्रतिशत लगभग .5 प्रतिशत था। (एन०डी०एम०) बिहार और उत्तर प्रदेश दोनों में ब्राह्मण, तमिलनाडु और कर्नाटक की तरह गैर-ब्राह्मणों को आधुनिक शिक्षा और व्यवसायों को ग्रहण करने में पछाड़ नहीं सके। कायस्थों ने पृथक बिहार राज्य बनाने का नेतृत्व किया। राय (1967) का विचार है कि बिहार का 1911 में बंगाल से अलग हो जाना एक प्रकार से कायस्थों की आकांक्षा की पूर्ति है (पृष्ठ 418), सिविल सेवाओं के प्रसार से कायस्थों और मुस्लिमों को अनुपात से अधिक लाभ मिला।

कांग्रेस आन्दोलन के फैलने पर और स्थानीय निकायों पर इस दल का नियंत्रण हो जाने पर भूमिहार, ब्राह्मण और राजपूत कायस्थों की प्रधानता के बारे में सतर्क हुए। राष्ट्रीय आन्दोलन में कायस्थों की प्रधानता के विरुद्ध विशेषकर भूमिहारों की अन्य जातियों का नेतृत्व करने की अपेक्षाकृत अच्छी स्थिति थी। उनके नेताओं ने विशेषकर सर गणेशदत्त और सहजानंद सरस्वती ने अपने जाति के लोगों को एक ब्राह्मण राज्य की मांग करने के लक्ष्य के लिए संघटित करने के लिए काफी संगठन, कुशलता और क्षमता का परिचय दिया। वे राजपूतों की अपेक्षा अधिक साक्षर थे। वे कायस्थों के मुकाबले अधिक ग्रामोन्मुख थे। इस प्रकार 1920 के वर्षों में कांग्रेस की राजनीति में भूमिहारों का महत्व बढ़ना आरम्भ हुआ और जो 1961 तक श्री श्रीकृष्ण सिन्हा की मृत्यु तक बना रहा। प्रांतीय स्वायत्तता आरम्भ किए जाने पर कांग्रेस दल का स्वरूप बदलने लगा। दल पर सामाजिक और भौतिक परिस्थितियों के अनुसार अपने को स्थापित करने का काफी जोर पड़ा। सामाजिक फूट को विशेषकर उन्नत जातियों के मध्य की फूट को राजनैतिक रंग दिया गया और उसको राजनीति के क्षेत्र में लाया गया। इस प्रकार दल का अधोमुखी गति से, श्री राय (अदिनांकित) के कथन के अनुसार राजनीति में बिखराव और संकीर्णता उत्पन्न हुई, कायस्थों ने अपनी गिरती स्थिति को राजपूत वर्ग के समर्थन और प्रोत्साहन से बचाने का प्रयत्न किया। ब्राह्मणों ने भी बड़ी संख्या में कांग्रेस में प्रवेश किया और तब से अपनी स्थिति को काफी दृढ़ बनाया (राय 1970, 1967 अदिनांकित), लेकिन 1977 में उनको अस्थायी धक्का लगा। 1950 के वर्षों में भूमिहारों और राजपूतों की प्रतिद्वंद्विता चरम सीमा पर पहुंच गई। यद्यपि श्री श्रीकृष्ण सिन्हा (भूमिहार) और श्री अनुग्रह नारायण सिन्हा (राजपूत) के बीच प्रतिद्वंद्विता कुछ मात्रा में जाति सीमा को पार कर गई थी लेकिन उनके अधिकांश समर्थक उन्हीं की जाति के थे। ब्राह्मण विधायक साधारणतः श्री श्रीकृष्ण सिन्हा के साथ रहे।

ऊंची पिछड़ी जातियों में से यादवों और कुर्मियों ने इस शताब्दी के पहले दशक के दौरान अपने को जाति के आधार पर संगठित करना आरम्भ कर लिया था (राव—1979)), अखिल भारतीय यादव महासभा का मुख्यालय पटना में है और बिहारी यादव पंजाब और उत्तर प्रदेश में अपनी इन्हीं जातियों के साथ भारतीय यादव आन्दोलन की रीढ़ बने/ यद्यपि/अंत में भारत के अन्य राज्यों में यादव राजनैतिक संघटन के उस स्तर तक नहीं पहुंच सके जिसे बिहारी यादवों ने प्राप्त किया था। बिहारी यादवों और कुर्मियों दोनों में काफी समय तक संस्कृतिकरण के लिए काफी मोह रहा जब कि अन्यत्र अन्य पिछड़े वर्गों ने इससे शीघ्र मुक्ति पा ली (लेकिन इन जातियों के कुछ नेताओं ने विशेष नागपुरी ने जो कुर्मी थे अपनी जाति के लोगों को संस्कृतीकरण का आश्रय न लेने की सलाह दी)।

इस शताब्दी के आरम्भिक दशकों में यादवों का उद्देश्य अपनी जाति से दहेज, शराब, मांस खाने की बुराई को दूर करना था और वे बड़ी संख्या में आर्य समाज में शामिल हुए। उनके जनेऊ पहनने के दावे का द्विज जाति के लोगों ने बड़ा विरोध किया और कभी-कभार तो हिंसा भी भड़क उठी। उन्होंने अपने युवकों के लिए शैक्षिक सुविधा प्रदान करने का भी प्रयत्न किया, यद्यपि यादव प्रधान शैक्षिक संस्थानों का विकास आजादी मिलने के काफी वर्षों बाद आरम्भ हुआ। उन्होंने ब्रिटिश प्राधिकारियों से नौकरियों में और अधिक हिस्सा देने का अपील की।

यद्यपि यादव कुर्मी और कूरी आन्दोलन का राजनैतिक परिणाम आरम्भ में सीमित रहा लेकिन बाद में इन जातियों का संगठन कुछ चलने पर 1920 में इन जातियों को एक राजनैतिक दल त्रिवेणी सभा में शामिल करने का प्रयत्न किया गया। त्रिवेणी सभा ने 1936 में शाहबाद और पटना जिलों में चुनाव लड़े लेकिन इसके परिणाम बड़े दुर्भाग्य पूर्ण रहे और शीघ्र ही यह समाप्त हो गई। यह स्थिति मद्रास की जस्टिस पार्टी और मैसूर की प्रजा पक्ष से बिल्कुल विपरीत है। यद्यपि यह सच है कि अब्राह्मणों की मद्रास की जस्टिस पार्टी और मैसूर की प्रजा पक्ष राष्ट्रवाद की लहर में ध्वस्त हो गई, लेकिन इन जाति-वर्गों का राजनैतिक खंड कांग्रेस में घुस गया और बाद में उसने पलड़ा अपनी ओर झुकाए रखा। लेकिन बिहार में यादवों, कुर्मियों और कूरियों के साधारणतः राजनीति में और मुख्यतः कांग्रेस दल में प्रवेश प्रायः पूर्णतः उन्नत जातियों में प्रतिद्वंद्विता की मात्रा से नियंत्रित और शासित होता रहा है। खेतीहर जातियों के बिहार कांग्रेस में प्रवेश करने के संबंध में श्री राय लिखते हैं "राजनीति में प्रवेश करने के समय इन अधिकांश जाति वर्गों ने ऊंची जातियों के प्रतिद्वंद्वियों के सहायकों के रूप में कार्य किया, ऊंची जाति के नेताओं ने नीची जाति के लोगों को नेतृत्व के स्थान पर सहयोजित किया (अदिनांकित पृष्ठ 328)। प्रत्येक खेतीहर जाति के प्रवेश करने से कांग्रेस विभाजित हो गई। श्री राय और विवेचना करते हैं कि यथा समय वे स्वतः शासित हो गए। लेकिन इसका तात्पर्य यह नहीं है कि पिछड़ी जाति के सभी या अधिकांश विधायक या दल के पदाधिकारी एक नेता की रहनुमाई में रहे। प्रायः थोड़े से अनुयायी वाले कई नेताओं का उदय हुआ। श्री राय ने जो आंकड़े (अदिनांकित) संग्रहित किए हैं उनसे पता चलता है कि 1934 और 1960 के बीच बिहार प्रदेश कांग्रेस कार्यकारिणी समिति में कायस्थ सदस्यों की संख्या में भारी कमी हुई जो 53.84 प्रतिशत से 4.76 हो गई और भूमिहारों की संख्या 15.38 प्रतिशत से बढ़कर 28.56 प्रतिशत हो गई। राजपूतों और ब्राह्मणों का प्रतिनिधित्व कुछ बढ़ने के बाद फिर कम हो गया। 1948 के लगभग पिछड़े वर्ग (ऊंचे और नीचे दोनों) का आविर्भाव हुआ। श्री ब्लेयर के अनुसार 1962 में कांग्रेस विधानमंडल दल में पिछड़े वर्ग का प्रतिशत 24.9 प्रतिशत था और इसमें अधिकांश ऊंची जाति के पिछड़े वर्ग के थे। एक बार फिर यह स्थिति दक्षिण भारत के विपरीत थी जहां अब्राह्मणों ने कांग्रेस और साधारण राजनीति से ब्राह्मणों को निकाल दिया था। बिहार में उन्नत जातियां राजनीति और आर्थिक क्षेत्र में अच्छी तरह जमी हुई थी और विभाजित और अपूर्ण रूप से संगठित पिछड़े वर्ग उनको निकाल नहीं सके। बिहार कांग्रेस विधान मंडल दल के इतिहास में पहली बार 1963 में उन्नत जाति के नेता (श्री कृष्ण बल्लभ सहाय—कायस्थ) और पिछड़े वर्ग के काफी योग्य नेता (श्री विरचानंद पटेल—कुर्मी) के बीच मुकाबला हुआ। ध्यान देने की बात तो यह है कि न केवल पिछड़े वर्ग के बल्कि अनुसूचित जाति और जनजातियों के विधायक भी मुकाबला करने वाले इन दो व्यक्तियों के बीच बंटे हुए थे। वास्तव में श्री सहाय को श्री पटेल की अपेक्षा पिछड़े वर्ग के अधिक मत मिले। (राय—अदिनांकित)

जैसे श्री ब्लेयर (1980) ने बताया है कि 1962 के बाद ऊंची जाति के विधायकों की संख्या कम हो गई लेकिन यह बहुत ज्यादा और टिकाऊ नहीं थी। इसी प्रकार पिछड़े वर्ग के विधायकों की जो संख्या बढ़ी वह भी ज्यादा या टिकाऊ नहीं थी। कांग्रेस में पिछड़े वर्ग के इस नियंत्रित प्रवेश से 1967 के पहले के वर्षों में समाजवादी नेता श्री राममनोहर लोहिया को पूरा भरोसा हो गया था कि कांग्रेस को केवल तभी हराया जा सकता है जब सभी पिछड़ी जातियों को एक राजनैतिक दल के अन्तर्गत संगठित किया जाए। 1960 के वर्षों में संयुक्त समाजवादी दल ने उनको अपने साथ मिलाने का प्रयत्न आरंभ किया। 1967 में कांग्रेस की पराजय से पिछड़े वर्ग का महत्वपूर्ण उत्कर्ष हुआ। विधान सभा के इन चुनावों में बनिया, कुर्मी, कूरी और यादव उम्मीदवार बड़ी संख्या में जीत कर आए और वे कुल विधान सभा सदस्यों के 31.6 प्रतिशत थे। ये अधिकांशतः संयुक्त समाजवादी दल के थे। 1969 के मध्यावधि चुनावों में भी यही स्थिति रही। 1972 के चुनावों में कांग्रेस पुनः सत्ता में आई और पिछड़े वर्ग के विधान सभा सदस्यों की संख्या विधान सभा में 1962 के स्तर से भी कम हो गई। इनकी संख्या फिर 1977 में बढ़ गई, जब जनता पार्टी चुनाव में जीत कर आई। वास्तव में 1977 के चुनाव के बाद बनी विधान सभा में पिछड़े वर्गों को इतने अधिक स्थान मिले जितने पहले कभी नहीं मिले थे। लेकिन इसकी कीमत कायस्थों को चुकानी पड़ी भूमिहारों और राजपूतों की संख्या में कोई कमी नहीं आई। (ब्लेयर— 1980)। जैसे कि बाद की घटनाओं से ज्ञात हुआ है कि 1977 के चुनाव किसी भी प्रकार बिहार की राजनीति में पिछड़ी जातियों के स्थायी और टिकाऊ उत्कर्ष के प्रतीक नहीं है। 1967 के उनके उत्थान की तरह 1977 का उनका उत्कर्ष अस्थायी और अल्पकालीन रहा। इसके विपरीत कर्नाटक में 1972 और 1978 के चुनावों में नई पिछड़ी जातियों का मेल टिकाऊ और अजेय प्रमाणित हो गया।

राजनीति में पिछड़ी जातियों के अपूर्ण संघटन का एक कारण बिहार की ग्रामीण राजनैतिक अर्थव्यवस्था है। राष्ट्रीय आंदोलन को ग्रामोन्मुखी बनाने के गांधी जी के प्रयत्न के बाद कांग्रेस जनों ने किसानों और भूमि सुधारों पर विचार करना आरंभ कर दिया। बिहार में निकृष्ट जमींदारी प्रथा के कारण राज्य में किसान आंदोलन शुरू हुए। किसान सभा की ओर कई जोशीले युवक कांग्रेसी आकृष्ट हुए। इस आंदोलन को वाकायत आंदोलन से भी काफी प्रोत्साहन मिला। वाकायत आंदोलन का उद्देश्य उन लोगों की जमीन वापस दिलाना था जो 1930 के वर्षों के मंदी के दौरान छीन ली गई थी (सेनगुप्त—1979) यद्यपि बिहार कांग्रेस में भूमिहारों का काफी प्रभाव था लेकिन 1950 में जमींदारी उन्मूलन अधिनियम पास कर लिया गया। बिचौलियों के अधिकार सरकार को दे दिए गए लेकिन जमींदारों को कृषि कार्य का प्रबंध करने की अनुमति दे दी गई। श्री जनूजी (1974) के अध्ययन के अनुसार जमींदारी और बिचौलियों के अधिकार समाप्त किए जाने पर ब्राह्मणों ने बताया कि इस से न तो उनको फायदा हुआ है और न नुकसान ही। लेकिन इससे कुर्मियों को निश्चित रूप से फायदा पहुंचा। भागत्यतः इस कानून से ऊंची खेतीहर जातियों के कई काश्तकारों को फायदा हुआ। उन्होंने ऊंची जाति के वर्गों के सामाजिक सम्मान और आर्थिक शक्ति के ह्रास होने के आसार और अपने सम्मान और शान की अभिवृद्धि का स्वागत किया (वही), यद्यपि बिहार ने कृषि की उन्नति में कोई प्रसिद्धि नहीं पाई।

लेकिन ग्रामीण क्षेत्र में प्रचुर निवेश किए जाने और कृषि वस्तुओं का मूल्य बढ़ जाने के कारण कई किसानों की क्षमता में वृद्धि हुई है। इन कारणों का लाभ उठाने के लिए भूमि वाले कुर्मी, कूरी और यादव किसान अधिक अच्छी स्थिति में थे। ऊंची जाति वाले स्वयं खेती नहीं करते हैं। खेतीहर जाति के लोग ही उनकी जमीन पर बहुत मेहनत करते हैं और वे अपने मजदूरों से सख्ती से काम लेते हैं (सेठ—1979, मल्होत्रा—1980, ब्लेयर—1980) यदि कृषि मजदूर किसी प्रकार अड़ जाते हैं या राजनैतिक प्रतिरोध करते हैं तो उनको इन पर अत्याचार करने में कोई हिचक नहीं होती है। इसी मूल्य कारण से बेलची, पटाड़ा,

गोयालपुर, विश्रामपुर, पारसबीघा आदि में हरिजनों से बदला लिया गया। कुछ सम्मानित राजनीतिज्ञों का विचार था कि इनमें कुर्मी अधिक संघर्षशील रहे। बिहार का ग्रामीण क्षेत्रों में सत्ता का स्वरूप उतना स्पष्ट नहीं रहा है जितना अन्यत्र रहा है। कायस्थों को छोड़कर अन्य ऊंची जाति के लोगों का गांव में ही जमाव है और वे अपना अर्ध सामंतवादी नियंत्रण बनाए रखना चाहते हैं। अपेक्षाकृत अधिक समृद्ध ऊंची खेतीहर जातियां अपने आर्थिक लाभ प्राप्त करने के लिए व्यवसायों और सरकारी नौकरियों में भी अपना हिस्सा चाहती है। इन जातियों ने अनुसूचित जातियों के लिए किए गए आरक्षणों का भी विरोध किया। यह नितांत वर्ग वैषम्य का मामला है।

1951 में बिहार सरकार ने एक सरकारी आदेश जारी किया जिसमें पिछड़े वर्ग की दो अनुबंधों में सूची बनाई गई। अनुबंध 1 में 79 जातियां रखी गई थी जिनको अनुबंध 2 में रखी गई 30 जातियों से अधिक पिछड़ी समझा गया था। उच्चतम न्यायालय के 1963 के बालाजी निर्णय के अनुसरण में पटना उच्च न्यायालय ने 1964 में इन सूचियों को असंवैधानिक ठहराया। तब बिहार सरकार ने इस आधार पर मासिक आय की अधिकतम सीमा 500 रुपये कर दी और इन दोनों अनुबंधों में किसी प्रकार भेद न करने का निर्णय किया। 1971 में श्री मुंगेरीलाल की अध्यक्षता में बिहार पिछड़े वर्ग आयोग की नियुक्ति की गई। इस रिपोर्ट (1976) में शैक्षिक रियायतों के संबंध में निम्नलिखित स्थिति का पता चला। अनुबंध 1 या अनुबंध 2 के जिन आवेदकों की वार्षिक आय 300 रु० से कम थी उनको कुछ आरक्षण दिए गए थे। समाज कल्याण विभाग अन्य पिछड़े वर्गों को फीस संबंधी रियायत आदि देता था। औद्योगिक प्रशिक्षण संस्थानों में अन्य पिछड़े वर्गों के लिए कोई आरक्षण नहीं था। बहुत पहले 1953 में श्री बैजनाथ सिंह ने बिहार विधानसभा में एक गैर-सरकारी बिल प्रस्तुत किया था जिसमें अन्य पिछड़े वर्गों के लिए 25% नौकरियां आरक्षित रखने की बात कही गई थी लेकिन दल के नेताओं के दबाव पर यह वापस ले लिया गया। पिछड़े वर्ग फेडरेशन विशेषकर श्री देवशरण सिंह (कुर्मी) जैसे नेताओं ने अन्य पिछड़े वर्गों के लिए नौकरियां आरक्षित करने की मांग की। कांग्रेस ने इस मांग पर गंभीरता से विचार नहीं किया। 1960 के वर्षों में जैसे श्री राव (1979) ने बताया है यादवों ने सेना में यादव रेजीमेंट बनाने के लिए केन्द्रीय सरकार को सहमत करने के लिए एकजुट होकर प्रयत्न किया।

मुंगेरीलाल आयोग ने अन्य पिछड़े वर्ग और सर्वाधिक पिछड़े वर्ग की अपनी सूचियां तैयार की। इसमें सामाजिक स्थिति, शैक्षिक पिछड़ापन, सरकारी नौकरियों में पर्याप्त प्रतिनिधित्व और व्यापार, वाणिज्य और उद्योग आदि में पर्याप्त भाग का ध्यान रखा गया था। इसके पिछड़े वर्ग की सूची में 128 जातियां और सर्वाधिक पिछड़े वर्ग की सूची में 93 जातियां थी। इसने नौकरियों में 26 प्रतिशत और 24 प्रतिशत शैक्षिक स्थानों के आरक्षण किए जाने की सिफारिश की। श्री जगन्नाथ मिश्र सरकार ने इन सिफारिशों पर कोई कार्रवाई नहीं की क्योंकि उनके समर्थन का आधार ऊंची जातियां थी।

जून 1977 में सत्ता में आई श्री कर्पूरी ठाकुर सरकार ने रिपोर्ट पर कार्रवाई की और नवंबर 1978 में श्री मुंगेरीलाल आयोग के वर्गीकरण को स्वीकार करते हुए सरकारी आदेश जारी किया। नौकरियों में भरती के प्रयोजन के लिए इसने निम्नलिखित आरक्षण योजना की घोषणा की :—

अन्य पिछड़े वर्ग	— 8 प्रतिशत
सर्वाधिक पिछड़े वर्ग	— 12 प्रतिशत
अनुसूचित जातियां	— 14 प्रतिशत
स्त्रियां	— 3 प्रतिशत
आर्थिक रूप से पिछड़े	— 3 प्रतिशत

आयकर छूट की चालू अधिकतम रकम को सभी कोटियों के लिए आय की कसौटी माना गया।

श्री ठाकुर पिछड़ी जातियों को और संगठित करने के लिए लोहिया के विचारों का ही अनुसरण कर रहे थे। वह सोचते थे कि कर्नाटक के नमूने को सफलता पूर्वक बिहार में स्थापित किया जा सकता है। सरकारी आदेश ने उन्नत जातियों को अत्यधिक उत्तेजित किया। विश्वविद्यालय और महाविद्यालय बंद कर देने पड़े। रेलगाड़ियों और बसों पर आक्रमण किए गए। सरकारी संपत्ति को नुकसान पहुंचाया गया। इस संबंध में समाचार पत्रों में विस्तार से समाचार दिए गए।

श्री अर्स ने त्रिगायतों और बोक्कलिग को दो प्रभावशाली जातियों में से पहले को (साधारणतः) उन्नत वर्ग में रखकर और दूसरे को पिछड़ी सूची में रखकर बड़ी चतुराई से विभाजित कर दिया। उनकी मंशा थी कि इनमें मेल न होने पाए। लेकिन श्री ठाकुर ने ऐसे किसी उपाय का आश्रय नहीं लिया। उन्नत जातियों का विचार था कि नवधनाढ्य कई खेतिहर जातियां अपनी आय कम बताएंगी। उन्नत जातियों को विभाजित और कमजोर करने के लिए जाति का खयाल किए बिना आर्थिक रूप से पिछड़ों के लिए 3 प्रतिशत आरक्षण की व्यवस्था बहुत ही कम है।

श्री अर्स ने 1972 के बीच जब उन्होंने सत्ता संभाली और 1978 में जब सरकारी आदेश जारी किया गया था, कई छोटी और आर्थिक से पिछड़ी जातियों को संगठित करने और राजनैतिक रंग देने के अथक प्रयत्न किया। जैसा कि हमने देखा है बिहार में पिछड़े वर्गों का संगठन बहुत बाद में खंडशः हुआ। यहां के समाजवादी भी जातिगत रूप में विभाजित थे। श्री रामानन्द तिवारी उन्नत जाति के और श्री कर्पूरी ठाकुर पिछड़े वर्ग के नेता थे। पिछड़े वर्गों का उत्कर्ष का मजबूत आसव में यादवों का उत्कर्ष है। इस बात से अन्य कमजोर भूमिहीन जातियों के किसी प्रकार के उत्साहित होने की संभावना नहीं है। जैसे कि हम देख चुके हैं एक ओर खेतीहर पिछड़ी जातियों और दूसरी ओर अनुसूचित जातियों और जनजातियों के बीच स्नेह की कमी नहीं है। श्री ठाकुर को इनको संगठित करने की कोई विचारधारा नहीं थी। यहां तक कहा जा सकता है कि ऐसी नाजुक स्थिति में जब परिस्थितियों को बदलने का समय बीत गया है, हरिजन और गिरिजन उन्नत जातियों को अपेक्षाकृत कम बुराई के रूप में ऊंची खेतीहर जातियों के मुकाबले अधिक पसन्द करेंगे। संक्षेप में श्री ठाकुर के सरकारी आदेश से पिछड़ी जातियों का पर्याप्त संगठन और एकीकरण नहीं हुआ। शायद उनका विचार था कि 1977 में जनता की जीत पिछड़ी जातियों के समर्थ और टिकाऊ उत्कर्ष का प्रतीक है, लेकिन बात ऐसी नहीं थी। जनवरी 1980 के चुनाव से यह सिद्ध हो गया। अनुसूचित जातियां और अन्य पिछड़े वर्ग फिर कांग्रेस के खेमे में चले गए।

बिहार के युवक सरकारी और अर्ध-सरकारी नौकरियों पर बहुत अधिक निर्भर करते हैं। चूंकि निजी क्षेत्र में रोजगार नहीं बढ़ रहे हैं इसलिए उन्हें सरकारी आदेश और भी अधिक पीड़ा दायक प्रतीत होता है। वे राज्य के बाहर जाने के अनिच्छुक हैं। उनकी अंग्रेजी साधारणतः कमजोर होती है। यदि वे दक्षिण बिहार जाते हैं तो उन्हें जनजातियों का रोष झेलना पड़ता है। अतः उन्हें बहुत ही कम वैकल्पिक अवसर प्रतीत होते हैं। सरकारी नौकरियों में उन्नत जातियों की शक्ति और ग्रामीण क्षेत्रों में उनकी अर्ध सामंती पकड़ अब भी मजबूत है। इन्हीं सब बातों से उन्नत जातियां लम्बे समय तक प्रतिरोध और प्रतिक्षेप करने में समर्थ हो सकीं।

अध्याय V

उत्तर प्रदेश: पिछड़े वर्गों का विलम्बित और अपूर्ण संघटन

बिहार की तरह उत्तर प्रदेश में भी जाति प्रथा वर्णों के अनुसार काफी भेदभाव पूर्ण है। 1931 की जनगणना के अनुसार ऊंची द्विज जातियां कुल आबादी का 20.30 प्रतिशत थीं, इनमें ब्राह्मण, आबादी के 9.23 प्रतिशत, और राजपूत 7.28 प्रतिशत थे। ऊंचे खेतीहर जाति के यादव, कुर्मी, जाट, लोढे और कूरी आबादी का 16.4 प्रतिशत थे। मुस्लिमों का प्रतिशत 13.6 था। 1977 के सरकारी आदेश के प्रयोजन के लिए आबादी का जो प्रतिशत उन्नत जाति के रूप में वर्गीकृत किया गया है, और इस प्रकार आरक्षण योजना में शामिल नहीं किया गया है वह अध्ययन किए जाने वाले अन्य तीन राज्यों से अधिक है। पूर्वी उत्तर प्रदेश प्रायः बिहार का ही फैलाव है और हाल के वर्षों में वहां उन्नत और पिछड़े वर्गों के बीच, राजपूत और ब्राह्मणों के बीच और अनुसूचित जातियों और पिछड़े वर्गों के बीच सभी प्रकार के टकराव हुए हैं। उत्तर प्रदेश के पश्चिमी जिलों में ब्राह्मणों का वर्ग नहीं है और यह टकराव एक ओर ग्रामीण जाट और मुसलमानों में और दूसरी ओर शहरी तत्वों विशेषकर बनियों में है। अवध क्षेत्र में ब्राह्मण और राजपूतों की प्रधानता है। पहाड़ी जिले और बुंदेलखंड क्षेत्र बहुत ही कम विकसित हैं और साधारणतः वहां जाति संबंधी तनाव नहीं है।

सबसे पहले ब्राह्मणों और कायस्थों ने आधुनिक शिक्षा प्राप्त की। विशेष कर कायस्थ सरकारी नौकरियों और व्यवसायों में छाने लग गए थे। बाद में 1940 के वर्षों के दौरान बनियों ने भी कानून अध्ययन और चिकित्सा के आधुनिक पेशों को अपनाना आरम्भ कर दिया था। उत्तर प्रदेश के आधुनिकीकरण का एक सबसे दिलचस्प पहलू यह है कि राजपूत जो प्रधानतः जमीनों के मालिक थे कभी शिक्षा व्यवसाय और सरकारी नौकरियों में ब्राह्मणों, कायस्थों के एकल अधिकार से आशंकित नहीं हुए। जमींदारी प्रथा के उन्मूलन के पहले राज्य की अधिकांश जमींदारियां राजपूतों के हाथ में थी। विशेषकर अवध क्षेत्र में उनका काफी प्रभुत्व था। जैसे ग्रास (1965) ने बताया है वे अधिकांश ज़िलों में आधे से अधिक जमीन के मालिक थे। जैसे कि हम पहले कह चुके हैं कि मद्रास प्रेसीडेंसी में 1919 में द्वैधशासन के आरम्भ किए जाने से बेल्लाल गौंडर और रेड्डी जातियों के जो भूमि के मालिक थे हितों पर आघात पहुंचा और उन्होंने जल्दी ही अपने को एक राजनैतिक दल और आंदोलन के रूप में संगठित कर लिया। उत्तर प्रदेश के राजपूत जमींदार जो ब्रिटिश राज के कट्टर समर्थक माने जाते थे कभी नौकरियों और राष्ट्रीय आंदोलन में ब्राह्मणों के प्रभुत्व से आशंकित नहीं हुए। प्राय उनमें से सबसे गरीब पुलिस विभाग में नौकरी पाना चाहता था और वह उसे मिल भी जाती थी। उनमें और ब्राह्मणों में सांस्कृतिक दूरी बहुत ज्यादा नहीं थी। साथ ही राजपूतों के प्रभुत्व के अपने क्षेत्र थे जो सुरक्षित सामंतवादी और अधिकांशतः अर्ध राजनैतिक प्रभुत्व था और जो दक्षिण भारत के राजपूतों को प्राप्त नहीं था। इसके अतिरिक्त राज्य में समग्र रूप से उनकी संख्या ब्राह्मणों से कम थी। अपनी उच्च स्थिति का बोध और उनमें और पिछड़े वर्गों के बीच संस्कारों के अन्तर के कारण, जसका वे आरवादन कर रहे थे, वे ब्राह्म-कायस्थ प्रभुत्व के विरुद्ध कोई आंदोलन करने के लिए तैयार नहीं हुए।

ब्राह्मणों ने भी गांव छोड़कर शहरों की तरफ जाकर बसना पसन्द नहीं किया जैसे तमिल ब्राह्मणों ने किया। 1952 में जमींदारी उन्मूलन ने उत्तर प्रदेश की राजनैतिक अर्थ-व्यवस्था को पूर्णतः अस्तव्यस्त नहीं किया। बिहार की तरह उत्तर प्रदेश में ब्राह्मणों और राजपूतों का गांवों के शक्ति के ढांचे और व्यवस्था पर अब भी काफी प्रभाव है। श्री सेठ (1979) के शब्दों में महाराष्ट्र, कर्नाटक और तमिलनाडु की तरह शक्ति का कोई स्पष्ट विभाजन नहीं रहा। उत्तर प्रदेश में बिहार की तरह ऊंची जातियों में फूट या कर्नाटक या तमिलनाडु की तरह ऊंची जातियों और पिछड़ी जातियों में फूट क्यों नहीं रही इसका एक अन्य प्रमुख कारण है। संयुक्त प्रांत 1920 और 1930 के वर्षों के दौरान मुस्लिम लीग का गढ़ रहा है। हिन्दू मुस्लिम और कांग्रेस लीग फूट से अन्य सभी फूट कम महत्वपूर्ण रहीं। 1937 तक मुस्लिम लीग को कांग्रेस के साथ राज्य में सत्ता का उपयोग करने की आशा थी।

कुछ विद्वानों और राजनीतिज्ञों (स्वर्गीय श्री चन्द्रभान गुप्त) का दावा था कि राज्य में स्वतंत्रता के बाद कई वर्षों तक कोई जातिगत तनाव या राजनीति नहीं रही। लेकिन यह पूर्णतः सत्य नहीं है। स्वतंत्रता के पूर्व के दिनों में पिछड़ी जातियों में असंतोष फैलने लगा था। कानपुर के स्वामी अच्युतानंद, स्वामी रामचरण मल्लाव, एस०डी० सिंह चौरसिया जैसे नेता पिछड़ी जातियों को राजनीतिक रंग देने का प्रयत्न कर रहे थे। स्वामी बोधानंद महास्थविर ने 1920 के वर्षों में आदिवासी हिन्दू लीग की स्थापना की। उत्तर प्रदेश से कई प्रतिनिधि दलित वर्गों के सम्मेलन में भाग लेते थे। श्री ई०वी० रामास्वामी नायकर ने कानपुर में 1946 में हुए सम्मेलन की अध्यक्षता की थी। उत्तर प्रदेश के पिछड़े वर्ग हिन्दू संस्कृत प्रधान मध्यस्थल में रहने के कारण और चारों ओर प्रसिद्ध तीर्थ स्थलों और मंदिरों के होने के कारण ब्राह्मणवाद को अस्वीकार करने के लिए तैयार नहीं किए जा सके।

अखिल भारतीय यादव महासभा ने अपने समुदाय के लोगों को संगठित करने में जो भूमिका अदा की उसकी चर्चा बिहार संबंधी अध्याय में कर ली गई है। सन् 1940 के वर्षों में यादवों की खेतीहर जातियों, कुर्मियों, कूरियों, जाटों में काफी आपसी भाईचारे की भावना का विकास हुआ। उनके इस आपसी भाईचारे से अजगर (अहीर, जाट, गूजर का परिवर्णी शब्द) आंदोलन का जन्म हुआ। जाति सभाओं की बैठकें केवल बिरादरी मंडलियां नहीं थी। जैसा कि राव ने लिखा है "(यादव) महासभा के वार्षिक सम्मेलनों ने ठाकुरों, कायस्थों, बनियों, भूमिहर ब्राह्मणों और ब्राह्मणों के विरोध को भी उत्तेजना दी, जो यादवों के शोषक, उनसे दुर्व्यवहार करने वाले और उनकी प्रगति के प्रयत्नों में बाधा उत्पन्न करने वाले समझे जाते थे। इन समूहों के खिलाफ राजनैतिक संगठन बनाए गए और आंदोलन किए गए।" (श्री राव 1971 पृष्ठ 141) नौकरियों में आरक्षण की मांग 1930 के वर्षों से ही की जा रही थी लेकिन शीर्षस्थ कांग्रेसी नेता इसका समर्थन करने के लिए तैयार नहीं थे। एक बड़े नेता ने यहां तक कहा था कि आरक्षण योजना के कारण दक्षिण भारत के ब्राह्मण इधर-उधर भटक रहे हैं और ऐसी मांग किए जाने पर उत्तर प्रदेश में भी यही स्थिति हो जाएगी।

अन्य पिछड़ी जातियों में इस उत्तेजना के बावजूद अन्य पिछड़ी जातियों और अनुसूचित जातियों के लिए कभी एक संयुक्त राजनैतिक मंच का निर्माण नहीं हो सका। आर्य समाज आंदोलन का जाटों, यादवों और अन्यों पर अत्यधिक प्रभाव पड़ा। यादवों और कुर्मियों ने संस्कृतीकरण की प्रक्रिया को बड़ी मात्रा में अपनाया। सवर्ण जातियों के साथ समानता के इस आंदोलन ने ऊंचे पिछड़े वर्ग में छोटे और कमजोर कारीगर जातियों और अनुसूचित जातियों और जनजातियों का नेतृत्व करने की योग्यता को विशेष रूप से जन्म दिया। केवल कुछ ही पिछड़ी जातियां संस्कृतीकरण के रूप में सामाजिक गतिशीलता की आशा कर सकती थीं। बाद वाली प्रक्रिया में कुछ पूर्व शर्तों को पूरा करना आवश्यक था। किसी पिछड़ी जाति को आर्थिक संपन्नता के उपायों का अनुभव प्राप्त होना चाहिए था और उसमें कुछ प्रभावशाली और विशिष्ट शिक्षित वर्ग को उत्पन्न करने की क्षमता होनी चाहिए थी। उनकी यह क्षमता होनी चाहिए कि वे पुराणों या सुदूर इतिहास से खोज कर साक्ष्य प्रस्तुत कर सकें कि उनकी जाति का एक समय ऊंचा स्तर था। लेकिन कारीगरों और भूमिहीन जातियों के लाखों लोगों के लिए यह संभव नहीं है। ऊंची खेतीहर जातियों के संस्कृतीकरण का आश्रय लेने के कारण वे साधारणतः नीची पिछड़ी और अनुसूचित जातियों के साथ एक उद्देश्य के रूप में संगठित नहीं हो सके। यह एक और अन्य कारण है जिससे पिछड़े वर्ग का आंदोलन उत्तर प्रदेश और बिहार में पूर्ण गति और शक्ति प्राप्त नहीं कर सका। श्री छेदीलाल सेठी ने लेखक के साथ अपने साक्षात्कार में इस तर्क का पूरा समर्थन किया कि संस्कृतीकरण की धारणा से पिछड़े वर्गों के साहचर्य और आंदोलन को बाधा पहुंची है।

बिहार में ब्राह्मण राजपूतों की फूट का कांग्रेस हल्कों पर 1930 के वर्षों से प्रभाव पड़ने लगा था लेकिन उत्तर प्रदेश के कांग्रेस हल्कों में जाति के आधार पर कोई कलह नहीं हुई। जैसे कि ऊपर चर्चा की गई है कि राजनीति में हिन्दू मुस्लिम फूट के कारण अन्य प्रकार की कोई फूट पैदा नहीं हो सकी। राज्य ने राष्ट्रीय स्तर के नेता पैदा किए। पंडित गोविन्द बल्लभ पंत ने, 1937 से प्रांतीय स्वायत्तता के अधीन प्रथम प्रधान (यानि मुख्य) मंत्री बनने से लेकर 1954 में केन्द्र में गृह-मंत्री बनने तक अपनी महानता के कारण उत्तर प्रदेश कांग्रेस पर छाये रहे। उनको कांग्रेस हाई कमान का जिसके वे अभिन्न अंग थे पूरा समर्थन प्राप्त था। मैदान के लोग उनको केवल पहाड़ी या ब्राह्मण ही नहीं समझते थे। उनके केन्द्र में जाने तक राज्य की राजनीति का महत्वपूर्ण काल रहा। (मसाल-दम-1967) अतएव 1937 और 1954 के बीच कांग्रेस नेताओं का पिछड़े वर्ग के नेताओं को प्रतिद्वंदी और नियंत्रित रूप में कांग्रेस में शामिल करने का प्रश्न ही नहीं उठा। 1934 में कांग्रेस के अंदर ही कांग्रेस समाजवादी दल की स्थापना की गई। इसने कृषि सुधार के मामलों का समर्थन किया लेकिन कभी जातिगत दृष्टिकोण नहीं अपनाया। पंडित पंत के केन्द्र में चले जाने के बाद कांग्रेस के अंदर दलगत कलह आरम्भ हो गई। लेकिन इसका स्वरूप साधारणतः जातिगत नहीं था।

पिछड़े वर्गों की विशेषकर ऊंचे पिछड़े वर्गों के संघटन की असमर्थता 1937 से बनने वाले विभिन्न मंत्रिमंडलों में जातियों के हिस्से से देखी जा सकती है। इसका उत्तर प्रदेश पिछड़ा वर्ग (सेठी) आयोग रिपोर्ट (1977) में विश्लेषण किया गया है। 1937—39 के मंत्रिमंडल में 9 में से 3 पदों पर ब्राह्मण थे और अन्य पिछड़े वर्गों को संसदीय सचिवों तक का स्थान नहीं दिया गया था। 1952 में श्री चरण सिंह के जो जाट थे, मंत्रिमंडल में लिए जाने तक अधिकांशतः यही स्वरूप रहा। सर्वश्री संपूर्णानंद, चन्द्रभानगुप्त और श्रीमती सुचेता कृपलानी के मंत्रिमंडलों में आधे या आधे के लगभग मंत्री सवर्ण उन्नत जाति के थे। उत्तर प्रदेश में स्वतंत्रता के बाद सब से पहले 1967 में श्री चरण सिंह के नेतृत्व में बनने वाले संयुक्त विधायक दल मंत्रिमंडल में ऊंची खेतीहर जातियों के 3 मंत्री बने। इसका कारण यह था कि 1967 के चुनावों में पिछड़े वर्गों को चुनाव में काफी सफलता मिली। कांग्रेस की क्षति से विधान सभा में उन्नत जातियों के प्रतिनिधित्व को भी क्षति पहुंची। 1970 के श्री चरणसिंह के दूसरे मंत्रिमंडल और 1970-71 के श्री टी० एन० सिंह के मंत्रिमंडल में ऊंची खेतीहर जातियों को काफी प्रतिनिधित्व दिया गया और पहली बार कारीगर जातियों को शामिल किया गया। ऊंची खेतीहर और अन्य पिछड़ी जातियों का प्रतिनिधित्व बढ़ना राजनीति में अन्य पिछड़ी जातियों के टिकाऊ और स्थिर पुनरुत्थान का प्रतीक नहीं है। क्योंकि सर्वश्री त्रिपाठी, बहुगुणा और तिवारी मंत्रिमंडलों में ऊंची जातियों का प्रतिनिधित्व बढ़ गया था। विधान सभा में भी उन्नत जातियों का भाग 50 प्रतिशत से घटकर 42 प्रतिशत रह गया। ऊंची खेतीहर जातियों का भाग 15 प्रतिशत से बढ़ कर केवल 20 प्रतिशत हुआ। 1977 के चुनावों में जब जनता पार्टी की विजय हुई जाटों और अन्य पिछड़ी जातियों का भाग बहुत ज्यादा बढ़ गया। बिहार में श्री कर्पूरी ठाकुर की तरह श्री रामनरेश यादव ने इस वृद्धि को पिछड़े वर्गों का स्थायी उत्कर्ष समझने की गलती की और वे अगस्त 1977 के प्रसिद्ध सांप्रदायिक सरकारी आदेश निकालने को उत्साहित हुए। 1980 के चुनाव ने शक्ति संतुलन में महत्वपूर्ण परिवर्तन की धारणा को गलत सिद्ध कर दिया।

1947 से ग्रामीण क्षेत्र के राजनीतिक अर्थशास्त्र के उपादानों में परिवर्तन होता रहा है। लेकिन यह इतना महत्वपूर्ण नहीं था कि अन्य पिछड़ी जातियां भी राजनीति में महत्वपूर्ण स्थान बना सकतीं। पश्चिमी उत्तर प्रदेश के जाटों ने कृषि का बहुत विकास किया और भारतीय क्रांति दल का जन्म जाटों के इस उत्कर्ष और समृद्धि का प्रतीक था। जमींदारी उन्मूलन के कारण ब्राह्मणों, ठाकुरों और मुसलमानों पर बहुत ज्यादा प्रतिकूल प्रभाव नहीं पड़ा। किसान और फरब में आधा हिस्से के अनुसार लगान देने वाले यादव, कुर्मी, लोधा, गूजर, कुरी स्वामी कृषक बन गये और परिश्रमी होने के कारण वे आधुनिक कृषि निवेश का लाभ उठाने के लिए अधिक योग्य हैं। उन्नत जातियों के "छाताधारी किसानों" से भिन्न वे अपने कृषि कार्यों में पूर्णतः आत्मनिर्भर हैं, बिहार के अपने सजातीय बंधुओं की तरह वे भी अपने कृषि मजदूरों से कस कर काम लेते हैं। वे उन्नत जातियों के सामाजिक स्तर को प्राप्त करने का प्रयत्न तो करते हैं लेकिन कृषि मजदूरों में राजनैतिक चेतना बढ़ने का विरोध करते हैं।

शैक्षिक रियायतों के प्रयोजनों के लिए 1945 में संयुक्त प्रांत की सरकार ने 37 हिन्दू और 21 मुस्लिम पिछड़ी जातियों की सूची तैयार की। 1950 के आदेश में 10 प्रतिशत नौकरियां अनुसूचित जातियों के लिए आरक्षित करने के साथ केवल यही कहा गया था कि पिछड़े वर्गों के हितों का भी ध्यान में रखा जाएगा। 1955 में अन्य पिछड़े वर्गों की अर्थात् जातियों की दो सूचियां बनाई गईं। एक में नौकरियों में भरती के लिए 15 जातियां थीं और दूसरे में शैक्षिक रियायत के लिए 59 जातियां थीं। 1958 में सरकार ने फिर अन्य पिछड़ी जातियों की दो सूचियां तैयार कीं। पहली हिन्दू सूची में 37 जातियां और दूसरी मुस्लिम सूची में 21 जातियां नौकरियों और शैक्षिक रियायत के लिए दी गई थीं। किसी आरक्षण योजना का प्रस्ताव नहीं किया गया था। अक्टूबर 1975 में उत्तर प्रदेश पिछड़ी जाति आयोग की नियुक्ति की गई थी। इसने जून 1977 में अंतिम रिपोर्ट प्रस्तुत की। आयोग ने गरीबी, निरक्षरता, आवास, पेशा और तुच्छ पेशे, जाति, सामाजिक असमानता, सरकार में प्रतिनिधित्व, उद्योग और वाणिज्य में प्रतिनिधित्व न मिलने की अक्षमता की कसौटी पर अन्य पिछड़ी जातियों की तीन सूचियां तैयार कीं। सूची-क में 36 जातियां थीं जिनका अधिकांश का भूमि पर थोड़ा या बिल्कुल नियंत्रण न था। सूची-ख में 18 खेतिहर जातियां थीं जिनका भूमि से कुछ संबंध था। इनमें यादव, गूजर, कुर्मी

आदि शामिल थे। (यह ध्यान रहे कि जाटों ने कभी पिछड़े होने का दावा नहीं किया। यह उनके आत्मसम्मान के विरुद्ध है) आयोग ने अलग-अलग आरक्षण योजना की सिफारिश की। यह नौकरियों और स्थानों में सूची-क के लिए 17 प्रतिशत सूची-ख के लिए 10 प्रतिशत और सूची-ग के लिए 2.5 प्रतिशत थी। यह 29.5 प्रतिशत का कुल आरक्षण अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों के लिए पहले से बढ़ाया 20 प्रतिशत आरक्षण के अतिरिक्त था। यादव सरकार ने 20 अगस्त 1977 के सरकारी आदेश में अनुच्छेद 16(4) के अंतर्गत श्रेणी I और II सेवाओं के लिए आरक्षण की निम्नलिखित योजना की व्यवस्था की:—

अनुसूचित जातियां	18 प्रतिशत
अनुसूचित जनजातियां	2 प्रतिशत
विकलांग	2 प्रतिशत
स्वतंत्रता सेनानियों के आश्रित	5 प्रतिशत
भूतपूर्व सैनिक अफसर	8 प्रतिशत
अन्य पिछड़ी जातियां	15 प्रतिशत
	50 प्रतिशत

अनुच्छेद 15(4) के अंतर्गत यही स्वरूप औद्योगिक प्रशिक्षण संस्थाओं के लिए अपनाया गया। उन्नत जातियों ने इस प्रकार प्रतिरोध किया उसको विस्तार से बताने की आवश्यकता नहीं है। यहां तक कि उत्तर प्रदेश के कुछ क्षेत्रों में सरकारी कर्मचारियों ने भी आंदोलनों में भाग लिया। आंदोलन करने वालों की मुख्य शिकायत यह थी कि सामाजिक और आर्थिक पिछड़ेपन की कसौटी वर्ग का माना जाए न कि जाति को। यद्यपि आंदोलन समाप्त हो गया लेकिन लोगों के दिमागों में अब भी यह प्रश्न सर्वाधिक महत्व का है। इस मामले पर उन्नत जाति के काफी मतदाता जनता और जनता (एस) से कट गए। पिछड़ी जातियों और अनुसूचित जातियों के नेता 20 प्रतिशत सुस्थापित उन्नत जाति के लोगों को आरक्षण योजना से बाहर रखना और उनको केवल खुली योग्यता क्षेत्र के केवल 50 प्रतिशत नौकरियों के लिए ही प्रतिस्पर्द्धा करने के लिए विवश करना चाहते हैं तो इसके लिए उन सभी के जबरदस्त राजनैतिक संगठन, एकीकरण और मेल की आवश्यकता है। इस प्रकार का संगठन, एकीकरण और मेल वहां नहीं रहा। श्री कर्पूरी ठाकुर की तरह श्री रामनरेश यादव ने भी एकदम से भी कम समय में पिछड़े वर्ग को संघटित करने का प्रयास किया। श्री देवराज अर्स की तरह उन्होंने उन्नत जातियों को किसी सुविचारित युक्ति की सहायता से विभाजित करने का प्रयत्न नहीं किया। 1977 में जनता पार्टी की जीत सामान्य से भिन्न मामला ही रही। उत्तर प्रदेश और बिहार वर्गीकरण योजना में कोई भी उन्नत जाति का युवक पिछड़ी जाति के रूप में स्वीकार नहीं किया जा सकता था। केवल मुस्लिम समुदाय विभाजित हुए।

उत्तर प्रदेश में निजी क्षेत्र में रोजगार नहीं बढ़ रहे हैं। उत्तर प्रदेश और बिहार के युवकों को अधिक परेशानी इस कारण भी होती है वे नौकरियों के लिए साधारणतः अपने राज्य से बाहर नहीं जाते। उत्तर प्रदेश और बिहार से शिक्षित युवकों की अपेक्षा अशिक्षित ग्रामीण बंबई, कलकत्ता, पंजाब और हरियाणा में अकुशल कार्यों के लिए जाते हैं।

पिछड़े वर्गों का विलंब से और अपूर्ण संघटन के कारण अजगर आंदोलन को पिछड़े वर्गों के आरक्षण के आंदोलन से मिलाने का यह प्रयत्न असफल हो गया।

अध्याय 6

सार और निष्कर्ष

अध्याय 1 में जो विचार प्रकट किए गए हैं उनका मुख्य उद्देश्य उत्तर प्रदेश और बिहार में क्रमशः 1977 और 1978 में प्रत्यापित आरक्षण योजना के विरुद्ध उग्र प्रतिक्रिया के लक्षणों को स्पष्ट करना है। मुख्य रूप से जाति वर्गों में शक्ति संतुलन की विकास प्रक्रिया के आधार पर विभिन्न राजनैतिक, समाज शास्त्रीय और राजनैतिक अर्थशास्त्र तत्वों की परीक्षा की गई। निम्नलिखित निष्कर्ष प्राप्त हुए।

1. तमिलनाडु और कर्नाटक में आरक्षण योजनाओं का लंबा इतिहास था। आरंभ में केवल ब्राह्मणों को इनसे बाहर रखा गया। उनमें प्रतिरोध करने की शक्ति नहीं थी और धीरे-धीरे उन्होंने आरक्षण-योजना में जीना सीख लिया। उन्होंने ने रोजगार के वैकल्पिक साधनों के लिए प्रयत्न किया और उनको प्राप्त भी किया। 1950 में वेल्लालों, नायडुओं, मुदालियरों, गौंडरों, चेट्टियारों के अधिकांश भाग को बाहर रखा गया था। लेकिन इस समय तक इन्होंने अपना राजनैतिक प्रभुत्व स्थापित कर लिया था और आरक्षण के सबल के बिना भी ये बड़ी संख्या में सत्ता के सोपान में फैल गए थे। इसके अतिरिक्त केवल कुछ ही वास्तविक पिछड़े वर्गों ने ही उनका गंभीरता से इनके साथ मुकाबला किया।

उत्तर प्रदेश और बिहार में नौकरी और स्थान आरक्षण की योजना उन्नत जातियों के लिए साझ सिरनी जैसी थी। यदि उनको पहले आरक्षण योजना में शामिल किया जाता और धीरे-धीरे वहां से हटाकर खुली प्रतियोगिता क्षेत्र में लाया जाता तो तब बात दूसरी ही होती। लेकिन ऐतिहासिक परिस्थितियों ने ऐसा नहीं होने दिया।

2. तमिलनाडु और कर्नाटक में उन्नत जातियां वर्गीकरण योजना या राजनैतिक दृष्टि से या दोनों कारणों से विभाजित रही हैं। जैसे कि तमिलनाडु वाले अध्याय में चर्चा की गई है वेल्लाल, नेट्टियार, नायडू सभी उन्नत उप-जातियों और पिछड़ी उप-जातियों में विभाजित रहे। आरक्षण का मामला उनके लिए एक साझा मामला नहीं हो सका। उनमें किसी मेल की संभावना को पहले ही समाप्त कर दिया गया था, या उसके लिए बाधा उत्पन्न कर दी गई थी। इस प्रकार कर्नाटक 70 प्रतिशत लिंगायत जाति को उन्नत और शेष को पिछड़ी घोषित कर दिया गया था। जाति का ख्याल किए बिना विशेष कमजोर वर्गों के लिए 15 प्रतिशत के आरक्षण से भी लिंगायत समुदाय विभाजित हो गया। इस विषय पर केवल उन्नत जाति के लिंगायत ही अत्यधिक उत्तेजित हैं। लेकिन वे अपने असंतोष को राजनैतिक रंग नहीं दे सकते हैं। कर्नाटक के सरकारी आदेश में दूसरी प्रमुख भू-स्वामी जाति ओक्कलिंग को पिछड़े वर्ग की सूची में रखा गया है। केवल दस साल पहले तक दोनों जातियों ने प्राधिकार प्राप्त करके राज्य का शासन चलाया था। अब उनमें कोई मेल नहीं हो सकता है। सभी राजनैतिक दलों को इस बदली हुई परिस्थिति को ध्यान में रखना होगा।

बिहार और उत्तर प्रदेश में सरकारी आदेश ने उन्नत जातियों को विभाजित नहीं किया। बिहार में भूमिहारों और राजपूतों में लम्बे समय तक चले आ रहे वैर के बावजूद ये जातियां आरक्षण के मामले में एक हो गई। उत्तर प्रदेश में जहां जातिगत वैर कम था यादव सरकार ने प्रभावशाली संगठित और शक्तिशाली 20 प्रतिशत आबादी के भाग को एक कर दिया। राजपूत विशेष रूप से खिन्न हैं। वे हाल ही में सत्ता में प्रवेश कर ही रहे थे कि अचानक उनको धक्का दे दिया गया। बिहार की उन्नत जातियों के आर्थिक रूप से कमजोर वर्ग के लिए 3 प्रतिशत आरक्षण ऊंट के मुंह में जीरे में समान है। यदि यह भाग इससे अधिक होता तो शायद उन्नत जातियां आपस में विभाजित हो जातीं और प्रतिरोध करने में अशक्त होतीं।

3. तमिलनाडु और कर्नाटक दोनों में मध्यस्तरीय जातियों ने हरिजनों को यंत्रणा दी है और उन पर अत्याचार किये हैं। लेकिन तमिलनाडु में ऐसे मामले कम हुए हैं। द्रविड़ मुनेत्र आंदोलन ने ऊंची जातियों के ब्राह्मणों और हरिजनों को एक कर दिया। वास्तव में असंस्कृतीय क्षेत्र में इन दोनों समूहों के बीच अनुष्ठानिक और सांस्कृतिक अंतर ब्राह्मणों और अब्राह्मणों की अपेक्षा कम था। कर्नाटक में आरंभ में ब्राह्मणों के और बाद में लिंगायतों के विरोध के कारण हरिजन और अन्य पिछड़ी जातियां एक हो गईं।

उत्तर प्रदेश और बिहार में एक ओर हरिजनों और अन्य भूमिहीन जातियों और दूसरी ओर भूस्वामी पिछड़ी जातियों के परस्पर कोई अधिक सामाजिक और राजनैतिक हित नहीं थे। यदि उन्नत जातियां अन्य पिछड़ी जाति की कोटि की ऊंची खेतिहर जातियों के द्वारा प्रतिष्ठा में असंतुलन पैदा किए जाने से भयभीत थीं तो अन्य पिछड़ी जातियां भी हरिजनों में राजनैतिक चेतना उत्पन्न होने से आशंकित थीं। हरिजनों ने उनके कुर्मी, कुर्मी, यादव मालिक कम कर कान लेते थे। इन खेतिहर जातियों ने हरिजनों पर अत्याचार किए। हरिजनों ने ब्राह्मणों की बजाय चुनाव में कांग्रेस को मत दिए। ऊंची खेतिहर जातियों और हरिजनों के बीच इस मूलभूत फूट के कारण पिछड़ी जातियों का आंदोलन कमजोर हो रहा और इस कारण उन्नत जातियों के प्रतिरोध में संभावना दी। अन्य पिछड़ी जातियां जब तक संस्कृतीकरण के प्रभाव में रहेंगी तब तक वे हरिजनों का नेतृत्व नहीं कर सकेंगी।

4. तमिलनाडु और कर्नाटक में अब्राह्मणों ने राजनीति और कांग्रेस दल के उच्च पदों पर उत्साह से एक जुट होकर और संगठित रूप में प्रवेश किया। उनका राजनीतीकरण काफी समय पहले आरंभ हो गया था। इससे पिछड़े वर्गों के आंदोलन को काफी शक्ति प्राप्त हुई। विशेषकर कर्नाटक में श्री देवराज अर्स ने 1972 और 1978 के मध्य छोटी कमजोर प्रभावहीन जातियों का सम्मेलन आयोजित करने के लिए प्रोत्साहन दिया। उनके नेताओं को श्री अर्स ने सत्ता में भागीदार बनाया। राजनैतिक आधार तैयार कर लेने और अन्य पिछड़े वर्गों को संगठित कर लेने के बाद उन्होंने 1978 में अपना प्रसिद्ध सरकारी आदेश जारी किया। किसी प्रभावशाली प्रतिरोध का सामना करने के लिए इस प्रकार की एकता और संगठन पर्याप्त था।

उत्तर प्रदेश और बिहार में आधार पर्याप्त रूप से तैयार नहीं किया गया था। एक प्रकार से सर्वश्री ठाकुर और यादव के आदेश ऊपर से आरोपित किए गए थे और उनके लिए जमीन तैयार नहीं की गई थी। बिहार में पिछड़ी जातियों ने राजनीति (और कांग्रेस) में विभाजित रूप से प्रवेश किया। वे अपने प्रवेश के लिए उन्नत जातियों के नेताओं की दया पर निर्भर थे। वे कभी स्वनियंत्रित संगठनात्मक राजनैतिक शक्ति के रूप में एक नहीं हुए। इसका प्रमाण मुख्यमंत्री के पद के लिए 1963 में श्री विनोदानंद पटेल और श्री कृष्णवल्लभ सहाय के बीच हुआ मुकाबला

है। (श्री पटेल की योग्यता को पंडित नेहरू तक ने स्वीकार किया था)। हरिजनों और पिछड़े वर्गों दोनों ने श्री पटेल का समर्थन नहीं किया। उत्तर प्रदेश में भी पिछड़े वर्गों का जागरण विलंब से हुआ। जैसा कि पहले कहा गया है, श्री ठाकुर और श्री यादव दोनों ने एक दशक के अन्दर ही पिछड़ी जातियों के संगठन का प्रयत्न किया। यहां तक कि आज की पिछड़ी जातियां राजनैतिक रूप से विभाजित हैं। पिछड़ी जातियों की कमजोरी का पता इस बात से चल जाता है कि मंत्रिमंडल के पदों और विधान सभा में स्थानों की उनकी संख्या घटती-बढ़ती रही है। 1967 और 1977 के चुनाव उत्तर प्रदेश और बिहार के राजनैतिक स्वरूप में पिछड़ी जातियों के स्थायी या स्थिर पुनरुत्थान के प्रतीक नहीं हैं। श्री कर्पूरी ठाकुर और श्री रामनरेश यादव ने जो कुछ भी किया निश्चित रूप से वह उनके सोचने की गलती थी।

5. इसमें कोई संदेह नहीं कि तमिलनाडु में उन्नत जातियों के अब्राह्मण युवक आरक्षण योजना का स्वाद चख रहे थे। लेकिन उप-जातियों पर आधारित वर्गीकरण से अस्पष्टता और अनिश्चितता का बहुत थोड़े ही लाभ उठा सकते थे। तमिलनाडु पिछड़ा वर्ग आयोग रिपोर्ट में इस अनियंत्रित गंभीर दुरुपयोग को आंकड़ों से सिद्ध किया गया था। जब तक इस दुरुपयोग की संभावना रहेगी निराशा और उग्रता की संभावना भी अपेक्षाकृत कम रहेगी। कर्नाटक में भी यही कुछ हो रहा है लेकिन इतनी मात्रा में नहीं। इस राज्य में जिस विशेष वर्ग की आमदनी 4,800 रु० प्रतिवर्ष से अधिक नहीं है उसके लिए किए गए विशेष प्रावधानों के दुरुपयोग किए जाने की सूचना दी गई है।

बिहार और उत्तर प्रदेश के वर्गीकरण में जाति संबंधी किसी भ्रांति की गुंजाइश नहीं है क्योंकि यह वर्गीकरण जातियों के विस्तृत आधार पर किया गया है न कि उप-जातियों के आधार पर। कोई भी राजपूत कुर्मी या कूरी में स्वीकार नहीं किया जा सकता है। और लंबे समय तक बिना पता लगे नहीं रह सकता है।

6. तमिलनाडु में पिछड़ी जातियों के कमजोर वर्ग का दूसरे चरण के जागरण में विलंब हुआ। अब्राह्मण उन्नत जातियां आरंभ में ही आगे निकल जाने के कारण नौकरियों और व्यवसायों में बड़ी संख्या में थे। आरक्षण योजना के लागू होने से अन्य पिछड़ी जातियों की सूची की नौ जातियों को काफी लाभ हुआ। सैद्धांतिक रूप से यह स्थिति दूसरे चरण के आंदोलन के लिए आदर्श है। यदि यह आरंभ होता है और इन अन्य पिछड़ी जातियों को जिन्होंने अनुपात से अधिक लाभ उठाया है सूची से हटाया जाता है तो हमें इसका प्रतिरोध किए जाने की आशंका हो सकती है। लेकिन कमजोर पिछड़े वर्गों ने 1973 में सोपिया वेल्लाल, मांडर आदि को सूची में शामिल किए जाने तक विरोध नहीं किया। इसका विरोध और प्रतिरोध न होने का प्रधान कारण तमिल पुनर्जागरण और उप-राष्ट्रवाद है।

कर्नाटक में ऐसा कोई पुनर्जागरण आंदोलन नहीं है जिससे पिछड़ी जातियों के कमजोर वर्ग के जागरण में विलम्ब होता।

7. तमिलनाडु में वर्गीकरण उप-जाति के आधार पर किए जाने के कारण उन्नत जाति के रूप में वर्गीकृत जाति का प्रतिशत निर्धारित करना कठिन है। कर्नाटक में वास्तव में उन्नत जाति के लिंगायत जो आबादी का 10 से 12 प्रतिशत हैं, यथार्थ में बुरी तरह प्रभावित हैं और उत्तेजित हैं। इस राज्य में ईसाई, वैश्य और ब्राह्मण सरकारी नौकरियों को महत्व नहीं देते।

उत्तर प्रदेश में उन्नत जातियों के रूप में वर्गीकृत संख्या का प्रतिशत काफी अर्थात् 20 प्रतिशत है। बिहार में उन्नत जातियों की संख्या तो कम यानि 13 प्रतिशत है लेकिन ग्रामीण क्षेत्रों में इनका अधिक नियंत्रण है। अर्ध सामंतवाद की प्रथा के कारण उन्नत जाति के लोग इन दो राज्यों में आरक्षण योजना के विरोध में उग्र संघर्ष चलाने में समर्थ हुए हैं।

8. तमिलनाडु और कर्नाटक की अर्थव्यवस्था अपेक्षाकृत तेजी से विकसित होती रही है। ऐसा प्रतीत होता है कि निजी तृतीय क्षेत्र का भी विकास हो रहा है। इससे उन्नत जाति के कई युवकों को रोजगार मिलेगा। साथ ही वे राज्य के बाहर जाने को भी तैयार हैं।

उत्तर प्रदेश और बिहार में निजी तृतीय क्षेत्रों का विकास रुका पड़ा है। इन राज्यों में उन्नत जाति के युवकों को बड़ी संख्या में सरकारी नौकरियों पर निर्भर रहना पड़ता है। निराश होने के कारण ही उन्होंने उग्र प्रतिरोध किया।

संदर्भ

आर्नाल्ड, डेविड 1977 — दि कांग्रेस इन तमिलनाडु : नेशनल पोलिटिक्स इन साउथ इंडिया, 1919—1937 दिल्ली : मनोहर

बेंचिक, यूजीन एफ, 1969 — पोलिटिक्स ऐंड सोशियल कनफ्लिक्ट्स इन साउथ इंडिया, दि नान-ब्राह्मिन मूवमेंट ऐंड तमिल सेपरिरिज्म 1916—1929 बंबई आक्सफोर्ड यूनिवर्सीटी प्रेस

ईश्वर, के और अन्य, 1979 — बैकवर्ड क्लासेज, सोशियोलौजिस्टस

अन्य, 1979 — इकोनामिस्टस ऐंड ज्यूरिस्टस आन हुवनूर कमीशन रिपोर्ट, बंगलौर, सोशियो-लोजिकल सर्विस ऐंड रिचर्स सेंटर

उत्तर प्रदेश सरकार 1977 — पिछड़ा वर्ग आयोग रिपोर्ट (अप्रकाशित)

कर्नाटक सरकार 1975 — रिपोर्ट आफ दि कर्नाटक बैकवर्ड क्लासेज कमीशन, (चार खंड)

कुप्पूस्वामी, बी 1978 — बैकवर्ड क्लासेज मूवमेंट इन कर्नाटक, बंगलोर, बंगलोर यूनिवर्सीटी प्रेस

कोठारी, रजनी 1970(क) — पोलिटिक्स इन इंडिया बोस्टन लिटिल ब्रौन

1970(ख) — इंट्रोडक्शन कास्ट इन इंडियन पालिटिक्स इन रजनी कोठारी (संपादन) कास्ट इन इंडियन पोलिटिक्स, नई दिल्ली ओरियंट लांगमैन

गलटंग, जौन 1972 — "ए स्ट्रक्चरल थ्योरी आफ एग्रेशन" इन माइक्रोफियरबेंड, और अन्य (संपादन) ऐंगर वायोलैंस ऐंड पोलिटिकल थ्योरीज ऐंड रिसर्च, इंगलेवुड फ्रफस प्रिंटिस हॉल

जन्नूजी, एफ रामसन 1974 — एग्रेरियन क्राइसिस इन इंडिया—दि केस आफ बिहार, दिल्ली संगम बुक्स

डहल, राबर्ट 1961 — हू गवर्नस, डेमोक्रेसी ऐंड पावर इन ऐन अमेरिकन सीटी, न्यू हावेन, येल यूनिवर्सीटी प्रेस

तमिलनाडु सरकार 1970 — रिपोर्ट आफ दि बैकवर्ड क्लासेज कमीशन, भाग I और II

देसाई, देवेन्द्र (संपादन) 1979 — हुवनूर, बारादि, समग्र अध्ययन, (कन्नड़ में) मैसूर चैत्र शिल्प प्रकाशन

प्रसाद, प्रधान एच 1979 — सेमी फ्यूडलिज्म : दि बेसिक कनस्ट्रेंटस आफ दि इंडियन एग्रीकल्चर इन अरविन्द एन दास ऐंड बी नीलकांत (संपादन) एग्रीरियन रिलेशन्स इन इंडिया, दिल्ली : मनोहर

बिहार, सरकार 1980 — पिछड़ा वर्ग आयोग की रिपोर्ट भाग 3

बेटिल्हेन, आंद्रे 1965 — कास्ट क्लास ऐंड पावर : चेंजिंग पैटर्नस आफ स्ट्रेटीफिकेशन इन ए तंजोर विलेज, बर्कले : यूनिवर्सीटी आफ कैलीफोनिया प्रैस

बेटिल्हो, आंद्रे 1970 — कास्ट ऐंड पोलिटिकल ग्रुप फार्मेशन इन तमिलनाडु, इन रजनी कोठारी (संपादन) कास्ट इन इंडियन पालिटिक्स, नई दिल्ली ओरियंट लागमैन्स

ब्रास, पॉल आर 1965 — फ्रेक्शनल पोलिटिक्स इन ऐन इंडियन स्टेट : दि कांग्रेस पार्टी इन उत्तर प्रदेश बर्कले, यूनिवर्सीटी, आफ कैलीफोनिया प्रैस

क्लेयर हैरी, डब्ल्यू 1980 — काइजिंग कुलक्स एंड बैकवर्ड क्लासेज इन बिहार सोशियल चेंजेज इन दि लेट 1970 'ज', इकोनौमिक एंड पोलिटिकल वीकली भाग XV संख्या 2 (जनवरी 12)

मलहोत्रा, इंदर 1980 — कास्ट कानर्नेज इन बिहार : वेजेज आफ हिन्दु अप टेन्सन्स, टाइम्स आफ इंडिया, फरवरी 14

मल्लाराध्यु, जे०बी० अविनाकित — हुवनूर रिपोर्ट : ए फ्रौड आन दि कंस्टीट्यूशन, गवर्नमेंट ऐंड प्यूपल, बंगलौर आल इंडिया वीरशैव महासभा

मल्लाराध्यु, जे०बी० 1977 — वीरशैव टू वी कलासी-फाइड ऐज बैकवर्ड, बंगलौर, आल इंडिया वीरशैव महासभा

मसालदान, डी एच 1967 — पोलिटिक्स इन उत्तर प्रदेश सिन्स 1974, इन इकबाल नारायण (संपादन) स्टेट्स पालिटिक्स इन इंडिया, मेरठ मीनाली प्रकाशन

मैसूर सरकार 1919 — रिपोर्ट आफ दि लेसली मिल्लर कमीशन

मैसूर सरकार 1960 — मैसूर बैकवर्ड क्लासेज कमेटी फाइनल रिपोर्ट

रे, जेम्स 1977 — पोलिटिकल चेंजेज इन ऐन इंडियन स्टेट मैसूर 1917—1955 दिल्ली, मनोहर

र, रामाश्रय 1967 — पालिटिक्स आफ कैंप मेंटेनेन्स—दि केस आफ कांग्रेस पार्टी इन बिहार, इन इकबाल नारायण (संपादन) स्टेट पालिटिक्स इन इंडिया, मेरठ, मीनाक्षी प्रकाशन

य, रामाश्रय अप्रकाशित — दि कांग्रेस पार्टी इन बिहार, नेहरू सेंटर फार दि स्टडी आफ डेवलपिंग सोसायटीज (अप्रकाशित)

र, एम० एस० ए. 1979 — सोशियल मूवमेंट एंड सोशियल ट्रांसफार्मेशन बंबई, मैकमिलन

ल्फ, लोयड आई और — दि मार्डनिटी आफ ट्रेडिशन : पोलिटिकल
न्स होबर रुडोल्फ 1967, — डेवलपमेंट इन इंडिया शिकागो, यूनिवर्सीटी आफ शिकागो प्रेस

श्रीवास्तव एम० एन० 1966 — सोशियल चेंज इन माडर्न इंडिया, बर्कले यूनिवर्सीटी आफ कैलीफोर्निया प्रेस

सिंह, योगेन्द्र 1973 — मार्डनाइजेशन आफ इंडियन ट्रेडिशन, ए सिस्टेमेटिक स्टडी आफ सोशियल चेंज, दिल्ली, रामन प्रेस (इंडिया)

मेठ, डी० एन० 1979 — पोलिटिक्स आफ कास्ट कनफ्लिक्टस सेमिनार, 233, जनवरी

सेनगुप्त, निर्मल 1979 — कास्ट ऐज ऐन एथेरियन केमोमन इन ट्वेंटीथ सेंचुरी बिहार "इन अरविंद एन दास ऐंड बी नीलकांत (संपादन) ऐथेरियन रिजेनरम्स इन इंडिया, दिल्ली, मनोहर

हार्डग्रेव, राबर्ट, एल 1965 — दि ट्रेडिशियन गूवर्मेंट बंबई, पापुलर प्रकाशन

खण्ड V

सामाजिक शैक्षिक सर्वेक्षण सारणियों पर टिप्पणी

सामाजिक शैक्षिक सर्वेक्षण के सभी संबद्ध ब्यौरे मुख्य रिपोर्ट (खंड I) के अध्याय XI में प्रस्तुत किये गए हैं। राज्यवार सारणियों को व्यवस्थित करने के लिए अपनाई गई स्कीम का संक्षिप्त ब्यौरा यहां दिया जा रहा है।

भारत के 31 राज्यों और संघ शासित क्षेत्रों के प्रत्येक जिले से दो गांव और शहरी ब्लाक चुने गए थे। इन चुने हुए क्षेत्रों में स्थित सभी परिवारों का क्षेत्र सर्वेक्षण किया गया था। इन परिवारों से संग्रहणीय सूचनाओं की तालिकाएं खंड II के परिशिष्ट 14 और 15 में दी गई है। इन तालिकाओं से संगृहीत सभी सूचनाओं को कम्प्यूटर की सहायता से निम्नलिखित 13 सारणियों में समाहित किया गया है :—

सारणी—1 प्रत्येक जिले की ली गई नमूना इकाइयां और परिवारों की संख्या

सारणी—2 आबादी और जाति, परंपरागत पेशे के अनुसार परिवारों की संख्या और परिवारों का औसत।

सारणी—3 समाज के अन्य आकार वर्ग के द्वारा "पिछड़े" समझे जाने वाले परिवारों की जातिवार प्रतिशतता।

सारणी—4 निवास स्थान की भूमि का स्वामित्व और अपने किराये के घर में रहने के आधार और मकानों के प्रकार के आधार पर परिवारों का जातिवार वितरण।

सारणी—5 पेय जल के मुख्य स्रोत से दूरी के अनुसार परिवारों का जातिवार प्रतिशत विवरण।

सारणी—6 जाति और लिंग के आधार पर कामगार और गैर-कामगार।

सारणी—7 विवाह होने के समय उम्र और परंपरागत पेशे के अनुसार आबादी का जाति और लिंगवार प्रतिशत वितरण।

सारणी—8 शैक्षिक स्तर के अनुसार आबादी का जाति और लिंगवार वितरण।

सारणी—9 अपने/दूसरों के लिए काम करने वाले शारीरिक श्रमिकों का जाति, शैक्षिक योग्यता और लिंग के अनुसार प्रतिशत।

सारणी—10 कारण सहित कभी भी स्कूल न जाने वाले 5 से 15 वर्ष तक की उम्र के गैर-छात्रों का जाति और लिंगवार वितरण।

सारणी—11 बीच में ही पढ़ाई छोड़ देने वाले 5 से 15 वर्ष तक के ऐसे गैर-छात्रों का जाति और लिंगवार वितरण जिन्होंने कभी भी स्कूल में पढ़ाई की हो तथा पढ़ाई छोड़ देने के कारण।

सारणी—12 जाति और परंपरागत पेशे के अनुसार प्रति परिवार की परिसंपत्ति का औसत मूल्य।

सारणी—13 जाति के अनुसार परिवार की औसत आय और ऋण लेने वाले परिवारों की संख्या और ऋण लेने के कारणों के अनुसार उनका प्रतिशत वितरण।

उपर्युक्त 13 सारणियों में से प्रत्येक के लिए आंकड़े 31 राज्यों और संघ शासित क्षेत्रों के अनुसार अलग से तैयार किये गये हैं। राज्यों और संघ शासित क्षेत्रों की सूची अंग्रेजी के वर्णक्रमानुसार तैयार की गई है। प्रत्येक राज्य और संघ शासित क्षेत्र से संबंधित आंकड़े उपर्युक्त 13 सारणियों में अलग-अलग 13 खंडों में दिए गए हैं।

खण्ड VI

टिप्पणी

जैसा कि मुख्य रिपोर्ट (खण्ड 1) के अध्याय 12 में बताया गया था, इस खण्ड में दी गयी अन्य पिछड़े वर्गों की राज्यवार सूचियां मुख्यतः हिन्दू जातियों से सम्बन्धित हैं । जहां कहीं हिन्दू तथा गैर-हिन्दू पैतृक व्यावसायिक समुदायों के नाम समान हैं वहां ऐसे गैर-हिन्दू समुदायों के नाम स्वतः ही सूचीबद्ध कर दिए गए हैं ।

परन्तु जैसा कि मुख्य रिपोर्ट के अध्याय 12 के पैरा 12.18 में बताया गया था, गैर-हिन्दू जातियों की पहचान के लिए एक पृथक मापदण्ड की सिफारिश की गयी है । इस मापदण्ड के अनुसार, गैर-हिन्दू अन्य पिछड़े वर्गों में निम्नलिखित रखे जाएंगे :—

(1) किसी गैर-हिन्दू धर्मों से परिवर्तित सभी अस्पृश्य, और

(2) ऐसी वे व्यावसायिक जातियां जो अपने पुश्तैनी पैतृक व्यवसाय के नाम से जानी जाती हैं और जिनके हिन्दू प्रतिरूप हिन्दू अन्य पिछड़े वर्गों की सूची में शामिल कर लिए गए हैं (उदाहरणार्थ धोबी, तेली, धीमर, नाई, गूजर, कुम्हार, लोहार, दर्जी, बधाई, आदि) ।

आन्ध्र प्रदेश

क्रम सं०	अन्य पिछड़े वर्गों के नाम
1.	अचूकाल्टावांडलु
2.	अद्दी कर्नाटिका
3.	अगामुंडी
4.	अगारू
5.	अघायुडियार, वल्लारी, माडाली, अघामुडाया, अघामवांडीयर, वारिचाट्टी, कोंडालियेर पालेगारू ।
6.	अजीला
7.	अरावाला
8.	अरचाक ब्राह्मण
9.	अोरा-माराधी
10.	आरेकाटीका, कटिका
11.	आर्यक्षत्रिय, चिट्टारी, चित्रकार, गिनीयार, नाखास ।
12.	अटागारा
13.	अटार
14.	बडागा
15.	बगालु
16.	बाईरा
17.	बाकुडा
18.	बालासन्यानम
19.	बालासांधू बहुरूपी
20.	खंडारा
21.	बंडी
22.	बन्ट्
23.	बाथिनी
24.	बट्टाडा
25.	बेगारी
26.	बेल्लारा
27.	बास्था-अनिकाली, जालोर, रत्ना बालाजी, यूचिला, बाडा बालाजी
28.	भाम्टा
29.	भटराजू
30.	भाटु टुरका
31.	भोट्टादास-बोडो भोट्टाडा, मुर्याभाट्टाडा और सेनो भोट्टाडा
32.	भूमिया-भूरी, भूमिया और बोडी भूमिया
33.	बीडंली
34.	बोस्से-बारांगी जोडिया, बन्नांगी, आसूना, गोडो जोडिया, होल्लार, क्षरिया, कोल्लाई कोडा, परागा, परगाजोडिया प्रांगो, टाकोरा
35.	बोया, बाल्मीकि
36.	बुडाबुक्कालास
37.	बुअबुक्क
38.	बुक्का
39.	बुरबुक
40.	बुर्गानाकालिगा
41.	चाकाला, चावला, धोबी, राजाका, चाकाली, बाभार
42.	चामिकलियान
43.	चारन कंजारा
44.	बलारी-अग्निकुल क्षत्रिय दोमविली
45.	बांचुलु
46.	चेरुमन

क्रम सं०	अन्य पिछड़े वर्गों के नाम
47.	चिटाला
48.	चूप्पोल (मेरा,
49.	चोपेगारि
50.	डामला
51.	दार्जी, भवसारा, हिन्दूमेरा, माराथा, भारटी, रंगारी, रंगरेज
52.	डासारी
53.	डासारी (डोंगा और गूडू)
54.	डेवा-तेलीकुला, गोण्डोला, तेली
55.	देवांगा
56.	देवन्द्र कुलाथान
57.	दाकाडा
58.	धर
59.	डोम्बो
60.	डोम-अंधिया, डोम, ओडिनिया डोम, कोनल डोम, ईसाई डोम, निर-गानि डोम, खडिया डोम, पोंका डोम, टेलगा डोम, युमिआ डोम
61.	डोम्मारा
62.	डोंगायाथास
63.	डोडाकुला, लड्डाफ, पिंजारी या नूर-बास
64.	इडीगा, गोवडा (गाम्माल्ला, कालालेला) गोउडला, सेट्टीवालिजा
65.	गांडला, टालीकुला
66.	गंगानो
67.	गंगोरेउवालारू
68.	गरोडी
69.	गवारा
70.	गोडावा
71.	गोड्डा
72.	गोला, धंगर, इड्डायार, कोनार, कुणी, कुवी यादव, येरागल्ला
73.	गोउडू
74.	गोडस-साटे (मिरिधिया दुवेकुरिया, हाट, नाटक और जोरिया)
75.	गुंडाला
76.	गुजुला, बालिजा, धासार, मुसोकू, पोरिका बालेका
77.	हासला
78.	दतकार
79.	डल्ला
80.	जक्काला
81.	जांद्रा, कुरूयिना सेट्टी
82.	जगल्ला
83.	जंगाम
84.	जानिरा
85.	चेट्टी
86.	जोंगार
87.	जोगी
88.	जोशीनन्दीवाला
89.	काजी
90.	कोडान
91.	केकाडी
92.	केकाडी (या कोखा)
93.	बेकाला

क्रम सं०	अन्य पिछड़े वर्गों के नाम
94.	कालावांथुलु, वाम्माला, गनिका
95.	कल्लाड़ी, कालवार
96.	कन्नकन
97.	कान्द्रा
98.	कानियान
99.	कंजार
100.	कंजारा-भट्ट
101.	कंजर (जायसवाल)
102.	काम्पारा या रेड्डीका (रेडिका)
103.	कापूभारियास
104.	कारिकालाभाकथुलु काईकाला या काईकोध्रन (सेनगुंडम या सनगुंथार)
105.	कारिम्पावान
106.	कारनाभाकमुलू
107.	करणावीगार (कारनाम) कनाका पिल्लाई
108.	काटोका, कसाई
109.	काटिमानुला
110.	काटिपामाला
111.	कटरी राजुलु
112.	कायस्थ-कापंटी ब्राह्मण
113.	खाट्टीन, खट्टी, कोम्मारोजों और लोहार
114.	खोंड
115.	किंघाला कालिंगा
116.	किंटोली, कालिंगा
117.	कोवी
118.	कोडाली
119.	कोलिंगा, वारागम, काखिमा
120.	कोमाकापू
121.	कोमभार
122.	कोंड (कुई)
123.	कूसा
124.	कोप्पुलावेलम्मा
125.	कोरावा (कोरावारा)
126.	कोरंगा
127.	कौसेल्यागौडहुस—बास येरिया गोउडूस, चेट्टी गोंस, सेंमायथ गोऊंडूस डोडडू डूडू कोभारी सुडिया, कोमारिया गाउंडूस और पुसूलो सारिया गोउंडूस
128.	कोपटी
129.	कोटा
130.	कोई
131.	कृष्णाबालाजी (देसारी बाक्का)
132.	कुडिया
133.	कुंबी
134.	कुडुम्बन
135.	कुमवार-कुल्ला, सेलीवाट्ठाना
136.	कुमकाक्षत्रिय
137.	कुम्मारा या कुलाला
138.	कुनामिलि
139.	कुंचोटिनारा
140.	कुराकुला
141.	कुरावान
142.	कुच्चिान
143.	कुरूवे या कुंकमा, हेगडे
144.	कुरूमान (कुरूम्बे)

क्रम सं०	अन्य पिछड़े वर्गों के नाम
145.	कुरूमान
146.	लिंगांबालिजा
147.	माडरी
148.	माहासारी
149.	माहतार (मुस्लिम)
150.	माईला
151.	मालासार
152.	माली (मौंडी पट्टा)
153.	माली (जहां वे अनुसूचित जनजातियों में नहीं हैं)
154.	माली करचिया माली, पैको माली और पड्डामाली
155.	मंडुला
156.	मंगावा
157.	मंगाली नाई ब्राह्मण
158.	मंमथा, गोंटस, कजामगाथा, बरिया गोंडु छुडो मगाथा, बेरिया गोंडु, बूडो मगाथा डुंगाथथ गोंडू, लाडया गोंडा तथा पेन्नानमगाथा
159.	मनुफकुथु (तेलंगाना), मुन्नोर कुप्पू
160.	मराथी
161.	मथुरा
162.	मौन
163.	माविलन
164.	मदारी या माहेन्द्रा
165.	मोगा
166.	मोंडोंवार
167.	मोंडोवारू, गोंडी, बांदा, बन्दा
168.	मनुला
169.	मुदिराज, मतरासी, तेनुगोलु
170.	मुलिया
171.	मुरिजा
172.	मथेराघास
173.	मथुरासी-थानिया, गंगा पुत्रा
174.	नागरालु
175.	नागावाशिलु
176.	नागावासम (नागवामसा) नागवंस
177.	नायक
178.	नाईकापु
179.	नक्कालाल
180.	नायादी
181.	नायक
182.	नीलकन्दी
183.	नेक्सी या कुरनी
184.	नय्याला
185.	नाभी
186.	निरसौकरिया
187.	नौक्कार
188.	नौवावेयावा
189.	नोल्ली
190.	ओडुरा (या ओड्डरा), ओड्डी, ओडुरा, ओड्डो, ओडोलु, ओमाड्डो, ओमाड्डे
191.	ओलुस या मेट्टा, कोमसालिया
192.	ओमलाइट
193.	पंचा मोटला
194.	पचाबोटला
195.	पथापारी
196.	पदमासाली (पट्टसाली, साली, सालीवन, सन्नापाथुलु, धोगाटा, साली)

क्रम सं०	अन्य पिछड़े वर्गों के नाम
197.	पागादाई
198.	पाइंगरापु
199.	पेण्डा
200.	पालाकेरी
201.	पल्लन
202.	पल्ला, परुलीकारी, पल्लोकरुल्लु, अग्निकोला
203.	पल्लो
204.	पल्ली, बड्डा, यालिका गंगावार, गुंडाला वल्लारी वनयाकुलक
205.	पमवाला
206.	पामुला
207.	पनान
208.	पंडारा
209.	पनियान
210.	पान्निग्रांडी
211.	पाराशर्यान
212.	पारावन
213.	पारड़ी (निरशी कारी)
214.	पारडोग्रोस
215.	पारोको मुगुल्ला
216.	पासी
217.	बटकार (खाजी)
218	पत्रा
219.	पेड्डाम्मावंडलु, डावाराकुंडल येल्लम्मा वंडुलु, मुय्यालम्मावंडलु
220.	पेरिका (पेरिके, बालिजा, पुरागिरी क्षत्रिय)
221.	पेरिकालू, रेड्डी
222.	पेरिचारा
223.	पिचारिल
224.	पिराचोगुल्टाला
225.	पोलोगार्स
226.	बेलिनाटिवेलास
227.	पुसाला
228.	पोरोजा-बाडोपेरोजा या सोडिया जोडिया पेरजोग्रा, पारोग, परोजा तथा सोना पारोजा
229.	पुलभान
230.	पुथोराज यन्नान
231.	पुटुनुल, करन
232.	रचकौया
233.	रानेयार
234.	राडले
235.	राडिक्कास
236.	साधचट्टी
237.	संगारी
238.	साम्रोरा
239.	सपारी
240.	सारे
241.	सतानी (पट्टाडा श्री वैष्णव चटाडी)
242.	ईसाई धर्म में परिवर्तित अनुसूचित जाति और उनके बच्चे
243.	पाला-वैयम
244.	सीरियी गोउस
245.	सीग्रोभान

क्रम सं०	अन्य पिछड़े वर्गों के नाम
246.	सेनातल
247.	सीललाकरनम
248.	शोलगा
249.	शोलानारा
250.	सोन्दोर
251.	सिगालु
252.	सोडो, सोडिका
253.	सोर
254.	सोरोलो (सौमवंश क्षत्रिय)
255.	श्री श्याम, सविदी
256.	शुद्धा, शैव, शिवारथका
257.	सुन्ना
258.	सुन्नाई
259.	सुलारी
260.	स्याकुलासाली
261.	तलायारी
262.	तम्बोली
263.	तम्माली
264.	तेलेगा, काम्मा
265.	थोगाटा, थोगारा या थोगाटा वीरा क्षत्रिय
266.	थोटिया नैक्स
267.	थुलुया-वेलचार्ल अगामु-डेइयान
268.	तिरुवल्लुवर
269.	टोडा
270.	तिरुपुकापुस
271.	उपनारा
272.	उधारा या सुधया
273.	वाडुर द्रवी
274.	वादुगन
275.	वल्लुवन
276.	वाल्मीकि
277.	वाल्मीकि बोया (बोया, बेडमा किराका, निशाडी, देल्लापी पेड्डा बोया तैलरयारी तथा चन्दु वेल्लु)
278.	बनजारा (बनजारी)
279.	बराले, भोगरा, मोल्ला, बालिगा
280.	वीरामुश्ती (नेट्टीकोराला)
281.	बेट्टुवन
282.	विडिको, नियोगी
283.	विरासैवालिगामल
284.	विश्व ब्राह्मण (ग्रौसुला या कामसाली कम्मारी, कराची, वडिजा या वाडरा या वाडरंगी तथा शिल्पी)
285.	वाडरा या काला वडारा या पथरोड्स
286.	वाडला
287.	यारास
288.	यादा
289.	यायुकुलम
290.	येन्नाडोवारडा
291.	चेतला
292.	युजाल्लाऊ

2. असम

क्रम सं०	अन्य पिछड़े वर्गों के नाम
1.	अहोम
2.	आर्यमाला
3.	अलूर
4.	बेमा
5.	बेजारा
5(ए)	बंनजारा
6.	बढ़ई
7.	खरिया
8.	बारजूबी
9.	बरोई
10.	दारूई
11.	बासोर
12.	बासफोड़
13.	बोड़ी
14.	बेहुी
15.	बेडिया
16.	बेलदार
17.	भरेक
18.	भट्टा
19.	भील
20.	भौकटा
21.	भूमिज
22.	भुयान
23.	बिजिआ
24.	बिरघोड़
25.	बिरिजआ
26.	बोडो
27.	बौरी
28.	चमार
29.	चेरे
30.	चिक वाणिक
31.	चौहु
32.	चौधरी
33.	चुटिया, चूटिया
34.	डन्डारी
35.	डन्डासी
36.	धमई
37.	धनवार
38.	दुसाद
39.	गण्डा
40.	गणक, केवल कछार मे
41.	ग्वाला, घोष, घोआल, ग्वाला, गोप, अहीर, गौवाला
42.	घासी
43.	घाटोवर
44.	घटुआर
45.	गोडा
46.	गोड्स

क्रम सं०	अन्य पिछड़े वर्गों के नाम
47.	गोर
48.	गोराअत
49.	हाड़ी
50.	होलरा
51.	जोगी, जुगी, नाथ योगी
52.	जोलाहा
53.	कालाहाण्डी
54.	कालीहंडी
55.	कन्धाल
56.	कारबी
57.	करमाली
58.	कशान
59.	कबार
60.	कायस्थ (बंगाली)
61.	केवट
62.	खामटी
63.	खारिया
64.	खेरवार
65.	खोदाल
66.	खोंड
67.	खोमयोर
68.	कोहोर
69.	कोयरी
70.	कौल
71.	कोंडापन
72.	कोरमाकर
73.	कोरवा
74.	कोतवाल
75.	कोया
76.	क्षत्रिय
77.	कछार के कुमार, रुद्रपाल
78.	कुम्हार
79.	कुमाधर, कुशियारी, रव
80.	कुर्मी
81.	लहाड़
82.	लहाड़ा
83.	लोधा
84.	लोधी
85.	लोई
86.	मदारी
87.	माहतो
88.	महिष्यदास, महिष्या
89.	मैमालस (मुसलमान मछियारे)
90.	माहली
91.	मजवार
92.	मालदहाड़िया

क्रम सं०	अन्य पिछड़े वर्गों के नाम
93.	मणिपुरी [मणिपुरी ब्राह्मण मणिपुरी मुस्लिम और मतेइस]
94.	मानकी
95.	मारिया
96.	मिरधार
97.	मोदी
98.	मोहली
99.	मोरन, भाटक
100.	मुखी
101.	मुंडा
102.	मुरा
103.	नगासिआ
104.	नागवन्सी
105.	नाई, बिज, मापिल, हज्जाम
106.	नाथ
107.	नायक
108.	नेपाली (चलरी, चेत्री, दामी गेन, गुल्ग, लामा, बिदु, लोहार, मागर, राई, सारकी, अथाल मोची थापा)
109.	नोनिआ, नुनिआ
110.	ओराओ
111.	पेडी
112.	पनिका
113.	पेस
114.	परजा
115.	पाली
116.	पतरातन्ती
117.	प्रधान
118.	राजबंशी, कोच
119.	राजपूत
120.	राजवार
121.	महोरा
122.	सलोई
123.	सन्थाल, सन्ताल
124.	सोवेराज
125.	शूद्र, दास, डे
126.	तुल, सूत
127.	तन्त्रीपाल, तन्ती, तन्त्री
128.	तन्तुबाई
129.	तोसा
130.	तेलंगा
131.	तेली
132.	थाई चन्हारी
133.	तिपारा, तिमेरी
134.	तुरी

3. बिहार

क्रम सं०	अन्य पिछड़े वर्गों के नाम
1.	अबदाल
2.	अगेरिया
3.	अघोरी
4.	अगुरी-वैश्य, सुडी हलवाई, रौनियार पंसारी, मोदी, कासेरा केसरवानी, कसेरा, सिंदुरिया-बनिया, महुरी-वैश्य, अवध-बनिया, कैथ-बनिया
5.	अम्पात
6.	बैगबू
7.	बनपार
8.	बरई
9.	बारी
10.	बांसफोड़
11.	बखाड़ा
12.	बेलदार, बथगोतरा
13.	बेलदिया
14.	बनटकर
15.	भार
16.	भड़भुजा
17.	भास्कर
18.	भाट/भट्ट
19.	भटियारा (मुस्लिम)
20.	भुईहार, भुईयार
21.	बिन्द
22.	बोंजना
23.	चन्द्रवंशी (कहार)
24.	चैन, चाइन
25.	चानोऊ
26.	चेपोटा
27.	चेटवाल
28.	चोक (मुस्लिम)
29.	चुड़ीहारा, मनीहार
30	डफलानगो (मुस्लिम)
31.	अफाले
32.	डांगी
33.	धेवर
34.	धामिन
35.	धनकार
36.	धनुक, पुछा
37.	धानवार
38.	धारी
39.	धाकाड़
40.	धिमर
41.	धुनिया, धुमिया
42.	फकीर (मुस्लिम)
43.	गवावा
44.	गड्डी
45.	गाड़ीहार (मुस्लिम)
46.	गाण्डा
47.	गन्धर्व
48.	गन्नाई (नागेसर)
49.	गंगाटी, गंगोथ
50.	घाटवार
51.	गुथुरिया
52.	गोदी (चावो), गोधी
53.	गोदरा
54.	गोखा
55.	गोनरहू, गोरहू, गोधाहूम
56.	गौड
57.	गौड़
58.	गुलगलिया
59.	हज्जाम, (अवाधिया, कानोधिया, कावा, नाई, नाईया, नापित, नाया, ठाकुर)
60.	हिमा, करंजिया, कासार (मुस्लिम)
61.	इडिरीसी या दर्जी (मुस्लिम)
62.	इरिका
63.	जादुप
64.	जोगी, जोगो, जुगी
65.	जुआंग
66.	जुलाहा
67.	कबाड़ी
68.	कादार
69.	कावजी
70.	कहार, चन्द्रवोरई छत्रौपति, धोतरा बंशी, रामानी, रावनी, पनेरी
71.	काईबारटा
72.	कलन्दर
73.	कलवार
74.	कामर, मढ़ई, काकित मागिया, मघईया मिस्त्री नागवंशी विश्वकर्मा
75.	कामकार
76.	कांदरा
77.	कानु
78.	कापाडीया
79.	कारबासनट
80.	कस्साव (कसाई) (मुस्लिम)
81.	कौरा
82.	कावार
83.	केसा
84.	केवट
85.	खण्डवार
86.	खंगर
87.	खटीक
88.	खटवा
89.	खटवे
90.	खेलता
91.	खटोरी
92.	खिसार

क्रम सं०	अन्य पिछड़े वर्गों के नाम
93.	कोच
94.	कोली
95.	कोरकू
96.	कोसटा
97.	कुमारभाग पहाड़िया
98.	कुम्हार, छत्रपति, कोमालकर, कुम्मार कुम्भकार, प्रजापति
99.	कंजड़ा
100.	किंतिरिया
101.	कुरमी
102.	कुशवाहा (काईरी)
103.	लाहेरी
104.	लालबेगी, भंगी (मुस्लिम)
105.	लोधा
106.	लोहार
107.	मांदार
108.	मदारी (मुस्लिम)
109.	महिष्या
110.	माहतो
111.	महुरिया
112.	मजवार
113.	मालार (मालहोर)
114.	माली (मालाकार)
115.	मल्लाह, बोरहार, गायोत्री, घटवाल, झलवार, केवट, कुरवाहा, माहेटा, माझी, मुरयोनी, मासुरिया, फूटानट, फुरिहया निषाद, धोबी, धीवर, झीवर, झीमर
116.	मामगम
117.	मानगर (मागर)
118.	मारकण्ड
119.	मोरिझों
120.	मिरियासिन (मुस्लिम)
121.	मिरशिकार (मुस्लिम)
122.	मोमिन (मुस्लिम)
123.	मेडलोक
124.	माकरो (मुकेरो) (मुस्लिम)
125.	नालबन्द
126.	नामशुद्र
127.	नट (मुस्लिम)
128.	नव-बुद्धिष्ट, नव बौद्ध
129.	नोनिया, लवकार नुनिया

क्रम सं०	अन्य पिछड़े वर्गों के नाम
130.	पाहिरा
131.	पाल (भोरीहार-गढ़ेरी), गडेरिया
132.	पमारिया (मुस्लिम)
133.	पांड़ी
134.	पारया
135.	पाथर, कुट, बाचीगोलिया
136.	पटनायक
137.	पटवा
138.	फुटघार
139.	तिगनिया
140.	प्रधान
141.	राजभार
142.	राजबोशी (रिसिया और पोलिया)
143.	राजधोब
144.	रंगवा
145.	रंगरेज (मुस्लिम)
146.	राउतिया
147.	रांईन
148.	संगतराश
149.	सोण्टा (सोटा)
150.	साव (मुस्लिम)
151.	शिवहारी
152.	शियाल
153.	सोधर, नोयर
154.	सुनार, बकवार, सोनार,स्वर्णकार
155.	सुनरी
156.	तामरिया
157.	तम्बोली
158.	तमोली
159.	तानती, ताती, तातिन, तटवा स्वार्त
160.	तापोली
161.	तेली
162.	ठकुराई (मुस्लिम)
163.	ठारू
164.	ठटेरा
165.	टीकुलहार
166.	टियार
167.	तुरहा, साम्रो
168.	यादव (ग्वाला, अहीर, गोप, नवगोप घासी)

4. गुजरात

क्रम सं०	अन्य पिछड़े वर्गों के नाम
1.	अदोदिया
2.	अग्री
3.	अहीर, अयार-बोरिया, यादव
4.	बापन (मुसलमान)
5.	बरोत, वाही वाणचा
6.	बवोचा
7.	बावरी
8.	बावा उतीतबावा, भर्तहरी, भारती देशनामीबावा, देशनाम, गंगाजलिया गिरी, गोसाई, गोस्वामी, रामानन्दी कापड़ी, मार्गी नाथबावा, पुराबैरागी बावा
9.	मालिया
10.	भामता, परदेशी भामता
11.	भारवाद, मोटाभाई भारवाद, कवाड़ी नानाभाई, भारवाद, बोरिया मोटा भाई चोमला जनपाड़ा (जहां वे अनुसूचित जनजाति में नहीं है।)
12.	मोई, मोईराज, धीमर, केवट-मोई जिगामोई, मानारा-भाई, किरा भोई, मछिन्दर भोई, पालेवार भोई, कहार भोई, परदेशी श्रीमाली भोई
13.	बूरूद
14.	चक्रावादिया दासर
15.	चरण, चारण गाधावी (जहां वे अनुसूचित जनजातियां नहीं है)
16	चौधरी (जहां वे अनुसूचित जनजातियां नहीं है)
17.	दारा, अदोदिया, गासी
18.	चुनारा
19.	चुवालिया कोली
20.	डावगढ़
21.	डाफेर (हिन्दू और मुसलमान)
22.	डाकालेरू
23.	धोबी
24.	दिवाचाकोली
25.	फकीर अथवा फकीर (मुसलमान)
26.	गडलिया अथवा गडिलूहरिया
27.	गाधायी (मुसलमान)
28.	गलिआरा (मुसलमान)
29.	चांची (मुसलमान)
30.	चाहिया
31.	गोला-राधा
32.	भिगोरा (हिन्दू और मुसलमान)
33.	जाट (मुसलमान)
34.	जुलाया गराना, तारिया तथा तारी (मुसलमान)
35.	कैकादी, अथवा कोरच
36.	कल्होदिया
37.	कम्बादिआ भगत
39.	खान्त
40.	खरवा, भदेला
41.	खटीक
42.	खाटकी, अथवा कसाई चमड़िया खाटकी, इलारीखटकी (मुसलमान)
43.	रबीस्ती गुजराती ईसाई (केवल अनुसूचित जाति से परिवर्तित)
44.	कोली, कोलीमल्हार, कोली महादेव अथवा डोगर कोली, बेदिया कोली इडारिया कोली, खंरवा कोली अथवा कोली, बारिया कोली धेवरिया कोली, तालपड़ा कोली (जहां वे अनुसूचित जातियों में शामिल नहीं है)।
45.	कोतवाल अथवा कोतवालिया
46.	कुम्हार (बियार, काडरा पटेल, लथिया पोटमेकर, प्रजापति, सकरिया, वारिया वरिया
47.	लवाना, महरावत, गोटी, जोड़ इडाकालोनी, धीगरा, पेलिया शतबाई, वामन
48.	लोधा
49.	माच्छी (हिन्दू) बिलना, धीमर धीवर, कहार खलाल, खलाती खारवाल, मर्मेला, सारंग, टडेल
50	माची, अरीभारतमारा, भारतमारा चामड़िया, जडलिया, देवनिया जनमाली जीनगर, मांगर, सोनारी, शिवनियां
51	मदारी, भरतहरी, नाथ
52.	मजहोथी, कुम्भार, दरबार या दरबान, मजहोथी (मुसलमान)
53.	मकरानी (मुसलमान)
54.	मनसारी (मुसलमान)
55.	मलवा या मलवा-मुरेशी (मुसलमान) खाली (मुसलमान)
56.	मी या मेता
57.	मीना (भील)
58.	मोर
59.	मैना, मियना (हिन्दु और मुसलमान)
60.	मीर, धांधी, लथा, मीरासी (मुसलमान)
61.	मिस्त्री, गुजर, मिस्त्री, राठौर मिस्त्री सुधार'
61.ii	मुस्लिम बंजारा
62.	नट, नट-बजनिया, नटादा बाजीगर
63.	नव-बोधिष्ट, न्यो-बोधिष्ट
64.	ओड
65.	पाडर (जहां वे अनुसूचित जातियां नहीं है)
66.	पद्मशाली-पट्टशाली
67.	पालनवायिया
68.	पालवाडिया
69.	पाराधी, पारधी, पारधीराज, अदवीचीनचर, फासेपारधी (जहां वे अनुसूचित जाति नहीं है)
70.	पिजारा, धांची, मानसुरीपजारा (मुसलमान)
71.	पोवरा
72.	खारी सोरथिया, चारलिया चरमटा, लूनी, कुशहार, टाक मच्छल कादीयां कुम्हार, (जहां वे अनुसूचि जातियां नहीं है)
73.	राठोडिया
74.	रावल-रवालिया, जाति या रावल योगी, रावल जाति, जागरिया, पादत, रावर, रावलिया
75.	रोहित
76.	सलात, (हजां वे अनुसूचित जनजातियों में नहीं है)
77.	सघी (हिन्दु तथा मुसलमान)

क्रम सं०	अन्य पिछड़े वर्गों के नाम
78.	मघेवा
79.	सामी
80.	लरानिया
81.	सरगारा
82.	शिवकलीगर
83.	शिगदेव, या शिगदिया
84.	श्रावण, सखन
85.	सिद्दी (जहां वे अनुसूचित जनजातियां नहीं है)
86.	सिघाई, पती जमात या तुरक जमात (मुसलमान)
87.	सोची
88.	सुमरा
89.	तलाविया
90.	तानकर
91.	तारगाले, माऊईया, मोजक, नायक
91ए.	तेली, मोउगांची
92.	ठाकरोआ, बारिया, धाराला पाटन, बाडिया, ठाकारे
93.	ठाकुर (गैर-राजपूत)

क्रम सं०	अन्य पिछड़े वर्गों के नाम
94.	थेवा (मुसलमान)
95.	तिमाली
96.	वादी
97	वाघरी, गामीचो, वेदवा, चुरालिया (जहां वे अनुसूचित जातिया नहीं है)
98.	वाले, वालेद, नाई (हिन्दु) हज्जाम खलीफा (मुसलमान)
99.	वनकर साधु
100.	वंश-फोडा, वशफाडिया या वजा, वांसफोंडा
101.	बनजारा, बंजारा, चारण बनजारा, मथुरा बंजारा, मारु बंजारा, वांगोश—बंजारा, फंगामिया बंजारा, मोडनिया बंजारा, गावरिया या गावलिया, शेहीदास बंजारा
102.	वादवा, वाघारी
103.	वाघारी, दानानिया, वाघारी बोटू वाघारी, तालापांडा वाघारी रामाचियावाघारी गोडडिया, वाघारी, छिमादिया वाघारी।
104.	वाघेर (हिन्दु और मुसलमान)
105.	वनधारा

क्रम सं०	अन्य पिछड़े वर्गों के नाम
1.	अहेरिया, अहिरिया, हेरो, अहेरी, नायक, घोरी, तुरी
2.	अहीर, ग्वाला, ग्वाला राव, यादव
3.	बागड़िया
4.	बालासरिया, भगत, भारा गागन, कनवान, कवनडल, कावडे, खोरी, कुनकानी, लोदा, लोधे सौदिया, मंडी, निवान, रामका, थोरा
5.	बंजारा, बनजारा, नेट, बनजारा, कजर, कचहन
6.	बरागी, बैरागी
7.	बराई, तमोली
8.	बरहई, बीमराव, दादायी, हावल, धीमन, जनगर, जनगिद-ब्राह्मण जंगरा-ब्राह्मण, खाटो, कश्यप, रामगरिया मानीधिया रजोतिया, सुथार तरखान, विश्वकर्मा
9.	बर्मा
10.	बर्रा
11.	बरवार
12.	बटेरा
13.	बेरिया
14.	बेरा, हरसी या हेसी
15.	भरभूजा, भूरभून्जा, कलेनरा
16.	भट, भटरा, चारण, दरपी, रमिया
17.	भूबलिया-लोहार, गढ़ी-लोहार
18.	भुरा-ब्राह्मण
19.	चागर
20.	चंग
21.	छिम्बा, चिम्बा, दर्जी, सोई
22.	छिपो, भाटा, मोचेला, पंडला, रोहिता, उन्तल
23.	चिड़िमार
24.	डकोत, भागर्व, डकोत, ज्योतिष, रणसाहब
25.	दाभोलो, दाभोला
26.	धनवार
27.	धेया, धेया, डैया
28.	धीमर, मल्लहा, कश्यम, राजपूत
29.	धोबी, बायम, चौहान-भट्टी खुदानेयामोनसोन, राजपर, तनवर
30.	धोसालो, डोसाली
31.	मडरिया, बघेला, बरेला, बैर, बिलरा, होरानवल, कलानलिया, पोडनोवाल, पाल, शिवया
32.	गद्दी
33.	गण्डवाल, गगवा
34.	गवारिया, गौरिया, ग्वार
35.	घासी, घोसी, घसियारा
36.	गिरघ, गिरथ
37.	गोदरी
38.	गोरखा
39.	गुजर, वहर, बरवाल, मनोत चर, कुलसन, मगरिया, पादाजी, राबलसंगी
40.	गुटकाजाट, छिल्लनजाट
41.	हरनी
42.	झीमर, अटलस, बिदरन, घोरे धीवर, बुनलन, धीरा, चितरे झेवर, झिमर, जीभर, कहार, किरनल, लभसार, मलरी, राघव टाला
43.	जोगी, बाल, छिल्लर, फकीर, गंदी, नाथगोलिया पाव्रा, पोवार, रीवाल, रूयेल, तनवर, तूर, सिहग,
44.	जुलाहा (बुनकर)
45.	काम्बोज, बगवा, बगवाई, लागले गद्धी, गगवाहक, जंगला, गाधे, प्रधान, कम्बाह,
46.	खेल
47.	खंगहेरा
48.	कुचबन्द
49.	कुम्हार, प्रजापित
50.	कुर्मी
51.	लावन्या लोवाना (क्र० सं० 5 के यथानुसार)
52.	लखेरा, चान, मनिहार, पनिहार, फनियार
53.	लुहार, लोहार
54.	मदारी
55.	मधया
56.	महातम
57.	मीना, मीणा
58.	मेवाती
59.	मीरासी, गथाला, हाल्वे, कुचरा
60.	मोची
61.	नार
62.	नाई, अमरेवाल, बनवोरी, दिघिया हज्जाम, हाडी, जाडोवाल, जापी जुव्वा, कैथा, कैथ, कुलीन, ब्राह्मण मातवल, मापित, निम्रोगी, पानवार, राजवान, ठाकुर
63.	नलबन्द
64.	नूनगढ़, नूनगर
65.	पाखीवारा
66.	पिनजाली, पिनजा
67.	रचबन्द
68.	राय सिख
69.	रेहर, रेहरा, रिहर, रिधा
70.	सैनी
71.	शोरगिर
72.	सिंगोकान्त, सिंगोवाला
73.	सूनार, अस्वा, अगनारा, थावर कागरा, करोद, कटवीरवा, लाम्बा माहिज, भाडवा, सर्राफ, श्रीसिवान, सोना, सवर्णकार, विंगो उरवाल, श्री साहाल
74.	तागा
75.	तेली, हुसारी, कनाला
76.	ठठेरा, टेमेरा, ठाउेरा कसेरा, टमकार

6. हिमाचल प्रदेश

क्रम सं०	अन्य पिछड़े वर्गों के नाम
1.	अहेरिया, अहेरो, हेरी नायक, थोरी, तुरी
2.	अर्द, पोप
3.	आर्य, डोगरा
4.	बादी, चिनौरा, मोलोरी ओदमाता, उरनामरा
5.	बधाई, बदाई, बराही धोमन, झांगरा-ब्राह्मण खानो, कोडल, तरखान, तयाल, विश्वकर्मा, रामगढ़िया
6.	बागरिया
7.	बाहती
8.	बरागी, बैरागी
9.	बटेरहा
10.	बेदा
11.	बेटा, हांसी, हासी
12.	भड़भूजा, शरभुजा
13.	भट, भतरा, डरपी
14.	मुहालिया
15.	छंग, छांहग
16.	छगर
17.	चेलापी
18.	छिम्बे, छीपी, चिम्बा, दर्जी, सांई
19.	चिड़ीमार
20.	दइया
21.	धोमर, धीवंर, धिनवार, झोवर, कहाट, कश्यप राजपूत-मल्लाह
22.	घोसाली, सोसल
23.	फकीर
24.	गड्डी (उन क्षेत्रों को छोड़ कर जहां अनुसूचित जनजाति के रूप में उल्लेखनीय है।)
25.	गडरिया
26.	गवरिया, गौरीया
27.	धाई
28.	घासी, घसियारा, घौसी,
29.	घीरथ, घरीत, घरोघगारी चंग
30.	गोदरी
31.	गोरखा
32.	गोवाला, ग्वाला, ग्वार यादव, अहीर
33.	गूज्जर, गूजर (उन क्षेत्रों को छोड़कर जहां अनुसूचित जनजाति के रूप में उल्लिखित हैं।)
34.	गुमानयान
35.	हरनी
36.	जोरी
37.	कंधेरा
38.	कन्खर, कन्चन
39.	केहल
40.	कोल्गा
41.	कुम्हादे, प्रजापति
42.	कुर्मी
43.	लहना
44.	मरासी
45.	मदारी
46.	महातम
47.	मेहरा
48.	नाई, बमनेरू, हजाम कुलीन, ब्राह्मण, पतियाल
49.	नलबन्द
50.	नार
51.	पखीवारा
52.	पिन्जा, पैन्जा
53.	रब्बन्द
54.	सगरा
55.	सुनार, जरगर, कपिला सोनी, स्वर्णकार, टोक
56.	सुरेहरा
57.	थाविन

क्र० सं०	अन्य पिछड़े वर्गों के नाम
1.	बकरवाल, बकरवाल
2.	बाजीगर
3.	भांड
4.	भेड़ा (ढोल बजाने वाले बाजूरा वादक)
5.	भरई लुहार
6.	भंगी झाकरोब
7.	भाट
8.	बटवारा, गोर, बाड़ी, लोहाना
9.	भरभूजा
10.	बाकल
11.	बावरिया
12.	चोपान
13.	दमवाली फकीर
14.	धोर (मुसलमान)
15.	धोबी (कपड़े धोने वाला)
16.	डूम, डूमड़, गार्सा कमाल्ल (उन्हें छोड़कर जो अनुसूचित जातियों में है)
17.	डोमारी
18.	दर्जी
19.	फकीर
20.	गड़िया
21.	गड़ेरी
22.	गाड़ा (लोहार)
23.	घरामी
24.	घोर-मुसलमान
25.	घुनिया
26.	गुज्जर
27.	गुरेरा
28.	हज्जाम नाई
29.	हर्सी (माली केवल नाच गाने वाला वर्ग, सिकारी के मालिकों को छोड़कर)
30.	हिलका, राजगीर
31.	ज्योतर
32.	जुलाहा
33.	जोगी
34.	कलार
35.	कटाना
36.	खालिया
37.	कुल फकीर
38.	कुम्हार (बर्तन बनाने वाले)
39.	लोहार
40.	लोन
41.	मदारी
42.	माह मीरी
43.	मल्लाह
44.	मीर
45.	मिरासी
46.	मोची, मगरज (जूता मरम्मत करने वाले)
47.	मोन (ढोल बजाने वाला)
48.	नक्काश
49.	पाड़ा
50.	पासना, परना
51.	पीर
52.	पटहीर
53.	टट्टू-वाला, खच्चरवाला
54.	रासी
55.	सक्काश
56.	शिन
57.	शपरी बट्टाल (उन्हें छोड़कर जो अनुसूचित जाति में है)
58.	सिक्ल गीगर
59.	सगतराश
60.	सराज
61.	सीचिति
62.	तेली
63.	यामकुम

क्रम० सं०	अन्य पिछड़े वर्गों के नाम
1.	आदिया (कूर्ग जिले को छोड़कर)
2.	अगासा, माहिवाला स्काला, सकाला भाट सकाला, टसाकाला, कन्नाग धोबी, परान, रंजका
3.	अघोरी, कपालमोरी
4.	अमलाती
5.	अमलदाकर्मा, अम्बालाकरन
6.	अन्ध
7.	अन्धराम
8.	अंसारी, जुलाई (मुसलमान)
9.	अरनादन
10.	अतर
11.	अटाजरी
12.	बागवान सम्बोली (मुसलमान)
13.	बादगा
14.	बागालू
15.	बागाटा
16.	बैरा
17.	बेरा पटार, बेलपटार, बोकापटार
18.	बैरागी, बावा, बावाजी, भैरागी, बायली
19.	बजानिया, बेजेनिया
20.	बाकाडरा
21.	बाजोजा, बाजाजोगा, नायडू, बोगम नेलगा, तेलगा, बालाजा, मेट्टी बालोजा, कासवान, मुल्लर, मुनगासी, मनराका, जनापन, बल्लगारा
22.	बालासन्तोषी
23.	बालासन्थानम
24.	बन्ना, बन्नागार
25.	बन्न, (बेलगाम, बीजापुर, धारवाड़ तथा उत्तर कनारा जिलों को छोड़कर)
26.	बन्नू
27.	बारडा
28.	बारिकी
29.	बारमुर
30.	बधाल, बट्टाल, बटलर, बटटार
31.	बधिनी
32.	बट्टाडा
33.	बावरी
34.	बबनार
35.	बाजीगर
36.	बेडा, बेडाल, बालमिकी, बारगी बेडार, नायका, बेदरनायक, नायक नायकोमक्कल, नायकवाद, पालेगार, रामैणी, नायकर बालमिकीमक्कलु बेदान
37.	बेगारी
38.	बेल्लारा
39.	बेहरूपी
40.	बेरड (बेडार)

क्रम० सं०	अन्य पिछड़े वर्गों के नाम
41.	बेरी (मुसलमान)
42.	बरिया
43.	बसनर, मन्द्र, बेरुवर
44.	भामता, भाम्पता, परवारी भाम्पता, भामता, साकर, इक्कलिगर, रेड्डीपुनभामता
45.	भाग्रोट, भटराज भटराज, भीरान
46.	भारती, भारागी
47.	भाविन
48.	भोदडास, बोटोभोदडारा, मुन्निया भोदडार भोना भोदडारा
49.	भूमियास-मुरा-भमिया और बोडा भूमिया
50.	बोनापट्टा
51.	बिन्दली
52.	बिगो
53.	बिम्मोस, बारगी, ओडिया, बेलगार, डाडुआ, फरसी, डोम्मार ओडिया, कोडे कल्लाडी, पारगा, पगा, ओडिया गाडा और टकार
54.	बोयार—बोयारी, बोयोडा, बायादी बायरी, बोयोडा
55.	बुडबक, बगबडकी, बुडबकावा, डेबारी जोगी, डम्बक
56.	बायागरी
57.	चाचाटी
58.	चक्कुवाडिया दासार
59.	चम्बोटी
60.	चाम कडटी
61.	चन्दाल
62.	चप्पारबन्द, चप्पारबन्दा (मुसलमान)
63.	चापेगार, चापेगारा
64.	चारी, छार, छारा
65.	चारोडी, मेम्मा
66.	चिटारा
67.	चित्रकारी-जोशी
68.	चिल्ला, चिलकार
69.	छहार या छहारा
70.	चुनयार
71.	डांडासी
72.	डोम-दासार
73.	दारजी (हिन्दू और मुसलमान) भावसार क्षत्रिय शिम्पी, शिम्पीगा शिम्पी, शिम्पी, शिव शिम्पी साई, शिरवी, रंगारी, रेंगलर, शिवारी नामदेव, रांगरे, नीलगार,
74.	दुरवेश
75.	दमारी, डेमरी
76.	दावलगामावारीगार, मोटेली, मोटेला, दक्षाडी डेक्कनी नाणाडिया मोरेका, मोरचार नाणाडिया, अम्बलवासी
77.	दवाग, चालिवान, सिंगिलाग कोल्टी, इटला मेर, बिलार मुलाडी, इटकर, इटकर
78.	नाइकी मोरिस धानका, नेटारिया, और धानका
79.	पेर
80.	पीजी (मुसलमान)

क्र० सं०	अन्य पिछड़े वर्गों के नाम
81	धोंदिया
82.	धोली
83.	दिगवान, जिनगेर
84.	गोम्बस-ओंधिया, डोम्बस-ओधिनिया, डोम्बस-क्रिशचियन डोम्बा-चोनेल, डोम्बस-मोरगानी डोम्बस-उड़िया, डोम्बस-पुनाका, डोम्बस-तेलगा, डोम्बस-उम्मिया
85.	डोगा, येरूकाल्स
86.	डोम्बीदास
87.	दुर्गामुर्गी-बुरबूचल
88.	ऐजलोजा, डावात
89.	फकीर (मुसलमान)
90.	गाडावा, गाडावास्वाडा, गाडावा सेरीलम, गाडावा-फ़ंजी, गाडावा जोडिया ओलारा, गाडावा पानगी
91.	गाडला, तेली
92.	गंगनी, गावती, गाव्वती, गाप्तो, गासविन
93.	गंगाकूले, गगेमाकाले, गोरीमाथा आम्बिग, आम्बिगा, वक्कालिगा, कव्विलो, कव्वीली, कव्वेर, कव्वीरा, खारवी भोयी, वोई, थोरिया, हरकान्थारा, हरीकान्थरा, कहार, मोनागार, खारिया मुन्नागार, मिवियार, बेस्था, गंगामाथा गंगपुत्रा भोई, परिवारा, एराव्वा, बरुवेवे सुवरू मोगावसेरा
94.	गनिगा, चाक्कम, तेली
95.	घाडो
96.	घाडसी, घाडसी
97.	घासी या हाडडी, रेल्ली, सचान्दी घासी, बोडा घासी और सगधासी
98.	गटटी
99	घोसाडो
100.	घोंडानी, गोंडालीगा गोंढाली, गोढाल्ली
101	गिड्डाकडको, पिगले, पिगाले
102	गोडागाली
103.	गोडारी
104.	गोगरा
105.	गोल्ला, गोल्ली, गोपाल, यादव, अस्थाना गोल्ला, यादवा, आदावी गोला, गोपाला गोपाली हनावरूआ, कृष्ण गोला, अनवारू, अटनावुरू, हनवार हनावार, दूधीगोला
106.	गोंडो-मोडिया गोड और रोजागोड
107.	मोंड्स-बाटी मिरिथिया दुधो कओरिया, हाटो जातको तथा जोरिया
108.	गोंडाली
109.	गोनिगा, सादुसेट्टी
110.	गोसावी, गोसायी गोसाई, अतीत
111.	गूडीगार
112.	गुजर, गूजार (राजमिस्त्री)
113.	गुराव गुरोव, ताम्बली ताम्बाल्ला, गरावा, गुराट, गुरराट
114.	हालावाकको, वाक्कल, वाक्कल ग्राम वाक्कल, गाम-गोडा, ग्वाडा, ग्वाडा, कारेवाक्कम, कुचावाक्कल, अट्टेवाक्कल, शिलवाक्कम, हालाविक वाक्कल
115.	हाल्लफो
116.	हडेबाजीर
117.	हंडरवत
118.	हरणशिकारी, चिगारीबटेगार, बाबरी, बाओरी, फासाचारी, बागरी
119.	हेलावा
120.	हिल्लरेड्डो

क्रम सं०	अन्य पिछड़े वर्गों के नाम
121.	होलेवा
122.	होलवा, हेलावा, हेलवामाल्लर, हेलवारू हेलवागोल्ला, हाडोहेलवा, पोचरगुन्टाल
123.	होन्नियार
124.	होवाडिगा हुगर, होगार मल्लगार माली, फूलमाली, फलमाली, फुलारी फौलारी, जीर
125.	हाऊगार, हवागार, हवाडीगा
126.	हलीगा हालेवायक, विल्लावा, देवर मलियाली-विल्लावा, दोवार, दीवारामक्काल नामधारी, गोंडले, मोंडला, इलोगा, कोमारपाईक, दिवोगा, थियार, टियान, इदोगाकालाल
127.	जाडापम
128.	जागाल
129.	जाटापुस
130.	जावेरी, जावारी जोहरी
131.	जोगी, जोगर, सन्जोगी, जोगर सन्यासी
132.	कदान
133.	कदार
134.	काडू-कोंकणी
135.	कल्लोडा
136.	कास्ती, कनियन
137.	कांम्मारा मसूर जिले को (कोल्लेगल, तालुक को छोड़कर)
138.	कनाटे
139.	कान्बी, कुलवाड़ी, कुन्बी
140	कंजर, कंजरी, कंजीर खंजरभाट
141.	कानीसन कानियन, कनयान (मैसूर जिले के कोल्लेगाल तालुक को छोड़कर), कनियार
142	कपूमारीज
143.	कारीकूदूम्बो
144.	करीम्पालन
145.	कास्वा
146	कसाई, कटीक, खटीक, कटुका, कटूगा कासाब, अराई, कुल्लाल
147.	कसार, कंसार, कनचरी, कनचारा कनचूगारा, बीगर
148.	कासबिन
149.	कासीकाप्पी, काशीकपाडो, बिरूमाली
150.	काटाबू, काटाबार
151.	काटीपाऊला
152.	कवादी
153.	कावाटियान
154.	केलकारो, खेलकारी
155.	खोंद
156.	कोवगारा
157.	कोडालो
158.	कोडू
159.	कोलायानूरोली
160.	कोलाबोरी, कोलारी
161.	कोलो महादेवी
162.	कोल्ला, कोल्लाहा
163.	कोलथातो, कोल्हाटोगो
164.	कोमाक्पु
165.	कोम्मार
166.	कोंड (कुई)

क्र०सं०	अन्य पिछड़े वर्गों के नाम
167.	कोडा, धोरा, कोडा रेडिउज कोडाहस-देशिया, कोडक्स,-डोगरिया
168.	कोंध, डेसड्या, कोंधस डोंगरिया, कोंधस कुड़िया, कोंधस, टिकिरिया
169.	कोगा, कोंगडी
170.	कोनकना, येन्ती
171.	वैकाडी, कोरागर, येरकाला, ईराकाला कूंची, कोरवा, कोरमासेट्टी, येरूकाला
172.	कोसल्या, गोडस, बोसोथेरिया, गौडस, चिट्टिटो गोडस, डागयाथ गोडस, डोंडूकमारिया, डोडूकामारो, आदिया गौडस तथा पुल्लीसारिया गौडस
173.	कोटारो, कोट्टारी
174.	कोटेक्षत्रिया
175.	कोटिया-बारटोका, बेनथूरिया धूलिया, या दुलिया, होलवा पैको पूतिया, सनराना तथा सिद्धो पैको
176.	कोयावा
177.	कुदूबी, कुदूबी-कोयो
178.	कुम्वारा, कुम्मारा, खुम्भार, कम्भार, कुलाला, कलालर, मोलिया कुसावन
179.	कूंचीकोरवा
180.	कूरी चवान
181.	कुरावन, कुरूम्वान, कुरुम्बा, हुलूंमाथा धनगर मारवाड़, गोरवा
182.	कुर्मा, कुर्मी
183.	कुसूमा
184.	कुरुवा, कुरुब, कूरुबर,
185.	लाडर, लाड, लाडारू, येलेगार
186.	लिम्परा
187.	लिंगायत वर्ग अर्थात् शिम्पो, शिवाशिम्पी नीलागर, कोशती हाटागर जेदा बिलोजेदा, नियगी कुहिना शेट्टी बिल्ली मागा नयीनडा नौवीकशोनरोडा केलाशी, हडपाद, नाडिग, मगला कुमार बादगी, अगासा मोदीवाला, रजक, गुरव, तम्बाली कुम्बार, कुम्भार, कूलाल, वागर, जीर नागालिका, गाऊली (ग्वाला) हुगर मालागार, तेलीगार, पुजार, जनगाम्स में माथा पाथिसा गणिगार, शुद्ध शिव, झम्डणीडी, शिवरेचका
188.	लोनारी
189.	मामाथा, गौडस, बरनिया, गोडस बोडो मागाथा, डोगयाथ गोडू, लेडी गोडू, पोना मागथा तथा साना मागथा
190.	महासारी
191.	मेघासी
192.	मालिस, कोंरचियामालिस, पाइको मालिस तथा पेड्या मालिस
193.	मणियानी, मुणियानी
194.	मन्ना धोरा
195.	मन्नाम
196.	मरायान, मारावानर
197.	मारटा
198.	मराठी (दक्षिणी कोनारा जिले की छोड़कर)
199.	मासानोयायोगी
200.	मेदारा, मेदारी, बुरूड, गोरोगा, मैदारा
201.	मीठा अवालकार
202.	मोदिगा, मोदीकारा, मोदीकार
203.	मोडीवार, माडीवारू
204.	मोडूगार या मूडूवान

क्र० पं०	अन्य पिछड़े वर्गों के नाम
205.	मूधार
206.	मूरवा धीरे या नूकाधीरे
207.	मुक्कावन
208.	मूलिया, मूरिया
209.	मूरारी
210.	नयाफसे, लडाके, ुनिया, मनसूरी चिनजार या पिजारी (मुसलमान)
211.	नडोरा, नाडार, उकुनाडम, ब्रोकेनाडार
212.	नट, नटुया
213.	मालकी
214.	नालबन्द, (मुसलमान)
215.	नन्डीवाला, फूलमाली
216.	नाथपंथी, दाऊरो, गोसावी
217.	नव-बोदिष्ट न्यो बोदिष्ट
218.	नाईन्दा, लाईनजा, क्षत्रीसर, हज्जामन्हावी, नाडीग, अम्बेटम, मगला कैलाशी, शोराड, शोवरिक, चौरिया, नावालिगा, भंडारी, नापीथा
219.	नेलाकनावारू
220.	न्योगी, कुरुहिगसत्ती, थागारा, बिलोमाग्गा, सेनहगा, साले, जामखाना असीर, केकालन, नैकर, जाडार, जन्दरा स्वाकुलासालस
220.	नेगी, कुरुहिगलेट्टी, बीलोमाग्गा व्योमाटा, सोनीया, जामखान अयीरी, अवीर, साले, सीले, काईकोलान, नाईकर, जेडार, जाडार जानडा, स्वींकुलासाले
221.	ओस्था
222.	ओटारी
223.	पाचाभोटला, पाचा बाटला
224.	पदमापारी
225.	पद्माली भारगूडे, सेड्टी, देवागे
226	पदराती
227.	पाडिया, पाडिमार
228.	पाडित
229.	पागाडाई
230.	पेगारापू
231.	पैडा
232.	पाके
233.	पालासी
234.	पाल्ली
235.	पामिदी
236.	फामूला
237.	पाणबा
238.	पानन
239.	पानासा, पानास्सा
240.	पडाराम, पान्डार पान्डारा
241.	पान, दावाकुलन
242.	पनिका, पनिक्कर
243.	पाप्मेलारा, कोकनी
244.	परधान
245.	पासी
248.	पत्रा
247.	पत्रमेला
248.	पटवाकारी, पटेगार, पट्टेगार
249.	पेटिया

क्र० सं०	अन्य पिछड़े वर्गों के नाम
250.	पिचाती, पिचारी
251.	पिंडारीम या पेंडारीस (मुसलमान)
252.	पिचगुन्टा, पिच्छीगुंटाला पिचूगुन्टाला
253.	पोमला
254.	पोरजस, बोन्डा दास्वा, डिडूआ मूडिली, पेंगू, पूंडी तथा सालिया
255.	पोराजा-बोड, पोरोजा, मोदिर पौरजा सानी, पोरोजा, जोड्डिा पोरोडा तथा पारेगा पोरोजा
256.	पोवारा
257.	पूलायन
258.	पूल्लावन
259.	पूथीराई वन्नान
260.	कुरेशी (कस्साब) मुसलमान
261.	राजपुरी, राजपुर, बालावाल
262	राजपूत
263.	रावल, रावालिया, राऊल
264.	रावत, रायाकुरेवाथ
265.	रेथी धोरा
266.	रेनूदास
267.	रेल्लो, ओरसाचांडी
268.	रोना
269.	सदाजोशी
270.	संगारी
271.	संताल
272.	सानियार
273.	सांसी
274.	सासिया
275.	साओरा
276.	सारे
277.	सरोडी, सरोडा
278.	सारानीया
279.	सतारकर
280.	सतानी, चाट्टडा , श्रीवैष्णव
281.	सावरसा, कापूसावारा, मालिया सावारा खूवतोसावारा
282.	सोरोथी गौडू
283.	सिम्मन
284.	शानन
285.	सिंहदेव और सिहादिया
286.	शिक्कालोगर और सिक्कालोगर
287.	शोलागर
288.	सिन्धोर
289.	सोची
290.	सोलीगा
291.	सोन.र, श्र.यं (कोलो)
292.	सोरे
293.	सुन्ना, सुन्नाई
294.	सूरावा
295.	सूदीर, शुद्रा
296.	सुतसाली
297.	स्वीपर्स (मुसलमान)
298.	अनुसूचित जातियां (ईसाई में परिवर्तित)
299.	टाधावोरे
300.	टावनकार
301.	टाकारस (मुसलमान)
302.	तालाविया
303.	तेलागा
304.	तेरुवान, धोल्लया
305.	थोट्टीया
306.	थोटेवाडू
307.	टोगाला, थोगाला, टिगलेर, वन्नोकूला, क्षेत्रीय, थासनथुकूले क्षत्रीय, धर्मराज, कपू, कुरेवान पुल्लाई, अग्नोकुला क्षत्रीय
308.	तिलारी, तिरालो
309.	तिलवो
310.	तिमाली
311.	तिरुवाल्लूवान
312.	तूरी
313.	उप्पालिग सेट्टी रोय
314.	उप्पारा, उप्पेरा, उप्पिलीयान सागरा, चुनार, गोवन्डी, गोवाडों, गोडी, मेलूसाक्करस
315.	वाडी
316.	वेदू
317.	वाजलूथेडन
318.	वालायार
319.	वालवाई
320.	वार्थारियन
321.	बासूदेव
322.	वेट्टवान
323.	वीर, वैरा, वैरामास्ती
324.	विश्व, ब्राह्मण, सरपा, देवनगन्या ब्राह्मण, कल्मार, औसाला, कम्मालन कामसाल, कामसाला, पंचाल, पंचाला सुतार, बागारी, बादोखादली सोनी पत्तर, मेज्जीगर, सिल्पी
325.	विश्वकर्मा-लूधार, उक्कासाले आचारी, सिवाचार, अहरू
326.	विथौलिया
327.	वोक्कलिगा (केवल ग्रामीण क्षेत्र)
328.	यान्डी
329.	येक्लार, याक्लार, याक्काली इगालिया
330.	येरूला
331.	येरागोलावाड या थेल्ला पामालवाडा
332.	यान्डीवाओ
333.	जारगार (मुसलमान)

9. केरल

क्रम सं०	अन्य पिछड़े वर्गों के नाम
1.	अगासा
2.	अलावान
3.	अम्बलाक्करन
4.	अमपट्टन
5.	अमबलार, अमबाथान, अमबिथान, इज्हावतेरी, कालरिकुरूप, मारूथवर, नाइंकेन, पंडोधारे, विलाकिवथालानवी
6.	एंग्लो-इण्डियन
7.	आर्थन
8.	आयंवार्धन
9.	अभूमाहरती
10.	आर्या
11.	आर्याज
12.	बाडागा
13.	बागाटा
14.	बंडारो
15.	बारिकि
16.	बातड्डा
17.	बावुरी
18.	मिलवा
19.	मोटादास-बोदो-भोट्टडा-मुरिया-भोट्टडा और सेनो-भोट्टडा
20.	भूमियास-भूमिया और बोडो-भूमिया
21.	बसोय-बारांगी जोडिया, बेन्नानगी, बोलार, डाडूवा फेंसी, झोरिया कोलाई, कोडे प्रांगां, पेंगा, जोडिया, सौडोजोडिया, और टाकोरा
22.	व्यागरी
23.	चावाती
24.	चाक्रावार
25.	चक्काला
26.	चलावडो
27.	चानान, चालिया
28.	चापटैग्रा
29.	चट्टी
30.	चटियार, चक्काले, चट्टियार, तेलगू, केनिकेवस्या, वनियार
31.	चावालाक्करन
32.	चेयाक्करन
33.	चेननू
34.	चेटिज, (कोटार, चेटिज, पाराक्का, चेंटिज, हल्यूर चेटिज, एटिंगाल चेटिज, पूडराक्काडा चेटिज, इंरानियम चेटिज, श्री पंडारा चैटिज तेलगु चैटिज, उदायामकुलनगारा चेटिज, वाइनाडा चेटिज और पालावारा चेटिज)
35.	डनडासा, डनडासी
36.	दविन्द्राकुलाथान
37.	डेवाडिगा
38.	डेवानगा
39.	डेवार
40.	डक्काडा
41.	डोम, डोमवारा, पैइडो, या पानो
42.	डोम्बो
43.	डोम्ब-अंधिया डोम्ब, औधिनिया डोम्ब, चोनल डोम्ब, ईसाई डोम्ब, मिरगानी डोम्ब, तेलगागा डोम्ब और उडिया डोम्ब।
44	ईज्हावास
45.	ईज्हप्वाथी
46.	ईज्हाधाचान
47.	गाडावास-वोडो, गडावा सेलान, गडाबा, फ्रार्जी गाडावा, जोध्या गाडावा, ओलारो गाडाबा, पानंगी गाडाबा और प्रांगो गाडावा
48.	गानाका
49.	गन्जम रेड्डी
50.	गट्टी
51.	घासी या हड्डी, रेली सांचांडो
52.	घासिस-बोडा घासिस और सेन घासिस
53.	गोडारो
54.	गोंड
55.	गोडो-मोड्या गोंड और राजो गोंड
56.	गोंड्[illegible], भिवथिया, डडोह कौरिया हाटो, जटाको और जोरिया
57.	गाउंडर, पिल्लाई
58.	गोडा
59.	हाडो
60.	हेगडे
61.	होलवा
62.	ईल्लावान
63.	इलावाधी
64.	इज्हूवैन (इल्लुवान)
65.	जाडापस
66.	जागाली
67.	जाम्बूबुलु
68.	जाटापूस
69.	जोगी
70.	काडूपट्टन
71.	काईकोलन काम्पारा (पुराने मालाबार जिले के अन्तर्गत आने वाले क्षेत्रों को छोड़कर)
72.	केरमालास, विश्व कारमालास (विश्वकर्मा कारूवान, अगारी, मुसारी थट्टन विलकुरूप या विल्लासेन, विश्वरामनार विश्वम)।
73.	कानिसान
74.	कानोसु या कनियार पाणिखेर, कानि या कनियान (गनका) या कनिसेन या कमगान
75.	कार्ननान
76.	कनजर
77.	कन्नाडियान
78.	कापूमारिईज
79.	काथिक्कारन
80.	काउथी
81.	कायुडियारू
82.	कवयुधिआन

क्रम सं०	अन्य पिछड़े वर्ग के नाम
83.	कैलासी (केलासी पाणिकेर)
84.	केरल मृदालीज
85.	खट्टंजा खाट्टी, कोमारो, और लोहरा
86.	खोंड
87.	किटारन
88.	कोडालो
89.	कोडू
90.	कोम्मार
91.	कोंड डानोग्रस
92.	कोंडा डोरा
93.	कोंड (कुई)
94.	कोंड-डेसाया कोंडस, डोंग्रोया कोंड्स कुट्टकटाया कोडस, और टिकिरिया, कोंड्सयेमिटी कोंडस
95.	कांगु मालायन
96.	कोराचास या कोरावार या ऐरूकाला
97.	कोसाल्या गोडस, बोसोथोरिया गोडस चिट्टो गोड्स डांगेसाथ गौडम, डोड्डू कामारिया डूडू कामारी, काडोया गौंड्स और पूललोरिया गोड्स
98.	कौडेयार
99.	कोटिया-वारटोका, बेनयी ओरिया थूलिया या डूलिया, होलवा पाईको पूटिया, सेनरोना और सिंधो पाइको
100.	कोया का गोड, राज या राजा कोया, कोटू कोया और लिंगाधारी कोया, अपने उप सम्प्रदाय के साथ
101.	कोयो
102.	कुण्णानायना
103.	कुडुबो, कुडुम्बिा
104.	कुसावान, (कुलाला/आन्ध्र नायर या आन्थरू नायर)
105.	लंगबाडो
106.	लेटिन कैथोलिक्स
107.	माडरा
108.	मडारी
109.	माडोगा
110.	माडीवाला
111.	मागध गौडस-बरेमिया, गोडस बूडू मगाथा, डोंगायथ गोडस लडिया गोडू, पोक्षा मागध और सेक्षा मागध
112.	मालाडासू
113.	माला या एजेंसी मालास, बाल्मीकि
114.	माला पंट्टरम
115.	माला पुलायन, कारावली पुलायन, कुरुम्बा पुलायन और पाउव पुलायन
116.	मलायेकांडी
117.	मालिस, कोचिय मालोस, पायकोमालिस और पेडा माली
118.	माला मालसर
119.	मानावांस
120.	मान्ना धौरा
121.	मपिला
122.	मारक्कान
123.	मारावांस
124.	मराथी, मराटी
125.	माराओन
126.	माटागी
127.	मऊने

क्रम सं०	अन्य पिपछड़े वर्ग के नाम
128.	मेडारा
129.	मोगानीरा
130.	मुक्कुवान, मुकया
131.	मुलिया
132.	मुरिया
133.	मोट्टेडा मुरिया
134.	नाडार
135.	नायडु बालिजा, गौडा वाडुगन
136	नायक्कनूस
137.	नाट्टु मलायन्स
138.	नुलायन
139.	ओडांस (आन्ध नायर या अन्थुरु नायर)
140.	ओजुलस या मेट्टा कोमसालीस
141.	ओमानेईटी
142.	पागाडाई
143.	पैडी
144.	पाइगारापु
145.	पाइंडा
146.	पैकी
147.	पालासी
148.	पामीडो
149.	पाडांहन, मनियाकार
150.	पांडीथावास
151.	पानीक्कन
152.	पान्नीयांडी
153.	पान्नीयार
154.	पेनी
155.	पट्टारिया
156.	पैनढ़ीया
157.	पेरुमकोल्लासं
158.	पेरुवन्नान (वाशनाकवार)
159.	पिल्लई
160.	पोरजा-बोडो, बोन्डा डारुवा, डोड्वा, जोडिया, मुंडिली, पेनगी पेड्डी और सालिया
161.	पोरोजा
162.	पोरोजास-बोडो, पोरोजा या सोडिया, सानोपोरोजा, जोडिया पोरोजा और पारेंग प्रोजा
163.	पुलाया
164.	पुल्लुवान
165.	राजापोव
166.	रेड्डिडयन
167.	रेड्डिडछोरा
168.	रेलली या साचांडी
169.	रोना
170.	साकारावार (कोवाथी)
171.	सेलीयास
172.	सामबावान (तलिक)
173.	साओरा
174.	सापारी
175.	सावारा
176.	सावरास-कापुसावारास खोट्टी सावरास और मालिया सावारास
177.	ईसाई जाति में परिवर्तित अनुसूचित जातियां।

क्रम सं०	अन्य पिछड़े वर्गों के नाम
178.	सेनाई थालावार (ईलावानियर)
179.	सेरिथी गोडस
180.	सोलागा
181.	सोलागार
182.	एस० आई० यू० सी०
183.	सौराष्ट्रा
184.	थाटा पुलायान
185.	थोटयास
185.	थोलको लाम्स
187.	थोटामान
188.	थोट्टिया नाइक
189.	थोट्टियन
190.	टोरुवालुवर
191.	टोडा
192.	वाडूवन
193.	वाक्कालिगा

क्रम सं०	अन्य पिछड़े वर्गों के नाम
194.	वाल्मीकि
195.	वाणियन (वणकिा, वणिका, वैश्य, वणिका चेट्टी वणिया चेट्टी, अईरिवार, नागरथार और वनियान)
196.	वनियार
197.	वरनावार
198.	वेल्लान
199.	वेरासाईवास (योगिसवारा और योगीस)
200.	वेलुथेडापु नायर (वेलुथेडा और वतन्नाथ)
201.	विलावकेथाल नायर (विलाक्किथातावन)
202.	वेट्टाक्करन
203.	विश्वान
204.	विश्वान (मालानखड़ी)
205.	यादवान (इडायान)
206.	यानडी
207.	येडावा (इरुमन, कोलाया, मुनीयानो अयार)
208.	येरुकुल

क्रम सं०	अन्य पिछड़े वर्गों के नाम
1.	अदिधर्मी
2.	अधोरि
3.	आदिकरनाटका
4.	अहेरी
5.	अहीर, ग्वाला, गोआला, ग्वाल-कंस, ठाकुर जादव, यादव
6.	असारा
7.	अथिया
8.	औधीया, अवधि
9.	औधिया
10.	बाडक
11.	बाडका
12.	बघई, आधै-गोढ़, बौरसिया, पंसारी, सुतार, सुधार, टूडोलिया, विश्वकर्मा
13.	बडी
14.	बाडिया, बेग्रजा, बिरिया, इकर, कोलघाटी, कोलहाटी
15.	बाड़ीगर
16.	बाधिया, बारी, बाबर, पायक, बियधानाई
17.	बाजगर
18.	बहुरूपी
19.	बैरागी
20.	बंजारा, गौढ़, बंजारा, लमुबाना/लम्बारा, लम्भानी, चारण बंजारा, लाभान, माथुर-लाभान, कोचिकिवाला, बंजारा/लामन/लाम्बानि, लाबान, छाली/छालिया, धार्वी, धारी, सिंगारी, नावी बंजारा, जोगी बंजारा, बंजारी, मथुरा बंजारी, बामनिया बंजारा/लामन बंजारा
21.	बघोरिया
22.	बारगाही, लाबान, लाभान, लाभामे, माथुरा, नायकदा, थुरिया
23.	बारई, आम्बाली
24.	बरोई
25.	बरार
26.	बरारी
27.	बारगो
28.	बढ़ई, कुन्डेरा, बढ़ई- सुतार
29.	बरी, बारी
30.	बारिया
31.	बारहुंडा
32.	बासदेवा, बासुदेव, बासुदेवा
33.	बासुदेव, हरबोला, जोगा, कापरिया, कापड़ा
34.	बावेर
35.	बावरिया
36.	बंजारिया, कम्माटया
37.	बेहूहा, पिंजारा, धुनिया
38.	बेमारिहा
39.	बंगाली
40.	बेरिया
41.	भाडी-वाड्डार, भट्टी वाड्डेर, वाड्डार
42.	भाड्भा

क्रम सं०	अन्य पिछड़े वर्गों के नाम
43.	भाद्रे
44.	भादुरिया
45.	भाम्टा, भाम्टी, भांभाटे, भांट, भांमाटा
46.	भांड
47.	भांटू
48.	भारोरी
49.	भड़भुजा
50.	भारेवा
51.	भाडिया, भडिहार
52.	भारुड
53.	भाट, चारण, ब्राह्मभाट, जासोंधी, मरो, मोरू सोटीयासालुई, सालवीं
54.	भाटियारा
55.	भावसार, विम्या, मिलगार, निराली, रंगरेज, रंगारी
56.	भिमा
57.	मिस्ती, मिस्ती
58.	भोई
59.	भोट्
60.	भोयार
61.	भ्रज्वा
62.	भुरनोया
63.	भुटिया
64.	बिदाकिया
65.	बिदिया
66.	बिजोरिया
67.	बोरेका, गोपाल
68.	बृजवासी
69.	कोलोटा, कोलोटा
70.	चन्द्र वंशिया
71.	चिपार
72.	चितारी
73.	छिपी, दर्जी, मेरू
74.	चूंगर, चुंकार
75.	दे-बगड़
76.	डाफाली, ढोली
77.	दहेजो
78.	दाना
79.	डांगी
80.	देशवा, देशवातु
81.	देशवाली, देवांग, जोंडा, कोसकाटी
82.	धाकड़, भडारी, नागर, सिहावी, बालाया
83.	धांकिया, धांका
84.	धोबर, बाग्ला, गाडरी, गढ़ेरिया, हाटगार, हाटकार, कुरमार, पास
85.	धीमन
86.	धोमर, बेनुआ, बनाथार, भीरजी, धीमरं, केवट रईकार, राईकवार, साईमारी

क्रम सं०	अन्य पिछड़े वर्गों के नाम
87.	धीरकार
88.	धीवर, ढितिया, नावदा, इजिगामुई
89.	धोबी (जो अनुसूचित जाति में शामिल नहीं है)
90.	ढोली
91.	धुनिया, नद्दाफ
92.	धुनकर, काडोरे
93.	फकीर, फक्कीर सांई
94.	फकीर-मंदरवाला
95.	गाडोले, गाडोली, लंगोलिहा लोहपिता
96.	गडरी, गारी
97.	गाहामंडी
98.	गंडिया
99.	गाओली, सिगायल-आओली
100.	गायारि
101.	गारहवाल
102.	गारी, कामलिवागान, फलनकार, पूरबिया
103.	गारपागरी, नाथ
104.	गारवाडी, मरराडी
105.	गवारिया
106.	घाभो
107.	घारिया
108.	घाटो, घारे, घट्टी, घासी
109.	गोचाकी
110.	गोधी
111.	गोंघाली
112.	गोंटिया
113.	गोपाल, पंगाला-गोपाल
114.	गोसाई, भारती, गेरिया, गोसाई, गोस्वामी, गोलाईब
115.	गासेंगोवार
116.	गोवटिया
117.	गूजर, घड़-गुजर, धागर, दाहाबी, डासा, डेवारो, गावर, गियार-गोढ़, कंसाना, मालाहली-गूजर, हरबोला
118.	गुरव
119.	हाबुरा
120.	हज्जाम
121.	हजूरि दारोगा
122.	हलवाई, हलवाही, कान्य कुब्ज, वैश्य
123.	हरनी
124.	होला
125.	हुगा लोहार, लोहपेटा, जादव, जागा, जानदजा,
126.	जंगम
127.	जागरा, जासोंधी, जगमल लाधी
128.	झाडी, सोनार
129.	झमराल
130	झारी
131.	जोगर
132.	जोगड़ा
133.	जोगी
134	जोगीनाथ
135.	जुलाहा, मोमिन
136.	कावर, कल्सारी, कवाड़ी
137.	कबीरपथी, राम दासिया, रविदासिया
138.	कादेर

क्रम सं०	अन्य पिछड़े वर्गों के नाम
139.	काढेरा, लखेरा
140.	काछी, कुशवाहा, शक्रिय-काडोर
141.	काडेरा, कर्नवाल
142.	काडोरे
143.	कहार
144.	काईकारी
145.	कालाल, कालार, कापडी
146.	कालन्दर
147.	कालोटा
148.	कमरिया
149.	कान्देरा
150.	कानेर
151.	कगार, बढवाले
152.	कन्नाटिया
153.	कपाड़िया
154.	कारान
155.	कारार, कीर
156.	कास्वी
157.	कासाव, कस्साव, कसाई, क्युरेशी, क्यूसाब
158.	कसेरा, जामेरा, कसायू
159.	कोरी, कोरी, कोडार
160.	किरार, किराड
161.	खामगारा
162.	खारोल, टेलगू, मुनार, कापु
163.	खाखार
164.	खाटका, खोटिया
165.	किर
166.	किराड
167.	किरार, धंकार
168.	कोडार
169.	कोरिया
170.	कोष्टी
171.	कोस्टी, चौधरी, कुसाटा, कोली, केस्काटी
172.	कोटिल
173.	कुलबंधिया, कुमावाट
174.	कुमाहारी, कुम्भार, कुम्हार, (जो अनुसूचित जाति में है उन्हें छोड़कर)
175.	कुमार
176.	कुम्बी, कुरमार
177.	कुजड़ा
178.	कोटवार, कोलवाल (उन्हें छोड़कर जो अनुसूचित जाति में है)
179.	लडिया, लाधिया, लारिया
180.	लंगोलिहा
181.	लारहिया
182.	लोधी, हरधा, परिहार, लोधा
183.	लोहार
184.	लोभ
185.	लोनिया, लुनिया, नुनिया, नोनिया
186.	लुहार, गहलोट, जावा, करियार, कारिगर, मुकमान, मडवार, विश्वकर्मा
187.	माछी, माली, मरार
188.	माडगी
189.	पन्नावी

क्रम सं०	अन्य पिछड़े वर्गों के नाम
190.	माला
191.	मल्लाह
192.	मांगा
193.	मांजार, मारा, मधवड्डार
194.	मानकर
195.	मानीहर
196.	मारू लोटिया
197.	रोरिया
198.	मावो
199.	मेरू
200.	मेवाती
201.	महाली, नाई, नावो, नहावी
202.	मिरासी
203.	मुछिया
204.	मुराहा, मुरहा
205.	नाईक, नायक, नायका, (गैर-बाह्मण
206.	नाईटा, नायटा, नाटा, नावटा
207.	नामदेव
208.	नामशुद्रा
209.	नाथ
210.	नावडा
211.	निओ-बुद्धिष्ट, नव-बुद्धिष्ट
212.	नेरिया
213.	नराली
214.	नीलगर
215.	ओडे, वाडेर, वाड्डार, ओडिया
216.	पदमसाली, सालेवार, साली/सुतसाली
217.	पाडका
218.	पहार
219.	पालहारी
220.	पनवाडी
221.	पराशार
222.	पारथी
223.	पटका, पटकी
224.	पटवा, नामदेव, पटहकार, सिपिया
225.	पायाक
226.	पेरको
227.	पिंडारा
228.	पिंजारे
229.	पोवार
230.	पुतलिगार
231.	राघवी, रघुवंशी
232.	राजाभुरिया, रगारी
233.	राजगिरी
234.	राजगोंड

क्रम सं०	अन्य पिछड़े वर्गों के नाम
235.	रंगरेज, रंगारेज, रंगराज, रंगारी, रंगरेथ
236	राव
237.	राओत, राव्त, राओती
238.	राउतिया
239.	रावल
240.	रावत, बेदेर, गाहिरा, राष्त, रावार, थेथवार
241.	रहार
242.	रोहाडे, मुजहारिया
243.	रोहार
244.	रुचहान्दिया
245.	सैन
246.	साइस, साईस, शिस
247.	सालवी, साली
248.	सनोरिया
249.	सारंजीया
250.	सारभांगी
251.	ईसाई धर्म में परिवर्तित अनुसूचित जातियां
252.	शारिया
253.	सीकलिगर
254.	सिंगीवाला
255.	सियाना
256.	सोढ़ी
257.	सोधिया, चंडाल
258.	सुनार, सोनार
259.	टाडावी
260.	तम्बोली, जम्बोली, कुमावट, पुरविया
261.	तमेरा, ताम्बेटकर, ठठेरा
262	तेली, बाडबाईक, बालु, राठौर
263.	थामो
264.	थोटी, बुराड
265.	थांवार
266.	थीरो
267.	थूरिया
268.	टिरगार
269.	टिरमाले
270.	टिरबलूंली
271.	तुरहा
272.	वेड़या,नाई
273.	वागरी, वाघरी, प्रधान
274.	वानजारी, बंजारा
275.	विशनोई
276.	विशया
277.	वान्हा
278.	वासदेओ
279	येरीकिलवार, येरकुला

क्रम सं०	अन्य पिछड़े वर्गों के नाम
1.	अग्री, अग्ले या कोलन
2.	अहीर; यादव, गोदली
3.	अलितकार
4.	अटार
5.	अोधिया
6.	बडाक
7.	बदिया
8.	बगालू
9.	बागदी, मारवाड, बम्रोरी, मारवाड, बाघरी, सालत बाघरी)
10.	बजानिया
11.	बहुरूपी
12.	बैरागी, गोसाई, उवासा
13.	बाजोगर
14.	बाला संथानम
15.	बाँदी
16.	बन्जारा, बन्जारी, बन्जारा, मथुरा, बन्जारा (ए) गोजार, बन्जारा, काम्बदा/लम्बारा, लम्भानी, चरण, बन्जारा, लभान, मथुरा, लभान, कच्ची, किवाली, बन्जारा, लमनबन्जारा, लमन, लमन/लमानी, लबन, धाली, धालिका, धाड़ी/धारी, सिगारीज, नवी, बजारा, जोगी, बन्जारा, बन्जारी शिनदेबजारा, लम्बोद, फन्दाबंजारा, सुनार, बंजारा, धुलिया, बंजारा, सिघाडिया बंजारा
17.	बन्टू
18.	बाग्रोरिया
19.	बारी या बराई
20.	बारिया, कोली बारिया
21.	बथौनी
22.	बावचा•
23.	बागरी, बेदर, बरद, नायिकावाडी, तलवार, बाल्मिकि
24.	बासदेवा
25.	बस्तर, सच्चलूवड्डार
26.	भाट
27.	भड़भूजा
28.	भम्पटा या धटीचोर या परदेशी, पोग, दमार, रचिला, राजपूत, ममता, भमती, भमली, कामती, पथरूत, टकारी, उचाला
29.	भड
30.	भण्डारी
30.1	भाडुरा, बिल्सावार
31.	भता
32.	भरड़ी, बालालतोपी, नथवावे, किंगरीवाला नाथजोगी, डावरी, गोसावी, नाथपथी
33.	भावाईया या तरगाला
34.	भाविन
35.	भिलाल्ला
36.	भीना कोया

क्रम सं०	अन्य पिछड़े वर्गों के नाम
37.	भोई, खरवी, धीवर, भाई, जिला भोई, परदेशीभोई, राज-भोई, कहार, कोरित, मछवा, मल्ली, जतियां, केवट, धिवर, धीवर, धीमर, गड़िया, कहार, पलेवार, मल्लेन्द्रा, नावदी, मल्हार, मल्हाव मधाव, भोई, खादीभाई, खरे, भोई, धवेरा, धूरियाक मल्हायकहार
38.	मिल्ली या परवाली
39.	भोयार (पावरा)
40.	भूटे, भोप
41.	बिन्डली
42.	बरबूक
43.	बूरुद, मेडार
44.	बूतल
45.	चाडार
46.	चक्कवाडिया-बडार
47.	चम्या
48.	चन्दल
49.	चन्दलागडा
50.	चरन या मधाबी
51.	चरोडी, छारा
52.	चेचू या चचवार
53.	छप्परबन्द
54.	चिमूर
55.	चिन्तला
56.	चिप्पा
57.	चित्रकाठी
58.	चोधरा
59.	अनुसूचित जाति से परिवर्तित ईसाई
60.	दबगार
61.	दाकालेरू
62.	दर्जी
63.	दास या डगदीदास
64.	दपला
65.	देवांगा
66.	देवारी, गोलावी, नाथपंथी
67.	देवडिग
68.	देवली
69.	धनगर, कुरुबा, कुरुवार
70.	धीमर, धीवर, गवित, पगे, मरकन्बा, मगेली, मगले, तन्दूरी
71.	धोबी, पारित, बन्धे, मदवाल, रज्जक
72.	धोली
73.	डोमारा
74.	फकीर बन्जरवाला
75.	फूलमुडी
76.	गडबा या गोंड
77.	गडरिया
78.	गडरी
79.	गधीवी

क्र० सं०	अन्य पिछड़े वर्गों के नाम
80.	गवाली या गन्डाली
81.	गन्धर्व
82.	गनगनी
83.	गरोडी, गारुडी
84.	गर्पागरी
85.	गवन्डी
86.	घडषी
87.	घिसादी, घिसादी लोहार, गडीलोहार, घिनोडी लोहार, राजपूत लोहार
88.	गोला, गौलेवार, गोलर, गोलकर, गोल्लर
89.	गोधाली, गोंदली
90.	गोपाल, गोपाल भोरपिस, खेलकारी
91.	गोसावी, बावा, बैरागी, भारती, गिरंगोसावी, भारती गोसाधी, सरस्वती पर्वत, सागर, बन या वन, तीर्थ आश्रम, अरण्य धरभारी, संयासी, नाथपंथी गोसावी
92.	गोचकी
93.	गूजरथ बोरी
94.	गुर्व, गुर्रयू
95.	हाबूरा
96.	हलेपाइक
97.	हरनी
98.	हलकर
99.	हलवे, हिलाव,
100.	हिल-रेडीस
101.	जगद्दयासी
102.	जाजक
103.	जन्नम
104.	जालीगर
105.	जालिया
106.	जावेरी, जौहरी
107.	जाडी
108.	झिंगर
109.	जोगी नाथ, नाथजोगी, गोसाई, दीबोदी
110.	जोगिन
111.	जोशी, वृड्ढकी, डमरुवाले, कुडमुडे, मधंगी, सरोडे, साहादेव, जोशी. सखोडे, सरोडा
112	जुलाहा, विकर, बंकर, बनमा, बंकर
113.	कच्ची, कचिया
114.	कथोरा
115.	कदेरा
116.	काईकाडी, (जहां वे अनुसूचित जातियों में नहीं है) कोरच, धोन-तला, कोना या कोची, कोर्वा, मकडवाले, पैडलर, कोर्वा
117.	कामी
118.	कलाल, कलार, लड, लडवक, गोंड, कलाल, शिवहारा
119.	कामती
120.	कंडल
121.	चारा, कंजर, नट
122.	कापड़ी
123.	कसार, कसेरा
124.	कस्बी
124-क.	कसाई, खटीक, कस्साब
125.	कसिकापाड़ी

क्रम० सं०	अन्य पिछड़े वर्गों के नाम
126.	कटाबू
127.	कथार, कथारवानी, कंथेहारवानी, (लिंगयतवानी या लोडवानी को छोड़कर)
128.	कांथी-खाती
129.	कटियामले
130.	खरया या खरवी
131.	कोलहाटी, डोमबारी
132.	कोली, कोली-सूर्यवंशी, मलहार, कोली, ईसाई, कोली
133.	कोरचिया या यरकुल्ला या कोवे
134.	कोरचर
135.	कोवी, जिसमें कोडाकू भी शामिल है
136.	कोमाकापू
137.	कोडू
138.	कोंगडी
139.	कोशती, कशेकाती-देवांगा
140.	कुच्चबन्द
141.	कुचारिया
142.	कुम्भहार, कुम्हार
143.	कुनबी
144.	कुरहिनशेटी
145.	कुरमार
146.	लाभा
147.	लडाफ, लडुाफ
148.	लाडिया, लाधिया, लारिया
149.	लखेरा, लखेरी
150.	लंजद
151.	लौहार, लौहार-नाडा, डोडी, खतवाली, पंचाल
152.	लोनारी, चुनारी
153.	मान्छी, टेडैल
154.	मागा
155.	महाली, माहली
156.	माहिल
157.	मैथाली
158.	मैराल, डंगल, बोर
159.	मझवार
160.	मालं, फूलमाली
161.	मनभाव
162.	मंगला
163.	मारवार बोरी
164.	मसान जोगी, सुरा-दसीधा, मपनजोगी
165.	मयुरा
166.	मतिआरा, मटिहारा
167.	मंकर खालू
168.	मो
169.	मीना
170.	मिथा
171.	मोमिन (बुनकर)
172.	मोंडिवार, मोंडिवारू
173.	मुंडा
174.	नामधारी, पाईक
175.	नन्दीवाला, तिरमल
176.	नकाशी

क्र० सं०	अन्य पिछड़े वर्गों के नाम
177.	नावी, लहावी, हजाम, कलत्तैरू, नावालिगा, कैलाशी, अशोक, नाई
178.	नीली
179.	नीलकंठी
180.	नैकर, जाडा
181.	नोओ, बोद्ध, नव बोद्ध
182.	नैयूरा
183.	नीलगर, निराली
184.	निरिपीकारी
185.	नोनिया
186.	ओटारी, ओटकर, ओटकर वटारी, ओकारी
187.	पच्चमोलला
188.	पधारिया
189.	पदमर्णी
190.	पंडियार
191.	पखाली, मिस्त्री
192.	पाल, पारधी
193.	पमला, पंचाल
194.	पनचमा
195.	पांडा
196.	पंगुल
197.	पंका
198.	पतकर
199.	पट्टादावेरू
200.	पर्वी
201.	फर
202.	फालेचेरी
203.	पुडगी
204.	फूलारी
205.	पिंजारा, पिंजारी
206	पूरवाली
207.	पुतलीगर
208.	रचबंधिया
209	रचेवर
210.	रचकोया
211.	राघवी
212	राईकारी
213.	राजप्रबी, गनप्रबी, हरणशिकारी
214.	राजपूत भमता, परदेणी भामता, परदेशी भामतो
215.	रमोशी
216.	नट, रोतिया, राबत
217.	रंगारी, रंगरेज, भावसर
218.	रोतिया
219.	रावल, रावल या रावल जोगी
220.	शहीज, साइस, शीस
221.	साली, पदमसाली, स्वाकूसलाली
222	संगर
223	संगरी
224.	संजोगी
225.	संताल

क्र० सं०	अन्य पिछड़े वर्गों के नाम
226.	साओंता या सौंता
227.	सपेरा
228.	सरनिया
229.	सारे
230.	शीलावत
231.	शिम्पी, भावसर, शिव शिम्पी, नामदेव, दर्जी
232.	शिंगादेव या शिंगादया
233.	सिक्कलगर, कोटारी
234.	सिंधोर
235.	सिंधीवाला
236.	सोनार
237.	सोरे
238.	सूधा
239.	सुनाई, सुथारिया
240.	सुतार, भदाई, बढाई
241.	सुप्पालिग
242.	टकनकार
243.	टकारी
244.	तलवार, कांडे
245.	तम्बट
246.	तम्बोली
247.	तथलज
248.	तेली, गनिगा, घांची
249.	साओ-तेली
250.	टक्कर
251.	थैलेरी
252.	थैटवर
253.	थोगटी, थोगाटी
254.	थोटूवाड़
255.	थोरिया
256	तिमाली
257.	वाघरी वधारी, सलात, सतालवाधरी
258.	वेड़
259	वैनी
260.	वसदाई
261.	वन्जारी, वन्जार
262	वालवा
263.	वासुदेव
264.	विधौलिया
265.	वड्डैर, वड्डैर (कलावड्डैर या पथारगेड) वैलदार, ओड, गिरासी वड्डैर, वड्डार माटी वड्डार, पत्थरवट
266.	वाडी
267.	वन्जारीवन्जारा
268.	वान्सफोडा
269.	वारधी
270.	वनाडी
271.	येनाडीवाडडा
272.	येरागोलावाड़ या चरैला पमलवाड़ा

12. मणिपुर

क्र० सं०	अन्य पिछड़े वर्गों के नाम
1.	अहीर, यादव, ग्वाला
2.	बढ़ई (नेपाली)
3.	बासफोड
4.	मुमिज
5.	बोरो, बोरो कचारी
6.	दफला
7.	धमाई (नेपाली)
8.	धेमोरिया
9.	धुनिया, धोनी
10.	गैने (नेपाली)
11.	गारो
12.	हाजोरा
13.	हिरा
14.	झाला, माली
15.	कचाहरी
16.	कैबरत्ता, जलि
17.	कामी (नेपाली)
18.	कांडु, कान
19.	खामरी, खमरी
20.	खासी
21.	खुनानगाई
22.	कुकी
23.	लालबेगी
24.	लालुंग

क्र० सं०	अन्य पिछड़े वर्गों के नाम
25.	लामईनागा
26.	लोहार
27.	महारा
28.	मामी, मुईमाली मुइनमाली
29.	मेच
30.	मैतेई
31.	मेहतर, भंगी
32.	मिकिर
33	मिरि
34.	मिरसभी
35.	मुण्डा
36.	नागा
37.	नापित, नाई
38.	ओरांओ
39.	रामा
40.	साहते
41.	सरकी (नेपाली)
42.	संथाल
43.	सिहंको
44.	सोनार
45.	सिनतेंग
46.	तम्बोली, तमोली
47.	तेली
48.	तिपेरा
49.	योगी, जुगी, नाथ

13. मेघालय

क्र० सं०	अन्य पिछड़े वर्गों के नाम
1.	अहोम
2.	बरजुबी
3.	बरोई, बरई
4.	भुमिज
5.	बोरो-कचाहरी
6.	चौडाग
7.	चुटिया
8.	डे, शद्रदास
9.	घोष, गोप, ग्वाला, यादव
10.	गौड
11.	गुरखाली
12.	हामटी
13.	कोच
14.	खोड
15.	खतिया
16.	कुम्हार, शत्रपाल
17.	कुपादेहर, कुशीमारी रार
18.	लिम्बो, लिम्बू
19.	लोई
20.	महीष्यदास
21.	मोरान, माटक
22.	मुखी
23.	मुन्डा
24.	नापित
25.	औराओ
26.	पाल
27.	रामा
28.	सन्थाल
29.	सवारा
30.	राजबंशी
31.	सलोई
32.	सुत
33.	तंत्रीपाल, तन्ती तंत्री
34.	तेली
35.	तिपारा
36.	योगी, जुगी, नाथ
37.	नेपाली, (डामी, गैना, गुरुगा, नामा, लोहार नेवार, राई, सरकी, अर्थात् कोवसर, थापर)

14. नागालैण्ड

क्रम सं०	अन्य पिछड़े वर्गों के नाम

क्रम सं०	अन्य पिछड़े वर्गों के नाम

15. उड़ीसा

क्रम सं०	अन्य पिछड़े वर्गों के नाम
1.	आदि, द्रविड़
2.	आदि, कर्नाटक
3.	अधेरिया, अगारिया, अधरिया
4.	उजीला
5.	अरानेडेन
6.	अरन्थुथियार
7.	असुर
8.	बधाई, बरहाई, बिनधानिया, सुत्रधार, बधीरा और बुधरिया
9.	बड़ासूदा
10.	बड़ागा
11.	बाईपारी
12.	बैरा
13.	बैरागी
14.	बकुड़ा
15.	बांका
16.	बांदी
17.	बारीजी जा बारूई
18.	बारीका, भण्डारी बैजा नापित और नाई
19.	बटाडा
20.	बल्लारा
21.	बैटकर
22.	बैतारे या बैटरी
23.	भट्ट्रा
24.	भनिया
25.	भोगता
26.	भोकटा
27.	भूजन
28.	भूलिया
29.	बिरझिया
30.	बिलोय-बांरगी जोडिया, बैननंगी, डावुवा, फगी, होल्लर, झोरिया कोलाई, कोंडा, पंरगा, पंगाजेडिया सोडो जोंडिया और टंकोरा
31.	बिनैधानीज
32.	बोगड़ा
33.	बोलोधिया
34.	बुटाकुसुदा
35.	बुरुआशंकर/बरना सुभ्रंकर, बैजा
36.	व्यागारी
37.	चविकलियान
38.	चल्लावाड़ी, चलवाड़ी
39.	चौपाल
40.	चैरो
41.	चैरूमन
42.	चिकबाराईक
43.	चिक
44.	चित्रा, चित्रकार
45.	चूरिया

क्रम सं०	अन्य पिछड़े वर्गों के नाम
46.	डाहालिया
47.	दर्जी
48.	डामल
49.	डंगुआ
50.	डिओनस
51.	देवेन्द्र, कुलाथन
52.	डेहूरी
53.	धाक्कड़
54.	धानेर
55.	डोम्बा-अधीया-डोम्ब, औडिनिया डोम्ब, चेनाल डोम्ब, क्रिसतान डोम्ब, मिरगानी डोम्ब, उड़िया डोम्ब, पोनाका डोम्ब, तेलगा डोम्ब तथा उमिया डोम्ब
56.	डूमाना, डूमल
57.	घटवार
58.	गिरिगिरीज
59.	गिगरा
60.	गोड्डा
61.	गोला, गोल्ला, गोप, सदगोप, अहीर, गौर गोड़ा, गौड़ो, मेकला, गोल्ला, पूसू गोला और यादव
62.	गुडिया या गुरिया, गुरजा, गुंजु
63.	गोंड-आई-मोडया गोंड और राजी गोंड
64.	गोंसंगी
65.	गोड-बातो, धरथया, दुधो कोरिया, हाटो, जटाको और जोरिया
66.	हवरा
67.	हासी
68.	हसला
69.	होलैया
70.	इरूला
71.	जडापुस
72.	जम्बुवुल्लू
73.	जैन्त्रापांस
74.	झोडिया
75.	जोगी या योगी
76.	ज्योतिष, गृहबिपरा ब्राह्मण, सकलदर्पी ब्राह्मण
77.	कदान
78.	कल्लाड़ी
79.	कलवार
80.	कम्मारा, कमारा, कमार, कम्मारो, गूली, लौहरू, लौहारी
81.	कंकन
82.	कद्रपा
83.	कंजर
84.	कनियान
85.	कापूडिया
86.	करहारा
87.	करीमपलान
88.	करमाली

क्रम सं०	अन्य पिछड़े वर्गों के नाम
89.	कट्टुनायकन
90.	खैरा
91.	खंडनालस
92.	खंजरभान
93.	खट्टी-खट्टी
94.	खटुआ
95.	खोडल
96.	खोडरा
97.	खातौरी
98.	कोडा, कुडा
99.	कोईलर
100.	कोलम
101.	कोमार
102.	कोंड (कुल)
103.	कोंडा, कापू
104.	कोंडा, रेड्डी
105.	कोध-डेसय्या कौध डोमरिया कौध, कुट्टिया कौध, टिकीरिया कौध और येती कौध
106.	कूसा
107.	कोरगा
108.	कौशल्या, गोऊडूस, बोसोथैरिया गोऊडूस, चिटी गोऊडूस, डगयाथ गोऊडूस, डोडू, डूडू कमारो, लाडिया गाऊडूस और पुल्लो सोरिया गोऊडूस कमरिया
109.	कोटा
110.	कोयी
111.	कुडिया
112.	कुडूबी
113.	कुडुम्बन
114.	कुम्मार, कुलाल, कुम्हार, कुम्भारो
115.	कुर्मी
116.	कुनडूमा/कुडूमा
117.	कुन्डामातिया
118.	कुल्टा
119.	कुरारिया
120.	कुरावन
121.	कुरीनचन
122.	कुरूमन (कुरूम्बा)
123.	लाहेर
124.	लखरा
125.	लम्बादी
126.	लूहुरा
127.	मछुआ
128.	माझी या मैंझिया
129.	मगुरा
130.	महुल्ता
131.	माघाथा गोउडूस, बरमिया, गोउडूस बुड्डो, मघाथा, डांगयाथ गोउडूस लड़या गोउडूस, पूनामगाथा और सोना मगाधा
132.	मगधी गोरल
133.	मैला
134.	मैलाडासु
135.	मैलासार
136.	माली, फूलिया, सगबेरिया, भजेमाली

क्रम सं०	अन्य पिछड़े वर्गों के नाम
137.	मालिस-कोरचिया मालिस, पेडा मालिस और पेडुा मालिस
138.	मल पाहारिया
139.	मगली
140.	मन्ना धोरा
141.	मौने
142.	मैराठी
143.	मातंगी
144.	मावलिन
145.	मिन्का
146.	मोगर
147.	मुखाडोरा-मोक्काधोरा
148.	मुलिया
149.	भुण्डला
150.	मुरिया
151.	नाहर
152.	नालाकैयाना
153.	नट
154	नयादी
155.	नोलिया
156.	नहूरा, नहुराज
157.	नुनिया
158.	ओजुल्लू या मैटा, कामासाली
159.	ओडेडता
160.	पड़ारिया, पामारिया, पड़ारा
161.	पगडाई
162.	पाहगाराप्पु
163.	पाइको
164.	पाकी
165.	पाल
166.	पलासी
167.	पलियान
168.	पल्लान
169.	पाल्ली
170.	पुल्यान
171.	पम्बदा
172.	पनियान
173.	पजीरा
174.	पनिग्रांड़ी
175.	पराइयान
176.	परवान
177.	परहाइया
178.	पथूरिया
179.	पतरो
180.	पैगुआ
181.	पिटा
182.	पोरजा-बाडो, बोडा, परूवा, डिडवा ओन्डिया, मुन्डिल, सेनो, पैगू, प्यादी सालिया, सोडिया और पारैग
183.	प्रधान
184.	रेड्डी ओकास
185.	राधी या नियारी
186.	रजदार
187.	रनियार

क्रम सं०	अन्य पिछड़े वर्गों के नाम
188.	रोनास
189.	रोतिया
190.	सागरपाषा
191.	साहाबर
192.	सम्बन
193.	संखारी
194.	सन्यासी, मैमन्नम
195.	सैवारा, कापू, सवारा, खुट्टा सवारा, मल्लया सवारा
196.	सिरीथी गोउडू
197.	सैम्मन
198.	शोलागर
199.	सौरिया पहारिया
200.	सिका
201.	सिथूरिया, सितारिया, सितुलिया
202.	सुदा
203.	सुलिया
204.	सुकुली, तांती
205.	सुनरी/सुन्डी
206.	तना

क्रम सं०	अन्य पिछड़े वर्गों के नाम
207.	तेली, तेल्ली, कुबरा, तालाकार, साहु, सहलडिया
208.	तेलगा पमुला
209.	थानु
210.	थटारी
211.	थोटी
212.	थूरिया
213.	तिल्वैल्लूवर
214.	तिवोरा
215.	तियार
216.	टोडा
217.	टोलला गौड
218.	वाल्लूवन
219.	वन्नान
220.	वैट्टूवन
221.	वीना तुलाबीना
222.	मांडी
223.	वर्ना गोल्टा
224.	येरुकुला

16. पंजाब

क्रम सं०	अन्य पिछड़े वर्गों के नाम
1.	अहेरिया, अहेरी, ब्रेरी, तूरी, नामक, मोरी
2.	ऐरन
3.	बागल, बटालियन, भूत, डागी धरने, हीर, हरबसिया, कौशल हरबसिया, सरबसिया, मारबसिया, मासौन, मानेम, मुल्ले, मेहतोन, नागिया परमार, धुनलिया, सिगल, सगुतना, जालासिया
4.	बागड़िया, बगरिया
5.	बैरागी, बारेगी
6.	बराई, तरबोली, तम्बोली
7.	बरवार
8.	बटेरा
9.	बैरीया
10.	बरैर
11.	बैटा, हैन्सी, हैंसी
12.	भरभूजा, भरभूंजा
13.	भारी, रोडे
14.	भतरा, भट, दर्जी, दिम्पाल, रमिया, राणा, राईर, राव, सदाली
15.	भुहलिया
16.	भुरा, ब्राह्मण
17.	चाहग
18.	चगर
19.	चिम्बे, चटु, चराह, छिम्बे, छिप्पी, चिम्बा, चिम्पा, दर्जी, धामी, जसल, करीर, कैथ, मडाहार, पूरबा, रेखराय, सप्पल, संराओ, सिरिया, सराव, टाक
20.	थिरथ (जिसमे चवग और बहरी शामिल हैं)
21.	चिड़ीमार
22.	दाईया
23.	डकौट, उहकौट
24.	दाडली, दाडला
25.	दौला, सोनी-बरादरी
26.	धीवर
27.	धीमर, धींवर, धीवर, झीवर, कहार, कश्यप, राजपूत, मल्लाह, झींवर
28.	धोबी, कस्साब
29.	धोसाली, दोसाली
30.	ब्रेन
31.	फकीर
32.	गडरिया, गड़रिया
33.	गड्डी, गुड्डी
34.	ग्वाला, गोवाला, यादव, यदुवंशी, अहीर, ग्वार
35.	घई
36.	घासी, घसियारा, घोसी
37.	गोडरी
38.	गोरखा
39.	गुजर, भूमला, गुज्जर, ठाकुर, निमवलिया
40.	ग्वारिया, गोरिया
41.	हरली
42.	जाट (गुटका और चिल्लौन)
43.	झगरा-ब्राह्मण, खाटी, विश्वकर्मा

क्रम सं०	अन्य पिछड़े वर्गों के नाम
44.	जोगी, नाथ
45.	जुलाहा, धावेर, धुना, कबीरपंथी (उनको छोड़कर जो अनुसूचित जाति में हैं)
46.	कम्बोज, बलारा, कम्बोह, नाड़े, मसोक, थन्द
47.	कंजर, कन्चन
48.	केहल
49.	रवघेरा
50.	कुच्छबन्द, कुच्छबन्द
51.	कुम्हार, अहितान, धमार, धूमर, लहरी, हसानवा, जोया, कीर, नगोतरा, सोहल, लगोतरा, प्रजापत, सनमरे, कीट
51.	कुर्मी
53.	लखेरा, कनिहार, मनिहार
54.	लम्बाना, भगतना, धोतरा, ककनिया, लोहाना, लोहाना बजारा, लवाना, पैलिया, बक्लिया
55.	लौहार, बखेन, बम्सा, भाटी, भूही, फुल चना, थाटा, लुहार, सूपरा, सघु, सेहमी, गिही बिरदी
56.	मदारी
57.	महाशा, बजगल, साहुन्ता
58.	महात्म
59.	मीना, मीणा
60.	मेवाती
61.	मिरासी
62.	मोची (उनको छोड़कर जो अनुसूचित जाति में हैं)
63.	नाई, बनवारू, धनवाल, धारी, पजू, धन्मास, घिरी, हज्जाम, हजार, हरगु-लेखा, जालान, पालान, नाईसिख, नागी, पटारा, राजा, पालान
64.	नलबन्द
65.	नार
66.	नव-बौद्ध, निओबुद्धिष्ट
67.	नूनगर, नूगर
68.	पखीवारा
69.	पिजा, पैजा
70.	रचबन्द, रेचबन्द
71.	राई-सिख
72.	रामगड़िया, बिमरा, बरार, बुमराल, चन, धीमन, कलसर, मथारू, मुवे रामगडिया, सहोता, सन, सरन, तरखान, सागू
73.	रिआईगर
74.	रिहार, रैहर, रेहारे
75.	सैनी
76.	शोरगीर
77.	सिधीकट, सिधीवाला
78.	सोई
79.	सुनाई, अशतार, भाट्टी, धूमे, जूर, सूर, स्वर्णकार, शीन, कडे, करवार, सुनिआरा
80.	तागा
81.	तेली
82.	ठठेरा, तमेरा
83.	अनुसूचित जाति से परिवर्तित ईसाई

17. राजस्थान

क्रम सं०	अन्य पिछड़े वर्गों के नाम
1.	अगेर
2.	अहीर, (यादव, गोप)
3.	असद
4.	बडेरा
5.	बाडवा
6.	बागडिया
7.	बकड, बन्त
8.	बनचड़ा
9.	बंजारा, लबाना
10.	बड़ाहार, बसोड़
11.	बराई, भतवासा, बधाई, बाईवाल, डगेसर, डिगर, जंगिद-ब्राह्मण, झांगड़ा-ब्राह्मण, कविगर, खटी, खोकर मयाल, सूथार, तरखान, विश्वकर्मा
12.	बरार
13.	बरदा
14.	बरगंडा
15.	बासोर
16.	बवाचा, बाम्चा
17.	बवारी
18.	भाम्टा, चंटीचोर, परदेशी-भाट...
19.	भानुमती
20.	भारुड़
21.	भट, चारण
22.	भाहू (सगवंशी-माली)
23.	भूजी, भड़भूजा
24.	बिरारिया
25.	चक्रवादिया-दासार
26.	चलवाड़ी, चमनय्या
27.	चमना
28.	चीता
29.	चेना-दसारू, चेना-दसार, होलिया-दसार
30.	चिडार
31.	छिप्पा, अपूरवा भाटी, मगरवाल चौहान, छिपा, डायेर, जसोद, नामा, नामदेव, पडिहार, पम्सार, सोलंकी, सुरगे
32.	चौधारा
33.	डकौत
34.	डकलारू
35.	दमामी
36.	दारोगा
37.	दर्जी
38.	देशान्यां
39.	धाडी
40.	धाकड
41.	धांची
42.	धीमर
43.	धोबी
44.	धोडिया

क्रम सं०	अन्य पिछड़े वर्गों के नाम
45.	धीर, काकब्या, कांक्कय्या
46.	ढवला
47.	गडरिया, चंडालिया, गडरिया, ग्वाला घोसी, कबीरिया
48.	गडिया-लोहार
49.	गाडोलिया
50.	गमित, गम्ता, गवित (जिसमें मावची, पदवी, जासवा, बासवे और वालची शामिल हैं)
51.	गन्धा
52.	गिरी, गोस्वामी, गोंसाई
53.	गोड़ी (मुस्लिम)
54.	गौंड
55.	गुजर, गुज्जर
56.	हल्लीर
57.	हल्सार, हस्लार, हुल्लासवर, हल्लासवर
58.	हालूरी
59.	होला
60.	होलार, वल्हार
61.	होलय्या, होलर
61-ए	जनवा
62.	जोगी, नाथ
63.	जुलाहा (हिन्दू और मुस्लिम)
64.	कबीरपंथी
65.	काछी
66.	कहार, भोई
67.	कैकाड़ी, कौरव
68.	कालेल
69.	कन्डेरा
70.	कांगी
71.	कानवी
72	कीर
73.	खंट
74.	खरोल
75.	खटका
76.	किराट
77.	कोल
78.	कोली-महादेव
79.	कोरकू
80.	कोशती
81.	कोतवाल
82.	कुम्हार
83.	लबेरा
84.	लधा-लौहार
85.	लखेरा
86.	लिंगाडेर
87.	लोधी

क्रम सं०	अन्य पिछड़े वर्गों के नाम
88.	लोहार, जारडी, खुम्राडी, खुतवाल, लोहारगिरी, मालवी, पंचाल, पंचौली, धुरावर, जार्डी
89.	लोक
90.	महा-ब्राह्मण
91.	मल्हार
92.	माली
93.	मोहरा
94.	मैर
95.	मैरासी, मिरासी
96.	मैरत
97.	मैरत-गौरत
98.	मैरत-कथाट
99.	मोचिया
100.	मोगिया
101.	मुकरी
102.	नाडिया, हाडी
103.	नगारची
104.	नाई
105.	नायक
106.	नय-बौद्ध, नीमो-बौद्ध
107.	नैरिया
108.	ओड्ड
109.	परधी (जिसमें भवीचिचर और फंसे परधी भी शामिल हैं)
110.	पटवा (फदाल)
111.	पिंजारा
112.	पोमला
113.	पोवारा
114.	राईका
115.	रंबारी
116.	राव
117.	रथावा
118.	रावना-राजपूत
119.	रावत
120.	रिक्षारी
121.	सद-सीसी (सैहर)
122.	साधु
123.	सरवारा
124.	सतिया-सिन्धी
125.	शेनवा, चेनवा, सेदमा, रावत, शिधमा
126.	सिधदेव, सिधदया
127.	सिकलीधर
128.	सिरकीवाल
129.	सोची
130.	स्वामी
131.	स्वर्णकार
132.	टाक
133.	तेली
134.	ठठेरा
135.	वरली
136.	वरली
137.	विछोलिया
138.	वितोलिया, कोटवालिया, बरोडिया
139.	जमरास

18. सिक्किम

क्रम सं०	अन्य पिछड़े वर्गों के नाम
1.	बजेल
2.	गुरंग
3.	लिम्बू, लिम्बु
4.	मोंगार
5.	राई
6.	सुबा
7.	सुनार
8.	तामांग
9.	ताजोंग
10.	यगर्थुंगबा

19. तमिलनाडु

क्रम सं०	अन्य पिछड़े वर्गों के नाम
1.	अचारी, विश्वकर्मा, कम्मालर, थाट्टर, थाटवन, पोर्कोल्लर, अस्सरी, चारी
2.	कुक्कूलाथेरस से सम्बन्धित दक्षिणी तमिल जिलों के और उत्तरी तमिल जिलों के अम्मूदायर, थोझू या थुलुवा वेल्लाला
3.	ऐयान्वार
4.	अलावान, अलावार, अलवर तथा अजहावार
5.	अम्बालागारस
6.	अम्बालाकरण, अम्बालाकरर, वालम्बेर
7.	अम्पानचन
8.	एडीपाडरभ
9.	आर्थन, आर्थेर (नूलधर)
10.	आर्यावथी
11.	अर्चाकरी वेल्लाला
12.	अरुयानावर (जहां वे अनुसूचित जातियां नहीं हैं)
13.	बाडागा
14.	वाडागार
15.	वागाटा
16.	बारकी
17.	बट्टाडा
18.	बावूरा
19.	बेस्था, सिविआर
20.	भरतार (जहां वे अनुसूचित जातियां नहीं हैं)
21.	भटराजू (क्षत्रिय राजे के अतिरिक्त)
22.	भट्टादास-वोडा भट्टाडा, मुरिया भट्टाटाडा और सानो भट्टाटाडा
23.	भूमिआस-भूरी भूमिआ तथा बोडो भूमिआ
24.	बिल्लावा
25.	बिस्सोय-बारगी जोडिया, बाननगी, दादूवा, फराशी, होल्लार, झोरिया कोल्लाई, कोडे, पारगा, पेगा-जोडिया सोडा, वोडिया तथा टकोरा
26.	बोडिल
27.	बोयर, ओड्डार
28.	बोयल
29.	बुडाबुक्खालास
30.	व्यागारी
31.	चक्कारावार
32.	चचटी
33.	शावलाककरम, शावलाकरार
34.	सेयावकरन
35.	चेन चू
36.	चेट्टू या चेट्टी (कोहर चेट्टी, चेलूर चेट्टी, पठिरा चेट्टी, पुडुक्कादयर चेट्टी, वेलेल चेट्टी सहित)
37.	पीढ़ी परिवर्तन के बावजूद अनुसूचित जातियों से ईसाई में परिवर्तित
38.	सी०एस०आई० (पहले एस०आई०यू०सी०)
39.	डमारी
40.	डांडासी
41.	देक्कानी मुसलमान
42.	देवागर (सेदार)
43.	धाक्काडा
44.	धोबी, वाणन
45.	डोम्बो
46.	डोम्बस, अधिया डोम्बस, चोनेल डोम्बस, ओरिया डोम्बस, पोनाका डोम्बस, तेलागा डोम्बस और उम्मीया डोम्बस
47.	डोम्मारा
48.	डोगायाटस
49.	डूडेकला
50.	इनाडी
51.	इरावाल्लर
52.	इथ्थार, इडियार, कोनार, उदायार
53.	ईझावथी
54.	ईझूथाचर
55.	ईझिवा
56.	गडावस, बोडा, गडावा, सेरल्लभ, गडावा, गालाराव, गडावा और परगा, गाडवा, जोडीया गाडवा
57.	गंगवार
58.	गवारायर (कवाराथी) और वाडूगर (वाडूवर) काम्माके अवाला कापू वालीजा तथा रेड्डी
59.	घासी, हाड्डी, रेल्ली तथा सचाडी
60.	गोडारी
61.	गोंड
62.	गाउडर, पादचायी, वन्निया, कुलाकस्तिया, वेल्लार, वन्नियर
63.	गाउडुस, बाटो, मिरीथिया, हूडोकोयूरिया, हाटो, टाटाको तथा जोरिया
64.	गोदा (कम्माला, कलाली तथा गाऊण्डर सहित)
65.	हासला
66.	हेगडे
67.	हिल्ल यूलाया
68.	होलया
69.	हुडिगा
70.	इल्लायू पिल्लामिआर (लूवार, इलुवार इल्लाथार)
71.	इलोवन
72.	इल्लाथाथी
73.	ईसाई वाल्लालर
74.	जाडापू
75.	जाम्बेवानोडाई
76.	जगामा, जगम
77.	जाटापू
78.	झेट्टी
79.	झीवर
80.	जोगी
81.	जो गुलाम
82.	कब्बेरा
83.	कदान
84.	काडुपत्तर (मालावार)
85.	कईकोलन, कईकोलर, सेनगुथर

क्रम सं०	अन्य पिछड़े वर्गों के नाम
86.	कक्कालन (जहां वे अनुसूचित जातियां नहीं हैं)
87.	कालादिस
88.	कलारी कुरुप (कलारी पर्णिच)
89.	कालवेली, गाउडर
90.	कल्लार, वेल्लालर
91.	कालिंगी
92.	कम्बार
93.	कमालार, कमासाला-विश्वकब्राह्मण तथा विश्वकर्माला (थाट्टर या पांरेका कन्तर, करूमार या कोल्लार थाचर और कालथाचर)
94.	कानी या कानी सूया कनीयार पणिकर
95.	कानीकरन, काश्मीकरन (जहां वे अनुसूचित जनजातियां नहीं है)
96.	कंजर
97.	कन्नाकन, पददाना (जहां वे अनुसूचित जातियां नहीं हैं)
98.	कन्नड, सैनीयर, कन्नीडियर तथा दासा पालनजिका
99.	कपूमारिज
100.	करनीगर, करनाम
101.	कारूनीगर (सीर कारूनीगर, श्री करनीकर, सराटुकरनीकर, माधू बाझी, कनाक्कर, सोझी कनाकर और सूत्राम्बू करूनीगर)
102.	कटेश्वर या पट्टमकट्टी
103.	कत्थीक्करन
104.	कावरा (जहां वे अनुसूचित जातियां नहीं हैं)
105.	कवातयी
106.	कवूत्थियार
107.	केरल, कूदेली
108.	केरल मुथाली
109.	खारवी
110.	खाती
111.	खाटिया-खट्टी, कोम्मारव और लोहारा
112.	खोंद
113.	किनताली कलिंग
114.	कोडालो
115.	कोडू
116.	कोलालार, दावर, थावर
117.	कोम्मार, कोम्मारा
118.	कोडा धेरा, कोड (कुई)
119.	कोन्ध, देशिया कोन्ध, दोगरिया कोन्ध, कुटिया कोन्ध, तिकिरिया कोन्ध और यामिति कोन्ध
120.	कोगू चेट्टियार
121.	कोगू वेल्लालर (अनूपा वेल्लाल गुन्डूर, चन्दलाई गुन्डूर, हरम्बकुट्टी गुन्डूर, कुरुम्बा गुन्डूर, नट्ट गुन्डूर, पडाईलिक पूसारी, याउलन कट्टी वेल्लाला गुन्डूर, रथिनागिरि गुन्डूर, पाला गुन्डूर, तिरुमुडीवेल्लाला थोंडू वेल्लालर, वेल्लाला गुन्डूर
122.	कोटन कौडन (जहां वे अनुसूचित जातियां नहीं हैं)
123.	कोप्पाला वेलामा
124.	कोरचा कोरावार, मेरूकला
125.	कोसल्या गोडूस, बोसा धोरिया, गौडूस चित्य गौडूस, बोसोधोरिया गौडूस, डोडू कम्मारिया, डोडू कमारो, लाडिड्या गौडूस और फूल्लो सोरिया गौडूस
126.	कोटा
127.	कोटियार
128.	कोटिया-बरटिका, बनत्थ डरिया, धूलिया धूलिया, होलावा पाईको पुतिया सनरोना और सिधो पाइको

क्रम सं०	अन्य पिछड़े वर्गों के नाम
129.	कोया या गौउ [इसकी राज या रासा कोयास, लिंगा धारी कोया (साधारण) तथा कोट्टू कोया उपजातियों सहित]
130.	कोई
131.	कृष्णवाका
132.	कुलाला (कुम्बरार तथा करूवाबार सहित)
133.	कूम्बोरा
134.	कुडूबो
135.	कुडूम्बी
136.	कुचीदिगर
137.	कुमूवर मोन्नाडी
138.	कुरुहीनी चेट्टी
139.	कुरूम्बा (जहां वे अनुसूचित जातियां नहीं हैं)
140.	कुरूम्बरावास
141.	कुरावर
142.	लम्बाई
143.	लम्बादी, बंजारा, सुगाडी
144.	लेटिन केथोलिस
145.	मागया गौडू, बेरिनिया गोडू, बोडू मागधा, दगियथ गौडू, पोल्लो मागधा साना मागधा तथा यदि गोडू
146.	महेन्द्रा, मेदारा
147.	महराट्टा (गैर ब्राह्मण) नामदेव महराट्टा सहित)
148.	माला दासू
149.	मालापन तारम
150.	मालीपुलायन, कुरुम्बा पलायन, केरा वलीपुलायन, पुम्बुपुलायन
151.	माल्यालगान
152.	माल्याली (जहां वे अनुगूचित जातियां नहीं हैं)
153.	माल्यान, माल्लार
154.	माले
155.	माल्या-कोरची, मालिस, पाईको मालिस और पांडा मालिस
156.	मापिल्ला
157.	मन्ना धोरा
158.	मान्नन, वाणन, पाथिया (जहां वे अनसूचित जातियां नहीं हैं)
159.	माराक्कन
160.	मारामेरी, ग्रामानी
161.	मरार
162.	मराठी
163.	मरावान
164.	मरूरा, मारूमारावार
165.	मारूतहूवार
166.	मारसवारस, नवीथार
167.	मातगी
168.	मारवारी, बुधिया
169.	माऊने
170.	मेनावार, पर्वय, राजाकुलम सेमवादा राम, पाटनावान
171.	मेदारा
172.	मोनियागर
173.	मोपार
174.	माउडाउन चैट्टी
175.	मुरवाधोरा, नौकाधोरा
176.	मुक्कूवान, मुक्कूवार
177.	मूलिया
178.	मुथूराजा (मुथुराचा, मुथुरियार और मुट्टिरियार)

क्रम सं०	अन्य पिछड़े वर्गों के नाम
179.	मुटलाकम पट्टी
180.	मूरिया
181.	ग्रामानी, शानार, नाडार
182.	नागाराम
183.	नायकर
184.	नक्कालस
185.	नानीजिल मुहाली
186.	नारी कारावार
187.	नव-बौद्धिष्ट, निओबुद्धिष्ट
188.	नीरशिकारिस
189.	नौक्कारस
190.	न्यूलायन
191.	ओडार, ओड्डार, वोड्डार, ओडिमा
192.	ओजुलूस, मेट्टाल्ल कोमासालिज
193.	ओवाचार
194.	पदान्लान (जहां वे अनसूचित जातियां नहीं हैं)
195.	पैंड्डी
196.	पैंगारापू
197.	पैंदा
198.	पाके
199.	पालासी
200.	पाल्ली
201.	पामिदी
202.	पामूलू
203.	पानन (जहां वे अनसूचित जातियां नहीं हैं)
204.	पानर
205.	पानीक्कन
206.	पान्नायार
207.	पान्नोरडम चेट्टियार या उत्यमा चेट्टियार
208.	पानो
209.	पारावान, पारावार (जहां वे अनसूचित जातियां नहीं हैं)
210.	परियास (बेगूर और वाफूर)
211.	पारकावाकूलम सुरूथिनार, माल्यामार मायामार
212.	पथियान (जहां वे अनसूचित जातियां नहीं हैं)
213.	पैरिके (पैरिके बालीजा)
214.	पेरूमान्नन
215.	पेरूमलोल्लार
216.	पेटियस
217.	पोरिया
218.	पोरजस या पोरजस-बाडो, बोडा, दारूवा, दिदुवा, जोडिया मडिल, पारेगापिडी, साल्लिया सानो और सोदिया
219.	पुल्लवान, पुल्लुवार
220.	पुश्रान वेड्डू वा गौडर
221.	पूसाले
222.	राजापुरी
223.	रेड्डी थोरस
224.	रेल्ली, सचन्दी
225.	रोना
226.	साधुचेट्टी (तेलगू चेट्टी, तेलगूपट्टी चट्टी, टुबुटी फोर मणी, तेलगू चेट्टी सहित)
227.	सक्करवार (कवारथी)

क्रम सं०	अन्य पिछड़े वर्गों के नाम
228.	सालियार (पक्कासालियार)
229.	सालीवाहन, सालीवागन
230.	साग्रोरा
231.	साथार्थी श्री वैष्णव (साथानी चट्टादी चट्टादा सहित)
232.	सावारस-कोपू सावारस, खुट्टी सावारस और मालिया सावारस
233.	सावाकरार
234.	सारा पिल्लमार
235.	सेनायया लियार, इल्लायवेनियार और सेनाय कुड़ीयार
236.	सीरीथी गौड्स
237.	साउसा शास्त्र (पाथूलकरार)
238.	सोझिया चेट्टी
239.	सोझिया वेल्लालार (कारीकरार, कोडिकलारार, सोझिया वेल्लालर और बड़ीलाईकरन सहित)
240.	श्री सारार
241.	तेलगू पामूला, पेड्डाटी कोल्लास.
242.	तेल्लूगा, पालाट्टी चाट्टिस
243.	थानउन (जहां वे अनसूचित जातियां नहीं हैं)
244.	थानटापुलायन
245.	थेवार
246.	थिरूया
247.	थोगाथ वीराका, क्षत्रिय
248.	थोलकोल्लार
249.	थोलुवा नायकर और बेटालाकर नायकर
250.	थोंडामान
251.	थोरियार
252.	थोट्टाई नैयक्स
253.	थोट्टिया नायकर (गोलावार सीलावार, राजाकम्वालय, थोक्कालावार और थोलवा नायक्कर सहित)
254.	होडा
255.	उल्लादान
256.	उल्लाटान
257.	उधारा (उधालिल्लया सागए)
258.	उराली गौडरल
259.	वालन
260.	वालासी रस
261.	बाल्मीकि
262.	वारनावार
263.	वातीयार, वेतिया चेट्टियार (राडाला, गनिका, चेक्कालार और तेलुगुला सहित)
264.	वानन (मानन, पाथियान)
265.	वाम्मार, राजाकुला, वेलूथाउर (जहां वे अनसूचित जातियां नहीं हैं)
266.	वान्नियाकुला क्षत्रिय (वान्निया वालियार वान्निया गौडर, गौडर या कान्देर पिडायाची पल्ली, अग्निगुईया क्षत्रिय)
267.	वालाम्बर
268.	वीरासिवा
269.	वेलायर
270.	वेदार
271.	वेल्लाक्कि थाला नायर
272.	वेल्ला चेट्टियार
273.	वेल्लायन-कुधम, पडयाओचिस
274.	वेलूथाडानायर, वेलूथोनाथूनायर

क्रम सं०	अन्य पिछड़े वर्गों के नाम
275.	वेतना (जहां वे अनसूचित जातियां नहीं हैं)
276.	वेट्टाई कारन्स, वेट्टाईकरार
277.	वेट्टाक्करन
278.	वेट्टूवा गौडस
279.	वीराफोड-वेल्लाल।
280.	विशवान
281.	विशान (मालनकुडी)
282.	दोक्कालिगर (गोडर, गोडा, कप्पिलिर, कप्पिलियर, ओकलिगर सहित)

क्रम सं०	अन्य पिछड़े वर्गों के नाम
283.	वाईनाड चेट्टी
284.	यनाडी, येनाडी
285.	यावने
286.	वेरूकुला
287.	वोगेस्वरन
288.	यादवन (इदायन) या यादव (इदापियर सहित, तेलगु बोलने वाले इदपियर वादूगा आभार अथवा वादूगा इदायिर अथवा गोल्ला, मोंड गोल्ला अस्थान्तरा गोल्ला के रूप से जाने जाते हैं)

20. त्रिपुरा

क्रम सं०	अन्य पिछड़े वर्गों के नाम
1.	अगारिया, अगरिया
2.	असूर
3.	बड़याकर, धूली, नागारची, शब्दाकर
4.	बहेलिया
5.	बैशनाब
6.	हैती
6-ए	बंजारा, गोर
7.	बनजोगी
8.	बराइक
9.	बरुई
10.	बसफेर
11.	बौरी
12.	बैदिया, बैदिबा
13.	बैलदार
14.	बरुआ
15.	भक्ता
16.	भर
17.	भाटिया
18.	भिनहर
19.	भिंजिया
20.	भिर
21.	भूमिज, बूमिज
22.	भूइया
23.	बिन
24.	बिन्द
25.	बिन्झिया
26.	बिरहोर
27.	ब्रिजिया
28.	चासी-कैबरट्टा
29.	चौहान
30.	दालू
31.	दमई
32.	दैसाली
33.	धैमारू
34.	दोआई
35.	दौसाध, दौसाद
36.	दुआरी
37.	गंगिन
38.	गंजू
39.	गारे
40.	गरेरी
41.	गोआला, गोप, यादव
42.	गौंडा
43.	गोनरही
44.	गोरग
45.	गुनार
46.	गुंडी
47.	गुरी
48.	हादी
49.	हलालखोर
50.	गारी
51.	हो
52.	झाल्लो, माली
53.	झारा
54.	कचहारी
55.	कदार
56.	केरा
57.	कलाई
58.	कालू
59.	कलवार
60.	कंध
61.	कन्दरा
62.	कंध
63.	काजीरा
64.	कपाली
65.	कपूरिया
66.	करेंगा
67.	कारी
68.	करमकर, कमार
69.	कास्ता, कास्था
70.	कचाई
71.	खैरा
72.	खेमी
73.	खामदेत
74.	खटीक
75.	खेमचा
76.	खेन
77.	खियांग
78.	कोचक
79.	कोडा
80.	कोइरी
81.	कोमर
82.	कोनाई
83.	कनोवर
84.	कोरवा
85.	कुम्भकार कुम्भार
86.	कुरारियार
87.	कुर्मी
88	लालबेगी
89.	लस्कर, लश्कर
90.	लोधा
91.	लोहार

क्रम सं०	अन्य पिछड़े वर्गों के नाम
92.	मचाईया-डोम
93.	महार
94.	माहली
95.	मल
96.	मल्लाह
97.	मल्लिक
98.	मलफारियां
99.	मणिपुरी
100	मरार
101.	मेच
102.	मरो
103.	नागर
104.	नागेशिया
105.	नाइको
106.	नाईया
107.	नटु नट्टादास
108	नापित
109.	नायक
110.	नैपाली, (खिम्बो, मतवाली, राई)
111.	ननिया, नुनईया
112.	ओराओं
113.	पाइक
114	पालिया

क्रम सं०	अन्य पिछड़े वर्गों के नाम
115.	पान
116.	पंकी
117.	पासी
118.	पोड
119.	पुन्डारी
120.	राभा
121.	राइभतवाल
122.	राजवंशी, राजवंसी
123.	राजू
124.	रजवार
125.	रूपाई
126.	शागिदपाशा
127.	सुकली
128.	सुनरी
129.	सुत्रधार
130.	टांटी, टाटी
131	तेली
132	तिपारा
133.	तियार
134.	टोटो
135	सूरी
136	योगी, जोगी, नाथ

21. उत्तर प्रदेश

क्र० सं०	अन्य पिछड़े वर्गों के नाम
1	अघी
2.	अहरिया, अहरियाँ
3.	अहीर, घोसी, ओवाल, यदुवंशी, यादव
4.	असारी
5.	अरख
6.	औजी
7.	बादक
8	बैरागी
9.	बैरा
10.	बाजीगर
11.	बखारिया
12.	बंदी
13.	बंजारा, बंजोर, नट, नाइक, नायक, कंगी, सिरकी बंद, लबाना, घनकुटे बंजारी, बंजारी सिख बजवाती
14.	बढ़ई, बधाई, बरई, चौबासिया, जानगीद ब्राह्मण, खाती, कोलाश, लोट, पंचाल, तंरखान, विश्वकर्मा
15.	बारी
16.	बौरा
17.	बौरिया
18.	बयार
19.	बाजगर, बाजीगर
20.	बेदिया
21.	बिहाना
22.	बैरिया
23.	भार
24.	भादियारा
25.	भील
26.	भूल
27.	भूरजी, भड़भुजा, भुज, भुजिया, कोड़, काशेश्य
28.	भिद
29.	चनाल
30.	चिक
31.	चिक्वा (कस्साब)
32.	चनल
33.	चुनरा
34.	डफोली
35.	डलेरा
36.	दर्जी, दामदो, सूरजीया, छीपे, छीपी
37.	धारी
38.	धोबी, रजक (जो अनुसूचित जाति में शामिल न हो)
39.	धोली
40.	धुनिया, कठोरिया, नरक
41.	फकीर
42.	गढेरिया, गड्डी, पाल गढ़रिया, गढ़रिया
43.	गाधिया
44.	गदर्भ, भाटू
45.	गदीला
46.	गीधीया
47.	गिरी
48.	गोनरह
49.	गोसाई
50.	गूजर
51.	हलालखोर
52.	हलवाई
53.	हनकिया
54	हुरकिया
55.	जमोरिया
56.	जोलाहा
57.	जोगी
58.	कबाड़िया
59.	कौरी, कुशवा, नालदिह मुरार, नारदिह, काछी, मौरिया
60.	कहार, धावान, धीमर, धुरू, गोधिया, बरवप, मेहर
61.	कलन्दर
62.	कालर
63.	कासी
64.	कासगर
65.	केवट, बसी, चाई, जालोहर, स्कारसी, माजही, मल्लाह निषाद
66.	खेरवा
67.	खागर
68.	खारोह
69.	किहारिया
70.	किसान
71.	कोइरी, कोवरी
72.	कोली
73.	कोलटा
74.	कोशता
75.	कोटवार
76.	कुम्हार, चाकवया, कोहार, चाकिरे, कुम्भार, प्रजापति
77.	कुजरा, रेईन
78	कुरमी
79.	कुटा
80.	लोधा, लोध
81.	लोहार, अवानगर, लुहार, मिस्तरी, रुरिया
82.	लुनिया, लोनिया
83.	माली, सैनी
84.	मनीहर, लेखैरा
85.	माझी
86.	मारछा
87.	मेवाती
88.	मिरासी मेरासी
89.	मोची, (जो अनुसूचित जाति में शामिल न हो)

क्रम सं०	अन्य पिछड़े वर्गों के नाम
90.	मोमिन (अंसार)
91.	मुराऊ, मुरइ
92.	मुस्लिम, बनजारा
93.	मुस्लिम, कायस्थ
94.	नादकाल
95.	नाई, जाकुर, हज्जाम, खावा, नापित, नाऊ, ओरेब, सविता सारीबांस
96.	नव बौद्ध नीओबुद्धिस्ट
97.	नट, (जो अनुसूचित जाति में शामिल न हो)
98	ओब्या
99.	औरह, ओद
100.	पाहरि
101.	पौढ़ी
102.	पाथारिया
103.	राज
104.	रंगरेज
105.	रोनिओर
106.	सपेरा, कालबेलिया
107.	साऊन
108.	सोनार, सुनार स्वर्णकार
109.	तागा, भाट
110.	तमेली
111.	टमटा
112.	तान्ती, ततवा, पटवा, तंत्रीपाल
113.	तेली, साह (हिन्दु और मुसलमान दोनों)
114.	ठटेरा, कोरा
115.	सीखा
116.	तुरी

क्रम सं०	अन्य पिछड़े वर्गों के नाम
1.	आचार्या अचार्जी
2.	अधिकारी
3.	अगारिया, अगार्या
4.	अघोरे
5.	अग्रेधना, अग्रेधनी
6.	अहीर, ग्वाला, गोप, सदगोप यादव, गोला, ग्वार
7.	अमात, अमात अमाध
8.	अंसारी, (मुस्लिम)
9.	बदी (नेपाली)
10.	बेग
11.	बागाल
12.	वेश्य बपाली
13.	बाजाधार, राजानिया, बेधया
14	बजारा
15.	कनजोगी
16.	बनुआ, बुना, बुन्ना, बुनो
17.	बारागिरी
18	बारबेईन, बेहं, बेइन
19.	बरही बधई, विश्वकर्मा, खाती, मुझधार
20.	बर्णा-ब्राह्मण पतित ब्राह्मण
21.	बारी
22.	बारुई, बारुजीवी
23.	बाधुडो
24.	बैतकार
25.	बरुजा
26.	भानगी (उन्हें छोड़कर जो अनुसूचित जाति में शामिल हों)
27.	भन्त
28.	भर
29.	भडभुजा, भुगजावाला
30.	भाट
31.	भटियारा, रज्जाकी
32.	भटिया
33.	भोटिया
34.	भुगाल
35.	बिन
36.	बिझिया
37.	बिछेवर
38.	बिजोना
39.	बिओया
40.	चाक
41.	चामलिंग
42.	चासधोवा, हलधर, हलारी, मादेहाडी
43.	चासी-काईवरहटा
44.	चिक, चिकवा, कसाई, कस्साब
45.	चिड़िमार
46.	चित्रकार

क्रम सं०	अन्य पिछड़े वर्गों के नाम
47.	चुड़ीदार, लखेरा, लहेरा
48.	डफाली
49	डालु
50.	दर्जी, इद्रिसी
51.	धासा
52.	ढेकरु
53.	धेनुआर
54.	धुनिया, मसूरी
55.	दिनपाली
56.	दुराज
57.	फकीर, साईन
58.	गधावा
59.	गड्डी घोसी
60.	गैन
61.	गन्धा
62.	गराई
63.	घटवाल
64.	घटवार
65.	घसुरिया
66.	गोडरा
67.	गोखा
68.	गोंड
69.	गोरे
69क	गोरखा
70.	गोवार
71.	गुर्धरी
72.	बदी
73.	हुमालखोर, (उन्हें छोड़कर जो अनुसूचित जाति में शामिल हैं)
74.	हुलवाई
75.	टट्वारी
76.	टेट्ला
77.	इकाड़िमी
78.	हरिका
79.	जिमोदी
80.	जुआंग
81.	कचहारी
82.	कागडो
83.	कहार
84.	कैरा
85.	कालु, केवी, कराई, कोंडव, कादुरवाल, पाल, पडा, कालु, कारीक
86.	कलवार
87.	कामर
88.	कान, कानु
89.	कांच
90.	कान्दु

क्र० सं०	अन्य पिछड़े वर्गों के नाम
91.	कंसारी, कांस्यकार
92.	कपाली
93.	कापोटिया
94.	कारानही
95.	कारहा
96.	कर्मकार
97.	करवालनट
98.	कसाई माजी
99.	कास्ता
100.	कास्ता
101.	केवा
102.	खामी
103.	खंडेल
104.	खराग
105.	खरिया
106.	खेन
107.	खेखार
108.	खेतौरी
109	खयांग
110.	खयारा
111.	कोचक
112.	किसखाक
113.	कोडा
114.	कूरी कोईरी
115.	कोल
116.	कोली
117	कोलु
118.	कुकी
119.	कुम्भार, कुमाह कुम्भकार, कुम्हार कुमकार, कद्
120.	कुंजड़ा, राईन
121.	कुरमी
122.	लकार
123.	लकरा
124.	लशेई
125.	मछुआ
126.	मछिया-डोम्ब
127.	महाडारका
128.	महाता
129.	महातो
130.	महुरिया
131.	महिसत्या
132.	माझी, डेसवाली, माझी
133.	मालाकार
134.	माली

क्रम सं०	अन्य पिछड़े वर्गों के नाम
135.	मंगन
136.	मंगार
137.	मटियाल
138.	मिरशिकार
139.	मोगेर, मोरगाऊ
140.	मोमिन
141.	मोरापोर-ब्राह्मण
142	मग
143.	नागर
144.	नाई, हज्जाम, नाईया, नापिट
145.	नालबन्द
146.	नाथ, योगी
147.	नव-बुद्धिष्ट नव-बौद्ध
148.	नेवार
149.	पुंडारी
150.	पंथी
151.	पटुआ
152.	पिराली
153.	राज
154.	रखाल
155.	राना
156.	रंगरेज
157.	रसाली
158	रोहनागया रोशनगिया
159.	साहा
160.	शंखकार सरखेक
161.	सायार
162.	ईसाई धर्म में परिवर्तित अनुसूचित जातियां
163.	शागिर्द पेशा
164.	सियाल
165.	सोनार, स्वर्णकार
166.	सुकलो
167.	टामांग
168.	तंबोली, तमाली, तमूली
169.	तांती, तन्तुवया
170.	थापा
171.	थारू
172.	तिली
173.	तीपारा
174.	तीपारा
175.	तुरहा
176.	उराओ, बनडोत, हारो, करकटा, लुइडु, शीथेड़ तिग्गा, तिरकी
177.	व्यासोकटा

23. अण्डमान और निकोबार द्वीप समूह

क्रम०सं	अन्य पिछड़े वर्गों के नाम
1.	अरुणदतियू (हि०)
2.	बालीजा
3.	बरार (उमाती)
4.	इलूवलन
5.	धोबी
6.	चैत्री बालीजा,
7.	झीवर
8.	खारिया
9	मंडा
10.	नायडु, (बादूल, करेरे, नैकर, बाइया, नांबिआर),
11.	नामशूद्र, अधिकारी, सरकार, धाती, बाला, हीरा, बाईदाई, माजी, दालिगबी, बोदोई, डिसकाम, राय, पोद्दार, हिन्दल, दास, हाजर माजी, बाली, नाग, बैल्गी, भतरा, मतगेर, वीरी (वैदया)
12	पिल्लाई, विल्लालेर, वैल्लालार, करभट्टू, कर्णबट्टू
13.	राव
14.	रैड्डियार, (रैड्डियार, झोथी, रैड्डयार)
15.	सरवर, अम्मुडियार
16.	ठाकुर (नाई)
17.	यादव, रोलाल, कोल्लभट्टी, कोनार

24. अरुणाचल प्रदेश

क्रम सं०	अन्य पिछड़े वर्गों के नाम
1.	दिवान
2.	क्षेत्रीय
3.	कुर्मी
4.	मैती
5.	माझीयरा
6.	नयोर
7.	नैपाली लाम
8.	साजालंग
9.	श्रेहद
10.	सुनार

क्रम सं०	अन्य पिछड़े वर्गों के नाम
1.	अचारज, पंचाल-ब्राह्मण, बावर
2.	अहेरिया, अहेरी, नायक, हेरी
3.	अहीर, यादव, ग्वाला
4.	आधी, बरही, धीमन, ब्राह्मण
5.	बगारिया
6.	बारा
7.	बरवार
8.	बाहरी
9.	बनौधिया-राजपूत
10.	बंराई, लम्बोली
11.	बरागी, बैरागी
12.	बाथी
13.	बटेरहा
14.	बैरीया
15.	बैटा, हैन्सी, हैसी
16	भांड
17.	भरभूजा
18.	भट, भटरा, भर्जी, रमैया
19.	भाटी, चग, धीरथ
20.	भोजकी
21.	भूवलीया-लौहार
22.	भूमक
23.	भूरा ब्राह्मण
24.	बिलोच
25.	बोटेहरा
26.	चर्म
27.	छीम्बा, छिपी
28.	चिड़ीमार
29.	दईया
30.	डकोट
31.	दाम्बोली, दोआला
32.	देहा, डहिया, डीया
33.	धई
34.	धेनवार
35.	धीमर
36.	धोबी
37.	धोसाली
38.	फकीर
39.	गडरिया
40.	गद्दी
41.	गड़री
42.	गोरिया, ग्वार, ग्वारिया
43.	घाई
44.	घसियारा
45.	घोसी
46.	हाथी
47.	हजाम, नाई
48.	हाली
49.	हरनी
50.	गुटका जाट, छिल्लौन
51.	हंगरा, ब्राह्मण, खाती
52.	जोगी, नाथ
53.	जुलाहा, (उन्हें छोड़कर जो अनुसूचित जाति में)
54.	कम्बोज, कम्बोह
55.	कम्बन
56.	कबेरा
57.	कन्जरी
58.	कसाब
59	कैहल
60	कोहली
61.	कुचबन्द
62.	कुलैत
63.	कुम्हार, प्रजापति
64.	कुर्मी
65.	लबाना, बन्जारा, लोबाना बन्जारा
66.	लखेरा, मनिहार
67.	मदारी
68.	महातम
69.	माली, फलमा, सैनी
70	मेरह, राजपूत
71.	मीणा, मिना
72.	मेवाती
73.	मिरासी
74.	मोची
75.	मुसाबर
76.	नार
77.	नदवक, पिंजा
78.	नलबन्द
79	नूलगर
80	पंखीवारा
81.	रबबन्द
82.	रायसिख
83.	रेहार, रेहारा, रेर, रिहार
84.	ईसाई धर्म में परिवर्तित अनुसूचित जातियां
85.	शोरगीर
86.	सिंधीवाला, सिंधीकोट
87.	सोई
88.	टागा
89.	तरखान
90.	तैली
91.	बनजिन
92.	ठठेरा, कसेरा
93.	तुरी, थोरी

26. दादरा और नागर हवेली

क्रम सं०	अन्य पिछड़े वर्गों के नाम
1.	अग्री
2.	अहीर, भारवद, यादव
3.	ब्रीह्मी
4..	धोबी
5.	कहार, कुंभार
6.	कापदी
7.	कालेगा (मिसाल)
8.	कोली
9.	मकराना (मुस्लिम)
10.	माई (बलन्द)

०	अन्य पिछड़े वर्गों के नाम
	अब्बासी, मिस्त्री, साका
	अगरी, खरवाल
	अहीर, यादव, ग्वाला
	अरैन, राई, कुन्जरा
	बधाई, बरहाई, खाती, तरखान, जनगरा-ब्राह्मण, विश्वकर्मा
	बाटी
	बैरागी
	बैरवा, बरवा
	बन्नरवाला
	बराई, तम्बोली
	बारी
	बोरिया
	बाजीगर, नट, कलन्दर, (उन्हें छोड़कर जो अनसूचित जाति में हैं)
	भूभालिया
	भाड़
	भरभूजा
	भंट
	भटियारा
	चक
	चारण, गदवी
	छिप्पी, टंक
	चिड़ीमार
	दफाली
	दईया, धईया
	डाकोट, पराड़
	दर्जी
	धीवर, झीवर, निशाद
	धोबी (उनको छोड़कर जो अनसूचित जाति में है)
	धुनिया, पिन्जारा, कधेर, धुन्नेवाला
	फकीर
	गच्च, मंडेवाला,
	गडरिया
	गाड़ी, गारी
	गाधेरी
	घसियारा
	घोसी
	गुरजर गुज्जर
	हरनी
	हरबी
	जल्लाद
	झटकिया-सिक्ख

अ० सं०	अन्य पिछड़े वर्गों के नाम
42.	जोगी, गोस्वामी
43.	जुल्लाह, मोमिन (उनको छोड़कर जो अनसूचित जाति में हैं)
44.	काछी, कोथरी, मुराई, मुरावा
45	कहार, कश्यप
46.	कलाल, कलवार
47.	कगर
48.	कनमाली
49.	कसाई, कुस्साव, कुरेशी
50	कसेरा, टमारा, ठठेरा, ठंठियार
51.	कठपुतली-नचानेवाला
52.	केवट, मल्लाह
53.	खटगुने
54.	खटीक (उनको छोड़कर जो अनसूचित जाति में हैं)
55.	कुम्हार, प्रजापति
56.	कुर्मी
57.	लहाना
58.	लोखेरा, मणिहार
59.	लोधी, लोधा, लोध, महालोध
60.	लुहार
61.	मोछी, मछेरा
62.	महापात्र
63.	माली, सैनी, सोथिया, सागरवंशी—माली नायक,
64.	मसानिया-जोगी
65.	मेकार, राजा
66.	मीणा
67.	मेवा, मेवाती
68.	मेरासी, मिरासी
69.	मोची (उनको छोड़कर जो अनसूचित जाती में हैं)
70.	नाई, हज्जाम, नाई (सविता)
71.	नालबन्द
72.	नक्काल
73.	पखीवारा
74.	पटवा
75.	पत्थर बेरा, संगतराश
76.	रंगरैज
77.	रयाकवार
78.	सैज
79.	सथाई
80.	सुनार
81.	तागा, तागाह
82.	तेली

क्रम सं०	अन्य पिछड़े वर्गों के नाम
1.	भण्डारी
1-क.	बंजारा, लम्बाड़ी, लमानी, सुगाली
2.	ईसाई, चमार
3.	ईसाई, महार
4.	धंगर
5.	धोबी
6.	ढोर
7.	गोंड
8.	गोग्गी
9.	गोमांवी
10.	कमार
11.	कोली
12.	कुनबी
13.	मिलना
14.	नायडू
15.	नाथ, जोगी
16.	न्हावी, नाई
17.	सागर
18.	यादव, गावली

29. लक्षद्वीप

क्रम सं०	अन्य पिछड़े वर्गों के नाम	क्रम सं०	अन्य पिछड़े वर्गों के नाम

शून्य

30. मिजोरम

क्रम सं०	अन्य पिछड़े वर्गों के नाम
1.	अपातनी
2.	गुरखा
3.	मणिपुरी
4.	पैता
5.	रलता

31. पाण्डिचेरी

क्रम सं०	अन्य पिछड़े वर्गों के नाम
.	अपुकाटलावंडलु
.	अगामुदियास (थुलुवा वेल्लालास सहित)
3.	अगारू, जुराकुला
4.	अगासा
.	अग्निकुला क्षत्रीय (पालाकापु, पालारेड्डी वान्नेकापु, वान्नेकापु, वान्नेरेड्डी)
6.	अलवार
.	अम्बालाकरन
8.	अम्बिका
9.	आनन्दन
0.	आन्दीचन्दरन
1.	ऐंग्लो इण्डियन
2.	आर्यन (नुलायन), आर्या
3.	अरवाकेटालावंडु
4.	आरे माहराठी
5.	आर्य
6.	आर्यावक्षी (नायरूमारी)
7.	अगगारा, अगगोरा
8.	बडागा
9.	बालोलिका
0.	बेस्था, बाजथा (जालाल्फ़ला, नागावदेती)
1.	भटराजु
2.	भयास्सार क्षत्रीय, बेंगाराजुलु रोगरि, दारजी, सीम्पी
3.	भोट्टोदास-बोडो बोट्टाडु, मुरिया भोट्टाडा और सोनो भोट्टाडा
4.	भुमिआस, बाडो भूमिआस और भूरि भूमिया
5.	भण्डारी
6.	बीलावा
7.	बीसोए
8.	बोंडिली
9.	बोन्या
0.	बोयांन
1.	ब्यागारी
2.	चक्काला
3.	चापटोग्रा
4.	छटादि (छट्टादा और श्रीवैष्णव)
5.	चावालाकारंस
6.	चक्कालास जिनका सामाज व्यवसाय कप वनियास के समान तेल निकालना है
7.	चेट्टादारा
8.	अनुसूचित जातियों से ईसाई धर्म में परिवर्तित हुई जातियां
9.	दासारी
0.	देवादिगा
1.	दोवालकार
2.	देवानगा, देवानगन
3.	धाक्कादा

क्रम सं०	अन्य पिछड़े वर्गों के नाम
44.	दोम्मारा
45.	दुदुबी
46.	दुदेकुला, पिनजारी
47.	एनाडि
48.	इरावालियार
49.	इज्हावा (इमुवा) इज्हावा (इल्लुवान)
50.	इज्हूथाचन
51.	इज्हावाथी (वाथी)
52.	इज्हाथाचन्स
53.	गाडुला, गाड्डावारस
54.	गालदा कोकंणी
55.	गांडला
56.	गंगावारस
57.	गणिका (नागावाभासम सहित)
58.	गट्टी
59.	गझुला बालिजा गाझालासेट्टी (गझुला)
60.	गावेरा
61.	गोव्वा
62.	गोडावा
63.	गोंदी, मोध्या, गोंड और राजो गोंडो
64.	गोंड या गोवदी, मछु, पाल, पैकोपटारा या पाटारा, सुन्दी या तेल्ली तातो, पेरेनागोल्लास, ओरिया या वेट्टी सामनथी, ओरिया पिछड़ा वर्ग, बदाई, मोकटा, दारजी, गौड़
65.	गोडस बाटो, मिरिथ्या, दोधोकोरिया हाटो, जटाको और जोरिया
66.	गौड़ा, गोड़ा (गामल्ला या कल्लाली सहित)
67.	ग्राम्मणि, शानाम और नाडार
68.	गुडिगारा
69.	हदिगा (पूर्वी और पश्चिमी गोदावरी जिले के सेट्टी बालीजा सहित)
70.	हेदगा
71.	हेलवा
72.	इडिगा (सेट्ट बालिजा सहित)
73.	इल्लुवान (इल्लुवान)
74.	इरूलारा
75.	ईसाई वाललालार या मालाकरार
76.	जादापुस
77.	जाक्कुलास
78.	जालवरलु
79.	जामबुवांदादाई
80.	जांदारा
81.	जंगम
82.	जेट्टी
83.	जोगी
84.	काब्बारा
85.	कदाईयान या मालाकार
86.	काडान

क्रम सं०	अन्य पिछड़े वर्गों के नाम
87.	काडुपट्टन
88.	काइकोलान या काइकोला (सेनगुंथार सेनगुंदार)
89.	कालारिकुरूप (काइराल पानिकर)
90.	कालावाथुला
91.	कालिंगी
92.	कल्लान
93.	कल्लार
94.	कमालाज (विश्वकार्माला)
95.	कम्मालाना (कामसाला, विश्व-ब्राह्मण और विश्वकर्मा कारूवाव)
96.	कांदरा
97.	कानी, कानीएन या कानियान और कानिसु या कानियार पानिक्कार, गनका, कानिसी
98.	काबुथियान
99.	केलासी
100.	केराला मुदाली, केरला मुथाली
101.	खाखी
102.	खट्टीस-खाट्टी, काम्मारो और लोहारा
103.	किटारा
104.	कोदू
105.	कोहदाला
106.	कोलारिओस या मुनिवनिज
107.	कोमार
108.	कोप्पालावालामास
109.	कोसचा
110.	कौशल्या, गौदस, बांसोथोरिया गौदस, चिट्टी गौदस, दानगाथाथ गौदस, दोदु कामारिया, दुदु कोमारो लादिया गौदस और पुल्लोसोरिया गौदस
111.	कोसावाना, काचानार
112.	कोटायार (शोरेगारा कुशागिया)
113.	कृष्णांवाला
114.	कुदुम्बी
115.	कुलेरा, कुलाला, कुम्मारी
116.	कुम्वारन
117.	कुन्नुवार मन्नाडि
118.	कुरुम्बा, कुरूबा, कुरूबार, कु[illegible]
119.	कुसावान
120.	लाब्बाई
121.	लाम्बादी
122.	मादुगार या मोदावार या वेथाक्कारा
123.	नागाथा, गौदस बेरनिया गौदवबोदो, मागाथा, देंगोयाथ गौदु पोन्ना, मागाथा और सानामागाथा
124.	महिन्द्रा, महान्द्रा, महा
125.	माले
126.	मानगाला (नायी-ब्राह्मण)
127.	मान्नु
128.	मापिला
129.	माराथी
130.	मारावार, मारावाव
131.	मुरूथवार
132.	मिडिवला, मदिवाला
133.	मालाकुदी या कुदियान
134.	मौदी वानस
135.	मोगावीरा
136.	मोईली, मोली

क्रम सं०	अन्य पिछड़े वर्गों के नाम
137.	मोडंगोला
138.	मोंगोला
139.	मोनिआगार
140.	मौंडाडान
141.	मुदावा/मुदुगा
142.	मुखारी
143.	मुक्कुवान या मुकायान, मोगायान लोगावान (बोविस सहित)
144.	मुरिया
145.	मुटलाकामवटी
146.	मुथुराजा
147.	मुट्टीरियान/मुथिरियान
148.	नाडार,
149.	नागारालु
150.	नागारा
151.	नागावाड्डीली
152.	नाइडू गावारा
153.	नैकर वान्निया
154.	नाईक्कान, नाइकन
155.	नक्काला
156.	नालाकोडाया
157.	नामदेव, सिम्पी
158.	नानीयर
159.	नारिकोरावान
160.	नावुन्दियन
161.	न्यू बुद्धिष्ट, नव बुद्धिष्ट
162.	नोक्का
163.	ओडांस, ओडो, वोडो या वाडा या वेड्डाई, ओडोन (डोंगा) ओडिया
164.	ओईलु
165.	ओमानाइटो
166.	ओट्टानाईकन
167.	पाडयाची
168.	पद्मसाली
169.	पाईगारापु
170.	पाईदा
171.	पलाएकारी
172.	पालासी
173.	पल्ली
174.	पामुला
175.	पांडोयार (अंपाट्टान, प्रानोकपारी और नासीवान)
176.	पांडी थाट्टान
177.	पान्नागाडीकारा
178.	पन्नान वेट्टुवा गौऊंडर
179.	पान्नाईयार या पन्नायार
180.	पाराम्बान
181.	पारावान (ईसाई)
182.	पारोल नाडिवाला
183.	पररोकावाकुलम (सुरीथीनामम) माल्यानान, नाथामान, मुपानार और नईनार
184.	पाथुकुडी
185.	पाटुल्कारान
186.	पाटरीकुलम, पतराकुलम
187.	पट्टानावम

क्रम सं०	अन्य पिछड़े वर्गों के नाम
188.	पट्टारियास या पट्टारिया
189.	पाट्टुलाकारन
190.	पेंटियास
191.	पारिका, पारिके, बालिजा, पिरागिरी क्षत्रिया
192.	पेरूमबवलन
193.	पेरूम्कोल्लांस
194.	पेरूवाण्णान
195.	पेच्चिमुंटा
196.	पिल्लाई
197.	पिल्लवा
198.	श्री काकुलम और विशाखापत्तनम जिले के पोलिनाटीवल्मा
199.	पोन्नाला
200.	पोराया
201.	प्रारेवाथाराजाकुलाम
202.	पुल्लुवान
203.	पुसाला, पुसालावान, पुसालावांडलु
204.	राजाका
205.	राजापुरी, राजू
206.	राऊथेर
207.	रोन
208.	साडान, डेडान
209.	सगालोस
210.	साटवा वेल्लालन
211.	साक्कावार (कवाथी)
212.	सालियन (पट्टारायान) सालियास, सालियान पाडसालि, सेनापाथुलु, कुमाथोक्टुलु, साले, श्रोगाटो सालि
213.	सानाईथालाइवार (सेनाइकुडुयान)
214.	सेनाई थालविवार (इलेवानियास)
215.	सेट्टी बालिजा
216.	सीसटाक्कारान्
217.	सोल्लार
218.	श्रीसयाना
219.	ताराकान
220.	टाटापुक्स
221.	टंडाल, वन्नान
222.	थिया, इलबुरा, थिय्यास
223.	थोगाट्टा विराक्षत्रिया
224.	थोलकोल्लांस
225.	थोलुवा नैकर और वेट्टुलाकारा, नैरको

क्रम सं०	अन्य पिछड़े वर्गों के नाम
226.	थोराइयान
227.	थोराय्यान
228.	थोट्टीया, नैकान (राजाकाम्बालम गोल्लावार, सील्लेयार, थोकालेवार या थोलुवानाईकर सहित)
229.	थोट्टीयार
230.	थुन्नान
231.	थुरजुकापुस कासाला कापुस
232.	टिगाला (टिगला)
233.	टोलिकुला
234.	अप्पारा
235.	उराली गौंडाना
236.	वाडा, बालिजा, वादावा (गोला या कोडंरी)
237.	वाडरा या वाड्डारा
238.	वादूकान, वाडगान वादुगन, वाडुयान
239.	वालाकाटालावान
240.	वालांस
241.	वाल्मीकि
242.	वनियार
243.	वानिरन या वानियार (वानिका, वानिकावायरा वेश्यचेट्टी, वयनिवास-वेरी आर्यरकर और नागारथार)
244.	वन्नान, वन्नार
245.	वन्नियाकुला सागिया, (वान्निआर या वन्नियार गौंडर कौडार या वान्निया गौंडर और वान्निकंडार सहित) (वेल्ला गौंडर के अलावा जो वन्नी वन्नियाकुल क्षत्रीय जाति से सम्बन्धित के अलावा)
246.	वाथिस
247.	वेरास्सिवा (फडारम, माटापाथी, वैरागी, वाईरावी, योगिसवरार
248.	वेलान, वोल्लान
249.	वेल्लाला पिल्लाई (नान जीनाद वेल्लाला)
250.	वेलुथाडान, वेलुथाडाथ नायर
251.	वेट्टाईकारान
252.	वेट्टुरान
253.	वेट्टुवा गौंडर
254.	वेट्टुवान
255.	विकुरूप
256.	विलाक्काथाला, नायरस (विलाक्काथालावन)
257.	विराकादी वैक्कालार
258.	यादवा (कोनार, कोलाया, आयार मायार, मुनियान, इरूमान)
259.	योरूकुला
260.	योगेश्वरन

खण्ड VII

श्री एल० आर० नायक, भूतपूर्व संसद सदस्य (सदस्य) पिछड़ा वर्ग आयोग

द्वारा

प्रस्तुत असहमति का विवरण

भारत के नागरिकों के पिछड़े वर्गों की सामाजिक, शैक्षिक समस्याओं के बारे में मुझमें जितनी समझ और योग्यता है उसके अनुसार मैंने पिछड़ा वर्ग आयोग के अध्यक्ष और दूसरे सदस्यों को भारत के राष्ट्रपति द्वारा निर्धारित विचारणीय विषयों के अनुसार सौंपे गए कठिन कार्य को पूरा करने में उनकी सहायता की है। मुझे खुशी है कि उनसे मुझे पूरा सहयोग और प्रोत्साहन मिला, विशेषकर आयोग के अध्यक्ष श्री बी० पी० मण्डल से। इसलिये आयोग ने उसे सौंपे गए विचारणीय विषयों के अंतर्गत नागरिकों के सामाजिक तथा शैक्षिक रूप से पिछड़े वर्गों का जो वर्गीकरण पेश किया है केवल उसी के बारे में मैं अनिच्छापूर्वक और खेद सहित असहमति का अलग विवरण लिख रहा हूं।

आयोग ने अध्याय XI में स्पष्ट किये गए कुछ मानदण्डों के आधार पर नागरिकों के सामाजिक तथा शैक्षिक रूप से पिछड़े वर्गों की एक सामान्य सूची तैयार की है और मैं उसमें निम्न प्रकार से संशोधन करने का सुझाव देता हूं :—

मेरी सच्ची राय यह है कि सामान्य-सूची में जिन जातियों/वर्गों का उल्लेख किया गया है और जिनमें से प्रत्येक की सादृश्य और सम्बद्ध विशेषताएं हैं वे सामाजिक तथा शैक्षिक पिछड़ेपन की एक ही कोटि या स्तर के अंतर्गत नहीं आते और मुझे भय है कि उनकी उन्नति के लिए जिन सुरक्षात्मक उपायों की सिफारिश की गई है वे उन जातियों के कम दुर्भाग्यशाली वर्गों तक नहीं पहुंच पाएंगे और समाजवादी समाज की स्थापना की घोषणा करने वाले सांविधानिक उद्देश्य, मिथक बन कर रह जाएंगे। सामान्य सूची में कुछ समुदाय जो इसके बाद टाटा सामाजिक अध्ययन संस्थान की रिपोर्ट (खण्ड IV) में वर्णित रूपरेखा के अनुसार "मध्यवर्ती पिछड़े वर्ग" कहलायेंगे उनका अस्तित्व भारत के जातिगत आधार पर श्रेणीगत समाज में अलग से उभर कर आया है। इसका आधार या तो उनकी संख्यागत तादाद है या फिर गांवों या नगरों में अन्य उन्नत समुदायों के साथ-साथ प्राचीन काल से चला आ रहा उनका यह अस्तित्व है। मुझे इसमें कोई संदेह नहीं है कि यदि भविष्य में उन्हें बेहतर अवसर और प्रोत्साहन प्रदान किया गया तो देर सबेर वे सामान्य आबादी के साथ घुल मिल जायेंगे। किन्तु सामान्य सूची में कई ऐसी जातियां और वर्ग भी हैं जो कि निकट भविष्य में इस प्रकार विकसित होने में असमर्थ हैं क्योंकि वे सामाजिक और शैक्षिक तथा आर्थिक दृष्टि से अत्यन्त पिछड़े हुए हैं। उनका आर्थिक पिछड़ापन स्पष्ट रूप से उनके युगों पुराने सामाजिक तथा शैक्षिक पिछड़ेपन का परिणाम है। स्पष्टता की दृष्टि से उन्हें इसके पश्चात् दलित पिछड़ा वर्ग कहा जाएगा जो कि "मध्यवर्ती पिछड़े वर्गों" से भिन्न है। मेरी यह राय है कि जनता के इन दुर्भाग्यशाली वर्गों अर्थात् "दलित पिछड़े वर्गों" को अत्यधिक पिछड़ेपन का शिकार होने के कारण जागृत होने तथा उन्नति करने में काफी समय लगेगा जब तक कि राष्ट्रीय स्तर पर दूरदर्शी सुरक्षा उपायों के द्वारा संगठित उपाय न किए जाएं। साथ ही इनके लाभों को बड़ी मात्रा में उन तक पहुंचाया जाना भी आवश्यक है। इसलिये उन्हें मुख्य सामान्य सूची से ध्यान पूर्वक अलग करने और उनका समान वर्गों या समान प्रायःवर्गों अलग बनाए जाने की अत्यन्त आवश्यकता है ताकि सुरक्षात्मक उपायों के लिए उनमें एक स्वस्थ प्रतियोगिता उत्पन्न हो सके। इसी कारण सामान्य सूची के अन्य समुदायों का अलग वर्ग होना चाहिये। जिससे सुरक्षात्मक उपायों के लिए सामान्य स्तर के लोगों के बीच प्रतियोगिता का वातावरण तैयार हो सके। ये उपाय पूरे राष्ट्र के हित में आवश्यक है।

मेरी राय में "मध्यवर्ती पिछड़े वर्ग" वे हैं जिनका परम्परागत व्यवसाय, खेती बाड़ी, व्यापारिक बागवानी, पान के पत्तों का उत्पादन, पशुचारण, ग्रामीण उद्योग जैसे दस्तकार, दर्जी, रंगरेज, बुनकर और छोटे मोटे व्यापार एवं कृषि कार्यकलाप, घोषणा कार्य, मन्दिर सेवा, ताड़ी विक्रय, तेल विक्रय, युद्ध अभ्यास, ज्योतिष इत्यादि हैं जो ऊंची जातियों के साथ अनंत काल से इकट्ठे रहते चले आ रहे हैं और इसलिये उन्हें बेहतर सहवास प्राप्त करने का मौका मिल सका है। इस सबसे यही ध्वनित होता है कि बहुत से दुर्भाग्यशाली "दलित पिछड़े वर्ग" ऐसे हैं जिन्हें भारतीय समाज के साथ मिलने-जुलने नहीं दिया गया और उनके परम्परागत व्यवसायों से जुड़े कलंक के कारण, अपराधवृत्ति के कलंक और बंधारेपन के कलंक के कारण, उन्हें भारतीय समाज से वंचित और अलग-थलग कर दिया गया। इसके परिणामस्वरूप उनका सामाजिक स्तर रसातल में पहुंच गया। इनके अन्तर्गत सामान्यतः भूतपूर्व अपराधी जन-जातियां, बंजारे और घुमक्कड़ जनजातियां, जमीन खोदने वाले, मदारी, मल्लाह, कहार, नमक बनाने वाले, धोबी, गड़रिये, नाई, मेहतर, टोकरी बुनने वाले, खाल निकालने वाले और चमड़ा रंगने वाले, भूमिहीन कृषि मजदूर, भिश्ती, ताड़ी निकालने वाले, ऊंट चराने वाले, सूअर पालने वाले, भारवाहक बैल गाड़ियां चलाने वाले, वन उत्पादों को इकट्ठा करने वाले, शिकारी और पक्षी पालने वाले, भड़भूजे आदिम जातियां (जिनका उल्लेख अनुसूचित जनजातियों के रूप में नहीं किया गया है) दक्षिण जीवीवर्ग (जिनका उल्लेख अनुसूचित जातियों के रूप में नहीं किया गया है) और भिखमंगे समुदाय आदि आते हैं।

ये ही नाम उनके सामाजिक और शैक्षिक पिछड़ेपन को पर्याप्त रूप से ध्वनित भी करते हैं और इसीलिए हमारे संविधान के निर्माताओं को चाहिए था कि जिस प्रकार अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों का विशेष उल्लेख किया गया है उसी प्रकार इन जातियों के बारे में भी पूर्व कल्पना करते। जो बातें सुस्पष्ट हों उनके लिए किसी प्रमाण की आवश्यकता नहीं होती। मैं सच्चे मन से यह सोचता हूं कि हमारे संविधान निर्माताओं से जो यह चूक हुई है उसमें न्याय पर आधारित, चाहे वह न्याय सामाजिक हो, आर्थिक या राजनीतिक—समानतावादी समाज की स्थापना में गम्भीर बाधा उपस्थित हुई है। स्वतन्त्रता के तीस वर्ष और आजादी की सुबह भारतीय समाज के इन दुर्भाग्यशाली अंगों से आवासित पुरवाओं और गन्दी बस्तियों को स्वतः-स्फूर्त मुस्कान नहीं दे पाई है। अब भी उन्हें हमारे मूलभूत कानूनों की व्यवस्थाओं का लाभ मिलने की बजाए भाग्य के फरमानों के सामने सर झुकाना पड़ता है। हमारे देश के संविधान में स्वतन्त्रता, समानता और भाई-चारा जिन्हें हमारे देश के संविधान में निष्ठापूर्वक प्रतिष्ठित किया गया है उनके लिए अभी अर्थवान तथ्य नहीं बन पाए हैं। इनमें से अधिकतर समुदाय या तो अनुसूचित जनजातियां हैं या अनुसूचित जातियां जिनकी स्थिति कुछ राज्यों के सन्दर्भ में उनकी विशेषताओं पर निर्भर करती है। किन्तु दूसरे राज्यों में उनकी ऐसी स्थिति नहीं होती।

देश भर के सभी कोनों में अपने व्यापक दौरों के दौरान मैंने यह देखा है कि "मध्यवर्ती पिछड़े वर्गों" में एक प्रवृत्ति तेज गति से पनप रही है कि जो व्यवहार या बल्कि दुर्व्यवहार उन्हें अति प्राचीनकाल से अपने से ऊंची जातियों से मिलता रहा है, वही वे अपने भाइयों अर्थात् "दलित पिछड़े वर्गों" के साथ दुहरा रहे हैं। हमारे जैसे असमान समाज में आयोग सभी प्रकार के एहतियात बरतें ताकि अधिक लाचार और जरूरतमन्द हिस्से विभिन्न सुरक्षा उपायों से वंचित न हो पाएं। इसके लिए असमान वर्गों के बीच घातक प्रतिद्वंदिता को रोकना होगा। जाति-वाद अब भी हममें मौजूद है और अपनी शूल मजबूती को खोए बिना नए रूप धारण करता चला जा रहा है। वस्तुतः कुछ प्रेषक तो यह अनुभव करते हैं कि गणतांत्रिक राजनीति और जनसंघटन ने जातिवाद को मंच के बीचोंबीच लाकर खड़ा कर दिया है। बड़े खेद के साथ मैं यह कहना चाहूंगा कि "मध्यवर्ती पिछड़े वर्गों" के राजनीतिक नेता भी इस पथ-भ्रम से मुक्त नहीं हैं और न ही वे इतने कल्पनाशील हैं कि वे उन लोगों की तरक्की में सहायक हो सकें जो समाज के निम्नतम स्तर पर हैं जैसे कि ये "दलित पिछड़े वर्ग"। वे केवल पिछड़े वर्गों के नाम पर आर्थिक तथा राजनीतिक शक्ति हथियाने में कुछ असन्तुष्ट उच्च जातियों के साथ होड़ लगा रहे हैं। यह एक मानसिक पथ-भ्रम है और यह किसी भी हलके में पैदा हो चाहे उच्च जातियों में, या "मध्यवर्ती पिछड़े वर्गों" में इसकी भरपूर निन्दा की जानी चाहिए।

पुरानी कहावत कि "यदि बड़ी मछली और छोटी मछली को एक साथ रखा जाए तो बड़ी मछली छोटी मछली को निगल जाएगी" आज भी भारत के जाति-प्रथा प्रधान समाज के सन्दर्भ में सटीक बैठती है। इसलिए इस बात को पूर्ण महत्व देते हुए यह ध्यान रखा जाना चाहिए कि जहां तक सम्भव हो सुरक्षा उपायों का लाभ सामयिक और तर्क-संगत रूप से पिछड़े वर्गों के सभी खण्डों तक पहुंचाया जाना चाहिए। मैं समझता हूं कि यह तभी हो सकता है जब गैर-बराबर लोगों के बीच लाभ प्राप्त करने की प्रतिस्पर्धा को रोका जाए और बराबरों के लोगों के बीच यह प्रतिस्पर्धा पैदा की जाए। इसलिए मेरा यह प्रस्ताव है कि सामान्य सूची को दो भागों में वर्गीकृत किया जाना चाहिए "क" और "ख"। "क" के अन्तर्गत वे वर्ग रखे जाने चाहिए जिनका उल्लेख मैंने "दलित पिछड़े वर्ग" के तौर पर किया है और शेष समुदायों को "ख" सूची में रखा जाए और उन समुदायों को "मध्यवर्ती पिछड़े वर्ग" का नाम दिया जाए। राज्यों और संघ शासित क्षेत्रों के सन्दर्भ में "दलित पिछड़े वर्ग" की सूची अनुबन्ध II में दी गई है।

आरक्षण की मात्रा

जातीय तथा धार्मिक वर्गों के आधार पर भारतीय जनसंख्या का प्रतिशत वितरण मुख्य रिपोर्ट के मजमून में ही दे दिया गया है उसमें यह देखा गया है कि गैर-हिन्दू समुदायों सहित अन्य पिछड़े वर्गों की जनसंख्या प्रतिशतता 52 निकाली गई है। यह भी देखा गया है कि हिन्दू पिछड़ी जातियों/वर्गों की जनसंख्या प्रतिशतता 43.70 है जबकि गैर-हिन्दू समुदायों की प्रतिशतता 8.40 है। अन्य पिछड़े वर्गों को "मध्यवर्ती पिछड़े वर्गों" और "दलित पिछड़े वर्गों" में वर्गीकृत करने के बाद भारतीय जनसंख्या के प्रतिशत वितरण का एक नया विवरण तैयार किया गया है जो कि अनुबन्ध I में दिया गया है।

उसमें यह भी देखा गया है कि "दलित पिछड़े वर्गों" की प्रतिशत संख्या 25.56 है और "मध्यवर्ती पिछड़े वर्गों" की प्रतिशत जनसंख्या 26.44 है। निश्चय ही यह आसानी से माना जा सकता है कि जनसंख्या की दृष्टि से ये दोनों वर्ग, एक दूसरे के बराबर हैं। काफी चर्चा के बाद जिससे मैं पूरी तरह सहमत हूं। आयोग ने केन्द्रीय सरकार के अन्तर्गत सभी सेवाओं के लिए 27 प्रतिशत तक के आरक्षणों की सिफारिश की है। आयोग ने यह भी सिफारिश की है कि केन्द्रीय तथा राज्य सरकारों द्वारा चलाई जाने वाली सभी वैज्ञानिक, तकनीकी और व्यावसायिक संस्थाओं में स्थान आरक्षित किए जाने चाहिए और उनमें भी आरक्षण की मात्रा वही होनी चाहिए जो कि लोक सेवाओं में अर्थात् 27 प्रतिशत।

जैसाकि उपयुक्त भी है और इस तथ्य को ध्यान में रखते हुए कि पिछड़ेपन के मामलों में "दलित पिछड़े वर्गों" की तुलना अनुसूचित जातियों तथा अनुसूचित जनजातियों से की जा सकती है, मैं उपर्युक्त लोक सेवाओं तथा शैक्षिक संस्थाओं दोनों में 27 प्रतिशत में से उनके लिए 15 प्रतिशत के आरक्षण की सिफारिश करता हूं। शेष रियायतों के लिए उन्हें अनुसूचित जातियों/अनुसूचित जनजातियों के समकक्ष माना जाना चाहिए। मैं राजनीतिक आरक्षण की सिफारिश नहीं करूंगा। अलबत्ता मैं उनसे यह अनुरोध करूंगा कि वे मिलकर संगठित हों। ऐसा करने से उन्हें कुछ खोना नहीं पड़ेगा बल्कि वे युगों पुरानी सामाजिक, आर्थिक और राजनैतिक हीनता की जंजीरों से मुक्त हो जायेंगे। किसी के प्रति घृणाभाव न रखना और सबके प्रति प्रेम तथा स्नेह रखना उनका आदर्श वाक्य होना चाहिए। उन्हें यह पहचान लेना चाहिए कि उनके सामाजिक पिछड़ेपन के विरुद्ध युद्ध का एक महत्वपूर्ण हिस्सा उनके अपने मन में अपनी मुक्ति के लिए लड़ा जाना है। किन्तु इसके साथ-साथ हमारे देश के शासनकर्ता विशिष्ट वर्ग के लिए चेतावनी के तौर पर मैं यह कहूंगा कि तब तक समानतावादी समाज की स्थापना नहीं हो सकती जब तक कि दलित वर्गों को उनके बराबर आने के योग्य नहीं बना दिया जाता। इसलिए उन्हें पिछड़े वर्गों के लिए किसी आरक्षण के विरुद्ध आन्दोलन नहीं करना चाहिए और यदि वे ऐसा करेंगे तो इसमें उनका अपना विनाश निहित है और राष्ट्र का भी।

मैं इस बात से अच्छी तरह से अवगत हूं कि आयोग में मुझे शामिल किए जाने के लिए मुख्यतः आयोग के अध्यक्ष श्री बी० पी० मण्डल जिम्मेदार हैं। मैं उनके प्रति कृतज्ञ हूं। उन्होंने मुझे जो प्रोत्साहन प्रदान किया और मेरे प्रति जो अपार कृपा दिखाई उसे मैं हमेशा मन में संजोए रहूंगा। मैं अपने अन्य माननीय तथा प्रतिष्ठित सहयोगियों के प्रति भी उनके सहयोग के लिए कृतज्ञ हूं।

मैं उस अमूल्य सहयोग तथा सहायता का भी उल्लेख करना चाहूंगा जो मुझे डा० एस० भीमप्पा, शल्य चिकित्सा प्रोफेसर, बंगलौर मैडिकल कालेज, बंगलौर (कर्नाटक) ने पूरे भारतवर्ष में "दलित पिछड़े वर्गों" को पहचानने में और उनकी जनसंख्या के आंकड़े निकालने में प्रदान की। दलित वर्ग की समस्याओं को गहराई से समझने में उन्होंने अतिरिक्त अभिरुचि दिखाई है। आयोग को इस विषय पर उनकी विशेषज्ञ सलाह अत्यन्त प्रशंसनीय है।

मैं सभी राज्यों और संघ शासित क्षेत्रों से सहयोजित सभी सदस्यों के प्रति भी उनके सहयोग तथा परामर्श के लिए कृतज्ञ हूं।

हस्ता०
(एस० आर० नायक)

अनुबन्ध I

अनुबन्ध-I

जाति और धार्मिक वर्गों के आधार पर भारतीय जनसंख्या का प्रतिशत वितरण

क्रम सं०	वर्ग का नाम	कुल जनसंख्या की प्रतिशतता	
1. अनुसूचित जाति और अनुसूचित जनजाति			
क–1	अनुसूचित जाति . .	15.05	
क–2	अनुसूचित जनजाति . .	7.51	
	"क" का जोड़ . .	22.56	
2. गैर-हिन्दू समुदाय, धार्मिक वर्ग आदि			
ख–1	मुसलमान (अनुसूचित जनजातियों के अतिरिक्त) . . .	11.19	(0.02)*
ख–2	ईसाई (अनुसूचित जनजातियों के अतिरिक्त) . . .	2.16	(0.44)*
ख–3	सिक्ख (अनुसूचित जाति/अनुसूचित जनजातियों के अतिरिक्त) . .	1.67	(0.22)*
ख–4	बौद्ध धर्मी (अनुसूचित जनजातियों के अतिरिक्त) . . .	0.67	(0.03)*
ख–5	जैन	0.47	
	"ख" का जोड़ . .	16.16	
3. उच्चत हिन्दू जातियां और समुदाय			
ग–1	ब्राह्मण (भूमिहरों को शामिल करके)	5.52	
ग–2	राजपूत . . .	3.90	
ग–3	मराठे . . .	2.21	
ग–4	जाट	1.00	
ग–5	वैश्य—बनिए आदि . .	1.88	
ग–6	कायस्थ . .	1.07	
ग–7	अन्य उच्चत हिन्दू/जातियां/वर्ग .	2.00	
	"ग" का जोड़ . .	17.58	
	"क", "ख" और "ग" का जोड़	56.30	
4. पिछड़ी हिन्दू जातियां और समुदाय			
घ	शेष हिन्दू जातियां/वर्ग जो दलित पिछड़े वर्गों में आते हैं	43.70	
5. गैर-हिन्दू पिछड़े समुदाय			
ङ	खण्ड "ख" के अन्तर्गत आने वाले धार्मिक वर्गों का 52 प्रतिशत भी दलित पिछड़े वर्गों में माना जाए	8.40	

क्रम सं०	वर्ग का नाम	कुल जनसंख्या की प्रतिशतता
च	गैर-हिन्दू समुदायों को शामिल करते हुए दलित पिछड़े वर्गों को हासिल की गई लगभग जनसंख्या	52 प्रतिशत ("घ" और "ङ" का जोड़ पूर्णांकित)

विशेष ध्यान दें :—

यह प्रस्तावित किया गया है कि क्रम संख्या "घ" और "ङ" में उल्लिखित दलित पिछड़े वर्गों की जनसंख्या की प्रतिशतता नीचे बताए गए अनुसार विभाजित की जाए :—

(क) "मध्यवर्गी पिछड़े वर्गों" की जनसंख्या की प्रतिशतता,

(ख) "दलित पिछड़े वर्गों" की जनसंख्या की प्रतिशतता ।

6. गैर-हिन्दू समुदायों को शामिल करते हुए "मध्यवर्ती पिछड़ा वर्ग"		
छ–1	मराठे और जाटों के अतिरिक्त जमींदार और कृषक जातियां और समुदाय .	6.40
छ–2	विक्रेता बागवान . .	2.06
छ–3	पशुचारी जातियां, जिनमें चरवाहे, दस्तकार शामिल नहीं हैं जैसे :— .	2.50
छ–4	(क) विश्वकर्मी . .	2.10
छ–5	(ख) दर्जी तथा रंगरेज . .	0.18
छ–6	(ग) जुलाहे . . .	1.40
छ–7	(घ) कुम्हार . . .	1.10
छ–8	छोटे-मोटे व्यापार एवं कृषि जातियां	0.50
छ–9	तेली . . .	1.40
छ–10	राजपूतों के अलावा योद्धा . .	1.80
छ–11	घोषणा कार्य करने वाले . .	0.10
छ–12	मन्दिरों में सेवा करने वाले और ज्योतिषी . . .	0.10
छ–13	गैर-हिन्दु समुदाय जिसमें मेहतर, मुसलमान, भूतपूर्व अपराधी जनजातियां, मुसलमान बंजारा जनजातियां और मुसलमान गड़रिये शामिल नहीं हैं .	6.80
	"छ" का जोड़ . .	26.44
ज	"मध्यवर्ती पिछड़े वर्गों"† गैर-हिन्दू पिछड़े समुदायों की जनसंख्या की प्रतिशतता . . .	26.44
झ	"दलित पिछड़े वर्गों" की जनसंख्या की प्रतिशतता अर्थात् "च" ऋण "ज" .	25.56†

*कोष्ठक में दिए गए आंकड़े इन गैर-हिन्दू समुदायों में अनुसूचित जाति/अनुसूचित जनजाति की जनसंख्या को दिखाते हैं ।

†संगणना से प्राप्त आंकड़े ।

सामान्य हिन्दी

अनुच्छेद लेखन ४५

पत्र लेखन ५२

संक्षेपण ६१

पल्लवन ६८

निबंध लेखन ७४

विज्ञापन लेखन ८३

प्रतिवेदन लेखन ८९

कार्यालयी हिन्दी ९६

शब्द-शुद्धि १०२

वाक्य-शुद्धि ११०

मुहावरे और लोकोक्तियाँ १२४

पर्यायवाची शब्द १३१

विलोम शब्द १३८

समास १४५

संधि १५२

उपसर्ग और प्रत्यय १५९

रस १६६

छंद १७३

अलंकार १८०

काव्य-गुण १८७

काव्य-दोष १९४

शब्द-शक्ति २०१

वृत्ति २०८

रीति २१५

गद्य-विधाएँ २२२

पद्य-विधाएँ २२९

चंपू काव्य २३६

नाटक २४३

एकांकी २५०

उपन्यास २५७

कहानी २६४

आलोचना २७१

निबंध २७८

रेखाचित्र २८५

संस्मरण २९२

जीवनी २९९

आत्मकथा ३०६

यात्रा-वृत्तांत ३१३

रिपोर्ताज ३२०

साक्षात्कार ३२७

डायरी ३३४

पत्रकारिता ३४१

समाचार लेखन ३४८

संपादकीय लेखन ३५५

फीचर लेखन ३६२

स्तंभ लेखन ३६९

समीक्षा ३७६

पुस्तक समीक्षा ३८३

फिल्म समीक्षा ३९०

नाट्य समीक्षा ३९७

कला समीक्षा ४०४

संगीत समीक्षा ४११

खेल समाचार ४१८

मौसम समाचार ४२५

बाज़ार भाव ४३२

विज्ञान लेखन ४३९

तकनीकी लेखन ४४६

पर्यावरण लेखन ४५३

स्वास्थ्य लेखन ४६०

कृषि लेखन ४६७

उपभोक्ता लेखन ४७४

सरकारी योजनाएँ ४८१

चुनाव लेखन ४८८

अपराध लेखन ४९५

न्यायालय लेखन ५०२

संसद लेखन ५०९

विदेश लेखन ५१६

खेल-कूद लेखन ५२३

मनोरंजन लेखन ५३०

फैशन लेखन ५३७

पाक-कला लेखन ५४४

पर्यटन लेखन ५५१

धर्म लेखन ५५८

दर्शन लेखन ५६५

इतिहास लेखन ५७२

भूगोल लेखन ५७९

अर्थशास्त्र लेखन ५८६

समाजशास्त्र लेखन ५९३

मनोविज्ञान लेखन ६००

शिक्षा लेखन ६०७

बाल साहित्य ६१४

युवा साहित्य ६२१

महिला लेखन ६२८

दलित लेखन ६३५

आदिवासी लेखन ६४२

प्रवासी लेखन ६४९

अनुवाद ६५६

शब्दकोश ६६३

वर्तनी ६७०

विराम चिह्न ६७७

लिंग ६८४

वचन ६९१

कारक ६९८

सर्वनाम ७०५

क्रिया ७१२

विशेषण ७१९

क्रिया-विशेषण ७२६

अव्यय ७३३

वाच्य ७४०

काल ७४७

अभ्यास-प्रश्न ७५४

उत्तर-कुंजी ७६१

अनुबन्ध II

अखिल पिछड़े वर्गों की राज्यवार सूचियां

अनुबन्ध II

दलित पिछड़े वर्गों की राज्यवार सूचियां

आन्ध्र प्रदेश

क्रम सं०	दलित पिछड़े वर्गों के नाम
1.	अथूकतलवंडलु
2.	आदि कर्नाटक
3.	आर्यक्षत्रिय, चिसारी चित्रकार, गिनियार, नाखा
4.	बन्दारा
5.	बलसधु, बहुरूपी
6.	बांदा
7.	बन्दारा
8.	बचिनी
9.	बट्टाड़
10.	बेगारी
11.	बेल्लाड़
12.	बेस्त अनिकली, जेलारे, वडे-बालाजी, नय्यालु, अग्नि कुल क्षत्रिय पल्ली गगपुत्र, गुंडाला, पर्वत राजकुलम, गंगतार
13.	भमता
14.	भट्टडस---बोडो भोट्टड़, मुरिया भट्टड़ और सानो भोट्टड़
15.	बिस्सोई---बारंगी जोड़िया, बन्तांगी, दावुदा, गोडो जोडिया, होल्लड़, झेरिया कोल्लाई, कोंडे, परंगा, परगाजोड़िया, परंगी, ताकोरा
16.	बोया, बाल्मीकि
17.	बड़लुक्कल
18.	बडबुक्क
19.	बुक्का
20.	बरबूक
21.	चकाला, चावला, खोखी, रजक, धकाली वन्नार
22.	चोपेमारी
23.	छत्री---अग्निकुल क्षत्रिय बोम्बिली
24.	चेरुमन
25.	चिताला
26.	दामला
27.	दासरी
28.	दासरी (डोंगा और गुडु)
29.	धक्काड़ा
30.	धेर
31.	डोम्मर
32.	डोम्बो
33.	डोम---आंध्रिया डोम, औडिनिया डोम, घोनल डोम, क्रिश्चियन डोम, निगोनी डोम, ओरिया डोम, पोनका डोम, तेलगा डोम, उमिया डोम
34.	डोंगायत
35.	डोमार
36.	गंगानि
37.	गरोडी
38.	गोडाबा
38-क	गोवारा

क्र० सं०	दलित पिछड़े वर्गों के नाम
39.	गोडाला
40.	गोंदास---बादो (भिरिया) युधोकुरिया, हब, जाटको और जोरिया
41.	गुडाला
42.	हसला
43.	इरुला
44.	जोगी
44-क	जोशी नादिवला
45.	कावन
46.	कैकड़ी (या कोराचा या कोरवन)
47.	कल्लाडी, कलवर
48.	कनक्कण
49.	कन्द्रा
50.	कनियण
51.	कंजर
52.	कंजर---भट्ट
53.	कम्मारे अथवा रेड्डिक
54.	कंपूमारास
55.	करीमपलन
56.	कटिपमुला
57.	कोरग
58.	खोंड
59.	कोची
60.	कोडालो
61.	कोंड़ (कुई)
62.	कूसा
63.	कोटा
64.	कोटि
65.	कृष्णबालिजा (दासरी बुक्क)
66.	कुडिया
67.	कुदुबी
68.	कडुम्बन
69.	कुरकुला
70.	कुरवन
71.	कुरिच्छन
72.	माद्री
72-क	गंडुसा
73.	मैला
74.	मालासार
75.	मोंड़ी पट्टा
76.	माली (उन इलाकों को छोड़कर जहां इन्हें अनुसूचित जनजाति के अन्तर्गत माना जाता है)
77.	माली---करचिया माली, पैको माली तथा पेडा माली
77-क	मोगल

क्र० सं०	दलित पिछड़े वर्गों के नाम
8.	मदारी अथवा महेन्द्र
9.	मोगर
0.	गोंडीवार
1.	मोंडीवाक, मोंडीबंडा बंडा
2.	मनुला
3.	मुलिया
4.	मुरिया
5.	नाग बड्डिलु
6.	नायक
7.	नायकप्पु
8.	नक्कलास
9.	नायादि
0.	नीलकंठी
1.	नेय्याला
2.	न्हावी
3.	निषि—फारीस
4.	नोक्कर
5.	नोलकेयव
6.	नोल्ली
7.	ओड्डर (अथवा वेड्डर)
8.	ओड्ड, ओड्डर, वड्डे, ओड्डिलु, वड्डी, वड्डे
9.	ओमनेटो
0	पच भोतला
1.	पचबोतला
2.	पदमपारी
3.	पगाडई
4.	पैगरपू
5.	पैथा
6.	पलकारी
7.	पल्लन
8.	पम्बाला
9.	पामुला
0.	पानन
1.	पनियन
2.	पन्नीयान्दी
3.	परेयन
4.	पर्धी (निरशीकारी)
5.	पारावन
6.	पेरिका
7.	पारीकी मुग्गुल

क्र० सं०	दलित पिछड़े वर्गों के नाम
118.	पासी
118-क	पोंडारा
119.	पेटियास
120.	पिचारिस
121.	पिटाचिमुंटला
122.	पोलिगर
123.	पोरोजा—बाडो, पेरोजा और सोडिया, ओडिया, पेरोजा, परैय पेरोजा और सोनो पोरोजा
124.	पुसाला
125.	पुलायन
126.	पुथिराज वन्नन
127.	रचकोया
128.	रानेयर
129.	राउतो
130.	साम्रोरा
131.	सपारी
132.	सारे
133.	सेनातल
134.	शोलागा
135.	शोलागर
136.	सिंधोर
137.	सिंगलु
138.	सोरे
139.	सुन्ना
140.	तलेयारी
141.	थोट्टियां नायक
142.	थोवा
143.	अपर, सागर
144.	वल्लुवन
145.	वाल्मीकि
146.	वाल्मीकि बोया (बोया, बेदार, किरातक, निषादी, येल्लपि पेद्दा बोया) तलयारी तथा चूंडू वल्लु
147.	थोगरा, भोल्ला, बालिया
148.	वड्डर—बेवी, उप्परिलु
149.	वेट्टुवन
150.	वड्डर अथवा कला वड्डर अथवा पतरोड
151.	वाडला
152.	युरुलेऊ
153.	यरस
154.	यत
155.	येतला

दलित पिछड़े वर्गों की सूची

असम

क्र० सं०	दलित पिछड़े वर्गों के नाम
1.	बरजुबी
2.	बरिया
3.	भूमिज
4.	भूयन
5.	चोडंग
6.	चुटिया, चुटिया
7.	धमाई
8.	घटुआर
9.	घोर
10.	कंडाल
11.	कर्मी
12.	मारिया
13.	मोरल, माटक
14.	मुरबी
15.	मुंडा
16.	मुरा
17.	नाई, बिज, हज्जाम, नापित
18.	नोनिया, नूनिया
19.	ओराओं
20.	संथाल, संटाल
21.	सूद्र दास, डे
22.	सुत, सूत
23.	तिपारा, तिपेरा
24.	आर्य माला
25.	असुर
26.	बैगा
27.	बैंजारा
28.	बासोर
29.	बांसफोर
30.	बाउरी
31.	बेडिया
32.	बेलदार
33.	भारैक
34.	भील
35.	भोकला
36.	भूमिज
37.	भूयन
38.	बिनजिया
39.	बिरहोर
40.	बिरजिया
41.	बोंडो
42.	चौरी
43.	चमार
44.	चेरे
45.	चिक बनिक
46.	दांदरी
47.	दांदसी
48.	धनवार
49.	दूसद
50.	गांदा
51.	घनसी
52.	घटोवर
53.	गोंडा
54.	गोंड
55.	गौरैत
56.	हरि
57.	होलरा
58.	कलाहन्दी
59.	कालिहन्दी
60.	कर्मली
61.	कशन
62.	कवर
63.	केओट
64.	खारिया
65.	खेरवर
66.	खोडल
67.	खोंड
68.	खोनयोर
69.	कोहोर
70.	कोल
71.	कोंडपन
72.	कोरमाकर
73.	कोरवा
74.	कोतवाल
75.	कोया
76.	मदारी
77.	माहली
78.	मजवार
79.	माल पहाडिया
80.	मानकी
81.	मिरधर
82.	मोहली
83.	मुंडा
84.	नागासिया

क्र० सं०	दलित पिछड़े वर्गों के नाम
85.	नाथ
86.	ओरांओ
87.	पैदी
88.	पनिका
89.	पन्स
90.	परजा

क्र० सं०	दलित पिछड़े वर्गों के नाम
91.	पासी
92.	सहोरा
93.	संथाल
94.	सेवरा
95.	तौसा
96.	तुरि

दलित पिछड़े वर्गों की सूची

बिहार

क्र० सं०	दलित पिछड़े वर्गों के नाम
1.	अब्दल
2.	अगारिया
3.	अधीरी
4.	अमात
5.	बागडो
6.	बाजीगर
7.	बनपार
8.	बंगालो
9.	बारी
10.	बरफोर
11.	बेखादा
12.	बेलदार, बचगोत्रा, सपेरा
13.	बेल्दिया
14.	बंटकार
15.	भड़
16.	भड़बुजा
17.	भूईहर, भूथ्यार, भूभालिय
18.	भिंद
19.	बिलजिना
20.	चन्द्रबंशी (कहार)
21.	चैन, चाइन
22.	चानऊ
23.	चपोता
24.	चटवाल
25.	देवहर
26.	धामिन
27.	धनकार
28.	धनवार
29.	धारी
30.	धेकारु
31.	धेहा
32	धीमर
33.	धुनिया धुमियन
34.	गडाबा
35.	गंधर्व
36.	घुटवार
37.	घुसुरिया
38.	गोडो (छायो), गोदी
39.	गोडरा
40.	गोसरवा
41.	गोनरहु, गोरहु, गोध, गोथाहुम
42.	गौड
43	गल्गालिया
44.	इरिका
45.	जादुप
46.	जोगी, जोगो, जुगी
47.	जुआंग
48.	कबाड़ी
49.	केदार
50.	कहार, चन्द्रबोराई, छत्रपति, छोत्रा-बंसी, रामानी, सरवानी पनेरी
51.	कलवर
52.	कामकार
53.	कान्द्रा
54.	कापडिया
55.	करवलनत
56.	कंवर
57.	केला
58.	कील
59.	खडवार
60.	खानगार
61.	खैतिक
62.	कोलि
63.	कोरकु
64.	कुमारभाग पहाड़िया
65.	कंजर, धारा
66	क्रितिरिया
67.	लालबेगी, भंगी (मुसलमान)
68.	मादर
69.	माहुरिया
70.	मझवार
71.	मल्लार (मल्होर)
72.	माली (मालाकार)
73.	मल्लाह, बिरहा, गोयत्री, घटवेल, जलवार, केवट, कुरवाहा, महेता, मांझी, मुरियोनी, मसूरिया, फुटंट, पुरहिया, निसाद, धोषी, धीवर, झिवार, झीमर
74.	मंगन
75.	मांगर (मागर)
76.	मार्कांडे
77.	मारवाडी बोरिया
88.	मोरियारो
79.	नामशूद्र
80	नोनिया, खरवत, नूनिया
81.	पाहिरा
82.	पाल (भेरिहार---गादेरी)
83.	परया

क्र० सं०	दलित पिछड़े वर्गों के नाम
84.	पाथेरकूट, बाखिगोलिया
85.	पटवा
86.	पिंगानिया
87.	राजधोबी
88.	रंगवा
89.	संगतराश
90.	सौता (सोता)

क्र० सं०	दलित पिछड़े वर्गों के नाम
91.	सोइर, सोयर
92.	सनरी
93.	तमारिया
94.	थारु
95.	थाथेरा
96.	तियार
97.	तुरहा, साभो

दलित पिछड़े वर्गों की सूची

गुजरात

क्र० सं०	दलित पिछड़े वर्गों के नाम
1.	अडोडिया
2.	अगरी
3.	बंजारा, वंजारा, चरन बनजारा, मथुरा बनजारा, मारु बंजारा, बगोरा बंजारा, कंगाशिया बंजारा, बामनिया बंजारा, गवारिया, गवालिया, रोहिदास बंजारा,
4.	बारोट, वाहिवंचा, चरन गाधवी
5.	बुरुड
6.	बावरी अथवा बाघोरी
7.	भालिया
8.	भामता, परदेशी भामता
9.	भारवाड (अलेच बारादा और गिर वनों के नेसों को छोड़कर)
10.	भोय, भोयराज, छीमर, जिमभोय, केवट, भोय, भनारा भोय, मच्छिन्द्र भोय, पालेवार भोय, किरात भोय, केहार भोय, परदेश भोय, श्रीमाली भोय
11.	चक्रवाड़या दासार
12.	चुवालिया कोली
13.	छारा, अडोडिया, संसी
14.	छुनारा
15.	डाबगार
16.	डेकालेरु
17.	धोबी
18.	दिवाचाकोली
19.	घंटिया
20.	हिंगोरा
21.	कलबोडिया
22.	कंभासिया
23.	फेकडी
24.	खाटे
25.	खरवा ,भाडेला
26.	खातिक
27.	कोटावाल अथवा कोटावालिया
28.	महरावत, गोटि, हुडकाशी, जोड, झिंगो, पल्या शतवाई, वामन
29.	माची, भारिभरतभरा, भरतभरा, चमड़िया चांडलिया, दसानिया, जनसाली, जिगर, मियंगर सोनारी, विसवानिया।
30.	मच्छी (हिन्दु), बिटना, धीमर, धीवर, कहार, खसास, खलासी, खरवास, मांगेला सारंग, तंदेल
31.	मदारी, भरतहारि नाथ
32.	मे अथवा मेटा
33.	मेना (भील)

क्र० सं०	दलित पिछड़े वर्गों के नाम
34.	मेर
35.	नट, नट-बजानिया, नटडा, बाजीगर
36.	ओड
37.	पधर
38.	पारधी (कच्छ जिले को शामिल न करते हुए)
39.	पारधी अदविचींचर (अमरेली, भावनगर, जामनगर, जूनागढ़, कच्छ, राजकोट, सुरेन्द्र नगर के जिलों में)
40.	रबारी, सोरठिया चारालिया, चर्मता, लूनी, कुशार, हांक, मुच्छल काडियाकुंभार (अलेज, बारादा और गिर वनों के नेसों को छोड़कर)
41.	राठोडिया
42.	रावल रावलिया, जाति अथवा रावल योगी रावल जाति, जगारिया पादत, रावर रावलिया
43.	रोहित
44.	सलात
45.	संधेड़ा
46.	संसी
47.	सरानिया
48.	सरगारा
49.	शिकलीगर
50.	सुमरा
51.	तालाबिया
52.	ताहकर
53.	तरगला, भाविया, भोजाई, नायक
54.	ठाकारोआ, बरिया, धराला, पाटनवाडिया, ठकोर
55.	वाधरी-गामिचो, वेदवा चुरालिया, जाखुदिया (कच्छ जिले को छोड़कर)
56.	हरिजन वंकट के वाहिवंचा चरन गाधवी और चमार
57.	वाला
58.	वालंद और नाई (हिन्दु), हज्जाम, खलीफा (मुसलमान)
59.	वंस-फोडा, बंसफोडिया अथवा वंजा
60.	वाडवा वाधारी
61.	वाधारी, वातानिया, वाधारी, वोडु वाधारी तलपदा, वाधारी गामाचिया, गोडाडिया वाधारी, चिभाडिया वाधारी, मोरावाड वाधरी

हस्ता०/-
(एल० आर० नायक)
सदस्य, पिछड़ा वर्ग आयोग

दलित पिछड़े वर्गों की सूची

हरियाणा

क्रम सं०	दलित पिछड़े वर्गों के नाम
1.	अहेरिया, अहीरिया, हेरी, अहेरी, नायक, थोरी, तुरि
2.	बगारिया
3.	बंजारा, बंजारा, ग्वार, बादी
4.	बारा, बेरा
5.	बर्मा
6.	बरवार
7.	बट्टेरा
8.	बेरिया
9.	बेटा, हेराई, अथवा हेसी
10.	भड़बूजा, भड़भुंजा, कलावेरा
11.	चूरिमा
12.	डाकौट, डाकोट, ज्योतिषी
13.	दाओली, दाओला
14.	धनवार
15.	दिल्बीपुरिया
16.	धीमर, मल्लाह, कश्यप राजपूत
17.	धोबी, बाथम, चौहान-भट्टी, खुदोनिया, मोनसोन, रोजपार तंवर
18.	धोसाली, दोसाली
19.	गडरिया, बघेला, बरेला, बियार, बिलरा हिरनवाल, कलनलिया, पडनोवाल, पाल, शिविया
20.	गद्दी
21.	घासी, घसियारा, घासा
22.	घिरथ, घिरथ
23.	गोडरी
24.	गोरखा
25.	मारनी
26.	झीमर, अतलास, बिदरान, बीड़ा, भिनवार, दुग्लान, डोरा, धिवा, झेवार, झीवार, जोमर, कहार, किरनाल, लमसार, अलड़ी, राधप, ताला
27.	केहल
28.	खंधेरा
29.	लबाना
30.	लाली
31.	मदारी
32.	माधिया
33.	मीना, मिना
34.	मिरासी
35.	मोची
36.	नार
37.	नूनगर, नुनगर
38.	रचबंद
39.	रेहाड़, रोहाड़ा, रिहार, रेस
40.	शोरगिर

दलित पिछड़े वर्गों की सूची

हिमाचल प्रदेश

क्रम सं०	दलित पिछड़े वर्गों के नाम
1.	अहेरिया, अहेरी, हेरि, नायक, थोरी, तुरि
2.	अर्द-पोप
3.	बढ़ी, चिसोरा, मेलोरी, ओडमाटा, उरमामारा
4.	बगरिया
5.	बाजीगर
6.	बहती
7.	बदिया
8.	बटेरहा
9.	बेड़ा
10.	बेटा, हेंसी, होसी
11.	भड़भुंजा, भड़बूजा
12.	भहालिया
13.	चंग, चहूंग
14.	चंगर
15.	चेलोपा
16.	धीमर, धीवर, धींवर, झीवर, झींवर, कहार मल्लाह, कश्योप राजपूत
17.	धोसाली सोसल
18.	गद्दी (उन क्षेत्रों को छोड़कर जहां इन्हें अनुसूचित जाति के रूप में विनिर्दिष्ट किया गया है)
19.	गडरिया
20.	घास्सी, घसियारा, घोसी
21.	गोडरी
22.	गुमटियन
23.	हर्नि
24.	कहार
25.	कंधेरा
26.	केहाल
27.	कोलागा
28.	लबाना
29.	लल्ली
30.	मदारी
31.	मुसलमान बनजारा, मुसलमान गूजर
32.	मेहरा
33.	मिरासी
34.	सुरेरा
35.	थाविन

दलित पिछड़े वर्गों की सूची

जम्मू और कश्मीर

क्र० सं०	दलित पिछड़े वर्गों के नाम
1.	बेकेवाल, बक्करवाल
2.	बादिया
3.	बाजीगर
4.	भांड
5.	भंगी, खोकरोब (मेहतर) (अनुसूचित जाति में उल्लिखित को शामिल न करते हुए)
6.	बाराद
7.	बंजारा, बादी, लोबाना
8.	बंगाला
9.	भरंजा
10.	धेबा
11.	धोबी (कपड़े धोनेवाला)
12.	डूम, डूमा गनाई धुसब (अनुसूचित जाति में उल्लिखित को शामिल न करते हुए)
13.	डोसाली
14.	ढोलवाला
15.	फिशरमेन (मछियारा)
16.	गद्दी
17.	गौढोला
18.	गुर्जमार
19.	हंगी (मांझी किश्तीवाले और नाव खेने वाला वर्ग, जिसमें हाउस बोट के स्वामी शामिल नहीं हैं)
20.	हिल्का राज (मेसन)
21.	झीयर
22.	खोली
23.	लाली
24.	मदारी
25.	माहीगीर
26.	मल्यार
27.	मीर
28.	मिरासी
29.	मोची, सराज
30.	पारा
31.	पिरना
32.	संसी
33.	शिप्री बत्तल (अनुसूचित जाति में उल्लिखित को शामिल न करते हुए)
34.	सपेरा
35.	सिकलीगर
36.	संगतराश
37.	सुरिमार
38.	यश्कुन
39.	धेहा
40.	गूर्जमार

क्रम संख्या	दलित पिछड़े वर्गों के नाम
1.	अडिय (कूर्ग जिले को शामिल न करते हुए)
2.	अगस, मडिवाल, सकल सकलवडु, शाकल, वन्नन मन्नन, धोबी, परित, रजक, पुथिराजवन्नन, वेल्लुथेदन
3.	अघोरे, करकरमुंडा
4.	अरनादन
5.	अरुथूथियर
6.	अतार
7.	अतारि
8.	अडग
9.	बागलू
10.	बगाटा
11.	बैरना
12.	बैलावतर, बेलाप्तर, बिकाप्तर
13.	बजानिया, बाजोनिया
14.	बुकट्टा
15.	बालसंतोषी
16.	बन्ट (बेलगाव, बिजापुर, धारवाड़ और उत्तर कनारा जिलों को शामिल न करते हुए)
17.	बन्तु
18.	बरदा
19.	बरलूर
20.	बधाई, बट्टल, बटलर, बट्टर
21.	बथिनी
22.	बट्टड
33.	बवुरी
24.	बौतर
25.	बसीगर
26.	बेड़ा, बेडरू, बेडर, बेडरनायक बेडर नायका, नायक-मक्कलु नायकवार, पालेगार, तलवार, बाल्मीकि, बाल्मीकि-मक्कलु, बोया, बेदन, बेरद, रामोशी
27.	बागड़ी, ब्यागरी
28.	बेल्लर
29.	बेरिया
30.	बेस्त, गंगमत, गंग-पुत्र भोई, परिवार, कबुबेरा, कबुबलोगर, बारीकी, बारीकर मोगावेरा, बेस्थर, बंदे, बेस्थर गंग-मक्कलु गोरी मत, अम्बिगा, अम्बिग, सखी, भोई, बोई, धोरेय, हरकांत्र, कहार, मीनगार, सुक्षगार, कोली, गाबित, दावत, कनेत,
31.	भामता, भाम्पता, परदेशी, भाम्पता टाकरी, उच्छिलियन राजपूत, भाम्पता
32.	भावोत, महराज, भटराजू
33.	भरदी, भरागी
34.	भोट्टदास बोटो भट्टड, मुरिया भोट्टड, सानो भट्टड।
35.	भूमाओ-भूरी, भूमिया बोडो–भूमिया
36.	बिनपत्ता
37.	बिन्दिली
38.	बिगी
39.	बिस्से, बरंगी जोडिया, बेन्नगी, दाबुस, फंगी, बोल्लार, थोरिया, कोल्लल, कोंडे परंगा, पंक जोडिया, सोडो और टकोरा
40.	बोगड़-बागड़ी, बागोडी, बागाडी, बागड़ी, बागोडी
41.	बुडबुडकी, बुडबुडकला, देवारी
42.	चकवड्या दासर
43.	चित्तारा
44.	चित्रकथी–जोशी
45.	चित्र, चित्रकार
46.	चुहार अथवा चुहरा
47.	चपरबंध (मुसलमान)
48.	दंदासी
49.	डंग-दासर
50.	दासरी, देमारी
51.	धनका जिसमें ताडवी, ततारिया और वाल्वी शामिल है ।
52.	धरे
53.	धोडिया
54.	धोली
55.	दिग्वान, जिजर
56.	डोंबा, डोम्बर, डोंबा—प्रौडिया डोंबा–प्रौडिनिया डौंबा, क्रिश्चियन डोम्बा, चोनल डोम्बा—निर्गनी डोम्बा—प्रोरिया डोम्बा—पोनाका, डोम्बा, तेलग, डोम्ब
57.	डोंग यैरुकला
58.	डोंबीदासा
59.	दुरुग,–मुरुग, बरसरचल
60.	गडुव, गड़बबोड़ा, गडव-गरिलम, गडव—फूंजी, गडव जोडिया गडव ओलारो, गडव पंगी
61.	गंगनी
62.	गारूडी, गारूडिग, मोडिग, मोडिकार, मोडिकर
63.	गडी
64.	घंडसी, घडशी
65.	घासी, हड्डी, रेल्ली, साधंदी, बोडा, घासी और संधासिया
66.	घीसडी
67.	घोंडाली, गोंडालिग, धोंडाली, गोंडहल्ली
68.	गिड्डी, —बिडकी, पिंगले, पिंगाले
69.	गोडगली
70.	गोडारी
71.	गोगरा
72.	गोल्ल, हाबु गोल्ल, दुही गोल्ल, अडवी—गोल्ल, किशन गोल्ल, हंदी— गोल्ल
73	गोंडु—बाटो, मिरियय दुभो, कौरिया, बाटो जाटको तथा जोरिया
74.	गोंडली
75.	गोनिग

क्रम सं०	दलित पिछड़े वर्गों के नाम
76.	गुडिगर
77.	हलवक्की, वक्कल, ग्रामवक्कल, गाम–गौड, गवड़, करे वक्कल ग्रट्टे वक्कल, हलक्की—वक्कल (उत्तर कनारा जिला)
78.	हलेपाइक, दीवर, नामधारी बिल्लव, कलाल, कुमार पाइक
79.	हरनशिकारी, चिगरीबेटेगर, वाघरी, वागिरी, निरशीकारी, वागड़ी वाघोरी फासा, फासा—चर्द, वागरी
80.	हेल्व, हैलव, हेलव—मल्लर, हेलवंगोल्ल, हंदी–हेलव, हेल्वरू, पिट्चोसन्तला
81.	होन्नीवार
82.	हाउगर, हवागर, होवदिया
83.	जदापु
84.	जगले
85.	जातगर
86.	जावेरी जावरी
87.	जोगी, जोगर, संजोगी
88.	कादन
89.	कल्लोड
90.	कम्मार, कुंभार (जहां वे ग्रनुसूचित जनजाति के न हों)
91.	कंजर, कंजरी, कंजिर खनगटमट
92.	कानीसन
93.	कपूसारी
94.	करी कुडुम्बी
95.	करीम्पलन
96.	काशीकापी, काशी—कपाडी, तिरमली
97.	कटाबु, कटाबर
98.	कटिपोला
99.	कावड़ी
100.	केलकारी;— खेलकारी
101.	खिलाजैर, मराठी धानगर
102.	कोल्ला, कौल्लाह
103.	कोल्याट, कोल्यार्टिग
104.	कोमाकापू
105.	कोंडा धोरा, कोंढ देसाया, कौंद डोंगरिया, कोंढ कुट्टिया, कोड टिकिरिया, नोवका धोरा मल्ल-धोरा, मक्क धोरा
106.	कोंकन येनिति
107.	कुंची कोरवर, केदादि, कोरगर यर्कला एराकला, कुंची कोरवल, कोरम-सेट्टी, येरूकला
108.	कोटारी, कोट्टारी
109.	कोटिया, बर्तिका, बोंथ—ग्रोरिया, धुलिया, दुलिया होलव पैको पुतिया, सनरोना ग्रौर सिद्धो-पैको
110.	कोयव
111.	कुडुबी
112.	कुरूल कुरूग्रोरू, हालामठ
113.	कुडुबी कोई
114.	कुरिच्यन
115.	कुरूवर, कुरूव, कुरव, कुरुवा
116.	लाडार लाड, लाडारू, येलवार
117.	लिप्पारा
118.	महासारी
119.	मैद्यासी
120.	मालसी, कोचींमालसी, पैकोमाली ग्रौर पेड्डामाली
131.	मनीयानी, मुनीयानी

क्रम सं०	दलित पिछड़े वर्गों के नाम
122.	मिथा दैय्यलवार
123.	मांडीवार, मोंडीवारू
124.	मोडुवार, मुडुबन
125.	मेडा, मेडार, वुरुड
126.	मुलिया
127.	मुरिया
128.	नाट, नाटुवन
129.	नल्की
130.	नाइंदा, नयनज—क्षथरिया, हज्जाम, न्हावी, नाडिग, ग्रम्बट्टन मंगला कैलासी, क्षोरक, क्षोरिद, नावलिग नापित, भंडारी पन्निककन कवथियन
131.	नेलकनवरू
132.	ग्रोटारे
133.	पचभतला, पच बोतला
134.	पदमपारी
135.	पदार्ती
136.	पाडिया, पडियार
137.	पागडाई
138.	पैगरपु
139.	पैदा
140.	पाकी
141.	पलासी
142.	पामुला
144.	पनबास
145.	पन्नम्
146.	फासा, पंसा
147.	पनिका
148.	पत्ता, पत्रमेला
149.	पेंडिया
150.	पिचाटी
151.	पिचारी
152.	पिचासुन्टा, पिचिगुन्टला, पिचु ंटला
153.	पोमला
154	परजास, बोंडा, डारूवा, डिडुवा, मुंडिले, पेंगु, पुंडी, ग्रौर सालिय। पोरोजा बोडा—पोरोजा, सीडिया पोरोजा, जोडिया पोरोजा ग्रौर परंगा पोरोजा
155.	पोवार
156.	पुलयन
157.	पुल्लयन
158.	रावल, रावलिया, पाल
159.	रावत, राया, रेवात
160.	रैनुदास
161.	रेल्ली ग्रोरचंजी
162.	रोना
163.	साधुमट
164	संगारे
165.	संटाल
166.	सनियार
167.	संसी
168.	संसिया
169.	सारा
170.	सारे

क्रम सं०	दलित पिछड़े वर्गों के नाम
171.	सरोदी, सारदा
172.	सरानिया
173.	सतरकर
174.	सवारा, कापुसवारा कुट्टसवारा, मलिया सवारा
175.	सेम्मन
176.	शिगदेवार शिगडिया
177.	शिक्कलिगर
178.	शोलागर
179.	सोलिग
180.	सुन्ना सुन्नाई
181.	सुखा
182.	तक्बिरा
183.	तकंकर
184.	तलविया
185.	थोटिटय नायक
186.	थोटवडु
187.	तिलारी, तिराटे

क्रम सं०	दलित पिछड़े वर्गों के नाम
188.	तिमाली
189.	तिरूवल्लुवन
190.	तुरी
191.	उप्पलिग, उप्पार, उप्पलियन मन्न—उप्पर, गावंडी, गोंडी वेल्दर सगर धुनार, लोनारी, मेलू सक्करे, अगरी लामा
192.	वाढ़ी
193.	वाघरी
194.	वड्डु
195.	वलयार
196.	वल्वे
197.	वथिरियन
198.	विथोलिया
199.	यंडी
200.	येकलर, येकसार, येक्कली, इगलिका
201.	येरलू
202.	येरसोलवडोरयेल्ला, पामलवडा
203.	येनादिवाद

दलित पिछड़े वर्गों की सूची

केरल

क्रम संख्या	दलित पिछड़े वर्गों के नाम
1.	अगस
2.	अलवन
3.	अम्बलक्करन
4.	अरुप्पट्टन
5.	अम्बलर, अम्बयन अम्बिथन, इशावतरी, कलरीकुरुप, मरुथुवर, नायकन पंडियर विल्लकीयलनवी
6.	अरयन
7.	अरयवथिस
8.	अरेमहर्वी
9.	वडग
10.	बगट
11.	बैंडारी
12.	बरीकी
13.	बट्टड
14.	बावुरी
15.	भल्लव
16.	भोट्टड —कोडो–भोट्टड, मुरिया–भोट्टड, और सानो भोट्टड
17.	भूमिया—भूमिया और बोडो भूमिया
18.	बिस्सोई,—बरंगी, जोडिया, बेन्तनगी, बोल्लर, दादुवा, फ्रींगी ओरिया कोल्लाई, कोंडा प्रंगा, पोंगा, जोडिया, सोडो जोडिया और टाकोरा
19.	न्यागरी
20.	चचाडी
21.	चक्करवर
22.	चक्काला
23.	चालावडी
24.	चावलक्करन
25.	चेंचु
26.	डंडेसा
27.	डंडासी
28.	धीवर
29.	डोम, डोम्बर, पेंडा अथवा पानो
30.	डोम्बो
31.	डोम्ब—अंधिया, डोम्ब, ओडिनिया डोम्ब, चोनल डोम्ब, क्रिश्चियन डोम्ब, मिरगानी डोम्ब, ओरिया डोम्ब, पोनाका डोम्ब, तेलगा डोम्ब और उम्मिया डोम्ब
32.	इझावा
33.	इणावर
34.	इरुलचन
35.	गडब—बोडा गडब, सेल्लन गडब, फ्रींजी गडब, जोडिया गडब ओलारो गडब पंगी गडब, प्रंग गडब
36.	गट्टी
37.	घासी अथवा हटडी, रेल्ली संचंडी
38.	घासी—बोडा घासी और सेन घासी
39.	गोडारी
40.	गोंड
41.	गोंडी—मोडिया गोंड और राजो गोंड
42.	खोंड
43.	किटारन
44.	कोडाली
45.	कोडु
46.	कोडु डानोआरा
47.	कोंडा डोरा
48.	कोंढ (कुई),
49.	कोंड—देस्या कोंद, कोंगिया, कोंढ कुट्टिया कोंद टिकिरिया कोंढ और येमिटी कोंढ
50.	कोंगु मलयन
51.	कोरचा (अथवा कोवर अथवा येरुकला)
52.	कोसल्या गोडू, बोसोयोरिया गोडु, चिटटी गौडई, वंगायत गोडू होडू, कामरिया, डुडु कमारो, नाडिया गोड और पुलस्थिटा गौडु
53.	कोटोयार
54.	कोटिया—वर्तिका बियथो ओरिया चलिया अथवा दुल्ला, होलव पैको, पुतिया सेनरोना और सिद्धो पैका
55.	कोया अथवा गौडा अपने उपसम्प्रदायों—राज अथवा रश कोया कोटटु कोया और लिंगधारी कोया सहित।
56.	कोई
57.	किशननयोका
58.	कुडुबी
59.	कुंडबी
60.	लम्बोडी, बंजारा, सुखाली
61.	मदारा
62.	मदारी
63.	मडिग
64.	मडिगाल
65.	भागथ गाडडु—बनिया गौडू बूडो भागथ, टोंगाथिथ गोडू, साड्या गौडू, पोआना भागथ तथा मरना भागथ
66.	माला दासु
67.	माला अथवा एजेंसी माला बाल्मीकि।
68.	माला पंतारम
69.	माला पुलायन करवाली, पुलायन, कुरुमना पुलायम और पनप पुलायन
70.	मलयकडी
71.	माली, कोरची माली, पालको माली और पेड्डा माली
72.	मल्ला मालासर
73.	मन्ना धोरा
74.	मरक्कन
75.	मराठी, मराटी
76.	मेदारा
77.	मगवीर

क्रम सं०	दलित पिछड़े वर्गों के नाम
78.	मुक्कुवन, मुकाया
79.	मुलिया
80.	मुरिया
81.	मुरिया भोट्टड
82.	नाडर
83.	नायक्कन
84.	नटु मलयन
85.	नलयन
86.	ओणमरिका
87.	पगडाई
88.	पैडी
89.	पैंगरपु
90.	पैंदा
91.	पाही
92.	पलासी
93.	पनिडि
94.	पन्नीयार
95.	पानो
96.	पट्टारिया
97.	पंटिया
98.	पैंरकोलन
99.	पोरजा—बोडा, बोंडा, दाकवा, डिडावा, जोडिया, कुंडल्ली, पेंगल, फदी और सालिया
100.	पोरोजा
101.	पारोजा बोडो, प्रूजा अथवा सोडिया, सानो पोरोजा जाडिया पोरोजा और परेंग प्रोजा
102.	पुलया
103.	पल्लुवन
104.	रोल्ली अथवा सचंदी
105.	रोना
106.	सकरावर (कवाणी)
107.	सकरा
108.	सपारी
109.	सादरा
110.	सावरा—कपुसावरा, खुट्टो, सावरा और मालिया देवर
111	सनाई थालावर (इलावनीयार)
112.	शोलगा
113.	शोलगर
114.	थंटा पुलियन
115.	थिया
116.	थोलको लाप्रोस
117.	थोंटोमन
118.	थेट्टिया नायक
119.	थोट्टियन
120.	टोडा
121.	बाल्मीकि
122.	बालान
123.	बोलुयडथु नई (बुलुयडन और वेश्नाथन)
124.	विलाथेयल नायर (वेलक्कीथलवन)
125.	बोटाक्कून
126.	यादवन (इदावन)
127.	यनुडी
128.	यरुकुला

दलित पिछड़े वर्गों की सूची

10. मध्य प्रदेश

क्रम सं०	दलित पिछड़े वर्गों के नाम
1.	आदिधर्मी
2.	अघोरी
3.	अहेरी
4.	आमरा
5.	अथिय
6.	औदी, अबादी
7.	औढिया
8.	बडक
9.	बडका
10.	बाड़ी
11.	बाधिया, बारी, बाबर पायक, बैचनाय
12.	बाजगर, बाजीगर
13.	बहुरूपी
14.	बैरागी
15.	बंजारा, बंजारी, लबाना, बामनिया, बंजारा, मथुरा बंजारा
16.	बाओरिया
17.	बरसा, लबाना, लभान मथुरा, नायकदा
18.	बराड
19.	बारगी
20.	बारी
21.	बरिया
22.	बरहुष्का
23.	बावंर
24.	बावरिया
25.	बजानिया, कन्नातिया
26.	बेमारिहा
27.	बेरिया
28.	भदी—बहार, मट्टी-बहार, बहार, भोड, भौडिया
29.	भडुआ
30.	भद्रे
31.	भद्रे
32.	भडुरिया
33.	भामता, भामती, भानमते, भन्ता, भानमती
34.	भांड
35.	भन्तु, संसी
36.	भरारी
37.	भड़बूजा
38.	भरेवा
39.	भराई—भरीहार
40.	भारुद
41.	भोई
42.	भोयर
43.	भूजवा
44.	भूटिया
45.	भुरतिया
46.	बिदाकिया
47.	बदिया, सपेरा
48.	बिजोरिया
49.	चूनगर
50.	चुनकर
51.	दाबगर
52.	दाफली, धोली
53.	दहेज
54.	दाना
55.	धाकड़, भण्डारी, नागर, सिंघवी, तलाया
56.	धनकिया
57.	धनगर, गाद्री, गडरिया, हाटगर, हाटकर, कूरमर, पाल, बगाला
58.	धीमर, बेनमु, बनवार, भोरजी, धीमर, केवट, रायकर, रायकवार, सैमारी
59.	धिरकार
60.	धीवर, बृतिया, तबांडा, एजिगमूई
61.	धोबी (अनुसूचित जाति में उल्लिखित को छोड़कर)
62.	धुनकर, कडोर
63.	गाद्री, गारी
64.	गहमंडी
65.	गंडिया
66.	घडिया
67.	घंटी, घरे
68.	गोहाकी
69.	गोधी
70.	गोंडाली
71.	गोंटिया
72.	गोवटिया
73.	हबुरा
74.	हज्जाम
75.	झमरास
76.	झारी
77.	जिंगर
78.	जोगड़े
79.	जोगी
80.	जोगीनाथ
81.	कडेरा, कनंवाल
82.	कडोर
83.	कहार
84.	कैकरी
85.	कलार
86.	कामरिया
87.	कंडरो

क्रम सं०	दलित पिछड़े वर्गों के नाम
88.	कनेर
89.	मंगर बतवाल
90.	कौरी, कोरी
91.	खमगरा
92.	खारोल, तेलुगु-मुनार बेलदार, धारा
93.	खरवार
94.	किराद
95.	क्रार, धाकर
96.	कोडर
97.	कोडिया
98.	कोटिल
99.	कुलबंधिया
100.	कुंजड़ा
101.	कुटवर
102.	लोनिया, लुनिया, नूनिया, नोनिया
103.	माली, मरार
104.	मड़गी
105.	मझबी
106.	माला
107.	मल्लाह
108.	मंगा
109.	मंजार
110.	मारु सोटिया
111.	माओरिया
112.	मार्ग
113.	मेरु
114.	मेवाती
115.	म्हाली, नईम नवी, म्हाबी
116.	नायक मोम
117.	नैटा, नयता
118.	नामसूद्र
119.	नाथ
120.	नाँवड़ा
121.	नेरिया
122.	नेराली
123.	नीलगर

क्रम सं०	दलित पिछड़े वर्गों के नाम
124.	ओटारी
125.	पहार
126.	पालहारी
127.	पनवाड़ी
128.	पाराशर
129.	पार्थी
130.	पटका, पटकी
131.	पटवा, पाथकर, सिपिया
132.	पायक
133.	परकी
134.	पुतलीगर
135.	राजगीर
136.	राजगोंड
137.	राओतिया
138.	रावल
139.	रावत, बेडर, गहीरा, रस्त, रावर, थेथवार
140.	रहार
141.	रोहदे, सुझारिया
142.	रुच बंधिया
143.	सरनजिया
144.	सरभंगी
145.	शारिया
146.	सिकलीगर
147.	सिंगीवाला
148.	सियाने
149.	सोंधिया, चन्देल
150.	थामी
151.	थोटी, बुरुद
152.	थंवर
153.	थोरी
154.	थरिया
155.	तिरगर
156.	तिरमले
157.	तिरवल्ली
158.	तुरहा
159.	बनहा
160.	यर किलवर, यर्कुला

दलित पिछड़े वर्गों की सूची

महाराष्ट्र

क्रम सं०	दलित पिछड़े वर्गों के नाम
1.	अगरी, अगाला अथवा कनन
2.	अलितकर
3.	अतर
4.	औढिया
5.	बेडक
6	वदिया
7.	बगालू
8.	बागड़ी (गजराती बुरी, मारवाड़ बुरी, मारवाड़ बाघरी, सालात बाघरी
9.	बजानिया
10.	बहुरूपी
11.	बाजीगर
12.	बाल संयानम्
13.	बांदी
14	बंजारा, बंजारी, बंजारा, मथुरा बंजारा (ए) गोर बनजारा, लम्बाडा/लम्बारा, लभानी, चारन बन्जाराओ, लभान, मथुरा लभान काचिकोवाले, संजारो, लमन बंजारा, लमन/लमानो, लबन, धाली/धाइया धाड़ी/धारी, सिगारी, नवी बंजारा, जोगी बंजारा, बंजारी
15.	बांटू
16.	बाघोरिया
17.	बारिया, कोली बारी
18.	बाथिनी
19.	बावचा
20.	बागड़ी, बेडर, बोराड़ बेलघार
21.	बेलदार/घो डी
22.	नायक बाडी, तल्वार, वाल्मीकि
23.	बस्तर, संचल्-बड्डर
24.	भड़भूंजा
25.	भाम्पता अथवा घंटी छांटे अथवा परदेसी पांग डामर उचाले
26.	भांड
27.	भन्टा
28.	भराडी, बालसंतोषी, किंगरीवाले, नाथ बाबा, नाथ जोगी, नाथ पंथी
29.	भावैया अथवा तरगज्जा
30.	भीना कोया
31	भोय, खारवी, धीवर भोय, झींगा भोय, परदेशी भोय, राज्य भोय, भोय, कहार, वाडिया कहार, किरात, मछवा, मांझी, जतिया केवट, धिवर, धीतर, धीधर, पालोवर, मच्छेन्द्रा, नवादि, मल्हार, मल्हाव, गाधव भोय, खादी भोय, खारे भोय, धेवरा, धुरिया कबर
32.	भिश्ती अथवा पाखाली
33.	भोयार (पावरा)
34.	भूत भोप
35.	सिदली
36.	बार्बुक
37.	बुरुड, मदार
38.	बुट्टल
39.	चंदर
40.	चभथा
41.	चन्दल
42.	चन्दबुगड़े
43.	चमचू अथवा चंचवार
44.	चिताला
45.	डवगार
46.	डकालेरू
47.	डासिर डंगाडिडा
48.	दपाला
49.	देवरी, गोसावी, नाथ-पंथी
50.	देवली
51.	धनगर, भुवा, कुरुवर
52.	धर
53.	धीमर, धीवर, गाबित, हरकांता, मंगाली, मंगाले, पेज, सांकुरी
54.	धोबी, पारित, वट्ट, मडवाल, रजक
55.	धोली
56.	डोम्मर
57.	गटगुडी
58.	गडाबा अथवा गोडबा
59.	गडरिया
60.	गडरी
61.	गावडी
62.	गनाली अथवा गंडाली
63.	गंधरप
64.	गंगानी
65.	गरोड़ी
66.	गरपागरी
67.	गावंडी
68.	गावंडी
69.	गंडशी
70.	घिसाडी, लोहार, गाडी लोहार, चितोड़ी लोहार, राजपूत लोहार
71.	गोसावी बावा, दैरगई, भारती, गिरियोसावी भारती गोसावी, सरस्वती परबत, सागर, बेन अथवा येन
72.	गुजराथ बाघोरी
73.	हबुरा
74.	हल्ल पाइक
75.	हल्बे, हिलव
76.	जतिगर

क्रम सं०	दलित पिछड़े वर्गों के नाम
77.	जतिया
78.	झाड़ी
79.	झिंगर
80.	जोगी, नाथ, नाथ जोगी
81.	जोगिन
82.	बुहुडकी, डमरूवाले, कुडमुडे, माहंगी, मरोदो, सहदेव जोशी, मर्यदे, मरोदे
83.	केंचोरो
84.	कादेरा
85.	केरुड़ी, (अथवा कोरच), धोंटले, कोरवे अथवा कोची कोरव मकड---वालेपेडलर कोरवी, कुचबोडा, घोरो
86.	कंडेल
87.	कंजर भट, धोरा, कंजर, नट
88.	कापडी
89.	कटबु
90.	कटिपमुल
91.	खरन अथवा खरवी
92.	कोल्हारी, डोम्बारी
93.	कोराओहा अथवा यकुंला अथवा कोरव
94.	कोरचर
95.	कोरव जिसमें कोडकु शामिल हैं
96.	कोमकपु
97.	कोंगडी
98.	कुच्छरिया
99.	कुर्मर
100.	लोनारी, चुनारी
101.	मच्छी, तंदेल
102.	महाली, माहली
103.	महिल
104.	मिरासी
105.	मैराल, बंगट, वीर
106.	मझवार
107.	मारवाड बौरिया
108.	मासन जोगी, मडगड---सिद्ध मापन जोगी
109.	मीना
110.	मिश्रा
111.	मोंडीवार, मोंडीवार
112.	मुंडा
113.	नामधारी, पाइक
114.	नावी, न्हावी, हजाम, कलासेरु नवलिग कलशी, नम्बिक, नाई, नर-भिल्लिश
115.	नीली
116.	निर्शीकारी
117.	नोनिया
118.	पचभोतला, पचबोतला
119.	पधारिया
120.	पथियार
121.	पदमपारी
122.	परवाली, भिश्ती
123.	पाल पर्धी
124.	पंचम
125.	पंगुल
126.	पंका
127.	पारकी
128.	फुडगी
129.	पच बंधिया
130.	रचेवार
131.	रचकोया
132.	रायकरी
133.	राज पर्धी, गांव प्रधी, हरन शिकारा
134.	राजपूत भामता, परदेशी भामता, परदेश भामली
135.	रामोशी
136.	राओत, राउतिया, रावत
137.	रावल, रावल अथवा रावल योगी
138.	संजोगी
139.	संताल
140.	सपेरा
141.	सरनिय
142.	संझी
143.	शिग देव अथवा शिगच्या
144.	सिक्कलगर, कटारी
145.	सिंगीवाला
146.	सोरे
147.	तकंकर
148.	तलवार कनाडे
149.	तरगला
150.	थेलारी
151.	थेटवार
152.	थोटे वाडु
153.	थोरिया
154.	तिमाली
155.	बाधरी
156.	बाधरी, सलात, सलात बाधरी
157.	वैडु
158.	वैती
159.	वलवई
160.	वहुार, वहुर, (कला---वहुर अथवा पथरोड)
161.	वर्मी
162.	यनादि
163.	येनादिवाद
164.	यरगोलावा अथवा येल्मा
165.	पामलावादे

दलित पिछड़े वर्गों की सूची

मणिपुर

क्र० सं०	दलित पिछड़े वर्गों के नाम
1.	बंसफोर
2.	भूमिज
3.	बोरो, बोर कछारी
4.	दाफला
5.	दमाई (नेपाली)
6.	देवोरी
7.	दुगला, धोली
8.	गारा
9.	हजोंग
10.	हीरा
11.	क्षाला, मालो
12.	कैबरत्ता, जालिया
13.	खासी
14.	खुमंगसाल
15.	कूकी
16.	लालबागी
17.	लालंग
18.	लियांगी—नागा
19.	महारा
20.	माली, मुई माली, भुइन माली
21.	मेच
22.	महेतर, भंगी
23.	मिकिर
24.	मिरि
25.	मिशभी
26.	मुंडा
27.	नागा
28.	नापित, नाई
29.	ओरांओ
30.	राभा
31.	साहते
32.	संताल
33.	सिंगफो
34.	सिनलैंग
35.	तिपारा

दलित पिछड़े वर्गों की सूची

मेघालय

क्र० सं०	दलित पिछड़े वर्गों के नाम
1.	भूमिज
2.	बोरो—कछारी
3.	चौडंग
4.	चुटिया
5.	डे, सूद्र दास
6.	गोरखाली
7.	मोरन, माटक
8.	मुखी
9.	नेपाली, (दमाई, गैने, गुरंग, लामा, लिम्बु, लोहार, नेवार, राय, सरकी अर्थात् मोटी) कोयलर (थापा)
10.	राभा
11.	सालोई
12.	सुत
13.	तिपारा

दलित पिछड़े वर्गों की सूची

उड़ीसा

क्र० सं०	दलित पिछड़े वर्गों के नाम
1.	आदि द्राविड
2.	आदि कर्नाटक
3.	अधारिया, अगारिया, अधरिया
4.	अजिला
5.	अरनेदन
6.	अरेथियर
7.	असुर
8.	बदुगुडा
9.	बडग '
10.	बलपारी
11.	बैरा
12.	बाकुड़ा
13.	बांका
14.	बांदी
15.	बरीका, भंडारी, बेजा, नापित और नाई
16.	बेड्ड
17.	बेल्लारा
18.	बेंटकर
19.	बेटरे अथवा बेटरा
20.	भट्रा
21.	भोगटा
22.	भक्त
23.	भजन
24.	भुलिया
25.	बिरझिया
26.	बिस्सोई–बंसी जोडिया, बेन्नगी, दावुदा, फ़ंगी, होल्लर, झोड़िया, कोल्लाई, कोंड, परंग, पैगजोडिया, सोडो जोडिया, और टकोआरा
27.	बिनोधानी
28.	बोगडा
29.	बोलोधिया
30.	बटकुसुदा
31.	बुरूआ शंकर वर्न सुवरकर, बाजा
32.	चक्कीलियन
33.	चलावदी
34.	चारो
35.	चेरूमन
36.	चिकबरैक
37.	चिक
38	चिल्ला, चित्रकार
39.	चूरिया
40.	दहलिया
41.	दामल
42.	दंगुआ
43.	देशोंग
44.	देहुरी
45.	धक्काड़ा
46.	धनार
47.	डोम्ब,-अंधिया डोम्ब, ओडिनिया, डोम्ब, चोनल डोम्ब, क्रिश्चियन डोम्ब, मिरगानी डोम्ब, ओडिया डोम्ब, पोनाका डोम्ब लेलग डोम्ब, उम्मिया डोम्ब
48.	डुमाला, डुमल
49.	घटवार
50.	गिरिगर्व
51.	गिंगरा
52.	गोड्डा
53.	गोंनी—मोड़या गोंड और राजो गोंड
54.	गोंडु-वातो, मिरधिया, दूधो कोडिया, हातो, जटको और पेड़िया
55.	हबरा
56.	हंसी
57.	हसला
58.	होलेय
59.	इरूला
60.	जडपुस
61.	जाम्बुवुलु
62.	जत्रप
63.	झोडिया
64.	जोगी अथवा योगी
65.	कदन
66.	कल्लाड
67.	कलवर
68.	कंदर्प
69.	कंजर
70.	कनियन
71.	कपुडिया
72.	करहारा
73.	करीमपलन
74.	कर्मली
75.	कोट्टुनायकन
76.	खल
77.	खण्डुवाल
78.	खंजीमन
79.	खट्टी
80.	खतुआ
81.	खोंडल
82.	खोदरा
83.	कोरा, जुड़ा
84.	कोहलर
85.	कोलन

क्र० सं०	दलित पिछड़े वर्गों के नाम
86.	कोमर
87.	कोड (कुल)
88.	कोंडो-दसया कोंड, डोंगरिया कोंड, कुट्टिया कोंड, टिकिरिया कोंड, और यनिति कोंड
89.	कूसा
90.	कोरग
91.	कोसल्या कोडु, दोसोथेरिया गोंडु, चित्ति गोडु, दंगायत गोडु, दोड्डू कमरिया, दुड्डु कमारो, लाडिया गौड़ और पुल्लो सोरिया गोडु
92.	कोटा
93.	कोई
94.	कुड़ुगी
95.	कुड़ुबी
96.	कुडम्बन
97.	कुली, कोली
98.	कुंडुम/कुड़ुम
99.	कुंडमाटिया
100.	कुलटा
101.	कुरियार
102.	कुरवन
103.	कुरिच्चन
104.	कुरुमन (कुरुम्ब)
105.	लहेर
106.	लखरा
107.	लम्बानी
108.	लुहरा
109.	मछुआ
110.	माची अथवा मेचिग
111.	मगुरा
112.	महंता
113.	मैला
114.	मलदासु
115.	मलसार
116.	माली--कोचिया माली, पैडो माली, और पैंडु माली
117.	मल पहाड़िया
118.	मंवली
119.	मातंगी
120.	मावियन
121.	मिका
122.	मोनोर
123.	मुखदोवा--कोकक बोरा
124.	कुलिया
125.	मुंडाला
126.	मुरिया
127.	नट
128.	नायादी
129.	नोलिया
130.	नुहरा, नुहुराज
131.	नूनिया
132.	ओमिमिटा

क्रम सं०	दलित पिछड़े वर्गों के नाम
133.	पदारिया, पमारिया, पन्डारा
134.	पगडाई
135.	पैंगरपु
136.	पैका
137.	पाकी
138.	पलासी
139.	पलियन
140.	पल्लन
141.	पुलयन
142.	पम्बादा
143.	पनियन
144.	पंजीरा
145.	पल्लीयन्दी
146.	परैयन
147.	परबन
148.	परहेया
149.	पथुरिया
150.	पेंगुआ
151.	पिता
152.	पोरजा-बाडो, बोंडा, वाल्था, दिदवा, जेडिया, मुंडिल, सानो, पोंगु, पैदी, सालिया, सोडिया, और परंग
153.	राजवार
154.	रानेयर
155.	राना
156.	राओतिया
157.	सगर पाला
158.	साम्बन
159.	संथरी
160.	सवारा---कपु सवारा, कुट्टो, सवारा, माखिया सवारा
161.	सेम्मन
162.	शोलागर
163.	सोरिया पहाड़िया
164.	सिंके
165.	सूब
166.	सुलिया
167.	सून्धी
168.	तामा
169.	धनु
170.	धतारी
171.	धोटी
172.	थुरिया
173.	तियार
174.	टोडा
175.	तोगला---गोल
176.	वून्नुवन
177.	वेद्दुवन
178.	विन तुलविन
179.	येंडी
180.	येरना गोलिया
181.	देरकुथा

वलित पिछड़े वर्गों की सूची

पंजाब

क्रम सं०	वलित पिछड़े वर्गों के नाम
1.	अहेरिया, अहेरी, हेरी, नायक थोरी, पुरी
2.	बगरिया, बागरिया
3.	बराई, तरबोली, तम्बोली
4.	बखार
5.	बतेरी
6.	बेरिया
7.	बरेर
8.	बैटा, हंसी, हेसी
9.	भड़भूंजा, भड़वजा
10.	भारी, रोदे
11.	मुहालिया
12.	चहंग
13.	दैया
14.	दाकौट, दाहकोट
15.	दाभोली, देवोला
16.	दोला, सोनी— आदरी
17.	धनवार
18.	धीमर, धीवर, धीमवर, झीवर, झीवर कहार, कश्यप, राजपूत, मल्लाह
19.	धोबी, सुसव
20.	धोसाली, दोसाली
21.	गडेरिया, गड़रिया
22.	गदी, गुदी
23.	घासी, घसियारा, घोसी
24.	हरनी
25.	जोगी, नाथ
26.	कंजर, कँचन
27.	केहल
28.	कुचबंद, कुच्छबंद
29.	लोबाना, बंजारा, बंजारा
30.	मदारी
31.	मिरासी
32.	मोची (अनुसूचित जाति में उल्लिखित को शामिल न करते हुए)
33.	नाई, बनवरू, धनवाल, धारी धनगस, धिरी, हज्जाम, हजाम, हर-गुन, जाल्लन लेखा, नागी, नाईसिस, पलन, पंजु, पतारा, राजा
34.	शोरगिर

दलित पिछड़े वर्गों की सूची

राजस्थान

क्रम संख्या	दलित पिछड़े वर्गों के नाम
1.	अगेर
2.	असाड़
3.	बडेरा, बम्रोरिया
4.	बागड़िया, बनारिया
5.	बकड़, बन्त
6.	बनचड़ा
7.	बंजारा, गवारिया, कंगीवाला, कंगी, बलादिया, सिरकीवाला लबाना लमाना, मारू, बन्जारा, बेयोरा, डिंगोरा
8.	बराहर, बसोड़
9.	बरार
10.	बरवा, घिया
11.	बरगुंडा
12.	बासोर
13.	बम्पता, घंटीचोर, परदासी, भम्पत
14.	भानुमती
15.	भरूड़
16.	चक्रवादिया—दासार
17.	चालवाडी, चामन्या
18.	चमना
19.	चीता
20.	चेना—दसारू
21.	चेना—दासार, होलिया
22.	चिदार
23.	डकोत, गारो, गकुड़िया
24.	टेकालाडू
25.	दमानी
26.	धाड़ी
27.	धाकड़, धानक, धनका, धानुक, गोछी
28.	धांची
29.	धीमर
30.	धोबी
31.	डोली
32.	धोडिया
33.	ढोर, ककैया, कंकडिया
34.	तुबला
35.	गड़रिया, चंडालिया, गडरिया, गवाला, घोसी, कबीरिया
36.	गाडोलिया
37.	गामित, गमता, गावित, (इसमें भावची, पड़वी, वसावा, वसवा और वालवी शामिल हैं) ।
38.	गोंड
39.	हल्लीर
40.	हलसर, हस्सर, हुलासवर, हल्ला, स्वार
41.	हलाल खोद
42.	हेलार
43.	होलार, बल्हार
44.	होल्लया, होलर
45.	कहार, भोई
46.	कैकाड़ी, कुरैच
47.	कन्डेरा
48.	कानवी
49.	कीर
50.	खेन्त
51.	खरोल
52.	किरार
53.	कुल
54.	कोली महादेव
55.	कोरकू
56.	मल्हार
57.	मिरासी, मिरास
58.	मिवाड़ा
59.	मोथिया
60.	मोगिया
61.	मुकरी
62.	नादिया, हाड़ी
63.	नाथ, जोगी
64.	नायक
65.	नट, नट सांसी
66.	मेरिया
67.	ओड्ड
68.	परधी (इसमें अद्विशिचेर और फंसे पड़धीमी शामिल हैं)।
69.	पटवा (पदाल)
70.	पोमला
71.	पोवादा
72.	एडका
73.	रावत
74.	रिवड़ी
75.	साद—सौसी (सेहर)
76.	सरवारा
77.	सक्का
78.	सिकलीधर, गड़ी, लोहार
79.	सिरकीवाला
80.	सौन्सी
81.	तिमाली
82.	वरली
83.	वेद
84.	वाघड़ी
85.	जमराल

दलित पिछड़े वर्गों की सूची

सिक्किम

क्रम संख्या	दलित पिछड़े वर्गों के नाम
1.	बजेल
2.	गुरुंग
3.	लिम्बू, लिम्ब्
4.	मोंगार
5.	राय
6.	सुवा
7	सुनार
8.	तामांग
9.	ताजोग
10.	भगथुंगबा

दलित पिछड़े वर्गों की सूची

तमिलनाडु और पाण्डिचेरी

क्रम संख्या	दलित पिछड़े वर्ग का नाम
1.	अम्पत्तन
2.	आर्यन, आरयार (नुलयार)
3.	बडगा
4.	बाडागार
5.	बगाता
6.	बारकी
7.	बेलेडा
8.	बवूरी
9.	बीया, सिबियार
10.	भरतार
11.	भटराज (क्षत्रिय राजू से भिन्न)
12.	भट्ट दास—बोडो—भट्टाड़ा भूरिया भटाड़ा और साने भट्टाड़ा
13.	भूमिआस—भूरी भूमिआ और बोडो भूमिआ
14.	बिल्लावा
15.	विस्से—डारंगी, जोडिया, बननागी, वादुआ, फिरांगी, मोल्लार, आरिया, कोल्लाई, कोंडे, परंगा, पेंगा—जोदिआ, सोडो, जोदिया तथा टकोरा
16.	बोंदिल
17.	बीयार ओडडार
18.	बोया
19.	बुडाबु खाला
20.	ब्यागरी
21.	चंचटी
22.	चवलक्करन चवलरक्करार
23.	चेंचु
24.	दसारी
25.	डंडासी
26.	धक्कड़ा
27.	धोबी, वण्णन
28.	डोम्बा
29.	डोम, अंधिया, डोम चोनेल डोम, ओरिया, डोम पोणका, डोम तेलगा डोम और उम्मीया डोम
30.	डोमरा
31.	डोगा वता
32.	डुंडाकुला
33.	इनाड़ी
34.	इरावाल्लर
35.	इंजावती
36.	ईजुताचर
37.	इंजीवा
38.	गडावस—बोडा, गडावा गेरासस, गड़ावा, गालाराव, गडावा और परंगा, गडावा ओडिया गाडवा
39.	गंगवार
40.	घासी हाड्डी, रोल्ली, संचाडी
41.	गोडारी
42.	गौंड
43.	गाउडू, बाटो, मिरीतिया, डडोकोरिया, हाटो, टटाके जारि
44.	हासला
45.	हिल पुलैया
46.	होलवा
47.	हलेवान
48.	जोडापं
49.	जम्बुवन्नोरे
50.	जटापुआ
51.	जोगी
52.	जोगुला
53.	कबेड़ा
54.	कदान
55.	काडूपत्तर (मालावार)
56.	कक्कलन
57.	कलादी
58.	कणि या किणपु या कणिवार पाणिक्कर
59.	कणिकरण, कणेकेर
60.	कंजर
61.	कण्णकण, पादाण्णा
62.	कपूमारि
63.	कतेसरया पट्टमकट्टी
64.	कावेरा
65.	कवाती
66.	कवुतियार
67.	केरल मुतालि
68.	खारवी
69.	खौंद
70.	कोंडालो
71.	कोडू
72.	कोलालार, देवार तेवर
73.	कोंडा, घेरा
74.	कोंडा (कुई)
75.	कोन्ध, बेसिया, कोन्ध डागरिया, कोन्ध कुट्टिया, कोन्ध, तिकिरिया, कोन्ध और यामिति कोन्ध
76.	कोटन, कोडन
77.	कोरचा, कोरावार येरूकणे
78.	कोसल्या गोडू, कोसाथोल्या गोडू, चितगोडू डंगायत गोडू, डोडू कमारिया, डोडू कमारो, लड्डिया गोडू और फुल्लो सोरिया गोडू
79.	कोटा
80.	कोटियार
81.	कोटिया—अरतिका, बन्तो उरिया, घूलिया या दूलिया होलवा पाहको, पुतिया सनरोना और सिंघो पाइको

क्रम संख्या	दलित पिछड़े वर्ग का नाम
82.	कोया या गौड, (इसकी राज या रेसा कोया, लिंग धारी, कोया (साधारण) तथा कोट्टु कोया उपजातियों सहित)
83.	कोई
84.	कृष्णबेका
85.	कुबबोरा, कुकुवन
86.	कुडुबी
87.	कुडुम्बी
88.	कुरूम्बा
89.	कुरूमवड़वा
90.	कुरावर
91.	लम्बादी, बंजारा, लम्बादी सुगाली
92.	मगता गोडू, बनिया गोडू, बोदू मगता, डोंगायत गोडू, पोण्णे मगता, साण मगता और याडिया गोडू
93.	महान्द्रा, मैदरा
94.	माला वासू
95.	माला पन्तरम
96.	मालापुलायन, कुरूम्बा पुलायन, केरावली पुलायन, पम्बू पुलायन
97.	माल्यावयण
98.	मलयाली
99.	माले
100.	मालि, कोरचिया मालि, पाईको मालि और पड्डा मालि
101.	मण्णेग्रोरा
102.	माणन, वाणन, पतियार
103.	मरक्कण
104.	मारोमरी ग्रामाणी
105.	मराठी
106.	मरूतुवर, नाविंतर
107.	माउना
108.	माडरा
109.	मोनियागर
110.	मुक्कूवण, मुक्कूवर
111.	मुखा ढोरा, नूका ढोरा
112.	युथ मुलिया
113.	मूरिया
114.	ग्रामणी, शानार, नाडार
115.	नक्काल
116.	नायकर
117.	नारी कोरावर
118.	नौक्कर
119.	न्यूलायण
120.	पैड़ी
121.	पाईगणपु
122.	पाकी
123.	पलासी
124.	पामिदी
125.	पामुलु
126.	पाणन
127.	पानर
128.	पणिक्कन

क्रम संख्या	दलित पिछड़े वर्ग का नाम
129.	पाणे
130.	परावाण, पाराबर, कब्बोरा, पर्वत राजकुवम, पक्षनायन
131.	पारिया (वेंगुर और वापुर)
132.	परकवकुलम, सुरूतिनार, मलयमर, नायमर
133.	पतियान
134.	पटिया
135.	पोरया
136.	पोरना या पोरजा बोडो, बोंडा दारूवा, विदुआ, जोदिया मुंडिलि परांग प्यादी, सालिया, सनोन्द, सोदिया
137.	पुल्लुवन, पुल्लुवर
138.	पुसौले
139.	रेलि
140.	रोना
141.	एक्कारोवर (कवाती)
142.	साम्रोरे
143.	सवार, कोपू सवार, खुट्टा, सवार और मालिया सवार
144.	तेलेया, पामुला, पेड्डाटी गोला
145.	तन्डन
146.	तन्तपुलयन
147.	तावर
148.	तिय्या
149.	तोलुवा, नायकर और बेटालाकर नायकर
150.	तोन्डामान
151.	तोरियार
152.	थोट्टाई नेयका
153.	तोट्टै नायक (इसमें गोलावार सिलावर, राज कम्बालम-तोक्कालवर और तोलुवा नायकर शामिल हैं।)
154.	टोडा
155.	उल्लादन
156.	उल्लाटन
157.	उप्पण (उप्पालिल्या सागर)
158.	उराली गौंडेर
159.	वालान
160.	वलैयर
161.	वाल्मीकि
162.	वानन (मानन वातियान)
163.	वान्नार, राजकुल, बालुतादार (जहां वे अनुसूचित जाति है)
164.	वेल्यार
165.	वेलूतादानायर, वेलूतानातुतायर
166.	वोडार
167.	वेतान
168.	यनाडी
169.	यनादी
170.	यवन
171.	यारकुल

दलित पिछड़े वर्गों की सूची

त्रिपुरा

क्रम संख्या	दलित पिछड़े वर्ग का नाम
1.	अगारिया, अगरिया
2.	असूर
3.	बडियाकर, धूली, नागारची, सब्दाकर
4	बहेलिया
5	बैगनव
6.	बैती
7.	बनजोगी
8.	बऊरी
9.	बेड़िया, बेडिया
10.	बेलदार
11	बेरुया
12	भक्त
13.	भर
14.	भिनहार
15.	भूमिज, भमिज
16.	बिन
17.	बिन्द
18.	बिन्झिया
19.	बिरहार
20.	चौहान
21.	दालू
22.	दमई
23.	देसाली
24.	धोमारू
25.	गंजिया
26.	गंजू
27.	गारा
28.	गरेरी
29.	गुआला
30.	गोंडा
31.	गोंड
32.	गोरंग
33.	गुनार
34.	गुंडी
35.	गुड़
36.	हादी
37.	हलालखोर
38.	नारी
39.	हो
40.	खान्देत
41.	खटीक
42.	खेमचा
43.	खेन
44.	ख्यांग
45.	किचाक
46.	कोडा
47.	कोयरी
48.	कोरवा
49.	लालबेगी
50.	लोहार
51.	मघैया डोम
52.	महर
53.	महली
54.	मल
55.	मल्लाह
56.	नैया
57.	नट, नटदास
58.	नापीत
59.	नायक
60.	नैपाली (लिम्बो, मतवाली, राई)
61.	नुनियां, नुनिआ
62.	ओरांओ
63.	पाइक
64.	पालिया
65.	पालिया
66.	पान
67.	पांकी
68.	पासी
69.	पोड
70.	राभा
71.	राजू
72.	रजवाड़
73.	रूपाई
74.	सुनरी
75.	तियार
76.	योगी, जोगी, नाथ

दलित पिछड़े वर्गों की सूची

उत्तर प्रदेश

क्रम संख्या	दलित पिछड़े वर्ग का नाम
1.	अघ्री
2.	अहेरिया, अहेरिआ
3.	अरख
4.	औजी
5.	बादक
6.	बैरी
7.	बाजीगर
8.	बंदी
9.	बंजारा, गोर, लडेनिया, कोमालिया, ओसारिया, मथुरा, लबाना, धनकुट्टा, बन्जोरा, ब्रजवासी—बनजारा, बनजारानट ग्वार, बनजारा, सिख
10.	बारी
11.	बादिया
12.	बीरा
13.	बोरिया
14.	बयार
15.	बेड़िया
16.	बोरिया
17.	भार
18.	भटियारा
19.	भील
20.	भूल
21.	भुरजी, भड़भूजा, भारभूजा, भूंज, भुंजिया, कान्दू
22.	बिन्द
23.	चनाल
24.	चिक
25.	चुनाल
26.	चुम्पा
27.	दलेरा
28.	धारी
29.	धोबीर, रजक (जो अनुसूचित जाति में शामिल नहीं हो)
30.	ढोली
31.	धुनिया, कथैरिया, नादाफ
32.	फ़कीर
33.	गड़रिया, गड्डी, गरेडिया
34.	गधिया
35.	गंधर्व, भाट, सौसी
36.	गंधीला
37.	गोधियां
38.	गिरी
39.	गोंड
40.	हलाल खोर
41.	हांकिया
42.	हरकिया
43.	जोगी
44.	कहार, धीमर, धुरू, गोंडिया, कश्यप
45.	केवट, वासी, चाई, जलीहार, खरसा, माजही, मल्लाह, निषाद
46.	खैरवा
47.	खारोट
48.	किंघाड़िया
49.	कोली
50.	कोटवार
51.	कुंजरा, राईन
52.	लुबिया, लोनिया
53.	नावटी
54.	मोची (जो अनुसूचित जाति में न हों)
55.	मुस्लिम बन्जारा
56.	नड़काल
57.	नायक, नाइक
58.	नट (जो अनुसूचित जाति में न हों)
59.	ओधया
60.	ओढ़ ओद
61.	पहरी
62.	पौरी
63.	पवारया
64.	राज
65.	सपेरा, कलबेलिया
66.	सौंसी
67.	तूरी

दलित पिछड़े वर्गों की सूची

पश्चिम बंगाल

क्रम संख्या	दलित पिछड़े वर्ग का नाम
1	अधिकारी
2.	अगरिआ, अगरिया
3.	अघोर
4.	अमंत, अमत, अमध
5.	भार
6.	बाग
7.	बादिया
8.	बागल
9.	बाजदार, राजानिया, बेड़े
10.	बंजारा
11.	बनगोमी
12.	बानुस, बूना, बूना, बूनो
13.	बाग्गिरी
14.	बड़चेन, चेई चाइन
15.	बारी
16.	बयूड़ी
17.	बैंटकार
18.	बड़ेआ
19.	भंगी (जो अनुसूचित जाति में न हो)
20.	भन्त
21.	भार
22.	भटियारा, बसगोई
23.	भोटिया
24.	मुगाल
25.	बिन
26.	बिन्झिया
27.	बिन्झावर
28.	बिन्जिना
29.	बिरजिया
30.	चाक
31.	चर्मलिंग
32.	चामधोवा, हुलधर, हुलारी, सतचासी
33.	चिक, चिकवा, कसाई, कसाब
34.	चिड़िमार
35.	चित्रकार
36.	चूहिहार लखेरा, लहेरा
37.	दालू
38.	दाझी
39.	डकारन
40.	धेन्नार
41.	दिलपाली
42.	दुराज
43.	बगाल
44.	गेन
45.	गन्डा
46.	गराई
47.	घटवाल
48.	घटवार
49.	घुसूरिया
50.	गोदरा
51.	गोरवा
52.	गोंडा
53.	गोरा
54.	गुधारी
55.	हादी
56.	हलालखोर (जो अनुसूचित जाति में न हो)
57.	हबारी
58.	हेला
59.	हरिका
60.	जुआंग
61.	कहार
62.	कैरा
63.	कलवार
64.	कंघ
65.	कपूरिया
66.	करानी
67.	करहा
68.	करबालंत, करबालनट
69.	कास्थ
70.	कला
71.	खड़ग
72.	खारिया
73.	खेन
74.	खेडबाड़
75.	क्यांग
76.	खयारा, घार।
77.	कोचक
78.	कोडा
79.	कोल
80.	कोली
81.	कालू
82.	कूकी
83.	कंजर, रईन
84.	लाकरा
85.	लुशेई
86	माछू
87.	मचैया-डोम
88.	महावरदा

क्रम संख्या	दलित पिछड़े वर्ग का नाम
89.	माघ डोम
90.	मल्लाह
91.	मंगन
92.	मंगार
93.	मारवाड़ी बोरिया
94.	मटियल
95.	मरिशिकार
96.	मुग
97.	हुभुदिश
98.	पटुआ
99.	पिराली
100.	रखाल
101.	रसाली

क्रम संख्या	दलित पिछड़े वर्ग का नाम
102.	रोहनगिया, रोशनगिया
103.	सायर
104.	शागिंद पेशा
105.	सियाल
106.	तमांग
107.	थारू
108.	टिपारा
109.	टिप्पेरा
110.	तियार
111.	तुरहा
112.	उराओ, बन्दोत, हारो, करकटा, लुईदू, शिथोथ, तिग्गा, तिरकी
113.	सांसी

अण्डमान और निकोबार द्वीप समूह

क्रम संख्या	दलित पिछड़े वर्ग का नाम
1.	अरूणदटिलू (एच)
2.	बरार (उमाती)
3.	इलूवैन
4.	धोबी
5.	ओरिया
6.	मुंडा
7.	नामसूद्र, अधिकारी, सरकार, धाती, वान्डा, हीरा, बाईहाई माजी, दालिगबा, बोदोई, दिसकस, पोद्दार, हिन्दल, राय, दास, हडेर, मांजी, वासी, मल्ले, बीरो, नाग, बैरागी, भातरा (वैद्य)
8.	नाई ठाकुर

क्रम संख्या	दलित पिछड़े वर्ग का नाम
1.	दीवान
2.	क्षेत्रीय
3.	कुर्मी
4.	मैती
5.	भात्रिभारा
6.	गवोर

दलित पिछड़े वर्गों की सूची

चण्डीगढ़

क्रम संख्या	दलित पिछड़े वर्ग का नाम
1.	अहीर, यादव
2.	बागरिया
3.	बर्दी
4.	बरवार
5.	बाहरी
6.	बाजीकर
7.	बाथी
8.	बेतरहा
9.	बेरिया
10.	बेटा, हैन्सी, हेसी
11.	भांड
12.	भरभूंजा
13.	भूजरू
14.	बोटेहरा
15.	चर्म
16.	चिड़ीमार
17.	बैया
18.	डकोत
19.	दाग्रोली, दोग्राला
20.	डेहा, धैया, धेग्रा
21.	धाई
22.	धींवर
23.	धीमर, धींवर, झींवर, कहार, मल्लाह
24.	धोबी
25.	घुसाली
26.	-ढ़रिया
27.	गड़री
28.	गद्दी
29.	घोसी
30.	हांडी
31.	हज्जाम, नाई
32.	हाली
33.	हरनी
34.	जोगी, नाथ
35.	कन्धन
36.	कंधेरा
37.	कन्जर
38.	केहाल
39.	कोहली
40.	लवाना, लोबाना, बंजारा, बन्जारा, बन्जारी
41.	मदारी
42.	मीणा, मिना
43.	मेवाती
44.	मोची
45.	मुसावर
46.	नार
47.	नाइक, हेड़ी, अहेरी
48.	नूनगर
49.	रचबंद
50.	रायसिख
51.	रेहाड़, रिहाड़ा, रेड, रिहाड़
52	शोरमीर
53.	सिंधीवाला, सिंधीकौत
54.	थोरी, तुरी

क्रम संख्या	दलित पिछड़ा वर्ग की सूची
1.	अग्री
2.	अहीर
3.	भरवाड़
4.	ब्रह्मभी
5.	धोबी
6.	कहार
7.	कुंभार
8.	कपाड़ी
9.	कोलागा (मुस्लिम)
10.	कोली
11.	मकराना (मुस्लिम)
12.	नाई, बलन्द

[illegible] पिछड़े वर्गों की सूची

दिल्ली

क्रम संख्या	दलित पिछड़ा वर्ग का नाम
1.	अम्बासी, मिस्त्री, सक्का
2.	अगरी, खेरवात
3.	बंगेला, बाविया, पेरना, सपेरा
4.	बेरी
5.	बोरिआ
6.	भाजीगर, नट, कलन्दर (जो अनुसूचित जाति के न हों)
7.	भूमलिया
8.	भांड
9.	भरभूंजा
10.	चक
11.	चिड़ीमार
12.	दर्जिया, दर्जिया, जल्लाद
13.	धीवर, धीवर, निषाद
14.	धोबी (जो अनुसूचित जाति में न हों)
15.	गडरिया
16.	गद्दी, गारी
17.	गधेरी, चंडिला
18.	घसियारा
19.	हरनी
20.	हरबी, हेरी
21.	जोगी
22.	कहार, कश्यप
23.	करवाल
24.	कन्धर, धर, कुचबंदा, सिंगीकाट
25.	केवट
26.	खाटगुने
27.	खटीक (जो अनुसूचित जाति में न हों)
28.	लाली
29.	माछी, मछेरा, माली, सैनी, सौंधिया, सागर बंशी-माली, नायक
30.	मसानिया-जोगी
31.	मेल मेवाती
32.	मिरासी, मेरासी
33.	नाई
34.	मोची (जो अनुसूचित जाति में न हों)
35.	नाल बन्द
36.	पटवा
37.	पत्थर फोड़ा, संगतराश
38.	सूरीमान, गुंजामार
39.	गुडीलोहार
40.	बाघड़ी

ह०/-
(एल० आर० नायक)
सदस्य, पिछड़ा वर्ग आयोग

दलित पिछड़े वर्गों की सूची

क्रम संख्या	दलित पिछड़ा वर्ग का नाम
1.	भण्डारी
2.	बन्जारा, लम्बाड़ी, लमानी, सुगाली
3.	ईसाई चमार
4.	ईसाई मदार
5.	ढांगर
6	धोबी
7.	ढोर
8.	गौड़े
9.	गोंगी
10.	गोसावी
11.	कसाद
12.	कोली
13.	कुनबी
14.	मितना
15.	नायडू
16.	नाथ, जोगी
17.	न्हाबी, नाई
18.	सागर

मिजोरम

क्रम संख्या	दलित पिछड़ा वर्ग का नाम
1.	अपातनी
2.	गुरखा
3.	मणिपुरी
4.	पैते
5.	रेलसी

प्रबन्धक, भारत सरकार फोटोलिथो मुद्रणालय, फरीदाबाद द्वारा मुद्रित।